मार्कण्डेय पुराण

[प्रथम खण्ड]

(सरल हिन्दी अनुवाद सहित जनोपयोगी संस्करण)

सम्पादक :

वेदमूर्ति, तपोनिष्ठ

पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

चार वेद, १०८ उपनिषद्, षट्दर्शन, योग वाशिष्ठ,

२० स्मृतियाँ और १८ पुराणों के,

प्रसिद्ध भाष्यकार

प्रकाशक :

संस्कृति संस्थान

ख्वाजाकुतुब, (वेद नगर), बरेली—२४३००३ (उ०प्र०)

फोन नं० ४२४२

प्रकाशक :

डॉ० चमन लाल गौतम

संस्कृति संस्थान

ख्वाजा कुतुब, (वेद नगर) बरेली—२४३००३ (उ० प्र०)

※

सम्पादक :

पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

※

※

तृतीय संस्करण

सन् १९८०

※

मुद्रक :

शैलेन्द्र बी. माहेश्वरी

नवज्योति प्रेस

सेठ भीकचन्द मार्ग, मथुरा

ग्यारह रुपये पचास पैसे मात्र

भूमिका

भारतवर्ष के धार्मिक साहित्य में पुराणों का एक विशिष्ट स्थान है। यों तो हिन्दू धर्म में वेदों की प्रतिष्ठा सर्वोपरि है और अध्यात्म की दृष्टि से उपनिषदों को समस्त संसार में अद्वितीय माना गया है, पर लोक-प्रियता की दृष्टि से पुराणों का दर्जा बढ़ा-चढ़ा है। जिस प्रकार ऊँचे दर्जे का साहित्य थोड़े विद्वानों द्वारा समादृत होता है, पर सामान्य कोटि की मनोरंजक, तथा रुचिकर पुस्तकों का प्रचार अगणित जनता में होता है, उसी प्रकार वेद और उपनिषदों के गूढ़ तत्वों का विवेचन जहाँ गिने चुने विद्वानों तथा अध्ययनशील व्यक्तियों के काम की चीज होती है, वहाँ पुराणों की कथाओं को गाँवों के अपढ़ लोग भी सुनते और समझते रहते हैं। यद्यपि कुछ कारणों से पठित समुदाय में इनके सम्बन्ध में कई प्रकार की भ्राँतियाँ फैली हुई है और अनेक आधुनिकता का दावा करने वाले सज्जन इनको सर्वथा कल्पित भी कह देते है, पर इसका कारण यही है कि उन्होंने कभी पुराणों के अध्ययन का प्रयत्न नहीं किया। पुराणों का उद्देश्य प्राचीन युगों की घटनाओं और परम्परागत ऐतिहासिक कथाओं को सरल तथा मनोरंजक शैली में वर्णन करना है। इनमें से कुछ वास्तविक, कुछ अर्ध-वास्तविक और कुछ धर्म, पुण्य व सच्चरित्रता की प्रेरणा देने के लिए कल्पित भी होती हैं। पुराणों में प्रत्येक विषय को धर्म, सदाचार, नीति का पुट देकर लोक-शिक्षा का माध्यम बनाने की चेष्टा की गई है। इसके लिए पुराण-लेखकों को घटनाओं के वर्णन में संशोधन, परिवर्तन तथा कल्पना का आश्रय अवश्य लेना पड़ा है, पर उनका मूल आधार प्रायः ठीक ही है और यदि हम उनके रूपक, अलंकार, अतिशयोक्ति, अर्थवाद का विश्लेषण करके अन्तराल में झाँकें तो अनेक बहुमूल्य और कल्याणकारी मणि-मुक्ताओं की प्राप्ति हो सकती है।

दूसरी बात यह भी है कि सब पुराणकार एक श्रेणी के और समान महत्व तथा दृष्टिकोण रखने वाले भी नहीं है। उनमे से कुछ का उद्देश्य पाठकों को अध्यात्मयोग, दर्शन, ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा देना है। कुछ किसी विशेष देवता और सम्प्रदाय के महत्व का प्रतिपादन करके अपने अनुयायियों की श्रद्धा को दृढ़ करने के उद्देश्य से रचे गये है। कई पुराणों में सीधीसादी धार्मिक कथाओं और दृष्टान्तों द्वारा लोगो को उपासना, पूजा, भक्ति, व्रत, जप, तप, सदाचार आदि की शिक्षाये दी गई है, जिसमें सामान्य मनुष्य अपने जीवन को अधिक शुद्ध, पवित्र बनाकर समाज के लिए हितकारी सिद्ध हो सके। फिर पुराणो का प्रचार और प्रभाव देख-कर कुछ थोड़ी विद्या बुद्धि के लोगों ने छोटी-छोटी धार्मिक पुस्तकें लिख-कर उनके नाम में भी पुराण' शब्द सम्मिलित कर दिया है। ऐसी स्थिति में जो लोग केवल दोष-दर्शन अथवा विरोध की दृष्टि से ही पुराणों पर विचार करने लगते हैं उनको अपनी रुचि के अनुकूल विपरीत आलोचना, आक्षेप दोषारोहण का मामला भी उनमें मिल सकता है, पर हमारी सम्मति मे उसकी न तो कोई उपयोगिता है, न प्रशंसा है और न उससे उनकी विद्या और बुद्धि की उत्कृष्टता का ही कोई प्रमाण मिलता है।

यदि पुराणों का गम्भीरता तथा सहानुभूति पूर्वक अध्ययन किया जाय तो मालूम होता है कि उनका मुख्य उद्देश्य वेद उपनिषद्, दर्शन, स्मृतियों आदि शास्त्र-ग्रन्थों में वर्णित धर्म, अध्यात्म, सृष्टिरचना, मानव सभ्यता के विकास सम्बन्धी गूढ़ तथ्यों का इस प्रकार विस्तार और व्याख्या सहित वर्णन करना था जिससे साधारण श्रेणी के जनसाधारण उनको समझ कर लाभ उठा सकें। उनका दूसरा उद्देश्य उन्हें कथा के उपयोगी रूप में बनाना भी था जिससे अनपढ़ लोगों, स्त्रियो और बालकों के सामने उनको बाँच कर उपदेश दे सकना संभव हो। इसीलिए पुराणों को प्राय: आख्यान, उपाख्यान, दृष्टान्त, रूपक, कहानी आदि ऐसी सुगम और सरल शैली में लिखा गया है जिससे सब प्रकार के व्यक्ति उनको प्रेम से सुन सकें और उनसे अपनी बुद्धि तथा स्थिति के अनुकूल लाभ उठा सके।

पौराणिक साहित्य का एक लक्षण सर्ग (सृष्टि रचना) और प्रतिसर्ग

(सृष्टि का लय तथा विलीनता) के विषय में विचार करना है। यद्यपि यह एक बहुत जटिल तथा विवादग्रस्त विषय है, जिसके सम्बन्ध में संसार के बड़े विद्वान् और वैज्ञानिक तरह-तरह के मतभेद प्रकट करते रहते हैं, पर पुराणों में इसे देवासुर संग्राम के रूप में ऐसा मनोरंजक बना दिया है कि पाठक कहानी के द्वारा ही सृष्टि-विज्ञान के मोटे तथ्यों को जान लेता है। इसी तरह प्राचीन राजवंशों का वर्णन भी पुराणकारों ने परोपकार, उदारता, त्याग, तपस्या के उदाहरण दिखाने के ढंग से किया है। यह आवश्यक नहीं कि राजवंशों की ऐसी नामावलियों में प्रत्येक राजा के नाम आ ही जायें, पर उनमें से ऐसे राजाओं को छांटकर उनका विशेष रूप से वर्णन किया गया है जिनके चरित्र और कार्यों से हम किसी प्रकार की सत्‌शिक्षा प्राप्त करके अपने जीवन को ऊँचा उठा सकते हैं।

इस दृष्टि से यदि हम कहें कि पुराण-ग्रन्थ भारत की प्राचीन संस्कृति, सभ्यता, इतिहास के भंडार है तो इसमें कोई अनुचित बात नहीं है। एक विद्वान् के कथनानुसार 'पुराणों में भारत की सत्य और शाश्वत आत्मा निहित है, इन्हें पढ़े बिना भारत का यथार्थ चित्र सामने नहीं आ सकता, भारतीय-जीवन का दृष्टिकोण स्पष्ट नहीं हो सकता। इनमें आध्यात्मिक, आधिदैविक, आधिभौतिक सभी विद्याओं का विशद वर्णन है। लोक-जीवन के सभी पक्ष इनमें अच्छे प्रकार प्रतिपादित हैं। ऐसा कोई ज्ञान-विज्ञान नहीं, मानव मस्तिष्क की ऐसी कोई कल्पना या योजना नहीं, मनुष्य जीवन का कोई अंग नहीं, जिसका निरूपण पुराणों में न हुआ हो। जिन विषयों को अन्य माध्यमों से समझने में बहुत कठिनाई होती है, वे बड़े रोचक ढङ्ग से, सरल भाषों में, आख्यान आदि के रूप में इनमें वर्णित हुए हैं।' एक अन्य लेखक ने कहा है कि "भारतीय धर्म, दर्शन और संस्कृति सदाचार एवं सामाजिक तथा राजनीतिक जी[illegible] से [illegible]न्धित अनेक विषय पुराणों में आये हैं। वस्तुतः पुराणों की वर्णन [illegible] हो जाना पड़ता है। किन्तु इनमें सबसे महत्वपूर्ण अंश [illegible] ब्रह्मविद्या या सृष्टि विद्या है, जिसे पुराणों ने खुलकर [illegible] है। 'इतिहास पुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत्।' यह सूत्र ही [illegible] रचना बीज बन गया था। इस दृष्टि से 'वेद-विद्या' का ही [illegible] सुलभ अवान्तर रूप 'पुराण-विद्या' है।'

मार्कण्डेयपुराण की विशेषता--

महापुराणों के पाँच मुख्य लक्षण बताये गये हैं सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश, मन्वतर और वंशानुचरित। यद्यपि ये लक्षण थोड़े बहुत अन्तर के साथ सभी प्रसिद्ध पुराणों में पाये जाते हैं तो भी जिन पुराणों का उद्देश्य किसी विशेष देवता या सम्प्रदाय की पुष्टि करना है, उनका विशेष ध्यान उसी तरफ लग जाता है और इन मूल विषयों के वर्णन को भी उसी रग में रंग दिया जाता है। पर 'मार्कण्डेय पुराण' इस त्रुटि से अधिकांश में बचा हुआ है और उसमें मुख्य रूप से धर्म, नीति, सदाचार के प्रतिपादन को ही अपना लक्ष्य बनाया है। उसमें ब्रह्मा, विष्णु, शिव में से किसी देवता को बढ़ाने के लिए दूसरे की हीनता नहीं दिखाई गई है। इसी प्रकार अग्नि, सरस्वती, सूर्य आदि का भी समान भाव से स्तवन किया गया है। इस निष्पक्षता की भावना के फलस्वरूप इस पुराण में विभिन्न विषयों का यथार्थ रूप में वर्णन करने की तरफ ध्यान दिया गया है, जिससे उसकी उपयोगिता बढ़ गई है इस दृष्टि से यह पुराण हिन्दू-धर्म की समन्वयवादी विचारधारा की एक बहुत उत्तम कृति है जिसने पृथक्-पृथक् सम्प्रदायों के भेदभाव मिटाने का प्रयत्न करते हुए सब देवों की एकता पर जोर दिया है। इसका विचार क्षेत्र इतना उदार है कि केवल हिन्दू सम्प्रदायों में ही नहीं वरन् बौद्ध और जैन जैसे सर्वथा भिन्न समझे जाने वाले मतों के प्रति भी पृथकत्व की भावना नहीं रखो है। भगवान् भास्कर की स्तुति करते हुए कहा है—

> विस्पष्टा परमा विद्या ज्योतिर्भा शाश्वती स्फुटा।
> कैवल्यं ज्ञानमाविर्भूः प्राकाम्यं संविदेव च ॥
> बोधश्चावगतिश्चैव स्मृतिर्विज्ञानमेव च।
> इत्येतानीह रूपाणि तस्य रूपस्य भास्वतः ॥

अर्थात् "वैदिकों की पराविद्या, ब्रह्मवादियों की शाश्वत ज्योति जैनों का कैवल्य, बौद्धों की बोधावगति, सांख्यों का ज्ञान योगियों का प्राकाम्य,

वेदान्तियों का संवित्, धर्मशास्त्रियों की स्मृति योगाचार का विज्ञान—ये सब रूप एक ही महाज्योतिष्मान् सूर्य के विभिन्न दर्शन हैं।"

इसकी दूसरी विशेषता 'कर्म' को प्रधानता देना है। अन्य अनेक लेखकों ने जहाँ-यज्ञ-हवन आदि को ही धर्म का साधन माना है अथवा गृह त्याग करके तपस्वी या संन्यासी बन जाने को आत्म-कल्याण का मार्ग बतलाया है, वहाँ 'मार्कण्डेय पुराण' में 'देवतत्व' 'इन्द्रत्व' और ब्रह्मत्व तक को कर्मों का परिणाम बतलाया है। यहाँ कर्म का तात्पर्य पूजा, पाठ, जप तप से नहीं वरन् परोपकार और दुःखी प्राणियों के कष्ट निवारण से ग्रहण किया गया है। ऐसे कर्म की प्रशंसा करते हुए पुराणकार कहते है—

"मनुष्य का जो कर्म करुणा से प्रेरित होता है और जिसमें किसी प्रकार के कपट का भाव नहीं होता, उससे मनुष्य को किसी प्रकार का बन्धन नहीं होता और उसकी आत्मा शुद्ध हो जाती है।"

बौद्ध और जैन धर्म के प्रभाव से देश में जब भिक्षु, मुनि, श्रमण आदि की संख्या बहुत अधिक बढ़ गई थी और गृहस्थ धर्म का उत्तरदायित्व पूरा किये बिना ही 'निर्वाण' और 'मोक्ष' के नाम पर कार्यक्षम व्यक्ति निकम्मा जीवन व्यतीत करने लगे थे तब मार्कण्डेय ने गृहस्थ-आश्रम की श्रेष्ठता प्रतिपादित की और स्पष्ट शब्दों में कहा कि 'जो गृहस्थ धर्म का पालन करके पूर्वजों तथा समाज के प्रति अपने कर्तव्य का पालन नहीं करता वह गृह त्याग करके भी किसी प्रकार की सुगति किस प्रकार प्राप्त कर सकता है? इस पर जब विपक्षी यह आक्षेप करते थे कि वेद और उपनिषदों में कर्म-मार्ग को अविद्या कहा है तो फिर उसका अनुसरण क्यों करना चाहिए, तो मार्कण्डेय का उत्तर था कि 'वेदों का यह कथन असत्य नहीं है कि कर्म 'अविद्या' है पर साथ ही यह भी कह दिया है कि विद्या तक पहुँचने का मार्ग अविद्या ही है। कर्तव्य-कर्म का पालन न करके जो 'संयम' का ढोंग करता है वह उत्थान के बजाय अधोगति के गड्ढे में गिरता है।' इस सिद्धान्त का बहुत स्पष्ट समर्थन 'ईशोपनिषद्' में किया गया है जिसमें विद्या और अविद्या का समन्वय करते हुए कहा है।

विद्यां चाविद्या च यस्तद वेदोभयँ सह।
अविद्यया मृत्यु तीर्त्वा विधयामृतमश्नुते ।।

अर्थात् मनुष्य के लिए विद्या रूप ज्ञान-तत्व और अविद्या रूप कर्म-तत्व दोनों का जानना ही आवश्यक है। वह कर्मों के अनुष्ठान से मृत्यु को पारकर ज्ञान के अनुष्ठान से अमृतत्व का उपभोग करता है।' सांसारिक जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिए कर्मों में कुशल होने की आवश्यकता है और पारलौकिक जीवन में सर्वश्रेष्ठ स्थिति तक पहुँचने के लिए ज्ञान का होना अनिवार्य है। साथ ही यह भी निश्चित है कि कर्म की कुशलता प्राप्त किये बिना ज्ञान और मोक्ष का दावा करना एक प्रकार की मूढ़ता है। गीता में भी 'योग: कर्मसु कौशलम्' कहकर इसी सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है। शुकदेव और दत्तात्रेय जैसे पूर्व जन्म के सिद्ध योगियों का उदाहरण तो अपवाद स्वरूप है सामान्य मनुष्यों के लिए जीवन को सार्थक बनाने का कर्म के अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग नहीं है।

गृहस्थ धर्म के प्रतिपादन के साथ मार्कण्डेय ने नारी के महत्व को भी बतलाया है और सामाजिक जीवन में उसे उचित स्थान दिये जाने का समर्थन किया है। यद्यपि बौद्ध-युग में स्त्रियों को भी भिक्षुणी बनने का विधान था, पर गृहस्थी के रूप में उनके दर्जे को बहुत घटा दिया था। उनके कथनानुसार नारी मोक्ष प्राप्ति मे एक बड़ी बाधा है इसलिए उसका त्याग और उपेक्षा ही मोक्षाभिलाषी के लिए आवश्यक है। स्वयं बुद्ध भी अपनी स्त्री यशोधरा को आकस्मिक रूप से छोड़कर चले आये थे इससे इस भावना को और भी अधिक बल मिला था। 'मार्कण्डेय पुराण' ने इस धारणा को सर्वथा अग्राह्य बतलाकर स्त्रियों के ऐसे उपाख्यान उपस्थित किये जिनमें उनको धर्म अर्थ काम मोक्ष की पूर्ण रूप से सहायिका माना गया। मदालसा उपाख्यान (१६,६६,७०) में कहा गया है—

"पति को भर्य्या की सदा रक्षा और पालन करना चाहिए। भार्य्या भर्ता की सहायिका होने पर सम्यक प्रकार धर्म, अर्थ काम की सिद्धि का

निमित्त होती है। भार्या और भर्त्ता दोनों ही जब परस्पर में अनुकूल होते हैं तभी धर्म की प्राप्ति होती है। धर्मादि त्रिवर्ग में समाहित होने के कारण पुरुष जिस प्रकार भार्या के बिना कभी धर्म अर्थ का लाभ करने में समर्थ नहीं होता उसी प्रकार भार्य्या भी स्वामी के बिना धर्म-साधन में समर्थ नहीं होती। ये धर्म आदि दोनों के ही सम्यक प्रकार से आश्रित रहते हैं। उदाहरण के लिए देवता, पितृ, भृत्य और अतिथियों का सत्कार न होने, से धर्माचरण की पूर्ति नहीं होती। यदि पुरुष पर्याप्त धन कमा कर ले आवे पर घर में भार्य्या न हो अथवा वह कुमार्य्या हो तो वह सब धन बिना कुछ लाभ पहुँचाये क्षय को ही प्राप्त होता है। इस-लिए पुरुष और स्त्री जब समान रूप से धर्म का पालन करते हैं तभी त्रयी धर्म लाभ करने में समर्थ होते हैं।"

मार्कण्डेय पुराण के पांच विभागः-

यद्यपि यह पुराण मार्कण्डेय ऋषि के नाम से प्रसिद्ध है, पर इसमें वर्णित कथा प्रसङ्गों के आधार पर ही यह प्रकट होता है कि यह कई वक्ताओं के मुख से निकल कर पूर्ण हुआ है। हम निम्न रीति से इसे ५ भागों में विभाजित कर सकते हैं।

(१) अध्याय १ से ९ तक जैमिनि ने मार्कण्डेय से महाभारत सम्बन्धी शङ्काओं के चार प्रश्न पूछे हैं। पर मार्कण्डेय ने समयाभाव से उनका उत्तर स्वयं न देकर जैमिनि को विन्ध्याचल पर्वत में रहने वाले धर्म-पक्षियों के पास भेज दिया, जिन्होंने उनकी शंकाओं का पूर्ण रूप से समा-धान किया।

(२) अध्याय १० से ४४ तक प्राणियों के जन्म, मरण, विकास आविर्भाव, तिरोभाव आदि के विषय में प्रश्न किया गया। इसका उत्तर वैसे धर्म पक्षियों ने दिया, पर इनका वास्तविक वक्ता जड़ सुमति है, जिसने किसी समय अपने पिता को यही कथा सुनाई थी।

(३) अध्याय ४५ से ८० तक मार्कण्डेय ने अपने शिष्य क्रोष्टकि के प्रति इस पुराण के मूल विषय का वर्णन किया है।

(४) अध्याय ८१ से ९२ तक देवी की कथा है, जिसे मेघा ऋषि ने कहा है। यह कथा देवी भागवत से मिलती हुई है तथा अन्य पुराणों में भी यह विस्तार के साथ पाई जाती है।

(५) अध्याय ९३ से अन्तिम अध्याय तक कुछ विशेष राजाओं का वर्णन किया गया है।

इस पुराण में वर्णित आख्यानों की विविधता और कई वक्ताओं के मुख में इसका कथन देखते हुए स्वाभावतः यह अनुमान होता है कि मूल पुराण में कुछ उपयोगी अंश बाद में संग्रह करके सम्मिलित किये गये है। तो भी देशी और विदेशी विद्वान् आलोचकों की सम्मति के अनुसार यह अब से सोलह-सत्रह सौ वर्ष पूर्व वर्तमान रूप में आ चुका था।

मार्कण्डेय पुराण के मुख्य विषय—

इस पुराण का आरम्भ जैमिनि और मार्कण्डेय के सम्वाद के रूप में होता है। जैमिनि व्यासजी के शिष्य थे और उनकी जगत् प्रसिद्ध रचना महाभारत के बहुत बड़े प्रशंसक थे तो भी स्वतन्त्र चिन्तक होने के कारण उन्हें उसकी कुछ घटनाओं में सन्देह हुआ और मार्कण्डेयजी से उन्होने उनका समाधान करने की प्रार्थना की उनके चार प्रश्न इस प्रकार थे—(१) जगत् की सृष्टि स्थिति संहार करने वाले वासुदेव निर्गुण होकर भी किस कारण मनुष्यत्व कृष्णावतार को प्राप्त हुए ? (२) अकेली द्रौपदी किसी प्रकार पाँचों पाण्डवों की महिषी हुई ? (३) महाबलशाली बल-रामजी ने किस प्रकार तीर्थयात्रा करके ब्रह्म हत्या का प्रायश्चित किया ? (४) महातेजस्वी पाण्डवों द्वारा द्रोपदी में उत्पन्न पाँचों पुत्र किस कारण अविवाहित अवस्था में ही मारे गये ? इन प्रश्नों पर विचार किया जाय तो प्रथम प्रश्न ही महत्व का है, जिसका निर्णय करने का अति प्राचीन-काल से आज तक होता आता है। जब कि परमात्मा पूर्णतया और निराकार है तो वह किस प्रकार सगुण बनाकर संसार की रचना की व्यवस्था ही नहीं करता वरन् मनुष्यों के रूप में अवतार लेकर दुष्टों से इसकी रक्षा भी करता है। यह प्रश्न सदैव दार्शनिकों तथा विचार-

शील लोगों के मध्य विवाद का विषय बना करता है। अन्य धर्म वालों ने भी अपने बुद्ध, तीर्थङ्कर, ईश्वर-पुत्र आदि को विशेष आत्मा के रूप में बतलाया है पर पौराणिक सिद्धान्त के अनुसार साक्षात् परब्रह्म का इस पृथ्वी पर अवतीर्ण होना एक ऐसी घटना है जिसका समाधान सहज में नहीं किया जा सकता ? इसलिए जैमिनि ने उस युग के श्रेष्ठ ज्ञानी समझे जाने वाले मार्कण्डेय के सामने सर्वप्रथम प्रश्न यही रखा कि वे निर्गुण या सगुण की समस्या का ठीक ढङ्ग से निर्णय करें।'

अगले अध्याय में उन चार धर्म-पक्षियों की कथा का वर्णन किया गया है जिनके मुख से मार्कण्डेय पुराण कहलवाया गया है यद्यपि यह कथा मुख्यतः अभिमान से हानि और अतिथि सत्कार की पराकाष्ठा दिखाने के उद्देश्य ही लिखी गई है पर उसमें स्थान-स्थान पर महत्व-पूर्ण दिशाओं को सन्निवेशित किया गया है। जैसी जीवन की अस्थिरता का वर्णन करके मनुष्य को प्रत्येक अवसर पर निर्भय रहकर कठिनाईयों का सामना करने के सम्बन्ध में कहा गया है—

"युद्ध से भागने वालों तथा युद्ध में लड़ने वालों का जीवन उतना ही होता है जितना विधाता द्वारा स्थिर किया रहता है। किसी का भी जीवन उसकी इच्छा के अनुसार नहीं होता। कोई अपने घर मे रहने पर भी मरता है, कोई भागकर भी मरता है, कोई खाते पीते ही मर जाता है। कोई स्वस्थ शरीर से विलास करता हुआ शास्त्रादि से बचकर भी काल के कराल गाल में जा पड़ता है, कोई तपस्या में निरत कौर कोई योगाभ्यास करते यमालय गया है, किन्तु अमर कोई नहीं हुआ। इसलिए कायरता पूर्वक युद्ध से विमुख होना मनुष्य के लिए सर्वथा अशोभनीय है।

धर्म-पक्षियों का उपाख्यान—

तीसरे अध्याय में एक सत्यनिष्ठ सुकृत नामक मुनि का उपाख्यान है। इनकी परीक्षा लेने के लिए इन्द्र बुड्ढे गिद्ध का रूप धारण करके आया और उनसे अपने आहार के लिए मनुष्य का माँस माँगा। सुकृष ने पहले अपने चारों पुत्रों को बुलाकर गिद्ध का आहार बनने के लिए कहा पर वे भयवश

(४) अध्याय ८१ से ६२ तक देवी की कथा है, जिसे मेघा ऋषि ने कहा है। यह कथा देवी भागवत से मिलती हुई है तथा अन्य पुराणों में भी यह विस्तार के साथ पाई जाती है।

(५) अध्याय ६३ से अन्तिम अध्याय तक कुछ विशेष राजाओं का वर्णन किया गया है।

इस पुराण में वर्णित आख्यानों की विविधता और कई वक्ताओं के मुख में इसका कथन देखते हुए स्वाभावतः यह अनुमान होता है कि मूल पुराण में कुछ उपयोगी अंश बाद में संग्रह करके सम्मिलित किये गये है। तो भी देशी और विदेशी विद्वान् आलोचकों की सम्मति के अनुसार यह अब से सोलह-सत्रह सौ वर्ष पूर्व वर्तमान रूप में आ चुका था।

मार्कण्डेय पुराण के मुख्य विषय——

इस पुराण का आरम्भ जैमिनि और मार्कण्डेय के सम्वाद के रूप में होता है। जैमिनि व्यासजी के शिष्य थे और उनकी जगत् प्रसिद्ध रचना महाभारत के बहुत बड़े प्रशंसक थे तो भी स्वतन्त्र चिन्तक होने के कारण उन्हें उसकी कुछ घटनाओं में सन्देह हुआ और मार्कण्डेयजी से उन्होने उनका समाधान करने की प्रार्थना की उनके चार प्रश्न इस प्रकार थे—— (१) जगत् की सृष्टि स्थिति संहार करने वाले वासुदेव निर्गुण होकर भी किस कारण मनुष्यत्व कृष्णावतार को प्राप्त हुए ? (२) अकेली द्रौपदी किसी प्रकार पाँचों पाण्डवों की महिषी हुई ? (३) महाबलशाली बल-रामजी ने किस प्रकार तीर्थयात्रा करके ब्रह्म हत्या का प्रायश्चित किया ? (४) महातेजस्वी पाण्डवों द्वारा द्रोपदी में उत्पन्न पाँचों पुत्र किस कारण अविवाहित अवस्था में ही मारे गये ? इन प्रश्नों पर विचार किया जाय तो प्रथम प्रश्न ही महत्व का है, जिसका निर्णय करने का अति प्राचीन-काल से आज तक होता आता है। जब कि परमात्मा पूर्णतया और निराकार है तो वह किस प्रकार सगुण बनाकर संसार की रचना की व्यवस्था ही नहीं करता वरन् मनुष्यों के रूप में अवतार लेकर दुष्टों से इसकी रक्षा भी करता है। यह प्रश्न सदैव दार्शनिकों तथा विचार-

नाश कर देते हैं। राग से क्रोध होता है, क्रोध लोभ उत्पन्न होता है, लोभ से मोह की उत्पत्ति और उससे स्मृति नाश होता है। स्मृति नाश से बुद्धि नाश और बुद्धि का नाश होने से सर्वनाश होता है।

निर्गुण और सगुण ब्रह्म तथा अवतार—

जैमिनि ने प्रथम प्रश्न के उत्तर में कि निर्गुण ब्रह्म सगुण रूप क्यों और कैसे धारण करते है पक्षियों ने एक 'चतुर्व्यूहात्मक' सिद्धान्त का वर्णन किया। उन्होंने कहा कि 'तत्वदर्शी मुनियों के मतानुसार नार' जल को कहते है। वह 'नार' ही एकमात्र जिसका अयन' अर्थात् घर था उसको 'नारायण' कहा जाता है। वही अनन्तलीला निधान भगवान् विभु नारायण, सगुण और निर्गुणात्मक द्विविध रूप से चार मूर्तियों में अवस्थित हैं। उनकी एक मूर्ति जो अनिर्देश्य अर्थात् वाणी से अतीत है, पंडित लोग जिसको शुक्ल वर्ण कहते हैं, जो नित्य रूपिणी मूर्ति तीनों गुणों को अतिक्रम करके दूर और निकट स्थित रहती है, उस प्रधान स्वरूप पहिली मूर्ति का नाम 'वासुदेव' मूर्ति है। इसमें ममता का लेशमात्र भी नहीं है। उसका रूपवर्ण, नाम जो कुछ कहा जाता है वह सब कल्पनामय है, क्योकि योगी भी उसका वास्तविक अनुभव नहीं कर सकते वह मूर्ति सब काल विराजमान परम पवित्र तथा सदा एक रूप है।

दूसरी मूर्ति 'शेष' या 'संकर्षण' के नाम से पाताल मे निवास करती है और इस पृथ्वी को मस्तक पर धारण किये हुए है। इस मूर्ति ने तामसी होने से तिर्यंगयोनि अवलम्बन की है। तीसरी मूर्ति जिसके कारण सम्पूर्ण कर्म सम्यक् प्रकार साधित होते हैं, जिसके द्वारा प्रजा पालनादि सब कार्य सम्पादित होते हैं, उस सत्वगुणमयी मूर्ति का नाम 'प्रद्युम्न' मूर्ति है। चौथी मूर्ति पन्नग शैया पर जल में शयन करके वास करती है, वह रजोगुण युक्त है। उसके द्वारा ही सदा सृष्टिकार्य सम्पन्न होता है, इस मूर्ति का नाम 'अनिरुद्ध' मूर्ति है। भगवान् की प्रजापालन कारिणी जो तीसरी प्रद्युम्न मूर्ति है, उसी के द्वारा पृथ्वी में सदा धर्म-संस्थापन होता है। धर्म का विनाश करने वाले उद्धत असुरगण उसी के द्वारा मरते हैं और उनके द्वारा ही धर्म रक्षा परायण प्राणी रक्षित होते हैं।

मार्कण्डेय पुराण के मतानुसार उस सृष्टिकर्ता परमेश्वर में निर्गुण और

(४) अध्याय ८१ से ९२ तक देवी की कथा है, जिसे मेघा ऋषि ने कहा है। यह कथा देवी भागवत से मिलती हुई है तथा अन्य पुराणों में भी यह विस्तार के साथ पाई जाती है।

(५) अध्याय ९३ से अन्तिम अध्याय तक कुछ विशेष राजाओं का वर्णन किया गया है।

इस पुराण में वर्णित आख्यानों की विविधता और कई वक्ताओं के मुख में इसका कथन देखते हुए स्वाभावतः यह अनुमान होता है कि मूल पुराण में कुछ उपयोगी अंश बाद में संग्रह करके सम्मिलित किये गये है। तो भी देशी और विदेशी विद्वान् आलोचकों की सम्मति के अनुसार यह अब से सोलह-सत्रह सौ वर्ष पूर्व वर्तमान रूप में आ चुका था।

मार्कण्डेय पुराण के मुख्य विषय—

इस पुराण का आरम्भ जैमिनि और मार्कण्डेय के सम्वाद के रूप में होता है। जैमिनि व्यासजी के शिष्य थे और उनकी जगत् प्रसिद्ध रचना महाभारत के बहुत बड़े प्रशंसक थे तो भी स्वतन्त्र चिन्तक होने के कारण उन्हें उसकी कुछ घटनाओं में सन्देह हुआ और मार्कण्डेयजी से उन्होने उनका समाधान करने की प्रार्थना की उनके चार प्रश्न इस प्रकार थे— (१) जगत् की सृष्टि स्थिति संहार करने वाले वासुदेव निर्गुण होकर भी किस कारण मनुष्यत्व कृष्णावतार को प्राप्त हुए? (२) अकेली द्रौपदी किसी प्रकार पाँचों पाण्डवों की महिषी हुई? (३) महाबलशाली बल-रामजी ने किस प्रकार तीर्थयात्रा करके ब्रह्म हत्या का प्रायश्चित किया? (४) महातेजस्वी पाण्डवों द्वारा द्रोपदी में उत्पन्न पाँचों पुत्र किस कारण अविवाहित अवस्था में ही मारे गये? इन प्रश्नों पर विचार किया जाय तो प्रथम प्रश्न ही महत्व का है, जिसका निर्णय करने का अति प्राचीन-काल से आज तक होता आता है। जब कि परमात्मा पूर्णतया और निराकार है तो वह किस प्रकार सगुण बनाकर संसार की रचना की व्यवस्था ही नहीं करता वरन् मनुष्यों के रूप में अवतार लेकर दुष्टों से इसकी रक्षा भी करता है। यह प्रश्न सदैव दार्शनिकों तथा विचार-

प्रधान (मूल प्रकृति) से लेकर पंच तन्मात्राओं तक है और जिसमें चेतन-अचेतन दोनों सम्मलित है, एक पाद, द्विपाद बहुपाद पर बिना पैरों वाले (सरीसृपादि) जितने प्राणी हैं वे सब विष्णु के मूर्ति रूप है। इसे ही 'इदं सर्वम् या चराचर जगत् कहते है। इसकी रचना तीन प्रकार की भावनाओं से हुई है—ब्रह्म भावना कर्मभावना और आध्यात्मिक भावना। इन्हें क्रमशः सत्त्व रज और तम भी समझा जा सकता है। परब्रह्म रूप विष्णु जब अपनी शक्ति से संयुक्त होता है तब इन्हीं तीन भावों में अपने को प्रकट करता है।"

भगवान् के निर्गुण और सगुण रूप का विवेचन करते हुए 'ब्रह्म पुराण' में कहा गया है कि 'तत्वदर्शी मुनियों ने जल को 'नार' कहा है। वह नार पूर्व काल में भगवान् का 'अयन' (गृह) हुआ, इसलिए वे 'नारायण कहलाये, वे भगवान् नारायण सबको व्याप्त करके स्थित है। वे ही निर्गुण सगुण भी कहे जाते हैं। वे दूर भी है और समीप भी है। जिनसे लघु और जिनसे महान् दूसरा नहीं है जिन अजन्मा प्रभु ने सम्पूर्ण जगत् को व्याप्त कर रखा है जो आविर्भाव तिरोभाव, इष्ट, अदृष्ट से विलक्षण है, सृष्टि और संहार भी जिनका रूप बतलाया जाता है, उन आदि देव परब्रह्म परमात्मा को हम प्रणाम करते हैं। जो एक होते हुए भी अनेक रूप प्रकट होते हैं, स्थूल-सूक्ष्म, व्यक्ति-अव्यक्त जिनके स्वरूप हैं, जो जगत् की सृष्टि, पालन और संहार के मूल कारण हैं, उन परमात्मा को नमस्कार है।"

'मार्कण्डेय' 'विष्णु' 'ब्रह्म' आदि सभी पुराण इस विषय में एकमत हैं कि जो निर्गुण-निराकार ब्रह्म अनादि और अरूप कहा जाता है वहीं सगुण और साकार होकर इस चराचर विश्व को प्रकट करता है। उसको सब से पृथक किसी अगम्य स्थान में विराजमान मानना निरर्थक है वरन् वह विश्व के प्रत्येक छोटे से छोटे और बड़े से बड़े पदार्थ में व्याप्त है और जिसे इस सर्वव्यापी ब्रह्म की अनुभूति प्राप्त हो गई है वह प्रत्येक स्थान और प्रत्येक पदार्थ में उसके से दर्शन कर सकता है। इसी रहस्य को 'रामायण' में शिवजी ने अत्यन्त संक्षेप में कह दिया है—

(४) अध्याय ८१ से ९२ तक देवी की कथा है, जिसे मेघा ऋषि ने कहा है। यह कथा देवी भागवत से मिलती हुई है तथा अन्य पुराणों में भी यह विस्तार के साथ पाई जाती है।

(५) अध्याय ९३ से अन्तिम अध्याय तक कुछ विशेष राजाओं का वर्णन किया गया है।

इस पुराण में वर्णित आख्यानों की विविधता और कई वक्ताओं के मुख में इसका कथन देखते हुए स्वाभावतः यह अनुमान होता है कि मूल पुराण में कुछ उपयोगी अंश बाद में संग्रह करके सम्मिलित किये गये है। तो भी देशी और विदेशी विद्वान् आलोचकों की सम्मति के अनुसार यह अब से सोलह-सत्रह सौ वर्ष पूर्व वर्तमान रूप में आ चुका था।

मार्कण्डेय पुराण के मुख्य विषय—

इस पुराण का आरम्भ जैमिनि और मार्कण्डेय के सम्वाद के रूप में होता है। जैमिनि व्यासजी के शिष्य थे और उनकी जगत् प्रसिद्ध रचना महाभारत के बहुत बड़े प्रशंसक थे तो भी स्वतन्त्र चिन्तक होने के कारण उन्हें उसकी कुछ घटनाओं में सन्देह हुआ और मार्कण्डेयजी से उन्होने उनका समाधान करने की प्रार्थना की उनके चार प्रश्न इस प्रकार थे—(१) जगत् की सृष्टि स्थिति संहार करने वाले वासुदेव निर्गुण होकर भी किस कारण मनुष्यत्व कृष्णावतार को प्राप्त हुए ? (२) अकेली द्रौपदी किसी प्रकार पाँचों पाण्डवों की महिषी हुई ? (३) महाबलशाली बलरामजी ने किस प्रकार तीर्थयात्रा करके ब्रह्म हत्या का प्रायश्चित किया ? (४) महातेजस्वी पाण्डवों द्वारा द्रोपदी में उत्पन्न पाँचों पुत्र किस कारण अविवाहित अवस्था में ही मारे गये ? इन प्रश्नों पर विचार किया जाय तो प्रथम प्रश्न ही महत्व का है, जिसका निर्णय करने का अति प्राचीन-काल से आज तक होता आता है। जब कि परमात्मा पूर्णतया और निराकार है तो वह किस प्रकार सगुण बनाकर संसार की रचना की व्यवस्था ही नहीं करता वरन् मनुष्यों के रूप में अवतार लेकर दुष्टों से इसकी रक्षा भी करता है। यह प्रश्न सदैव दार्शनिकों तथा विचार-

दिखलाओगे । उस स्त्री से भी शिवजी ने इनके साथ पृथ्वी पर जन्म लेकर इनकी पत्नी बनने को कहा ।"

एक और उपाख्यान भी महाभारत के आदि पर्व मे इस सम्बन्ध में पाया जाता है, जिसमे कहा है कि एक ऋषि कन्या ने पति की प्राप्तिके लिए शिवजीकी अराधना करके कठिन तप किया था और जब वे वर-दान देनेको उपस्थित हुए तो उसने 'पति देहि' शब्द पाँच बार कहा। शिवजी ने कहाकि तुमने पाँच बार पतिके लिए कहा है इससे तुम्हारे पाँच पति होंगे ।

वास्तविक बात यह है कि बहु-पतित्व की प्रथा जो पजाबके पहाड़ी प्रदेश कुल्लूमें अभीतक चली आती है, भारतके शेष भागमें अनैतिकमानी जातीहै । इसलिये महाभारतमे द्रोपदीके पाँच पतियोंका उल्लेख करनेके पश्चात् उसे धर्म तथा नितियुक्त सिद्ध करनेके लिए आख्यानों के रूप में उसका कारण समाजना पड़ा । आध्यात्मिक दृष्टिवाले विद्वानोंने इसका स्पष्टीकरण वैदिक साहित्यमें वर्णित पचेन्द्र' कल्पनाके आधारपर किया है । उनका कथन है कि मानव शरीरमें स्थित पाँचों इन्द्रियोंका संचालन पाँच प्राणों द्वारा होता है । प्रत्येक 'प्राण' को इन्द्र कहाजाता है और उसीके कारण 'इन्द्रिय' नाम पड़ गया है । इन पाँचोंके पीछे एक मध्य-प्राण है जोइन पाँचोंको प्रदीप्त रखता है । इसको महेन्द्र कहा गया है । इस प्रकार एक मुख्य प्राण शक्ति पाँच इन्द्रियों के साथ सहयोग करतीं है । पुराणोंमे वैदिक तत्वों को उपाख्यानों के रूप में डाल कर समझाने की शैली अपनाई गई है उसका परिणाम यह पाँच इन्द्रों द्वारा पाण्डवों की उत्पत्ति का कथानक है ।

द्रौपदी के पांच पतियों के इस उपाख्यानों से नैतिक शिक्षा यह भी प्राप्त होती है कि सदाचार का त्याग करने से इन्द्र जैसा शक्तिमान् देवराज भी उसके कुपरिणाम से नहीं बच सकता । पर स्त्री गमन और वचन-भंग के दोष से इन्द्र का पतन हो गया और उस को नरलोक में आकर उसका प्रायश्चित करना पड़ा ।

(४) अध्याय ८१ से ९२ तक देवी की कथा है, जिसे मेधा ऋषि ने कहा है। यह कथा देवी भागवत से मिलती हुई है तथा अन्य पुराणों में भी यह विस्तार के साथ पाई जाती है।

(५) अध्याय ९३ से अन्तिम अध्याय तक कुछ विशेष राजाओं का वर्णन किया गया है।

इस पुराण में वर्णित आख्यानों की विविधता और कई वक्ताओं के मुख में इसका कथन देखते हुए स्वाभावतः यह अनुमान होता है कि मूल पुराण में कुछ उपयोगी अंश बाद में संग्रह करके सम्मिलित किये गये है। तो भी देशी और विदेशी विद्वान् आलोचकों की सम्मति के अनुसार यह अब से सोलह-सत्रह सौ वर्ष पूर्व वर्तमान रूप में आ चुका था।

मार्कण्डेय पुराण के मुख्य विषय—

इस पुराण का आरम्भ जैमिनि और मार्कण्डेय के सम्वाद के रूप में होता है। जैमिनि व्यासजी के शिष्य थे और उनकी जगत् प्रसिद्ध रचना महाभारत के बहुत बड़े प्रशंसक थे तो भी स्वतन्त्र चिन्तक होने के कारण उन्हें उसकी कुछ घटनाओं में सन्देह हुआ और मार्कण्डेयजी से उन्होने उनका समाधान करने की प्रार्थना की उनके चार प्रश्न इस प्रकार थे— (१) जगत् की सृष्टि स्थिति संहार करने वाले वासुदेव निर्गुण होकर भी किस कारण मनुष्यत्व कृष्णावतार को प्राप्त हुए ? (२) अकेली द्रौपदी किसी प्रकार पाँचों पाण्डवों की महिषी हुई ? (३) महाबलशाली बलरामजी ने किस प्रकार तीर्थयात्रा करके ब्रह्म हत्या का प्रायश्चित किया ? (४) महातेजस्वी पाण्डवों द्वारा द्रोपदी में उत्पन्न पाँचों पुत्र किस कारण अविवाहित अवस्था में ही मारे गये ? इन प्रश्नों पर विचार किया जाय तो प्रथम प्रश्न ही महत्व का है, जिसका निर्णय करने का अति प्राचीनकाल से आज तक होता आता है। जब कि परमात्मा पूर्णतया और निराकार है तो वह किस प्रकार सगुण बनाकर संसार की रचना की व्यवस्था ही नहीं करता वरन् मनुष्यों के रूप में अवतार लेकर दुष्टों से इसकी रक्षा भी करता है। यह प्रश्न सदैव दार्शनिकों तथा विचार-

स्वभाव और सब प्रकारकी सुख-सामग्रीकी तरफसे उदासीन रहनेवाला था, जब उसका उपायन होने का अवसर आया और पिताने उसे चारों आश्रमोंके कर्तव्योंका उपदेश दिया तो उसने हँसकर कहा कि 'हे पिता! आपने इस समय मुझेजो उद्देश दियाहै मैंने अनेकबार उसको सुनातथा उसका अभ्यास कियाहै । अनेक शास्त्रों तथा बहुत प्रकार शिल्पोंका भी मेने अभ्यास किया है,मैंने अनेकबार दुःख पाया, अनेक बार सुख प्राप्त किया, अनेकबार उच्चदशाका और फिरहीन अवस्थाका अनुभव किया। मुझे इन सब बातोंका ज्ञानहै तो अब वेदाभ्यासका क्या प्रयोजन है?मेरा अनेकबार शत्रु-मित्र और सम्बन्धियोंसे मिलाप और वियोग हुआ है अनेक माता तथा अनेक पिता देखेहैं, हजारों सुख-दुःख सहन किये हैं। मलमूत्र से भरे स्त्री के जठर में अनेक बार बास किया है,सहस्र सहस्र रोगोंकी दारुण यंत्रणा भोगी है। मैंने कितनीबार ब्राह्मण, क्षत्रिय,वैश्य, शूद्र,पशु,कीट,मृग और पक्षी की योनिमें जन्म ग्रहण कियाहै। जिसप्रकार इस समय आपके घरमें उत्पन्न हुआहूँ ऐसे अनेक बार राजसेवकों और अनेकबार योद्धाओंके घर में उत्पन्न हुआहूँ । मैं अनेकबार मनुष्योंकामृत्य और दास बनाहूँऔर अनेकबार स्वामी तथा प्रधान भी होंचुकाहूँ। मैंने अनेक मनुष्योंको माराहै और अनेकबार अन्य मनुष्योंद्वारा मारागयाहूँ। मेने अनेकबार दानकिया है और अनेककर औरोंसे ग्रहणभी कियाहैं । हे तात!इस प्रकार संकटमय संसार चक्र में निरन्तर भ्रमण करते हुएमुझे यह ज्ञान प्राप्त हुआ है किवेदों के कर्मकाण्डों के मार्गसे में इसदुःखदायी संसार-चक्र से छुटकारा नहींपा सकता । जबमैं मोक्ष प्राप्तिके वास्तविक मार्ग को जान चुका हूँ तब मुझे वेदाभ्यास को क्या आवश्यकता है ?''

इस प्रकार सुमति ने पुनर्जन्म के सिद्धान्त का बड़े स्पष्ट रूपसे वर्णन कियाहै और साथही सकाम कर्मकाण्ड के मार्गकी अपेक्षा निष्काम भावसे कर्तव्य पालनकी श्रेष्ठताभी बतलाईहै । साथहीउस युगमें बौद्धिभिक्षुओं तथाहिन्दु सन्यासियोंमें संसारके सब बन्धनोंको त्यागकरआत्म साक्षात्कार और ब्रह्म प्राप्तिका जोआदर्श पायाजाताहै उसकाकी प्रतिपादन कियाहै।

पर यह पुराणकार का निजी अभिमत अथवा अंतिम निर्णय नहीं है। आगे चल कर उन्होंने गृहस्थ धर्म का पालन किये बिना कर्म त्याग और सन्यास की भर्त्सना भी की है ओर कहा है कि जो व्यक्ति "आश्रमों के राज-मार्ग को त्याग छलाँग मारकर मुक्ति-पद पर पहुँच जाना चाहता है उसे प्रायः नीचे ही गिरना पड़ता है।"

नरकों का वर्णन प्रायः सभी पुराणों में एक-सा पाया जाता है विभिन्न प्रकार के पापों के फल से मरणोपराँत भयंकर कष्ट भोगने पड़ते हैं, पापियों को दण्ड प्रहार करते हुए कुश, काँटे, गड्ढे, पथरीली भूमि पर खींचकर ले जाया जाता है और बारहवें दिन भयङ्करआकृतिबाले यमराजके सम्मुख खड़ाकिया जाता है। वहाँ 'मिथ्यावादी, मिथ्यासाक्षी देने वाले, मनुष्य और अन्य प्राणियों की हत्या करने वाले, भूमि सम्पत्ति तथा स्त्री का हरण करने वाले, अगम्या स्त्रियों से दुराचर करने वाले लोगोंको रौरव नरक में डाला जाता है। वर रौरव नरक दो हजार योजन बिस्तृत है और उसमें जाँघ की बराबर गहरा गढ़ा है। उस गढ़े में लाल अङ्गारे भरे रहते है जिनपर होकर पापी मनुष्य को चलना पड़ता हैं। उसके पैर पग पग पर अग्नि से फटते और नष्ट होते हैजिससे वह दिन रात में एक बार पैर रखने और उठाने में समर्थ होता है। इसी प्रकार चरण रखते हुए सहस्र योजन पार कर लेने पर वहाँ से छुटकारा पाता है और पाप शुद्धि के लिए उसी के समान दूसरे नर्क में जाता है और इसी प्रकार सब नरकों को पार करना पड़ता है।'

नरक का यह वर्णन बड़ा विस्तार है और विभिन्न पुराणो में इस प्रकारके वीभत्स विवरणके अध्यायके अध्याय भरे पड़ेहैं। तामस नरकमे कड़ाकेकी सर्दी पड़ती और सदैव घोर अंधेरा छाता रहताहै। वहाँ सर्दी से कष्ट पाकर पापी मनुष्य इधरसे उधर दौड़ते रहते हैं औरठंडको मिटानेके लिए परस्पर लिपटते हैं। ठंडकी अधिकतासे दाँत ऐसे कड़कड़ाते है कि वे टूटकर गिरजाते है। भूख प्यासभी वहाँवहुत लगती है पर उसकी निवृत्ति का कोई साधन नहीं होता। ओलोंके साथ बहनेवाली भयङ्कर-हवाशरीर की हड्डियोंको तोड़ देती है और मज्जा तथा रक्त बाहर

गिरताहै। वे भूखे प्राणी उसी को खाकर भूखको मिटाते हैं। इस प्रकार अनेक वर्षों वे अन्धकार में पड़े वे कष्ट भोगा करते हैं।

तीसरे 'निकृन्तन' नामक नरकमे बहुतसे चक्र लगातार घूमते रहते हैं। यमदूत पापी जीवों को उनके ऊपर चढाकर तेजीसे घुमाते हैं और कालसूत्र नामक यन्त्रसे उनके प्रत्येक अङ्गको बार-बार काटते रहते हैं। पर इससे उन पापियोंका प्राण नही निकलता वरन् शरीर के सैंकड़ों टुकड़े होने परभी वे फिर जुड जाते हैं और उनको पुनः काटे जाने की महाकष्ट कारक प्रक्रिया सहन करनी पडती है। चौथे 'अतिष्ठ' नरक में भी वैसे ही कुम्हारोंके से चक्र और घटी यन्त्र होते हैं। पापियोंको उन चक्रों पर चढ़ाकर निरन्तर घुमाया जाता है और कभी विश्राम नहीं लेने दिया जाता जिससे उनको अपार कष्ट होता है। इसी प्रकार अन्य पापियों को रहटके समान एक घटीयन्त्र में बाँधकर नीचे ऊपर घुमाया जाता है, जिससे उनके मुख से रक्त, लार गिरती है, आँखों से अश्रु बरसते हैं और वे असह्य कष्ट का अनुभव करते रहते हैं।

पाँचवा 'असिपत्रवन' अत्यन्त भयङ्कर है। जब उसमें पापी मनुष्य गर्मी से व्याकुल होकर हरे-भरे पेड़ों की छाया में भागते हैं तो उनके ऊपर पेड़ोंके पत्ते जो तलवारोंकी तरह होते है गिर जाते हैं और उनके अङ्गों को छिन्न-भिन्न कर डालते है। उसी समय कुत्ते रूपी यमदूत वहाँ आकर टुकड़े-टुकड़े कर डालते हैं। छटवाँ 'तप्त कुम्भ' नरक है जिसमें पापियों को खौलते हुए तेल और लोहे के चूर्ण से भरे घड़ों में डालकर घोर कष्ट पहुँचाया जाता है।

इसमें सन्देह नहीं कि नरकोंका यह वर्णन हृदयको कँपाने वाला है और उसे सुनकर एक बार घोर पापी व्यक्तिभी सहम [illegible] सकनातो कठिनहैकि इसविश्वके किसी कोनेमें वास्त[illegible]ऐसास्थान है या नहींजहाँ उपयुक्त प्रकारके अनुभव होतेहों,पर य[illegible]इस समस्यापर आध्यात्मिक दृष्टिसे विचार करते हैं तो मालूम [illegible] अहंकार,मोह कामवासना औरमद जोमनुष्यकापतन[illegible]वाले षड्रिपु क[illegible] गयेहै वे ही नरक हैं और जोव्यक्ति उनके वशीभूत[illegible]तो [illegible]

युक्त नरकों की सी पीड़ाइसी दुनियामें भोगता रहताहै। क्रोधकी अग्नि रौरव नरकसे कमनहीं होती और कितनेही व्यक्ति उसके पंजेमेंपकड़कर सारा जीवन घोर अशान्ति और मानसिक जलनमें ही व्यतीतकर देतेहैं। इसी प्रकार जिस व्यक्तिके पीछे लोभका भूतलग जाताहै वहसदा प्रत्येक पदार्थका अभावही अनुभवकरताहै। उसकी तृष्णाकी कभीपूर्ति नहींहोती और इससे उसके उत्साह और आशाओंपर तुषारपात होजाताहै औरवह 'तम' नरक के कष्टोंको इस पृथ्वीपर हीसहन करता रहता है' निकृन्तत' नर्कका वर्णनकिसी अहङ्कार ग्रस्त प्राणीके वर्णनसे ही मिलताजुलता है। अहङ्कारी व्यक्तिअन्य व्यक्तियोंको तुच्छ समझकर बड़े गरुर केसाथअपने बड़प्पनकी तरह-तरहकी कल्पनायें खड़ीकरता रहताहै,पर वेसब वास्तविकता के धरातल पर टुकड़े-टुकड़े हो जाती है। इससे उसका हृदय विदीर्ण हो जाता है और वह असह्य पीड़ा अनुभव करता है।

अप्रतिष्ठ' नरक मोह का परिणाम होता है। सांसारिक पदार्थों के मोह में फँसकर वह एक बार अपने धन्य और सफल समझने लगता है, पर फिर जब उनका वियोग हो जाता है तो खेद से भरकर आँसू बहाता रहता है। जल भरने के रहटकी तरह वह बार-बार भरता और खाली होता रहता है और इसके परिणाम स्वरूप उसके हृदय में सदैव हलचल मचती रहती है। 'असिपत्र वन' नरक दूषित कामवासना का रूपक है। दुराचार या व्यभिचार की वासना यद्यपि दूरसे बड़ी सुन्दर और मनमोहक जान पड़ती है, पर उसका परिणाम तलवार या छुरी से आलिंगन करने के समान ही नाशकारी होता है। क्रोधाग्नि के समान कामाग्नि भी बहुत जलाने वाली है। इससे शक्ति का और भी क्षयहोता है और मनुष्यों का जीवन नष्ट प्रायः हो जाता है। छठा नर्क 'तप्तकुम्भ कहा गया है जो 'मद' का परिणाम होताहै। उसके कारण मनुष्य अपनी छोटी-मोटी सफलताओं या सामान्य वैभव परबहुत फूलता रहता है पर जब वह दूसरोंको अपने से बढा-चढा देखताहै तो उसके भीतर ईर्ष्याद्वेष की ऐसी अग्नि प्रज्वलित होती है कि शरीरका समस्त रस-रक्त खौलने लगता है और हृदय में लोहे के हजारों नुकीले टुकड़े चुभने लगते हैं।

मार्कण्डेय पुराण का यह नर्क-वर्णन एक बहुत बड़ा प्रभावशाली रूपक है जिसका आशय यही है कि यदि मनुष्य,को साँसारिक व्यथाओं, पीडाओं ज्वालाओं से बचना है तो उसे, काम क्रोध, आदि मानसिक दुष्प्रवृत्तियों से बचकर सदाचार पूर्ण जीवन व्यतीत करना चाहिए। सदाचार और इन्द्रियों का संयम ही स्वर्ग का द्वार है और इसके विपरीत इन्द्रियों का दुरुपयोग, दुराचरण हर प्रकार से कष्टदायक और दुर्गति में ग्रस्त करने वाला है। साथ हीं हम यह भी स्वीकार करते हैं कि नर्क-वर्णन में तथ्य का अंश चाहे कितना भी कम ज्यादा हो, पर सामान्य अशिक्षित जनता पर उसका बड़ा प्रभाव पड़ा है और करोड़ों व्यक्तिउससे भयभीतही पाप कर्मोसे न्यूनाधिक परिणाम मेंबचते रहतेहैं।

महमानव के लक्षण—

नरकों के वर्णनके प्रसगमें विपश्चित नामक एक राजाका भीकथानकआगया है,जो थोड़ी देरकेलिए नरक दर्शनके लिएलाया गयाथा और जिसने उसअवस्थामें भीपरोपकार धर्मको नहींछोड़ा। अगणित नारकीय जीवोंका उसनेउसीसमय उद्धारकिया। उसकासम्पर्क प्राप्त होनेसे समस्त नर्कवासी जीवोंको कुछ सुख मिलने लगा,यह देखकर उसने स्वर्ग-सुखको छोड़कर वहीं रहनेका आग्रह किया और कहाकि उसने जोकुछपुण्यकिया है उसके बदलेमें इन पापियोंका उद्धार कर दिया जाय। वह वहाँसे तभी हटा जब वहाँ पर उपस्थित नरक निवासियों को छुटकारा मिल गया। राजा की इस महामानवता के फलस्वरूप भगवान विष्णु का विमानउसे लेने आया और उसे स्वर्ग को सर्वोच्छ स्थिति प्राप्त हो गई।

ऐसा पुण्यवान् राजाभी किसकारण नर्क दर्शनके लिये लायागयाइस की कथाभीबड़ी शिक्षाप्रद है। यमदूतनेउसे बतायाकिविदर्भ देशकी राजकुमारी आपकी पत्नीथी। जबवह ऋतुमती हुईतो आपउसकी उपेक्षाकरके केकय देशकी रानीके साथ बिहार करते रहे। ऋतुकालके समयतोस्त्री-पुरुषका समागमएक प्राकृतिक नियमहैंजिससे प्रजाको उत्पत्ति होतीहैऔर सृष्टि-क्रम स्थिर रहता है। इस दृष्टिसे उसे दूषित नही बतलायागया है।

पर अन्य समयमें स्त्री का उपभोग कामसक्तता का लक्षण है । प्राकृतिक नियमका उल्लंघनकरके विषयासक्तताका आचरण धर्मकी दृष्टिसे एकपा कर्म ही है और इसीके फलस्वरूप आपको कुछ क्षणोंके लिए नर्क प्रदेशमें आना पड़ा । शास्त्रमेंभी कहा गयाहैकि जैसे हवनके समयअग्नि घृताहुति कीप्रतीक्षा करतीहै इसीप्रकार ऋतुकालमे स्वयं प्रजापति ऋतुआधानकी प्रतीक्षा करताहै। दूसरीशिक्षा इस आख्यानसे यहभीप्राप्त होतीहैकि त्याग सबसेवड़ा पुण्यहैऔर इसके द्वारासामान्य पुण्यभी अनेक गुणाबढ़ जाताहै।

पातिव्रत धर्म की लोकोत्तर महिमा—

पातिव्रत का आदर्श भारतवर्ष की एक ऐसी विशेषता है जिसका अस्तित्व संसारके अन्य किसी समानमें नहीं पाया जाता । भारतीयधर्म-कथा लेखकों ने पति-पत्नीके सम्बन्धको अमिट बना दियाहै औरउसकी शृंखलाको जन्मान्तरतक विस्तृतकर दिया है। इस सम्बन्धमें जोआख्यान विभिन्न स्थानोंमेपाये जातेहैं उनमें अतिशयोक्तिसे काम लियागया है,पर उनका उद्देश्य यहीहैकि लोगोंके हृदयमें यहतथ्य भली-भाँति जमजाय । मार्कण्डेय पुराणके सोलहवें अध्याय में एक पतिव्रता द्वारा सूर्य का उदय होना रोक देने की कथा ऐसी ही है । ब्राह्मणीका पति कोढ़ी होनेपरभी वेश्यागमनके लिए लालायित हुआ,पर मार्गमेउसेमाण्डव ऋषिगारासूर्योदय होतेही मरनेका शाप देदिया गया । इसपर पतिव्रताने कहाकि'अबसूर्यका उदयही नहीहोगा ?' ऐसा होनेपर सब प्रकारके यज्ञ, सध्या, श्राद्ध आदि भी रुक गये । तब देवताओ की प्रार्थनापर अत्रि ऋषिकी पतिव्रता पत्नी उस ब्राह्मणीके पास गईऔर उसेराजी करके सूर्योदय करायाऔर उसके पतिकी मृत्यु होजाने पर उसे अपने पतिव्रता के बलसे पुनर्जीवितकिया । इस आख्यानका उद्देश्य पतिव्रत धर्मकी अलौकिक शक्ति का प्रभाव सा-मान्यजनों के हृदय में स्थापित करना ही है, जो समाज के हितकी दृष्टि से एक कल्याणकारी प्रवृत्ति ही मानी जायेगी । इस घटना के परिणाम स्वरूप ब्रह्मा, विष्णु और शिव की शक्तियों ने चन्द्रमा, दत्तात्रेय और दुर्वासा के रूप में अनुसूया के पुत्र होकर जन्म लिया है ।

मदालसा का उपाख्यान—

महालसा का उपाख्यान कई दृष्टियोंसे धार्मिक जगतमें प्रसिद्धहैऔर वह भारतीय नारियोंकी आध्यात्मिक ज्ञान-प्रियता तथा वैराग्य-भावना की दृष्टिसे महत्वपूर्ण है। मदालसा राजकुमार ऋतध्वज की पत्नीथीजो उनको पातालकेतु नामक दैत्याका संहार करतेहुए मिली थी। कुछसमय पश्चात् पातालकेतु के भाईने ऋतध्वज के साथ छल करके मदालसाको यह असत्य समाचार सुनायाकि 'ऋतध्वज तपस्वियों की रक्षा करते हुए किसी दुष्ट दैत्यके हाथ से मारे गये ? 'इसको सुनकर मदालसा ने शोक मग्न होकर उसी समय प्राण त्याग दिए। ऋतध्वज को वापस आनेपर इस शोकजनक घटना का हाल बिदित हुआ और उसने कहा—'यहबला धन्य थी जिसने मेरी मृत्युकी बात सुनते ही प्राण त्याग दिए। मैं बड़ा कठोर प्राणी हूँ जो उसके बिना जीवितहूं। पर यदि मैं जीवन दे डालूँ तो उसका क्या उपकार होगा ? इसलिए मै यह प्रतिज्ञा करता हूँ कि यदि मदालसा ने मेरे लिए प्राण त्याग दिया तो मै भी जीवनभर अन्य स्त्री को अपनी सहचारिणी नहीं बनाऊँगा और सदैव उसकी स्मृति को ताजा रखकर परोपकारमय कार्यों में ही लगा रहूँगा।"

कुछ समय पश्चात् ऋतध्वज की दो नाग कुमारों से मित्रता होगई ब्राह्मण के वेश में उसके पास आते थे। उन्होंने ऋतध्वज की मनोव्यवस्था को जानकर एक दिन उसका जिक्र अपने पिता अश्वतरसे किया और कहा कि हमको कोई ऐसा उपाय नहीं सूझताकि जिससे उसकाकुछ उपकार किया जा सके। जो मर चुका उसे सिवाय भगवान के और कौन फिर से जीवित कर सकता है। पिता ने कर्म की महिमा बतलाते हुए कहा—द्युलोक और पृथ्वी में ऐसा कोई असम्भव कार्य नहींहै जिसे मन और इन्द्रियोंके संयम से युक्त मनुष्य सिद्ध न कर सके। कर्म सर्व प्रधान है। चलती हुई चींटी अनेक योजन तक चली जाती है, पर बिना चले शीघ्रगामी गरुड़ भी जहाँ का तहाँ पड़ा रहता है।"

अपने कथन को सत्य सिद्ध करने के लिए अश्वतर ने शिवजी की तपस्या करके मदालसा को जीवित करादिया और उसे ऋतध्वज को प्रदान करके उसके जीवन को पुन.सरस और सुखी बना दिया। इस प्रकार इन्होंने यह भी दिखला दिया कि मित्रता का अर्थ केवल ऊपरी शिष्टाचार ही नहीं है। वरन् मनुष्य को मित्र का सच्चा हित साधन करने के लिए कठिन से कठिन काय को अङ्गीकृत करने में संकोच नहीं करना चाहिए।

जब मदालसाके प्रथम पुत्र उत्पन्न हुआ और राजा ऋतध्वजने उसका विक्रान्त नाम रखा तो वह वहुत हँसने लगी। राजा की कल्पना थी कि मेरा पुत्र समस्त शत्रुओं कों नष्ट करने वाला महावीर योद्धा बनेगा और बड़े-बड़े वीरता के काम करके वंश के नाम बढ़ायेगा। पर मदालसा उसको अपना दूध पिलाने के साथ शेशववस्था से ही लोरियो के रूप में आध्यात्म ज्ञान की शिक्षा देने लगी। वह कहती थी

"हे तात ! तू तो शुद्ध आत्मा है। तेरा कोई नाम नही है। यह कल्पित नाम तो तुझे अभी मिला है। यह शरीर ही पाँच भूतोंका बना है। न वह तेरा है, न तू इमका है। फिर तु किसलिए रोता है ?"

"जैसे इस जगत में अत्यन्त दुर्बल भूत अन्य भूतोंके सहयोगसे वृद्धि को प्राप्त होते है, उसी प्रकार अन्न और जल आदि भौतिक पदार्थों के पाने से पुरुष के पंचभौतिक देह की पुष्टि होती है। इससे तुझ शुद्ध आत्मा की न तो वृद्धि होती है और न हानि ही होती है।"

"तू अपनी इस देह रूपी चोले के जीर्ण-शीर्णहोने पर मोह नकरना शुभाशुभ कर्मोंके अनुसार यह देह प्राप्त हुआ है। तेरा यह चोला माँस मेद आदि से बंधा हुआ है, पर तू इससे सर्वथा पृथक् है।"

"कोई जीव पिताके रूप में प्रसिद्ध है, कोई पुत्र कहलाता है किसी को माता पिता और किसीको प्रिय पत्नी कहते हैं। कोई 'यह मेरा है' कहकर अपनाया जाता है और कोई 'यह मेरा नहीं है' इस भाव से पराया माना जाता है। इस प्रकार ये भूत समुदाय के ही नाम रूप हैं ऐसा तुझे मानना चाहिए।"

"यद्यपि समस्त भोग दुःख रूप है तथापि मूढ़चित मानव उन्हेंदुःख दूर करने वाला तथा सुख की प्राप्ति कराने वाला समझ लेता है। पर जो ज्ञानी हैं और जिनका चित्त मोह से आच्छन्न नहीं हुआ है, वे उन भोगजनित सुखों को भी दुःख ही मानते हैं।"

"स्त्रियों की हँसी क्या है हड्डियों (दाँतों का प्रदर्शन है। जिसे हम अत्यन्त सुन्दर नेत्र कहते हैं वे मज्जा की कलुषता है। कुच आदि अङ्ग माँस की ग्रन्थियाँ हैं। इसलिए पुरुष जिस स्त्री पर मोह के भाव से अनुराग रखता है क्या वह एक प्रकारसे हाड़-माँस की ढेरी ही नहीहैं ?

"पृथ्वी पर सवारी चलती है, सवारी पर यह शरीर बैठा रहता है। और इस शरीर के भीतर भी एक दूसरा पुरुष बैठा हुआ है। पर हम सवारी और पृथ्वी पर वैसी ममता नहीं रखते जैसी की अपनी इस देह में रखते हैं। यही मूर्खता है।"

इसी प्रकार के सत् उपदेश देकर मदालसा ने अपने प्रथमतीन पुत्रों को अध्यात्म मार्गका पथिक और साँसारिक प्रपंचसे विरागी बनादिया। तब राजा ने उससे कहाकि अब एक पुत्रको राजधर्म तथा गृहस्थधर्म की शिक्षा देनी चाहिए जिससे वहहमारे उतराधिकारीको ग्रहण करकेराज्य संचालन करसके। राजाके आग्रह को स्वीकार करके मदालसा चौथे पुत्र अलर्क को लोरियाँ सुनाते हुए इस प्रकार उपदेश देने लगी।

"बेटा ! तू धन्य है जो शत्रु रहित होकर चिरकाल तक पृथ्वीका पालन करता रहेगा। पृथ्वी के पालनसे तुझे सुखकी प्राप्तिहो औरधर्म के फलस्वरूप तुझे अमरत्वमिले।पर्वोंपर सद्ब्राह्मणको भोजनसे तृप्तकरना, वन्धुबांधवोंकी इच्छापूर्ण करना,अपने हृदयमें दूसरोंकी भलाई का ध्यान रखनाऔर पराई स्त्रियोंकी ओर कभी मनकोन जाने देना। अपनेमनमें सदा भगवानका चिन्तन करना,उनके ध्यानद्वारा अन्तःकरणके कामक्रोध आदिछहों शत्रुओंको जीतना,ज्ञानके द्वारा मायाका निवारण करनाओर जगतकी अनित्यताका विचारकरते रहना। धनकी आयके लियेराजाओं

पर विजय प्राप्त करना, यशके लिए धनका सद्व्यय करना, परायीनिन्दा सुननेसे विरत रहना और विपत्तिमें पड़ेहुए व्यक्तियोंका उद्धार करना।

'बाल्यावस्थामें तू भाई बन्धुओंको आनन्द देना, कुमारावस्थामेआज्ञा पालनद्वारा गुरुजनोको सन्तुष्टरखना, युवावस्थामेंगृहस्थ, धर्मकापालनकरके कुलको सुशोभित करनेवाली पत्नीको प्रसन्न करनाऔर बृद्धावस्थामे बनके भीतर निवास करकेवहाँ रह वाले त्यागी तपस्वियेकी सहायता करना।

'हे तात! राज्य करतेहुए मित्रोंको सुखदेना, सज्जनोकी रक्षा करते हुए लोकोपयोगी यज्ञोंऔर उत्सवों की परम्परा को स्थिर रखना ओर देश की रक्षा के लिए आवश्यकता हो तो दुष्टो, शत्रुओंका सामना करके प्राण भी निछावर कर देना।"

राजधर्म और राजनीति का आदर्श—

माता द्वारा खेल खेलते हुएही इस प्रकार के जीवनादर्श के उपदेश प्राप्त करता हुआ अलर्क जब कुछ बड़ा हो गया और उसका उपनयन संस्कार हुआतो उसने माताको प्रणामकरके कहाकि'लोक और परलोक के सुख तथा जीवनकी सफलता प्राप्त करनेके लिए क्या करना चाहिए इसका मेरे प्रति उपदेश करिये।

मदालसाने कहा—'पुत्र-राजाका सर्वप्रथम कर्तव्य धर्मानुकूल आचरण करते हुए प्रजाकी रक्षा और उसे संतुष्ट रखना है राजाको उचितहै कि वह सातों व्यसन-कटुभाषण, कठोर दण्ड, धनका अपव्यय, मदिरापान, कामासक्ति आखेटमे व्यर्थसमय गँवाना और जुआ खेलनासे सदैव बचकर रहे क्योंकिये मूलोच्छेद करने वालेहैं। अपनी गुप्त मंत्रणाको कभीप्रकट नहीं होने देना चाहिये, क्योंकि शत्रु सदैव ऐसे मौकेकी ताकमें रहतेहैंऔर गुप्त भेदोंका पता लगाकर आक्रमण करके राज्यका नाशकरनेको तत्पर होजाते हैं। राजाको अपना गुप्तचर विभाग बहुत उत्तम रूपसे संगठित करके रखना चाहिए जिससे मालूम पड़ता रहे कि शत्रु उसके राज्य में किस प्रकारकी भेदनीति या तोड़फोड़की योजना कर रहे हैं और अपने साथियों में से कौन सच्चा है औरकौन शत्रु के बहकावे मे आ गया है।

सबके साथ प्रेम युक्त व्यवहार करते हुए भी राजा को अपने मित्रोंतथा सगे सम्बन्धियों पर भी आँख बन्द करके विश्वास नहीं करना चाहिए, पर आवश्यकता पड़ने पर शत्रु पर भी विश्वास करलेना चाहिए। उसे युद्ध तथा शान्तिके अवसरों का पूराज्ञान रखना चाहिए। सन्धि(शत्रु से मेल रखना) विग्रह (युद्ध छोड़ना)यान(आक्रमण करना) आसन(अवसर की प्रतीक्षा मे रहना) द्वैधीभाव (दुरंगी नीतिसे काम लेना) समाभाव किसी बलवान् राजा की शरण लेना)–इन छः उपायों का राजा कोपूरा ज्ञान होना चाहिए। राजा को पहले अपनी आत्मा को जीतना चाहिए, फिर मन्त्रियों को जीते,फिर कुटुम्बीजनों तथा सेवकोंके हृदय पर अधिकार करे, फिर समस्त प्रजाको अपना अनुरक्त बनाइये और तबशत्रुओं के साथ विरोध करे। जो इन सबको जीते बिना ही शत्रुओं से विरोध कर लेता है वहप्रायः असफलता का ही मुख देखता है और अपनीहानि कर लेता है।

'काम, क्रोध, लोभ. मद,मान, और हर्षोन्मत्तता ये मनुष्यो केलिए पतन करानेवाले दोषहैं। राजातो इनके वशीभूत होकर नष्टही होजाता है। राजाको कौआ,'कोयल, भौरा, हिरन, साँप, हस, मुर्गाऔर लोहेके व्यवहार से भी शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। जिस प्रकार कौआ सदैव आलस्य रहित रहता है,कोयल दूसरोसे अपना काम निकालती है,भौरा सब से रस लाभ लेता रहता है, हंस नीर क्षीर विवेक रखता है, मुर्गा ब्रह्म मुहूर्त में ही जागकर कर्मरत हो जाता है तथा लोहा सबके लिये अभेद्य और तीक्ष्ण रहता है, वैसाही आचरण राजाको रखना चाहिए। राजा चीटी की तरह उचित समय पर समस्त आवश्यक, पदार्थों का संग्रह करे। उसे जानना चाहिए कि जिस प्रकार एक छोटी भी आग की चिन्गारी बड़े-बड़े वनों को जला डालने का शक्ति रखतीहै, इसी प्रकार एक छोटा-सा शत्रु अवसर आजाने पर बहुत अधिक हानिकर सकताहै, जिस प्रकार सेमल का छोटासा बीज धीरे-धीरे एक बहुत विशाल पेड़के रूपमें परिणत होजाता है उसीप्रकार कोई सामान्य शत्रु भी बढ़ते-बढ़ते अत्यन्तप्रबल होसकताहै।इसलिए उसे आरम्भमेंही उखाड़फेंकना चाहिए।

"राजा को सब देवताओं का अंश कहा गया है और उसे इन्द्रवायु सूर्य, चन्द्र एवं यमइन पाँचों देवोंकी तरह पृथ्वीका पालनकरना चाहिए, जैसे इन्द्र चार महीनों तक वर्षा करताहै वैसेही राज्यको दान दक्षिणा, उपहार द्वाराप्रजा को प्रसन्नकरना चाहिए। जैसे सूर्य आठ मासतकसूक्ष्म रूपसे जल सोखता रहताहै वैसेही राजाओंको ऐसे ढङ्गसे करवसूल करते रहना चाहिए जिससे किसीको कष्टका अनुभव न हो। जिस प्रकार यम-राज समयानुसार भले-बुरे सबको अपने नियंत्रणमें रखताहै और सदैव उचित न्यायही करता है वैसेही राजाको सज्जनऔर दुष्ट सबको स्ववश मेंरखना चाहिए'जैसे वायु अनजानमें ही सर्वत्र पहुँचता रहताहै, उसी प्रकार राजा को गुप्तचरोंद्वारामित्र-शत्रु सबका पूराभेद मालूम करते रहनांचाहिए। जैसे पूर्णचन्द्रमाको देखकर सबमनुष्य प्रसन्न होतेहैं वैसेही राजाकोअपने मधुर व्यवहार द्वारासबको सुखीऔर प्रन्नस रखनाचाहिए। जो कुमार्गगामी और स्वधर्मसे विचलित मनुष्योंकों उनके धर्ममें स्थापित कर देता है वही सच्चाराजा है। सब भूतों प्राणियोंके पालनमें ही राज-धर्म की सफलता मानी जाती है।"

गृहस्थ धर्म की विशेषता—

'मार्कण्डेय पुराणमें गृहस्थ को बहुत ऊँचा स्थान दिया गया और स्पष्टकहाहै कि पितृगण ऋषिगण,देवगण,भूतगण नागण'कृमि,कीट,पतंग-गण, पक्षिगण और असुरगण-ये समस्तही गृहस्थाश्रमका अवलम्बन कर जीवनयात्रा निर्वाह करते है। 'गृहस्थ हमको अन्न देगा या नहीं' यह चिन्ता करके उसी के मुखकी तरफ देखते रहते हैं।

आगे चलकर गृहस्थकी उपमा एक गायसे दी है कि ऋग्वेदजिसकी पीठ यजुर्वेद मध्य,सामवेद मुख और ग्रीवा,इष्टापूर्त उसका सींग, साधु-सूक्त रोम शान्ति और पुष्टि कर्म उसका मलमूत्र एवं वर्ण और आश्रम ही उस धेनुकी प्रतिष्ठाहै। इस धेनुका कभी क्षय नहीं होता। स्वाहा' स्वधाकार, वषट्कार और हन्तकार इस धेनुके धन है। इनमें से देवगण स्वाहाकर,पितृगण और मनुष्यगण हन्तकार स्तनका पान करते रहतेहैं। जो गृहस्थ इस प्रकार देवता आदि को तृप्ति नही करता वह महापापी होता है। इस प्रसङ्गमें एक महत्वपूर्ण श्लोक यह है —

श्रीमतं ज्ञातिमासद्य यो ज्ञातिरवसीदति ।
सीदताय तत्कृत चैन तत्पापं स समश्नुते ।।

"किसी निर्धनऔर असहाय व्यक्ति के क्षुधार्त होकर प्रार्थनाकरने पर उसकोभी आहार दे । सम्पत्ति होनेपर समर्थ पुरुषको उसे भोजन कराना चाहिए । जो जाति वाला श्रीमान व्यक्तिके समीप होते हुए भी दुखी रहताहै और इस कारण कोई पाप-कर्म करता है तो श्रीमान को भी पाप के अंश का भागी होना पड़ता है ।"

अगर हम वर्तमान समय की विचारधारा और भाषाके अनुसारइस विचारको प्रकट करें तोइसे भारतवर्ष का धार्मिक साम्यवादकह सकते हैं । अपने आस-पास तथा परिचित समाज में कोई व्यक्ति भूखा, नङ्गा अभाव ग्रस्त न रहे इसका ध्यान रखना सम्पत्तिशाली व्यक्तियों का कर्तव्य है । परिस्थिति वश सम्पत्ति कहीं भी कम या ज्यादा आती, जाती रहे पर वास्तव में वह समस्त समाजकी है और उसका उपयोग उसके हित की दृष्टिसे ही किया जाना चाहिए । जो व्यक्ति किसीउपाय अथवा संयोग से सम्पत्ति को पाकर उसे निजी समझकर ताले में बन्द रखनेकी चेष्टा करताहै, उसके स्वाभाविक प्रवाहको रोकताहै वह बहुत बड़ा सामाजिक पाप करताहै । इस प्रकार अन्य लोगोंको जीवनसाधनों का अभाव होने से वे जो कुछ चोरी, जमा, ठगी, लूटमारया अन्य पाप कर्म करते हैं उसके उत्तरदायी वास्तव में वे व्यक्ति ही होते है जोकिसी प्रकार सम्पत्ति के प्रवाह को अवरुद्ध करते हैं ।

आज हम समाजमें इसी दूषित प्रणालीको जोरो से फैलता देख रहे हैं । आज चारोंतरफ यही दृश्यदिखलाई पड़ रहाहैकि 'धनी दिनपरदिन अधिक धनवानबनताजाताहै औरगरीब निरन्तर अधिकगरीबहोताजाता है ।'मानव धर्मकी निगाहसे यह प्रवृत्ति अत्यन्त जघन्यऔर कुफल उत्पन्न करने वालीहै । इसीके परिणामस्वरूप समाजमें तरह-तरहके विग्रह-फूट, अनेकता और अनुचित्त विरोधभावों की उत्पत्ति होतीहै और क्लेशतथा अशान्तिकी वृद्धि होतीहै।इसीलिए शास्त्रोंमें कदम-कदमपर दानकीप्रेरणा दी है । उसका आशय यहीहै कि मनुष्यकोअपनीआवश्यकतासे अधिकजो

कुछ मिल जाय उसे दान, धर्म, यज्ञ अतिथि सत्कार आदि के रूप में स्वेच्छा से समाज को ही लौटा देना चाहिये। इसी भाव को कई सौवर्ष पहले महात्मा कबीर ने एक छोटे दोहे में प्रकट किया था।

पानी बाढ्यो नाव में घर में बाढ्यो दाम।
दोउ हाथ उलीचिये, यही सयानो काम॥

जिस प्रकार नाम के भीतर पानी जमा हो जानेसे वह डूबने लगती है उसी प्रकार एक व्यक्ति के पास आवश्यकता से अधिक धनका भंडार जमा हो जाने से अनेक प्रकार के दोष दुर्गुण उत्पन्न होने लगते हैं। उससे एक तरफ व्यक्ति में अहंकार, लोभ, निष्ठुरता, दुश्चरित्रता की प्रवृत्तियां उत्पन्न होती हैं और दूसरी तरफ अभाव ग्रस्तता दीनता, हीन आचरण आदि बढने लगते हैं। इस दूषित परिस्थिति को रोकने केलिये भारतीय शास्त्रकारो ने स्वेच्छा से त्याग का उपदेश दिया था और जब तक समाज उचित रूपसे उसका पालन करता रहा तबतक यहाँ शान्ति और सामाजिक एकता कायम भी रही। आजअनेक दशो के शासक या सत्त धारी दल साम्यवाद के नाम से इसी कार्यको करनेकी चेष्टा कर रहे हैं, भारतीय सविधान का अन्तिम लक्ष्यभी 'समाजवाद' कीस्थापना बतलाया गया है, पर व्यक्तियों की स्वार्थ करता और लोभ की भावनाओ के रहते हुए इन प्रयत्नों का परिणाम बहुत कम दिखलाई पड़ रहा है। मार्कण्डेय पुराण' के लेखकने इस सत्यको स्वष्ट शब्दोंमें प्रकट-करके निस्संदेह समाज-निर्माण एक बहुत बड़े सिद्धान्त पर प्रकाश डाला है।

अनासक्त भाव की श्रेष्ठता--

मदालसा उपाख्यान के अन्तमें मनुष्योंके व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवनके इनदोषोंको मिटानेकाएकसीधा उपायअनासक्तभावनाको उत्पन्न करना बतायाहै। क्योंकिसबप्रकारके सम्पत्तिऔरचरित्रसम्बन्धीदोषप्राय: तभीबढतेहैंजबमनुष्य अपने आत्म-स्वरूपको भूलकर इसपंचभौतिक जगत् को सत्य और अपना अन्तिम लक्ष्यसमझ बैठता है। इस उपदेशको स्पष्ट रूपसे समझानेके लिये पुराणकार, मदालसाके पुत्रअलर्ककी कथाकोआगे

बढ़ाते हुए कहा है कि मदालसा के उपदेशानुसार धर्मराज्य करते हुएभी वह अन्तिम अवस्था में सांसारिक माया मोह में विशेष फँस गया और आत्मोत्थान के वास्तविक लक्ष्य को भूल ही गया। यह देख कर उसके बड़े भाई वनवासी सुबाहु को चिन्ता हुई और उसने एक युक्ति की दृष्टि से काशीराज के पास पहुँच कर उसे अलर्क पर आक्रमण करने कीप्रेरणा दी। इस आक्रमण का सामना न कर सकने के कारण अलर्क की मोह निद्रा टूटी उसने माता का अन्तिम चिन्ह स्वरूप अँगूठीके भीतर लिखा हुआ यह उपदेश पढ़ा—

सङ्गः सर्वात्मना त्याज्यः स चेत् त्युक्तुं न शक्यते।
स सद्‌भिः सह कर्त्तव्यः सतां सङ्गो हि भेषजम् ॥

"मनुष्यों को आसक्ति का पूर्णतया त्याग करना चाहिए, पर यदि वैसा सम्भव न हो तो सत्पुरुषो की संगति ही करनी चाहिए, क्योंकि विषयासक्ति की औषधि सत्सङ्ग ही है।"

इस उपदेश से अलर्क को जो मार्ग दर्शन हुआ तदनुसार वह सत्संग केउद्‌देश्यसे महात्मा दत्तात्रेयके पास जापहुँचा औरउनसे अपनी विपत्ति का पूरा वर्णन सुनाकर दुःख दूर करनेकी प्रार्थनाकी। दत्तात्रेय नेउसकी बुद्धि पर पड़े पर्देको देखलिया और सबसे प्रथम प्रश्न यही किया कि 'तुम अपने मनमें अच्छी तरह सोच विचार कर मुझे यह बतलाओकि तुमको दुःख किस प्रकार का है और वह क्यों उत्पन्न हुआ है? तुम अपने वास्तविक स्वरूपपर विचार करो, साँसारिक वस्तुओंसे उसकेसम्बन्धका निर्णय करो और तब बतलाओ कि किसबात ने तुमको क्यों दुःखी कियाहै ?" इन शब्दोंको सुनकर जबअलर्क राज्य पर आक्रमण सम्बन्धी समस्तघटना पर आध्यात्मिक दृष्टि से विचार करने लगे तो उनका संशय बहुत शीघ्र दूर होगया औरवे हंसते हुए कहने लगे-मैं वास्तव में बड़े भ्रम में पड़ा था कि इन पंच तत्वों को ही अपना मुख्य आधार समझ कर उनकेलिए शोक कर रहाथा। अगर तात्विक दृष्टिसेसे विचार कियाजाय तोमैं नतो भूमि हूँ, न जल हूँ, न अग्नि हूँ नवायु हूँ और न आकाश ही हूँ। इनसब

पदार्थों में न्यूनता अथवा अधिकता होने से ही हम शोक और हर्ष करते है आत्मा की दृष्टिसे यह निरर्थकहै। यदि सुख दुःख का कारण मन और बुद्धि को मानें तो आत्मा इनसे भी अलग है। इसलिए वास्तव में मेरा कोई राज्य है, न कोषहै, न कोई मेरा शत्रु है। जैसेविभिन्नपात्रोंमें भरे हुए जलमें आकाश का प्रतिबिम्ब अलग-अलग जान पड़ता है, पर वास्तव में वह एक ही होता है उसी प्रकार मै गलतीसे काशीराज तथा बड़े भाई सुबाहु को अपने से पृथक् समझ रहाहूँ। ये लोग मेरे दुःख का कारण नहीं, वास्तव में मेरे दुःख का कारण मेरी ममता है। यदिममता की भावना को त्यागकर विचार करें तो कहीं दुःख नहीं है। जबबिल्ली किसी गौरैया या चुहियाको पकड़ने जातीहै तो हमको कुछभी दुःखनहीं होता, औरजब वह घरमें पाले तोता मुर्गे को खा डालती है तो हम शोक करने लगते हैं। इसलिए आत्मा की दृष्टिसे हमको कोई दुःख या सुख नहीं होता। किसी एक भौतिक पदार्थ द्वारा दूसरे भौतिक पदार्थको उत्पीड़ित देखकर ही हम झूठमूट सुख दु.ख की कल्पना कर लेते हैं।"

दत्तात्रेय जी ने राजा अलर्क की भ्रांति को इस प्रकार दूर करके उसे दुःख से मुक्त होने का मार्ग बतलाया कि तुम्हारा सोचना युक्तियुक्त है। वास्तव में सब प्रकार के दु.खो का मूल यह 'मेरा-मेरा' हीहै। जब हम इस ममता को त्याग देते हैं तो दुःख की जड़ स्वयं ही कट जाती है। यह संसार कर्मो का एक महावृक्ष है। उसका अंकुर अहंभाव मेंसे फूटता है। ममता ही उसका भारी तना है। घर-बार का मोह उसकी शाखायें हैं,स्त्री पुत्र, धन, सम्पत्ति आदिपत्ते है। वहवृक्ष निरन्तरबढ़ता रहता है और तब उस पर पाप-पुण्य के फूल और सुख-दुःख के फल लगतेहैं तो अज्ञानी लोगउसे लालसा कामनाओं द्वारा सीचते रहतेहै।यह वृक्ष बन्धन-मुक्ति के मार्ग को रोककर खड़ा रहता है। जो लोग संसार रूपी वन मे भ्रमण करते हुए उसका आश्रय लेते हैं उन्हें सच्चा सुख कहाँ मिल सकता है? इसलिए आवश्यकता है कि अपने ज्ञान रूपी कुठार को सत्संग रूपी सान धरने के पत्थर पर तेज करके इस ममता रूपी वृक्ष को

काट डाला जाय। तभी हम आत्म-ज्ञान या ब्रह्म-ज्ञान के शांतिदायक उद्यान में पहुँच सकते हैं जहाँ धूल और काटों का भय नहीं है।"

इसके पश्चात् दत्तात्रेयने अलर्क को योग साधनका पूरा विधि-विधान उसके बीचमें आने वाले उपसर्ग और प्रलोभनोंकी चेतावनी दी औरयोगी के आचार व्यवहार का उपदेश दिया। अन्त में ओंकार की महिमा को समझाते हुए कहाकि उसकी 'अ' 'उ' 'म' तीन मात्रायेंसत्व, रज, तम तीनों गुणों अथवा ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीन ईश्वरीय शक्तियों की प्रतीक हैं और चौथी ऊर्ध्व मात्रा परब्रह्म की ओर संकेत करती है। जो साधन ओंकार के इस स्वरूप को हृदयंगम करके उसका ध्यान करेगा वह केवल इसी साधन से मुक्ति का अधिकारी बन सकता है।

दत्तात्रेय के आत्मोपदेश से अलर्क कृतार्थ हो गया। उसका शोक, मोह सर्वथा लोप होगया और उसने स्वयं काशीराज तथा सुबाहु केपास जाकर प्रसन्नतापूर्वक समस्त राज्य अर्पण कर दिया। उसका इस निस्पृहता को देखकर वे भी बड़े प्रभावित हुए और सुबाहुने अपना अभीष्ट लक्ष्य पूरा हुआ देखकर उसका राज्य उसीको लौटा दिया। पर अब अलर्कको सच्चा आत्मज्ञान हो चुका था और आत्मा के शाश्वत रूप को अनुभव कर चुका था अतः उसी समय पुत्र को राज्य भार देकर वनवास के लिए चला गया।

सृष्टि रचना और उसका विकास—

यहाँ तक मदालसा-उपाख्यान के रूप में मानव धर्म तथा अध्यात्म ज्ञान की चर्चा की गई जिसका मनन करने से मनुष्य को लौकिक और पारलौकिक जीवन की सफलता का मार्ग विदित हो जाता है इसके पश्चात् पुराण का मूल विषय "सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश मन्वन्तर, राज्यवंश" आरम्भ होता है। ये विषय थोड़े बहुत अन्तर के साथ प्रत्येक पुराण में पाये जाते है और इसे हम पौराणिक 'सृष्टि विद्या' कह सकते हैं। जिस प्रकार वेदोंमें एक अक्षर-तत्व सेसत्-रज तम तीनों गुणोंकीउत्पत्तिबतला

कर उनसे समस्त सृष्टिका विकास और विस्तार बतलायाहै, उसीप्रकार पुराणोंमें एक निराकार ब्रह्मसे ब्रह्मा, विष्णु, महेशकी तीन सृजन, पालन तथा संहार करने वाली शक्तियोंका उद्भाव बतलाकरदेव, ऋषि, पितर एवं भूतगणों के वंशों की उत्पत्ति का वर्णन किया है वास्तवमे वेद और पुराणों के वर्णन में कोई सिद्धान्त भेद नहीं है, वरन् पुराणकारों नेवेदों के सूक्ष्म और शुष्क विषय को रूपकों और दृष्टान्तों की शैली में विस्तृत व्याख्या करके उसे साधारण बुद्धि के लोगों के लिए भी बोधगम्य बनाने का प्रयत्न किया है। इस सृष्टि-रचना क्रम का सारांश इन शब्दो मे दिया जा सकता है।

इस भौतिक जगत् का जो मूल कारण है उसे 'प्रधान' कहते हैं। उसी को महर्षियोंने अव्यक्त, सूक्ष्म, नित्य अथवा सदसत्स्वरूप प्रकृतिकहा है। सृष्टिके आदि कालमें केवल एक ब्रह्म ही था जो अजन्मा अविनाशी, अजर, अप्रमेय और आधार-निरपेक्ष है। वह गन्ध, रूप, रस, स्पर्श और शब्द से रहित है और अनादि तथा अनन्त है। वही सम्पूर्ण जगत की 'योनि' और तीनों गुणों का कारण है। यह ज्ञान, विज्ञान से अगम्य है। सृष्टि का समय आने पर वही गुणों की साम्यावस्था रूप प्रकृति को क्षुब्ध करताहै जिसके फलस्वरूप महत्तत्वका प्राकट्य होताहै। महत्तत्वसे वैकारिक, तैजस, भूतादि अर्थात् सात्विक, राजसऔर तामस इसत्रिविधि अहंकार का आविर्भाव होता है। तामस अहंकार से शब्द स्पर्श, रूप, रस और गन्धइन पांच तन्मात्राओं का उद्भव होता है और इन तन्मात्राओं से क्रमशः आकाश वायु, तेज जल और पृथ्वी तत्व का आविर्भाव होता है। राजस अहंकार से श्रोत्र, त्वक्, चक्षु, रसना और घ्राणेइन पाँच ज्ञानेन्द्रियोंतथा वाक्, पाणि, पाद वायु और उपस्थ इन पाँच कर्मेन्द्रियों की उत्पत्ति होती है। सात्विक अहकार से इन दसों इन्द्रियों के अधिष्ठातृ देवता तथा ग्यारहवें मनकी उत्पत्ति होती है। फिर महत्तत्व से पृथ्वी तत्व पर्यन्त सबतत्व मिलकर पुरुष और प्रकृति के सम्बन्ध से एक अण्ड उत्पन्न करते हैं। यह अण्ड धीरे-धीरे बढ़ताहै और साथ ही उसके भौतिक प्रतिष्ठित 'ब्रह्म, नामसे प्रसिद्ध क्षेत्रज्ञ पुरुषभी वृद्धिकोप्राप्त

होता है। आवश्यक वृद्धि और विकास हो जाने पर प्रथम शरीरी या साकार ब्रह्मा प्राकटय होता हैं और फिर वही ब्रह्मा उस अखण्ड में समस्त सचराचर जगत् की रचना करते है।" यह बात मार्कण्डेय पुराण मे वहुत स्पष्ट शब्दों में कही में कही है।

स वै शरीरी प्रथमः स वै पुरुष उच्यते।
आदि कर्ता च भूतानां ब्रह्माग्रे समवर्तत।
तेन सर्वमिदं व्याप्तं त्रैलोक्यं सचराचरम्।

पर यह 'ब्रह्मा' कोई ब्राह्म शक्ति या व्यक्ति नहीं है। संसारमें उस परब्रह्म के अतिरिक्त चैतन्य सत्ता का कोई अन्य स्रोत नही है, इसलिए ब्रह्म ही विविध रूपों में प्रकट होकर सृष्टि का विकास करता है। इस तथ्य को 'मनुस्मृति' में बहुत स्पष्टता से कह दिया गया है—

यत्तत्कारणमव्यक्तं नित्यं सदसदात्मकम्।
तद् विसृष्ट स पुरुषो लोके ब्रह्मेति कीर्त्यते॥

अर्थात् जो अव्यक्त, सदसदात्मक नित्य-कारण है वह ब्रह्म है और उसी से विसृष्ट या प्रेरित सृष्टि में जो अनुप्रविष्ट कारण है वह ब्रह्मा कहा जाता है।"

इस सबका तात्पर्य यही है कि पुराणों ने ब्रह्मा, विष्णु, महेश-तीन प्रधान देव और इन्द्र, वरुण, मारुत, यम, कुवेर, गणेश आदि सैकड़ो गौण देवता मानने परभी इसमूल तत्वसे इनकार नहीं किया है कि इससमस्त विश्व प्रपंच का मूल एकही है जिसे परमात्मा, परब्रह्म, निराकार ईश्वर आदि किसी भी नाम से पुकारा जा सकता है। जिसप्रकार पिता अपनी स्त्रीके गर्भमें स्वयं बीज रूपसे प्रविष्ट होकर पुत्र बनता है या वृक्ष अपना समावेश बीजके भीतर कर देता है उसी प्रकार निराकार ब्रह्म स्वयं ही अण्डे के भीतर प्रविष्ट होकर साकार देवतत्वों का आविर्भाव करते हैं और बाद में वे ही सचराचर जगत् के रूप में अपना विस्तार करते हैं। इसी दृष्टि से वेदान्त में प्रत्येक व्यक्ति को ब्रह्म स्वरूप ही माना है और मुक्त कण्ठ से 'अहं ब्रह्मास्मि' की घोषणा कर दी है।

यद्यपि ऊपर देखने पर अपने व्यक्तियों को सृष्टि के आदि कारण

का यह विवेचन अनावश्यक अथवा निरर्थक भी मालूम पड सकता है। वे कहेंगे कि इतनी दूर जाने की, ऐसे अज्ञेय क्षेत्र में प्रवेश करके महा कठिन कल्पना करने की क्या आवश्यकता है! जो कुछ सामने है उसीको यथार्थ मानकर उपयोग और व्यवहार क्योंन किया?पर यह बहुतसंकीर्ण अथवा अदूरदर्शी दृष्टिकोण है। ऐसेही विचारों के कारण आज संसार भौतिक बादका बोलबालाहै और अधिकांश मनुष्य किसी प्रकार स्वार्थ साधन को ही सबसे महत्वका काम समझ बैठेहैं। इसका परिणाम घोर व्यक्तिगत स्वार्थपरता,पारस्परिक संघर्षदूसरेका नाशकरकेभी अपनालाभ करने की प्रवृत्तिके रूपमें देखने में आताहै। यही प्रवृत्ति बढते-बढते आज समग्र संसार को एक साथ नष्ट करने के भय के रूप उपस्थित होगई है।

यह सब नाशकारी परिणाम उन मनुष्योंके जीवनके पीछे किसी तरह की उच्च दार्शनिक पृष्ठ भूमि न होने सेही उत्पन्न हुएहैं। पर जो मनुष्य यह विश्वास करता है कि यह समस्त जगत् और तमास प्राणी एक ही स्रोत मे उत्पन्न हुए हैं और यह एक अविनाशी महाशक्ति का खेलमात्र हैं, जो कुछ समय बाद फिरउसी एक तत्वमें विलीन होजायगा, तो वहमिट्टीसे बने और थोड़े ही समय बाद फिर मिट्टी होजानेवाले पदार्थोंके लिए किसी तरहका हीन, निकृष्टकाम करनेको तैयार नहोगा। इस दार्शनिक दृष्टिकोणके कारण ही पूरब और पश्चिम की मनोवृत्तियों में जमीन आसमान का अन्तर हो गया है जिसका वर्णन एक विनोदी उर्दू कविने इन दो लाइनोंमें किया है।

कहा मंसूर ने खुदा हूँ मैं।

डार्विन बोले बूजना हूँ मैं।

अर्थात्— मंसूर (ईरान के ब्रह्मज्ञानी) ने घोषणा की कि मैं-खुदा हूँ (अहं ब्रह्मास्मि) और योरोप के विज्ञानी पुरुष डार्विन ने कहा—'मैं बन्दर हूँ।"

जिस व्यक्तिकी यह भावना होगीकी मैं इस समस्त संसारके आदि कारण परब्रह्म का अंशहूँ वह सदा अपनी निगाहबहुत ऊपर रखेगाऔर

नीचतापूर्ण कार्यों से बचता रहेगा। पर जिसकी धारणा यह होगीकि मैं तो मिट्टी, पानी आदि पंचभूतों का पुतला हूँ, और सौ-पचास वर्ष में फिर उन्हींमे मिल जाऊँगा, उसकी निगाह सोना-चाँदी इकट्ठा करके तरह-२ के भोग अधिक से अधिक मात्रामे प्राप्त कर लेने के अतिरिक्त और कहाँ जा सकती है ? इसलिए भारतीय मनीषियों का सबसे पहिले सृष्टि के मूल कारण पर विचार करना और मनुष्यों को सदैव अपने सच्चे स्वरूप पर विचार करते रहने की प्रेरणा देना निस्सन्देह व्यक्ति और समाज के लिए परम कल्याणकारी है।

समाज का निर्माण और विकास—

सृष्टि-विकास के पश्चात् समाज निर्माण पर विचार करना आवश्यक है। पुराणोंमें भौतिक पदार्थों और जीव जगत की उत्पत्ति काजो क्रम बतलाया गया है वह अधिकांशमें विज्ञान-सम्मत हैं, उसे सर्वथा काल्पनिक नहीं कहा जा सकता है। पहिले कहा जा चुका है कि महत्तत्वसे सात्विक, राजस और तामस तीन प्रकार का अहङ्कार पैदा होता है। आगे चलकर सर्वप्रथम तामस अहङ्कारसे 'असंज्ञ' (चेतना रहित) पदार्थों की उत्पत्ति होतीहै जैसे मिट्टी, पत्थर, लोहा आदि। फिर राजस अहङ्कारसे 'अन्तः संज्ञ' सुप्र-चैतन्य) पदार्थों की उत्पत्ति होतीहै, जैसेघास बेलें, वनस्पति, वृक्ष आदि। इनमे प्राण शक्ति प्रकटहो जातीहै, परमनकी क्रिया भीतर छिपी रहतीहै। अन्तमें सात्विक अहङ्कारसे'ससंज्ञ' (चैतन्य) जीवधारी सृष्टि होतीहै जैसे कीट, पतङ्ग, पशु-पक्षी, मनुष्य आदि। पंचकर्मेन्द्रियाँ, पंच ज्ञानेन्द्रियाँ और ग्यारहवाँ मन। इस विकार-सर्ग के विकसित होने के कारण ससंज्ञ सृष्टि को 'वैकारिक' भी कहा जाता है।

जीवधारी सृष्टिके सम्बन्धमें बतलाया गया है कि ब्रह्मा ने जो प्राणी प्रथम बनाये वह [illegible] नदियों झीलों, समुद्र और पर्वतोंके निकट विचरण करते रहते थे। वे उपभोगके विषयमें अनायास तृप्ति लाभ कर लेतेथे और उनमें किसी प्रकार विघ्न द्वेष अथवा मत्सर नहीं था। [illegible] यां समुद्रतटपर निवास करने [illegible]

निष्कामभावी और प्रसन्नचित्त थे। यह स्पष्टतः उस समय का वर्णन है जिसे हम 'प्रकृति का साम्राज्य' या 'स्टेट आफ नेचर' कहते हैं। उस समय प्राणी अपना निर्वाह घास-पात, फल-फूल से करते हैं और इसलिए उनको किसी प्रकार चिन्ता या संघर्षकी आवश्यकता नहीं है। यही वह युग होता है जिसके लिये कथाओं में कहा जाता है कि पशु और पक्षी भी बाते करते हैं और देवता भी उनकी सहायता को आ जाते हैं। वास्तवमें जिस समय तक भाषाका अविर्भाव नहीं होता तब तक प्रत्येक प्राणी दूसरे प्राणी के भावों को उसकी आकृति और ध्वनि, चीत्कार आदि से पहचान लेता है। उनका प्राकृतिक शक्तियोंके द्वाराही सञ्चालन होता है और वे प्रकृति के संकेतों का आशय भी भली प्रकार समझते हैं। इस दृष्टि से उस आदिकालीन युग में एक प्रकार से देवता ही पृथ्वी पर विचरण करते हैं।

पर परिवर्तनशील सृष्टि-क्रम में यह अवस्था सदैव स्थिर नहीं रह सकती। क्रमशः जीवोंकी अनायास तृप्तिहो जाने की 'सिद्धि' समाप्त होने लगी और आकाश से जल रूपी दूध वरसने लगा और लोगों के निवास स्थानों में कल्पवृक्ष उत्पन्न हो गये जिनसे उनको आवश्यकता की समस्त वस्तुएँ प्राप्त हो जाती थीं। तत्पश्चात् जब मनुष्यों में कल्पवृक्षों के प्रति राग उत्पन्न होने लगा तो वे नष्ट होगये और चार शाखा वाले अन्य वृक्ष पैदा हुए जिनके प्रत्येक पुट में बिना मक्खियों के ही मधु उत्पन्न होता था और उसीको पीकर लोगजीवन निर्वाह करते थे। यह स्थिति त्रेतायुगमें थी। क्रमशः मनुष्य अत्यन्त लोभी होने लगे उन वृक्षों पर अपना अधिकार जमाने लगे और उनकी जड़ों में अपने रहने केघर बना लिये। इससे वे वृक्ष भी कुछ काल में नष्ट हो गये।

उस समयमें सब प्राणी भूख-प्यास से व्याकुल होकर अत्यन्त कातर होने लगे। कुछ समय पश्चात् आकाशसे जलकी विशेषरूपसे वर्षाहोनेलगी और उसकाजल मिट्टीके संयोगसे दोषरहित होकर नदियोंके,रूपमें परिणत होगया। नदियोंके प्रभावसे पृथ्वीपर तरह-तरह उत्तम'औषधियाँ (वनस्पतियाँ)पैदाहुई, जिनका उपयोग करनेसे लोगोंका सुखपूर्वक निर्वाह

होने लगा। पर जब लोग उन वनस्पतियों कोभी अधिक से अधिकपरि-
माण में इकट्ठा कर लेने का लालच करने लगे तो वे भी नष्ट हो गई
कोई अन्य उपाय न देखकर लोगो ने भगवान् ब्रह्माजी (बुद्धि) की शरण
ली तो उन्होंने कुछ वीज उत्पन्न करके लोगों की कृषि-विद्या का उपदेश
दिया और सामाजिक सुव्यवस्था की दृष्टि से उनको चार वर्णों में विभा-
जित करके प्रत्येकवर्णको एक-एक कार्यका कुत्तरदायित्व सौपा। उन्होंने
कर्म परायण ब्राह्मणों के लिए प्राजापत्य स्थान, संग्राम करने वाले
क्षत्रियों के लिए ऐन्द्रस्थान, स्वधर्म निरत वैश्यो के लिए मारुत-स्थान
और सेबा परायण शूद्रों के लिए गान्धर्व-स्थान की कल्पना की।"

इस विवेचनसे आदिम मानव-समाज और उसके क्रमश. विकासपर
अच्छा प्रकाश पड़ताहै। वर्तमान युगके अर्थशास्त्रतथा समाज के एकबड़े
विवेचक कार्लमार्क्सने यहमत प्रकटकिया है कि मानव-समाजमें सबतरह
की प्रथाओंओर रीति-रिवाजोके उत्पन्न और प्रचलित होने का मूलाधार
आर्थिक व्यवस्थाही थी। जिसकालमें जीवन-निर्वाहके जैसेसाधन प्राप्तथे
वैसीही सामाजिक व्यवस्थाभी उस समयबनगई। उपयुक्त पौराणिकवर्णन
मे भी यहीबतलाया गयाहै कि जैसे-जैसेजीवन निर्वाहके माधनबदलतेगये
उसी प्रकारप्राणियोंऔर उनकी जीवन-निर्वाह विधिमेंभी परिवर्तन होता
गया। जब तक लोगोंमें स्वार्थ बुद्धिकीवृद्धि नहीं हुई और वे प्रकृत्तिदत्त
पदार्थोंमें से आवश्यकतानुसार ही लेकर अपनी भूख मिटा लेते थेतबतक
उनकाकाम बिनाकिसीविशेषप्रयत्नके जंगलऔरवनोंकी स्वाभाविकउपज
से होतारहा। परजैसे-जैसे उनमेंसंग्रह और परिग्रहकी भावनाउत्पन्नहोने
लगी प्रकृतिभीअपनेदानको संकुचितकरनेलगी और लोगोंकोजीवननिर्वाह
की परिश्रम और युक्तिसाध्य विधियोंका आश्रय लेना पड़ा।इसी सेखेती
और पृथक् परिवारकी प्रथाका जन्महुआ। आगे चलकरविभिन्नप्रकार के
सामाजिक कार्योंतथा पेशोंके बढ़से जाति-प्रथाकभी उद्भवहुआ। जितने
हीअधिकलोय विभाजितहुएऔर अपने उत्पादनकी सुरक्षितरखकरउसका
स्वयं उपभोगकरने लगे वैसे-वैसेही मानव सम्बन्धोंमें जटिलता आती गए

और क्रमशः शासन, राज्य और राष्ट्र का प्रादुर्भाव होकर मानव-समुदाय आधुनिक सभ्यता, संस्कृति तक पहुँच गया।

यह तो भौतिक पदार्थों के विभाजन तथा स्वामित्वके कारणउत्पन्न सामाजिक व्यवस्था की एक मोटी रूप रेखा हुई। जब इसके साथभली-बुरी मनोवृत्तियों, धर्म-अधर्म, कर्तव्य-अकर्तव्य, सत्य-झूठ, प्रेम-घृणा, मित्रता-शत्रुता आदि भावनाओं का योगहोता है तो मानव-व्यवहारोमे ऐसी जटिलता आ जातीहै कि जिसके निर्णय और कार्य रूपमें परिणत करने में बड़े-बड़े समाज शास्त्री तथा न्यायवेत्ता विद्वानोंकी बुद्धि भी चकरा जातीहै। इसका बर्णन पुराणकार ने अपनी रूपक और अलंकारों की विशिष्ट शैली में इस प्रकार किया है—

"जब ब्रह्मा के मानस पुत्रोसे सृष्टि का विस्तार न हो सका तो उन्होंने एक पुरुष उत्पन्न करके उसके आधे भागसे एक स्त्रीको भीउत्पन्न किया और उनको पति-पत्नी बनाकर प्रजाकी उत्पत्ति का आदेश दिया। वे ही संसार के प्रथम मानव प्राणो स्वायम्भुव मनु और शतरूपा के। उनके दो पुत्र हुए। प्रियव्रत और उत्तानपाद। दो कन्याएँ भी हुईप्रसूति और ऋद्धि-ऋद्धिका विवाह रुचिसे हुआ जिससे यज्ञ और दक्षिणानामक दो सन्तानोंकी उत्पत्ति हुई। दक्ष और प्रसूतिके चौबीस कन्याएँ हुईं उन्हें धर्मसे अपनी पत्नी बनाया। इसके साथ ही अधर्म का परिवारभी बढ़ा। उसकी पत्नी हिंसाने अनृत नामक पुत्र और सृति नामक कन्या उत्पन्न हुई। उनसे नरक और भय नामक पुत्र हुए और माया तथा वेदना दो कन्याएँ हुईं। मायासे मृत्यु और वेदनासे दुख नामक पुत्र उत्पन्न हुए। मृत्यु के व्याधि जरा, शोक तृष्णा और क्रोध नामक पुत्र हुए। दुःख से जो सन्तति हुई वह सब अधर्म का आचरण करने वाली थी। मृत्यु ने अलक्ष्मी नामक एक और स्त्रीसे विवाह किया जिसके चौदह पुत्र हुए जो मनुष्योंके मन तथा इन्द्रियोंमे प्रविष्ट होकर उनको नाश की तरफ ले जाते हैं।

इनपत्रोमें से एकका नाम दु.सहहै, जिसको अत्यन्त भयंकर वत-

लाया है कि वह जन्म लेते ही ऐसा भूखा था कि समस्त संसार के उसके द्वारा नष्ट होनेकी सम्भावना जान पड़ी। तब ब्रह्मा ने उसके रहने के स्थान नियत कर दिए कि जहाँ, बुरे लक्षण, आलस्य, प्रमाद, दारिद्र्य हों वहाँ पर निवास करे। जहाँ देशाचार, जाति धर्म, लोकाचार का ठीक तरह से आचरण किया जाताहै, जप, होम, मंगल, यज्ञ, शौच आदि का विधिवत पालन किया जाता है, उन स्थानोंसे वह दूर रहे। इस दुःसह के 'निमष्टि' नाम पत्नीसे सन्तकृष्टि, तथोक्ति, परिवर्त, अङ्गध्रूक, शकुनि, गंड, प्रान्तरति और गर्भहा नामक आठ पुत्र हुए। नियोजिका विरोधिनी, स्वयंहारकी, भ्रामणी, ऋतुहारिका, स्मृति हरा, बीजहराऔर विद्वेषणी नामक आठ कन्यायें भी हुईं। दुःसहकी इन सोलह सन्तानों ने मनुष्योंके जीवन को महाकष्टमय बना दिया और जिस पर उनका वश चलता है उसे वे नष्ट करके ही छोड़ते हैं।"

यह कहनेकी आवश्यकता नहीं कि दुःसह और उसकी सन्तनों का आशय तरह-तरहकी दूषित मनोवृत्तियों, नैतिक, सामाजिक और भौतिक दोषों और भाँति-भाँति के रोगोंसे हीहै, जो कर्तव्य विमुख औरआलसी व्यक्तियोंपर सवार होकर उन्हें नष्टकिया करतेहैं। पुराण कारने दुःसह के रहने के जितने स्थान बतलाये हैं वे सब दूषित आचरणवालों के ही लक्षण हैं। सदाचारी और कर्तव्यरत व्यक्तियोंकी तरफ वह आँख उठा कर भी नहीं देखता। अड़तालीसवें अध्याय में दुःसह के क्रिया-कलापों का विस्तृत वर्णन निःसन्देह पढ़ने और शिक्षा ग्रहण करने योग्य है।

रुद्र सृष्टि [illegible] की व्याख्या—

अगले अध्यायमें कहा गयाहै कि ब्रह्माजीने कल्प के आदि में अपने समान एक पुत्रका ध्यान कियातो एकलीन लोहितकुमारउत्पन्नहुआ।वह ब्रह्माजीकी गोदमें रोने लगा। ब्रह्माजी ने पूछा—तू क्यों रोता है? तो उससे कहा 'मेरा नाम रखिये'। उसने उत्पन्न होनेही रुदन किया इससे ब्रह्माने कहा-तुम्हारा नाम 'रुद्र' हुआ। इस प्रकारवह सातबार और रोया तब ब्रह्माने उसके सात नाम और रखे—भाव, शर्व, ईशान, पशुपति, भीम

उग्र और महादेव । तब उसके रहने के लिए आठ स्थान नियत किये—सूर्य,जल,पृथ्वी,अग्नि,वायु, आकाश,दीक्षित, ब्राह्मण और सोम । उसकी आप पत्नियाँ भीबनादी–सुवर्चला,उमा, विकेशी,स्वधा,स्वाहा,दिक्दीक्षा रोहिणी । शनैश्चर,शुक्र,लोहिताङ्ग,मनोजव,स्कन्द,सर्ग,सन्तान औरबुध को रुद्र के आठ पुत्र बताया गया है ।

यह रुद्रका रूपक वैद्रिक साहित्य में वर्णित प्राण तत्व की कथा के रूपमें व्याख्याहै । 'शतपथब्राह्मण' में कहा गया है 'यो वै रुद्रः सोऽग्नि' अर्थात अग्नि या प्राणतत्व का नाम रुद्रभी है । पुराण में इसका नाम जो 'नीललोहितकुमार कहा गया है उसका आशय यही है कि अग्नि की रश्मियों का अथवा सूर्य-रश्मियों कावर्णन एकछोर पर नीला औरदूसरे पर लोहित (लाल) ही होता है । 'अथर्ववेद' के एक सूक्त में भी रुद्र के नील लोहित धनुष' का उल्लेख मिलता है । अग्नि तत्व जब अपनेकेन्द्रो मे जागृत होताहै तो वह 'रुद्ररूप' में होताहै । उममें बुभुक्षा वृत्तिउत्पन्न होती है अर्थात् वह बाहर से कोई पदार्थ अपने पोषणको चाहता है । जब उसे बह पदार्थ मिल जाता है तो वह रचनात्मक अर्थात् 'शिव बन जाता है । रुद्र के जो सात नाम और बतलाये गये हैं वे अग्नि तत्व के वे सातरूप हैं जो अव्यक्त पदार्थों को व्यक्त रूपमें लाने के साधन बनने हैं । अग्नि या प्राय तत्व ही समस्त भौतिक पदार्थों को प्राग या गति तत्व के प्रदान करता है । अतः वे उसके स्थान हैं । इसी प्रकार स्वधा स्वाहा आदि आहवनीय अग्निसे सम्बन्धित हैं । शनि, शुक्र, बुध आदि सभी ग्रह उपग्रह अग्नि तत्व के ही विभिन्न रूप या उनके परिवार की तरह हैं ।

मन्वन्तर और सप्त द्वीप वर्णन—

इसके पश्चात् स्वायम्भुव मन्वन्तर और उसमें उत्पन्न राजाओं के शासन-क्षेत्र के रूप में जम्बू,प्लक्ष, शाल्मलि कुश, क्रौञ्च, शाक और पुष्कर इन सात द्वीपों का वर्णन आया है । इन सातों द्वीपों का विस्तार

सब मिलकर पचास करोड़ योजन बतलाया गया है, जिसमें सेसम्बूद्वीप की लम्बाए चौड़ाई एकलाख योजनहै और भारतवर्ष इसीका एकभागहै। स्वायम्भुव मनुके वड़े पुत्र प्रियव्रतकी प्रजावती नामक पुत्रीका विवाह प्रजापति कर्दमके साथ किया गया। उसके सात पुत्र हुए जिनमें से अग्नीध्र को जम्बू का, मेधातिथि को प्लक्ष द्वीपका, व युष्मान को शाल्मलि का, ज्योतिष्मान् को कुशका, द्युतिमान् को कौञ्चका, भव्यको शाकद्वीपका और सवन को पुष्कर का अधिपति बनाया गया। फिर इन में से प्रत्येकके भी प्राय: सात-सात ही पुत्र हुए जिनके लिए उक्त द्वीपों को सात विभागोमें जिनका काम वर्ष रखा गया है, बाँट दिया गया। इनमें से प्रत्येक द्वीपमें सात पर्वत और सात नदियाँ भी थी। इन सबकी बड़ी नामावली अनेक पुराणोंमें पाई जाती है, पर वह पाठकोंके लिए रुचिकर नहीं होसकती। उनका एकाध नाम वर्तमान इतिहास या भूगोल के नामों से मिलता है, पर उसे अधिक महत्व देना ठीक नहीं। एक विद्वान का इस सम्बन्ध में यह भी मत है कि ये सातो द्वीप एक समय में एक साथ मौजूद नहीं दे. पर पृथ्वी के उलटफेर के फलस्वरूप विभिन्न कालों वने और नष्ट हुए हैं। वर्तमान समयमें हम पृथ्वी के जिस रूप को देख रहे में वह जम्बूद्वीप है और उसी का वर्णन कुछ अंशोंमें हमको प्रत्यक्ष दिखाई देता है। शेष: छ: द्वीप भूत काल या भविष्यकाल से सम्बन्धित हैं। पर पुराणोंने इस विषय पर एक त्रिकालद्रष्टा की हैसियत से विचार किया है और सृष्टि रचना और इसके बिलय के नाटक को इस प्रकार लिख दिया है जैसे वह एक ही समय में उनके नेत्रोंके सम्मुख हो रहा हो।

अधिकाँश विद्वानों के मतानुसार जम्बू द्वीप का जो वर्णन पुराणोमे किया गया है उसमें एशियाके बड़े भागका समावेश हो जाता है। पर चूँकि पुराने समयमें आवागमनके साधन बहुतही सीमितथे इसलिएसभी लेखकोंने जो भौगोलिक वर्णनलिए हैं उनमें वास्तविकता और कल्पना का सम्मिलन है। पुराणोंके वर्णनमें ही नहीं वरन् यूनानी इतिहासकार हेरोडोटस तथा इटैलियम मार्कोपोलोके वर्णनोंमें भी बहुतसी ऐसी बाते

पाई जाती है जो इन्होंने दूसरे लोगों से सुनकर लिख दी थीं और जो अब काल्पनिक सिद्ध हो रहीहै । इसलिए पुराणोमें पृथ्वी के विभिन्न द्वीपों,समुद्रो,खडों का जो वणन किया गया है वह कथा रूपमें ही ग्रहण किया जाना जाहिये । वास्तवमें पुराणकार भारतवर्षमें ही रहते थे, यहीं के निवासियोसे उनका परिचय और सम्बन्ध था, इसलिये इन्होने यहां के नगरो,जनपदो,पर्वतों,नदियों के सम्बन्धमे जोकुछ लिखा है वही प्रामाणिक और उपयोकी सिद्धहोताहै । फिर पुराणोका मुख्य उद्देश्यजन-साधारणको धार्मिक और नैतिक शिक्षा देना था। इसी दृष्टिसे उनकी महत्तापर विचारकरना चाहिये । इसप्रकारके भौगोलिक वर्णनतोइन्होने कथानको को प्रभावशाली बनाने के उद्देश्यसे कियेहैं औरवे सभीपुराणों में प्राय: उसीरूपमें लिख दिए गये हैं जिसमेंवे परम्परासे चलते आतेथे । आधुनिक वैज्ञानिक खोजों के दृष्टिकोणसे उनकी आलोचना मे प्रवृत्ति होना अपनी 'विभा'के अहङ्कारका निरर्थक प्रदर्शन ही है ।

आग्नीध्र को जम्बू द्वीप दिया गया उसके अपने पुत्रोमें उसने नौ हिस्से कर दिये । इनमे हिम नाम दक्षिणवर्ष नाभि राजा को मिला । नाभि से इनका उत्तराधिकार उनके पुत्र ऋषभ को मिला और ऋषभ अपने पुत्रभरको राज्यको देकर तपस्या करने चले गये । इन्हीं भरत के काम से यह खण्ड भारतवर्षके नामसे प्रसिद्ध हुआ । पुराणोंके मतानुसार शकुन्तला के पुत्र भरतके नामके आधार पर इस देश का नाम भारत-वर्ष होंनेकी कल्पना ठीक नही है । यह भारतभी महायोगी और तपस्वी थे । वे भी कुछ समय पश्चात् अपने पुत्र सुमतिको गद्दीपर बिठा कर वनको चले गये । इस प्रकार स्वायम्भुव मनुके पुत्रप्रियव्रत का वंश समस्त पृथ्वीपर बहुत समय तक शासन करता रहा ।

इसके पश्चात् अन्य पाँच मन्वन्तरों के सम्बन्ध में भी तरह-तरहकी कथायें दी गई है जिससे अनेक प्रकारकी शिक्षायें प्राप्त ही सकती हैं । पर ऐतिहासिक ता सामाजिक विकासकी दृष्टिसे इनमें विशेष तथ्य दृष्टि गोचर नहीं होता ।

सूर्य का तात्विक विवेचन –

सृष्टि-रचना का मुख्य आधार सूर्य है। संसार के प्रत्येक पदार्थ को उसी से उष्णता प्राप्त होती है और वहीप्राण रूप बनकर प्रत्येकजीवित प्राणी में गति उत्पन्न करता है। मनुष्यमें निरोगिता,स्वास्थ्य,शारीरिक बल,उत्साह साहस पराक्रम आदि गुण भी उसीके प्रभाव से उत्पन्न होते है। वही प्रकाश का एकमात्र साधन है। उसकेविना सर्वत्र घोरअन्धकार ही है। प्रकाश के अन्य जितने कृत्रिम साधन मनुष्य ने खोज निकाले हैं वे भी सूर्य की ही देन है। सूर्य अग्नि-तत्व का प्रतीक है और उसके विना ससार जड़ और मृतक ही है।

मार्कण्डेय पुराण में इस प्राकृतिक तत्व को ही सबसे अधिक महत्व दिया गया है और उसी को पूजा उपासना के योग्य बतलाया गया है। वैवस्वन मन्वन्तर का आरम्भ सूर्यके पुत्र मनुसे ही मानागयाहै और उसके वर्णनमे सूर्यकी महिमापर पर्याप्त प्रकाशडाला गयाहै। कथामे कहा गया हैं कि त्वष्टा (विश्वकर्मा) की पुत्री सज्ञाका विवाह सूर्यसे हुआ था जिससे वैवस्वतमनु तथा यमदो पुत्रो तथा एक पुत्री यमुना का जन्महुआ। उस समय सूर्यका तेज अत्यन्त प्रखरथा सौर सज्ञा उसेसह सकने मे असमर्थ थो। इससे वह अपना एक छायामय शरीर बनाकर गुप्त रूप से अपने पिता के घर चली गयी और छायासे कह गई कि तुम इस भेदको कभी प्रकट मत करना। कुछ समय पश्चात् पिता ने संज्ञा को फिरपति गृह जाने की सलाह दी तो वह वहाँसे चली आई और घोड़ी का रूप-रखकर सूर्य के रूप का सुधार होने के उद्देश्य से तप करने लगी।

कुछ समय पश्चात् सूर्य को छाया के रूप में कृत्रिम संज्ञा का भेद मालूम पड़गया और उन्होंने विश्वकर्माके पासजाकर इस सम्बन्ध मेंपूछा तोमालूम हुआ कि सूर्यके असहनीय तेजके कारण पिताके यहांचलीआई थी और अब कही तप करने चलीगई है। यह जानकर सूर्यने विश्वकर्मा से अपने स्वरूपको काटछाँटकर सौम्य बना देनेको कहा। उन्होंने सूर्यको

'संवत्सर' रूपी खराद पर चढ़ाकर इस प्रकार छाँट दिया जिससे उनका स्वरूप बहुत दर्शनीय और लोकोपयोगी बन गया। उसके उस स्वरूप के दर्शन करके देवता उनकी इस प्रकार स्तुति करने लगे—

हे देव ! तुम ऋग्वेद स्वरूप हो, तुमको नमस्कार है। तुम्ही यजुः स्वरूपहो, तुमको नमस्कार है। तुम्ही ज्ञान (प्रकार) के एक मात्र आधार हो,तुम्ही तम (अन्धकार के नाशक, शुद्ध ज्योति स्वरूप और निर्मल हो, तुमको नमस्कार है। तुम शंख, चक्र, शांख मद्म धारण करने वाले विष्णु रूप हो, तुम्हें नमस्कार है। तुम्हीं वरिष्ठ वरेण्य पर और परमात्मा हो, तुम ही समस्त जगत् मे व्यापक हो, आत्म स्वरूप हो तुम्हें नमस्कार है। तुम्ही ज्ञानी मनुष्योंकी निष्ठा, मर्वभूतोंके कारण स्वरूप हो। तुम्हीं प्रकाश, आत्मा रूपी भास्कर, दिनकर हो, तुम्हीं रात्रि के कारण स्वरूप हो, तुम्हीं संध्या और ज्योत्स्नाकारी हो। तुम्हीं भगवान हो, तुम्हारे द्वारा ही जगत् जागृत और गतिवान होता है। तुम्हारे प्रभाव से ही यह चराचर युक्त अखिल ब्रह्माण्ड भ्रमण करता है। सम्पूर्ण पदार्थ तुम्हारी किरणोंसे स्पर्श होकर पवित्र होते है। तुम्हारी किरणों द्वारा ही जलादि की पवित्रता साधित होती है। हे देव ? जब तक यह जगत् आपकी किरणों के संयोगको प्राप्त नही होता तब तक होम दानानि कोई उपकार कर्म भी नहीं हो पाता। आपके अङ्ग से जो किरणें निकलती हैं वे ही ऋक् यजुः साम रूपी त्रयी विद्या हैं। तुम्ही ब्रह्म रूपी प्रधान और अप्रधान हो। तुम्हीं मूर्तिधारी और अमूर्त हो, स्थूल और सूक्ष्म रूप से तुम्हीं काल रूप हो।"

इस स्त्रोत में सूर्य का जो वणन किया है उससे प्रकट होता है कि इनपक्तियोंका लेखकसूर्यकोंहीपरमात्मा कामुख्यस्वरूपमानताहैऔरसंसार में एकमात्र उन्हीको पूजनीय,अर्चनीय,उपासनीय तत्व स्वीकार करताहै। वेद मेंभी प्रकाश और तप दोनों का कारण सूर्य कोही बतलाया गया है और ब्रह्माण्डमेंजो गति और जगतमें प्राणतत्व दिखाई पड़ताहैउसकामूल भी सूर्यके अतिरिक्त कोईनहीं। सूर्यको त्रयीविद्या का भी मूल बतलाया गयाहै। यह त्रयीविद्या' वेदोंका एक महत्वपूर्ण विषय है औरकुछविचार

करने से प्रतीत होता है कि वही हिन्दू धर्म की सबसे बड़ी मान्यताओं का मूल स्रोत है। इस सम्बन्ध में एक विद्वान ने लिखा है—

"ऋक्-यजः-सामका सम्मिलित रूप सूर्य है। वस्तुतः यह वैदिक तत्व-ज्ञान का मूलभूत दृष्टिकोण था। विश्व की प्रत्येक रचना सूर्य की शक्ति है। त्रयी विद्या को ही यज्ञ कहते हैं, इसलिए सूर्य को यज्ञ-नारायण कहा जाता है। त्रयी विद्या 'त्रिक' का ही दूसरा नाम है। भारतीय धर्म, दर्शन, वैदिक और पुराण तत्व सबका मूल त्रयी विद्या या त्रिक है वेद में अव्यय-पुरुष, अक्षर-पुरुष और क्षर-पुरुष, पुराणों में ब्रह्मा, विष्णु शिव रूपी त्रिदेव एवं दर्शन में सत्व, रज तम नामक तीन गुण त्रयी विद्या के ही रूप हैं। ये ही भूः-भुवः स्वः नामक तीन व्याहृतियाँ है। भारतीय साहित्य में 'त्रिकों की अनेक समानान्तर सूचियाँ हैं। मन-प्राण-वाक् एवं प्राण-अपान व्यान त्रिक के ही रूप है। इस प्रकार त्रयी विद्या या 'त्रिक' का अपरिमित विस्तार भारतीय साहित्य में पाया जाता है। सूर्य उस विद्या का सर्वोत्तम प्रतीक है।"

'मार्कण्डेय पुराण' में इस एक स्थान पर ही नहीं वरन् अनेक प्रसङ्गों में सूर्य को ही सृष्टि का सबसे महान और रचनात्मक साधन बतलाया गया है। अध्याय ६४ में कहा गया है कि ब्रह्मा ने जब चारों वेदों को, प्रकट किया और उनका समस्त उत्तम तेज एक होकर 'ॐकार' के श्रेय तेज से सयुक्त हुआ तब सूर्य का सर्वोच्च तेज दृष्टि गोचर होने लगा। यह तेज सृष्टि-रचना में सबसे पहले उत्पन्न हुआ था इसी से 'आदित्य' कहा जाता है। पर उस आरम्भिक दशा में यह इतना प्रखर और अनि-यन्त्रित था कि ब्रह्माजी ने देखा कि वे जो कुछ सृष्टि रचेंगे वह सब इसकी तीव्रता से नष्ट हो जायगी। इसका उत्ताप जल सोख लेगा और पृथ्वी तत्व को भी भस्म रूप कर देगा। इसलिए उन्होंने सूर्य नारायण की स्तुति करते हुए कहा—

"जो सम्पूर्ण विश्व के आत्म स्वरूप हैं, जो इस विश्व रूप में ही वर्त-मान हैं, विश्व ही जिनकी मूर्ति हैं, योगीगण जिनकी इन्द्रियों से अग्राह्य परम ज्योति का ध्यान करते हैं, मैं उनको नमस्कार करता हूं। जो अचिन्त्य

शक्ति ऋग्वेदमय यजुर्वेद का आधार सामवेद की उत्पत्ति का कारण हैं, जो परमब्रह्म स्वरूप और गुणातीत है। सबसे पहले मैं उन्हीं सर्वकारण रूप परम पूज्य, परमवेद्य, परम ज्योति, देवात्मता हेतु स्थूल रूपी श्रेष्ठ से भी श्रेष्ठतर आदि पुरुष भगवान् को नमस्कार करता हूँ। हे देव! तुम्हारी शक्ति ही 'आद्या' है क्योंकि उसी के द्वारा प्रेरित होकर मैं जल पृथिवी, पवन और अग्नि रूपी देवताओं और प्रणवादि की सृष्टि करता हूँ। इसी प्रकार स्थिति और प्रलय भी मैं तुम्हारी शक्ति से प्रेरित होकर ही करता हूँ।

हे भगवान्! तुम्हीं वह्नि रूप हो। जब तुम पृथ्वी का जल सोखते हो तब मैं जगत् की रचना और अन्नादि को सम्पन्न करता हूं। तुम्हीं सर्वव्यापी गगन स्वरूप हो और तुम्हीं इस पंच भूतात्मक विश्व की रक्षा करते हो। हे विवस्वन् परमात्मा तत्व के ज्ञाता अखिल यज्ञमय विष्णु रूप में यज्ञों द्वारा तुम्हारी ही अर्चना करते है। आत्ममोक्षाभिलाषी जितेन्द्रिय यतिगण परम सर्वेश्वर जानकर तुम्हारा ही ध्यान करते हैं। तुम्हीं देवरूप हो, मैं तुमको प्रणाम करता हूँ। तुम्हीं योगीजनों द्वारा चिन्तनीय परब्रह्म स्वरूप हो, तुम को प्रणाम करता हूँ। हे विभो! तुम अपने तेज को निवृत्त करो मैं सृष्टि करने को उद्यत हुआ हूँ। तुम्हारा जो प्रखर तेज समूह सृष्टि में विघ्नकारी होता है उसे संयमित करो।"

इसी प्रकार देवमाता अदिति द्वारा और राज्य वर्धन के आख्यान मे ब्राह्मणों और राजा द्वारा सूर्य के कई स्तोत्र इस पुराण में दिये गये हैं, जिनसे प्रकट होता है कि विष्णु, शिव, राम, कृष्ण आदि पौराणिक प्रतीकों के स्थान पर मार्कण्डेय पुराण के रचयिता ने 'विवस्वान्' (जिनसे आगे चल कर इन्द्र (प्राण) और विष्णु तथा शिव का आविर्भाव होता है) को ही उपासना तथा ध्यान को सर्वश्रेष्ठ और मूल लक्ष्य माना है। पुराण में देवासुर संग्राम की जो कथायें भरी पड़ी हैं, उसका बहुत कुछ सम्बन्ध भी सौर-शक्ति के आविर्भाव से ही है। वेदों में जिस वृत्रासुर का प्रसंग आया है और जिसको नष्ट करके इन्द्र 'देवराज' बने थे वह वास्तव मे सौर-शक्ति के अवरोधक अन्धकार तत्त्व के मिटने का ही वर्णन है।

शक्ति के दो रूप और देवी द्वारा असुरों का पराभव–

७३ से ८५ अध्याय तक देवी के आविर्भाव और उसकी अपार महिमा का वर्णन किया है। इसके लिए किसी सुरथ नामक राजा का उपाख्यान दिया गया है कि उसके राज्य को शत्रुओं ने षडयन्त्र करके छीन लिया और उसे विवश होकर सब कुछ छोड़कर वन में चला जाना पड़ा। पर वहाँ भी उसका ध्यान अपने महल, कोशागार, नगर, हाथी, घोड़ों में लगा रहा और वह उनके विषय मे चिन्ता करता हुआ दुःखी रहने लगा। वहीं उसकी भेंट समाधि नामक एक वैश्य से हो गई जिसको उसके स्त्री-पुत्र आदि ने समस्त धन अपहरण करके घर से निकाल दिया था और जो अब वन-वासियों के साथ रहकर जीवन-निर्वाह कर रहा था। पर अब भी उसका घर सम्बन्धी मोह छूटा न था और वह घर वालों की हानि-लाभ सुख-दुख की बात सोचते हुए व्यस्त रहा करता था। इन दोनों ने उसी अरण्य मे आश्रम बनाकर रहने वाले मेधा ऋषि से अपनी दुर्दशा और मनोव्यथा के विषय में प्रश्न किया। ऋषि ने उनको मोह-जनित भ्रम का रहस्य समझाया और साथ ही देवी की महिमा तथा उपासना की कथा भी सुनाई जिसके द्वारा वे अपनी विपत्ति से छुटकारा पा सकते थे।

देवी का यह उपाख्यान 'दुर्गा सप्तशती' के नाम से प्रसिद्ध है और वह कितने ही स्थानों में थोड़े बहुत अन्तर के साथ कहा गया है। इस हुहाशक्ति का प्रथम आविर्भाव सृष्टि के आरम्भ होने से भी पूर्व उस समय मआ जब जगत् कर्ता भगवान विष्णु सो रहे थे और उनकी नाभि से सृष्टि के रचयिता ब्रह्माजी की उत्पत्ति हुई। उस समय विष्णु के कान के मैल से मधु और कैटभ नाम के दो दैत्य उत्पन्न हुए और ब्रह्माजी को मारने को दौड़े। ब्रह्मा उनका सामना करने में असमर्थ थे अतः उन्होंने परब्रह्म की आदि शक्ति महामाया की स्तुति की। इससे स[illegible] प्रकट हुई और उसने विष्णु को जगाकर मधु और [illegible] के कुकृत्य का उनको ज्ञान करा दिया। विष्णु इन असुरों [illegible] हजार वर्ष तक बाहु युद्ध करते रहे, पर उनका विनाश [illegible] महा माया ने ही उनको मोहित करके कहलवा[illegible] कि 'हे विष्णु

हम तुम्हारे साथ युद्ध करके सन्तुष्ट हुए है, हमसे कोई वर माँगो।' विष्णु ने कहा तुम मेरे वध्य हो, यही वर मैं माँगता हूँ।' वचन बद्ध होने से उन्हें वर देना पड़ा और तब विष्णु ने चक्र से उनका मस्तक काट दिया।

जब देवलोक का अधिपति इन्द्र को बनाया गया तो महिष नामक असुर ने उनका विरोध किया और अपनी विशाल सेना के द्वारा उनको हराकर देवलोक पर अधिकार कर लिया। इन्द्र और अन्य देवगण ब्रह्माजी को साथ लेकर विष्णु और महादेव की शरण में गये और महिषासुर के अत्याचारों की कथा उनको सुनाई। उसे सुनकर वे बड़े क्रोधित हुए और उनके मुखों से एक महातेज निकला। उसी समय ब्रह्मा, इन्द्र तथा अन्य देवगणों के मुख से भी तेज प्रकट हुआ। समस्त देवताओं के उस तेज ने सम्मिलित होकर एक देवी का रूप धारण कर लिया। सब देवताओं ने उसे अपने-अपने सर्वश्रेष्ठ अलंकार और अस्त्र-शस्त्र दिये और उसे त्रैलोक्य में अजेय एक महाशक्ति बना दिया इस प्रकार वह देवी जब युद्ध के लिए प्रस्तुत होकर गर्जने लगी तो उस महा शब्द से तीनों लोक काँपने लगे। उसे सुनकर महिषासुर भी अपनी सेना को सजाकर दौड़ा और दोनों पक्षों में घोर संग्राम होने लगा। आरम्भ में महिषासुर के चिक्षुर, चामर, उदग्र, महाहनु, असिलोमा, वाष्कल और विडालाक्ष सेनापतियों से सामना हुआ और एक-एक करके वे सब मारे गये। फिर दुर्धर और दुर्मुख आदि महिषासुर के महा पराक्रमी सहयोगी रणभूमि में उतरे पर देवी के सामने वे भी अधिक देर तक न ठहर सके और सेना-सहित मारे गये।

अपनी सेना और साथियों को इस तरह नष्ट होता देखकर महिषासुर अत्यन्त क्रोधित होकर सामने आया और अपने समस्त अद्भुत साधनों से भयंकर संग्राम करने लगा। वह कभी महिष कभी सिंह और कभी हाथी का रूप धारण करके लड़ता था। कभी भूमि पर और कभी आकाश में जाकर शस्त्र वर्षा करता था। उसके भयंकर संग्राम से तीनों लोक क्षुब्ध हो गये। तब देवी अपने सिंह से उछाट लेकर महिषासुर के ऊपर कूद पड़ी और उसे पैर से दबाकर तलवार से उसका मस्तक काट डाला।

उसका बध होते ही सर्वत्र हर्ष की लहर उठ गई और समस्त देवता देवी की जय जयकार करने लगे। इस अवसर पर देवगणों ने देवी की जो स्तुति की वह बड़ी अर्थ पूर्ण है। उसमें कहा गया है कि देवी ने अपनी शक्ति का समस्त विश्व मे विस्तार कर रखा है और ब्रह्मा, विष्णु, महेश भी उसके रहस्य को ज्ञात नही कर सकते। वही जगत का कारण अव्या-कृता प्रकृति, देवताओं और पितरों की स्वाहा और सुधा तथा मोक्षा-भिलाषियों को मोक्ष प्रदान करने वाली पराविद्या है। देवी ही तीनों वेदों की शब्दमयी मूर्ति सम्पूर्ण जगत की रक्षा करने वाली, समस्त शास्त्रों का रहस्य प्रकट करने वाली सरस्वती व सागर से उद्धार करने वाली दुर्गा, विष्णु के हृदय में निवास करने वाली लक्ष्मी और शिव के सिर पर विराजने वाली गौरी है। उसकी शक्ति और बल अपार है।

तीसरी बार जब शम्भु और निशुम्भ नामक असुरों ने देवताओं को हराकर भगा दिया तो वे फिर देवी की शरण में पहुँचे। उस समय पार्वती की देह से अम्बिका प्रकट होकर देवताओं की रक्षा के लिए असुरों से युद्ध करने को अग्रसर हुई। उनकी अनुपम सुन्दरता का वर्णन सुनकर पहले शुम्भ ने अपना दूत भेजकर अपना प्रणय सन्देश कहलवाया। पर देवी ने उत्तर दिया कि मैंने यह प्रतिज्ञा की है कि "जो मुझे युद्ध में जीत सकेगा वही मेरा भर्ता हो सकेगा।" इस पर शम्भु ने क्रोधित होकर अपने सेनापति धूम्रलोचन को एक बड़ी सेना के साथ देवी को पकड़ कर ले आने का आदेश दिया। इस असुर सेना के साथ देवी का विकट संग्राम हुआ, और अन्त में सब असुर मारे गये। फिर चण्ड-मुण्ड नामक महा-असुर लड़ने को आये पर वे भी काली द्वारा मार डाले गये, जिससे काली का नाम 'चामुण्डा' पड़ गया।

इसके-पश्चात् रक्तबीज नामक असुर रणभूमि में आया। इसमें यह विशेषता थी कि उसके रक्त की जितनी बूंदें पृथ्वी पर गिरती थी उतने हीन ये असुर और पैदा हो जाते थे और उनका नाश असम्भव प्रतीत होता था तब देवी ने काली से कहा कि जब मैं रक्त बीज पर अस्त्र से प्रहार करूँ तो

तुम उसके रक्त को पी जाओ, एक भी बूँद को भूमि पर मत गिरने दो। काली ने ऐसा ही किया और तब उस महाअसुर का वध किया जा सका।

रक्त बीज के मारे जाने पर स्वयं शभु और निशुंभ सम्पूर्ण सेना-सहित रणक्षेत्र में उपस्थित हुए। पहिले निशुम्भ का देवी के साथ घोर संग्राम हुआ और वह मारा गया फिर शंभु सामने आया और उसने देवी की सहायक सप्त मातृ का शक्तियों ब्रह्माणी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी बाराही, नारसिंही और ऐन्द्री की ओर सकेत करके कहा—'तुम दूसरों का आश्रय लेकर युद्ध करती हो और अपने पराक्रम झूँठ-मूँठ अभिमान करती हो।" इस पर देवी ने उन सात शक्तियों को अपने अन्दर समेट लिया और कहा कि ये सब मेरी विभिन्न शक्तिया है जो मेरी इच्छा से प्रकट होती रहती हैं। अब देख मैं अकेली ही तेरा वध करती हूँ। इसके पश्चात् असुर सेना से देवी का सबसे बड़ा संग्राम हुआ और शुंभ तथा उसके समस्त सहयोगी असुरों को पूर्णतया नष्ट कर दिया गया। इस महान विजय के पश्चात देवताओं ने निर्भय और प्रसन्न होकर देवी की जो स्तुति की उसमें उनको ही सृष्टि का कारण बतलाया है। देवताओ ने कहा—

'महामाया ही विपत्ति में पड़े जनों का कष्ट दूर करती है। वही जगत् की माता और चराचर विश्व की ईश्वरी है। सम्पूर्ण विद्याएँ सौर समस्त दैवी शक्तियाँ उन्हीं के रूप हैं। जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और सहार उनकी इच्छा से होता है।"

स्तुति से प्रसन्न होकर देवी ने देवताओं को वरदान देते हुए आश्वासन दिया कि "पृथ्वी पर जब-जब असुरों का उत्पति बढ़ेगा मैं विभिन्न रूपों में अवतीर्ण होकर उनका नाश और तुम्हारी रक्षा करूँगी।"

"देवी सप्त शती' का यह उपाख्यान 'मार्कण्डेय पुराण' का एक महत्वपूर्ण और प्रसिद्ध अंश है और नवरात्रियों के अवसर पर लाखों भक्त इसका पाठ करते हुए देवी से अपने कल्याण की याचना करते हैं। एक धार्मिक कथा के रूप में निःसन्देह यह रचना बड़ी प्रभावशाली और रोचक

है, पर इसके आध्यात्मिक और आधिदैविक अर्थ इससे भी अधिक शिक्षाप्रद हैं।

आधिभौतिक रूप में तो इसका स्पष्ट तात्पर्य यही है कि संसार में दैवी शक्तियों के साथ आसुरी शक्तियों का प्रादुर्भाव तथा संघर्ष सदैव होता है। असुर या दुष्ट स्वभाव के व्यक्ति अधिक उग्र, आक्रमण कारी और धूर्त होते है और इस कारण प्रायः आरम्भ में देव शक्तियों या सज्जन व्यक्तियो को दबा लेते है, उनको पीड़ित करते हैं। पर जब कष्ट मिलने से देवगण सावधान होता है. अपनी शक्तियों को एकत्रित और संगठन करते हैं तब वे असुरों का संगठन अहङ्कार, स्वार्थपरता दूसरों के उत्पीड़न की भावना पर आधारित होता है, जब कि देवताओं (सज्जनों के संगठन में) त्याग, तपस्या, परोपकार, विश्वकल्याण जैसी उच्च भावनायें भी निहित रहती है। इसलिए संघर्ष में असुरगण चाहे जैसी माया, छल बल से काम लें, अन्त में उन्हें परास्त होना ही पड़ता है।

आध्यात्मिक दृष्टि से इस कथा का अर्थ मनुष्य के भीतर उत्पन्न होने वाली सद् और असद् वृत्तियों के संघर्ष और मानसिक हलचल से है। भौतिक लाभ और सुखों को प्रधानता देना और उनके लिए अनुचित ढंगों को अपनाना बहुसंख्यक मनुष्यों का स्वभाव होता है। वे इस जीवन का अस्तित्व देह तक ही समझते हैं और उनकी धारणा यही होती है कि हम अपने अन्तःकाल तक जो कुछ ऐश्वर्य, वैभव प्राप्त कर लेंगे और उसके द्वारा जितना विषय-सुख भोग लेंगे, यह सार है, क्योंकि देहत्याग के बाद कोई निश्चय नहीं कि क्या हो। इस प्रकार के निकृष्ट विचार मनुष्य में स्वार्थपरता के भावों को भड़काते हैं जिससे वह अन्य व्यक्तियों को किसी भी प्रकार की हानि पहुँचाने में संकोच नहीं करता।

यह एक प्रकार का तामसी अहंभाव होता है। जिससे मनुष्य के अन्दर के सद्विचार क्षीण हो जाते हैं और वह समाज तथा संसार के लिए भ्रष्टाचारी तथा ध्वसकारी शत्रु का रूप ग्रहण कर लेता है। ऐसे तामसी और स्वार्थान्धता के विचारों का नाम ही महिषासुर है जो आत्मा की सद्वृत्तियों

को दबाकर दूषित भावनाओं का राज्य स्थापित कर देता है। इस दूषित अहम्भाव से छुटकारा पाने के लिए मनुष्य का बड़ा प्रयास और तैयारी करनी पड़ती है। उसके लिए समस्त देव-शक्तियों-श्रेष्ठ मनोवृत्तियों को जागृत करके एक लक्ष्य पर एकत्रित करना पड़ता है। तब वह शक्ति रूपा देवी एक-एक करके दुर्विचारों की सेना का संहार करती है। अन्त में दूषित अहंभाव विभिन्न रूपों में उसके सामने आता है पर सद्विचारों की पैनी तलवार से उसको निर्जीव कर दिया जाता है।

आधिदैविक दृष्टि से 'देवी सप्तशती' की कथा का आशय सृष्टि के विकास पर आरम्भिक परिवर्तनों से है। जैसा हमे मालूम है हमारी जानी हुई चराचर सृष्टि का मूल आधार सूर्य है। उसके प्रकाश और उष्णता के कारण ही इन्द्रिय ज्ञान युक्त जीवों की उत्पत्ति और वृद्धि हो सकी है। पर-सृष्टि के आरम्भ में जब सूर्य का आविर्भाव हुआ तब समय तक तम का आवरण उसके प्रकाश को रोके रहा। जो पदार्थ या शक्ति प्रकाश (देव भाव) के फैलने में बाधक होती है उसे सृष्टि विज्ञान के ज्ञाता ऋषियों ने 'असुर' के नाम से पुकारा है। प्रकाश की तरह प्राण-तत्व या गति तत्व भी देव-भाव का सूचक है क्योंकि उसी से प्राणी जगत का विकास और उत्थान होता है। जब तक सूर्य के तेज का परिपाक नही होता और उसके द्वारा प्राण-शक्ति कार्यशील नही होती तब तक की तम के आवरण-युक्त अवस्था को वृत्र अथवा महिषासुर का आधिपत्य कहा जाता है। उस समय तक सूर्य या इन्द्र अपने 'राज्य' से वंचित होता है। जब सूर्य की शक्ति का परिपाक हो जाता है और सौर-तेज सर्वत्र व्याप्त होकर सृष्टि-रचना के कार्य को अग्रसर करते है तो वही वृत्र या महिष का बध हो जाता है। यह कार्य देव-भाव की शक्ति का संग्रह होने से ही होता है इसलिए उसे शक्ति या देवी द्वारा सम्पन्न होना कहा जाना ठीक ही है। यह सृष्टि-विकास और रचना के परिवर्तन करोड़ों वर्षों में होते हैं अतएव 'देवासुर संग्राम' उतने समय तक चलता ही रहता है। यह सब वर्णन वेदों में स्थान-स्थान पर पाया जाता है और पुराणकारों ने भी उसे उपाख्यान का रूप देकर अपेक्षाकृत सरल भाषा में लिख दिया है। इस विषय

पर प्रकाश डालते हुए एक विद्वान् ने देवासुर संग्राम का इस प्रकार स्पष्टीकरण किया है—

"देवों के अधिपति पुरन्दर या इन्द्र का आशय सौर-प्राण से है। सूर्य में जागरण भाव ही है। सूर्य के भीतर सोना (निद्रा) नहीं है। आसुरी-भाव परिधि पर आक्रमण करते है, पर सूर्य-मण्डल के भीतर वे प्रवेश नहीं कर पाते। केन्द्र पर देवताओं का ही अधिकार रहता है। असुर केन्द्र तक कभी नहीं पहुँच सके। इसलिए 'शतपथ ब्राह्मण' में इन्द्र के देवासुर संग्राम को बनावटी कहा—

न त्वं युयुत्से कतमच्चानाहर्न तेऽभित्रोमघवन कश्चनास्ति।
मायेत्सा ते यानि युद्धान्याहुर्नाद्य शत्रुनंनु पुरायुयुत्सुः॥

अर्थात्—"हे इन्द्र! तुम कभी लड़े नहीं, न कोई तुम्हारा शत्रु है। तुम्हारे युद्धों का सब वर्णन माया या बनावटी है। न आज तुम्हारा कोई शत्रु है और न पहिले तुमसे लड़ने वाला कोई था।"

'वेदों में इन्द्र और वृत्र के युद्धों का विशद वर्णन है। वृत्र के मरने से इन्द्र 'असपत्न' (विना शत्रु के) हो गया वही भाषा मार्कण्डेय पुराण में महिषासुर के लिए प्रयुक्त की गई है—इन्द्रोऽभून्महिषासुरः' (७५-२) महिपासुर ने इन्द्र को स्वर्ग के सिंहासन से पदच्युत कर दिया और स्वयं इन्द्र बन बैठा। पुनः इन्द्र (सूर्य मण्डल का अधिष्ठातृ देवता देव-भाव की वृद्धि से या देवी की सहायता से शक्तिशाली हुए और महिषासुर मारा गया। जो आवरण करने वाला भाव है जो अपने तम से सौर तेज को ढक देता है वही वृत्र या महिष है। सृष्टिकाल के हिसाब से परमेष्ठी को सूर्य-भाव में आने को समय लगा होगा। सूर्य के जन्म से लेकर उनके तेज का पूर्ण परिपाक होने तक महिषासुर ही शक्तिशाली रहा होगा। अन्त में जब इन्द्र पुनः प्रबल हुए तब वही महिष बध हुआ।"

देवासुर संग्राम और देवी के युद्धों की कथायें वास्तव में बड़े सुन्दर रूपक है जिनके माध्यम से पुराणकारों ने आध्यात्मिक और आधिवैदिक गहन तत्वों को सर्वसाधारण के लिए बोधगम्य रूप में वर्णन किया है। उनमें तामसिक शक्ति के ऊपर सात्विक शक्ति की विजय का भाव दर्शाया

गया है जो मनुष्य को सतोगुण का अवलम्बन करने की प्रेरणा देता है उससे प्रकट होता है कि अन्धकार या तम की शक्तियाँ चाहे कुछ समय के लिए प्रकाश-सत्य की शक्ति को आच्छादित करलें पर अन्त में विजय सत्य-सतोगुण की होती है।

चौदह मन्वन्तर—

मन्वन्तरों का वर्णन और विवेचन पुराणों का एक मुख्य लक्षण माना गया है और मार्कण्डेय पुराण में भी इस सम्बन्ध मे अनेक रोचक कथायें दी गई है। उपर्युक्त 'देवी-सप्तशती' जिसका सारांश पिछले पृष्ठों में दिया गया है, स्वारोचिष मन्वन्तर के कथानक का ही एक अंश है। मन्वन्तरों की सख्या चौदह बतलाई है जिनमें से स्वायम्भुव, स्वारोचिष, औत्तम, तामस रैवत और चाक्षष-ये छः बीत चुके हैं। सातवाँ वैवस्वत मन्वन्तर वर्तमान समय में चल रहा है। इसके पश्चात सावर्णि, दक्षसावर्णि, ब्रह्मसावर्णि, धर्मसावर्णि, रुद्रसावर्णि रौच्य और भौत्य नाम के सात मन्वन्तर और व्यतीत होंगे। ये चौदह मन्वन्तर ब्रह्मा के एक दिन के अन्तर्गत होते हैं जिनका परिमाण मनुष्यों के ४ अरब ३२ करोड़ वर्षों का बतलाया गया है। ब्रह्मा के इस एक दिन अथवा चौदह मन्वन्तरों की सम्मिलित अवधि को एक कल्प' कहा जाता है।

यदि हम मानवीय इतिहास के दृष्टिकोण से विचार करते हैं तो दस बीस हजार वर्ष का इतिहास ही बहुत अस्पष्ट जान पड़ता है जिसका पता लगाने में बहुत कुछ अनुमान और कल्पना से काम लेना पड़ता है। ऐसी दशा में पुराणकारों का चार अरब वर्ष पहिले का इतिहास नाम-धाम सहित लिख देना विचित्र ही जान पड़ता है। पर इसका कारण यही है कि पुराणकार सृष्टि के निर्माण और प्रलय को एक सामान्य नियम मानकर उसके मुख्य परिवर्तनों (सर्गों) की चर्चा करते है। यह ठीक है कि वर्तमान मानव-सभ्याता का इतिहास आठ-दस हजार वर्ष से अधिक का विदित नहीं होता और वह भी अधूरा और कुछ अंशों में अनुमानों पर भी आधारित है, पर इसमें कोई सन्देह नहीं कि पृथ्वी की सृष्टि और प्रलय होते रहने से ऐसी सभ्यतायें हजारों बार बन और बिगड़ चुकी हैं और हजारों ही बार बनें और बिगड़ेंगी। जब देश और काल अनन्त

और अनादि है और निरन्तर परिवर्तन विश्व का अटल नियम है तब आज की दुनिया और मनुष्य जाति को ही सब कुछ समझ लेना या उसके आगे पीछे ससार को शून्य ही मान लेना ज्ञान का बहुत सीमित प्रयोग करना है।

हम जानते है कि पुराणों में विभिन्न मन्वन्तरों के राजाओं ऋषियों और व्यक्तियों की जो कथायें दी गई है वह वर्तमान दुनियाँ के स्वरूप और नमूने के अनुसार ही लिखी गई हैं, पर उनमें किसी तरह की हानि नही जान पड़ती। इन वर्णनों का मुख्य उद्देश्य पाठकों को सृष्टि की विशालता और अनादि काल से होते चले आने वाले विविध परिवर्तनों का आभास कराना ही है जिससे वह अपनी वास्तविकता का अनुभव कर सकें और और अधर्म तथा अनीति से बचकर अपने धर्म कर्त्तव्यों पर आरूढ़ रहे। व्यक्तियों के नाम और उनके कथन तो इस उद्देश्य से लिखे गये हैं जिससे पाठकों को वे स्वाभाविक जान पड़ें और वे उनसे शिक्षा और प्रेरणा प्राप्त कर सके। हम तो यह भी निश्चय पूर्वक नहीं कह सकते कि प्रत्येक मन्वन्तरों में मनुष्यों का आकार प्रकार और शरीर रचना वर्तमान तरह की ही थी और वे इसी प्रकार बोलकर अपना मनोभाव प्रकट करते थे। पर इसमें सन्देह नहीं कि पञ्चभूत, प्राणशक्ति और चेतन-तत्व मिलकर इसी से मिलती-जुलती प्राणियों की रचना और विनाश सदैव करते ही रहते है और विविध प्रकार की भली-बुरी घटनाओं का होते रहना प्रकृति का एक स्वाभाविक और अनिवार्य नियम है। यदि किसी काल के मनुष्य चार हाथ पैरों से गमन करने वाले हों या उड़कर आते जाते हों तो इससे भी भलाई-बुराई, नैतिकता-अनैतिकता, पाप-पुण्य की शिक्षाओं में कोई अन्तर नहीं पड़ता।

पौराणिक कथाओं का मुख्य उद्देश्य लोगों को सदाचरण की सत्-शिक्षाएँ देना ही है। वर्णनों के नाम, गाँव, संख्या, कथोपकथन के ज्यों का त्यों होने पर बहस करना निरर्थक है। रामायण और महाभारत के नायकों के अथवा बुद्ध ईसा, सिकन्दर, चन्द्रगुप्त, चाणक्य अशोक आदि ऐतिहासिक व्यक्तियों के जो सम्भाषण उनके जीवन चरित्रों या ऐतिहासिक कथाओं में दिये गये हैं वह भी उस समय किसी 'शार्ट हैण्ड' लेखक ने नहीं लिखें थे पर घटनाओं को सम्पूर्णता और स्वाभाविकता का रूप देने के ख्याल से कथा

लेखक, कविगण या नाटककार उसे ऐसे रूप में लिखते ही है मानो वे घटनायें उनकी आँखों के सामने ही हुई हों। पौराणिक कथाओं की रचना भी इसी प्रकार और ऐसे ही शिक्षा देने के उद्देश्य से की गई है। हम तो उन उन लेखकों के व्यापक दृष्टिकोण की प्रशंसा ही करेंगे जिन्होंने मानव मात्र को ही नहीं प्राणी मात्र में एक ही सत्ता का अनुभव करके मनुष्यों के सम्मुख सत्य, न्याय, सहानुभूति, दया, क्षमा के दैवी गुणों के आदर्श ऐसे रूप में उपस्थित किये जो किसी सहृदय व्यक्ति के अन्तःकरण को सहज ही प्रभावित कर सकते हैं।

इस दृष्टि से मार्कण्डेय पुराण का दर्जा बहुत ऊँचा माना जाता है। इसमें मतमतान्तर, सम्प्रदायवाद और विशेष स्वार्थों की भावना से ऊपर उठ कर आत्मोथान, सच्चरित्रता, परोपकार, दया क्षमा आदि सद्गुणों की ही शिक्षा दी है। इन तथ्यों को साधारण बुद्धि के मनुष्य भी हृदयंकर सकें इसलिए उपाख्यानों की रौचक शैली का अवलम्बन किया है। इसके 'हरिश्चन्द्र' और 'मदालसा के उपाख्यान धार्मिक-जगत् में अमर बन चुके हैं और देवी' सप्तशती शक्ति-सम्प्रदाय ही नहीं हिन्दू मात्र का परायण ग्रन्थ बन चुका है। "नरक वर्णन, योग निरूपण, सूर्यतत्व विवेचन, पतिव्रत महिमा आदि का इसमें ऐसे प्रभावशाली ढंग से वर्णन किया है कि प्रत्येक पाठक को उससे कुछ न कुछ सद्प्रेरणा अवश्य प्राप्त होती है। सृष्टि-रचना, जड़ और प्राणी जगत् का क्रम विकास, मानव स्वभाव के दोष और दुरितों का कथन, राजवंशों की कथायें आदि पौराणिक विषयों के वर्णन में भी मार्कण्डेय पुराण ने अतिशयोक्ति से यथा सम्भव बचकर शिक्षा और उपदेश पर अधिक दृष्टि रखी है। इन सब विशेषताओं के कारण सामान्य जनता तथा विद्वानों में भी मार्कण्डेय पुराण का अपेक्षाकृत अधिक मान है और हमारा विश्वास है कि पाठक इसके परायण से पर्याप्त लाभान्वित हो सकते हैं।

मार्कण्डेय पुराण की श्लोक संख्या अन्य पुराणों के विस्तार को देखते हुए पर्याप्त न्यून है। अतः इसमें कोई खास कमी नहीं की गई है। केवल श्राद्ध सम्बन्धी कुछ विपय जो अप्रासङ्गिक जान पड़ता था छोड़ा गया है। अन्यथा आदि से अन्त तक सम्पूर्ण ग्रन्थ ज्यों का त्यों रखा गया है।

—श्रीराम शर्मा आचार्य

मार्कण्डेय पुराण की विषय सूची

॥ ॐ ॥

मार्कण्डेय पुराण

—※—

॥ प्रकर्ण—१ महाभारत विषयक चार शंकायें ॥

यद्योगिभिभंत्रभयार्तिविनाशयोग्यमासाद्यवदितमतीवविविक्तचित्तैः
तद्वःपुनातुहरिपादसरोजयुग्ममाविर्भवत्क्रमविलंघित भुर्भुवःस्व ।१
पायात्सवः सकलकल्मषभेददक्षः क्षीरोदकुक्षिफणिभोगनिविष्ट-
मूर्तिः । श्वासावधूतसलिलोत्कणिका करालःसिन्धुः प्रनृत्यमिव-
गस्यकरोति संगात् ।२। नारायणनमस्कृत्यनरचैवरोत्तमम्ः ।
देवीसरस्वतीं व्यासततोजयमुदीरयेत ।३।

तपःस्वाध्याय निरतंमार्कण्डेयमहामुनिम् ।
व्यास शिष्योमहातेजाजैमिनिःपयपृच्छत ।१।

संसार के भय और दुख के नाशक, एकान्त चित्त योगियों और सन्यासियों द्वारा ध्यान योग्य तथा वंदनीय, भू० भुव. और स्वर्लोक का वामन रूप से अतिक्रमण करने वाले, नारायणके पद पद्म आपको पवित्र करें !१। जो शेषशायी, श्वास से जल के कारण कण को कम्पायमान करने वाले, जिससे समुद्र नर्तन करता सा प्रतीत होता है, यह अविनाशी नारायण तुम्हारे रक्षक हों ।२। नर नारायण, नरोत्तम तथा देवी सरस्वती को प्रणाम करके जप कीर्तन एवं पुराण आदि का पाठ करें ।३। एक समय की बात है महर्षि वेदव्यास के शिष्य महा तेजस्वी जैमिनि ने वेदादि के अध्ययन में परायण, महा तहस्वी मार्कण्डेयजी से प्रश्न किया ।१।

भगवन् भारताख्यानं व्यःसेनोक्तं महात्मना ।
पूर्णमस्तमलेःशुभ्र र्नानाशास्त्रसमुच्चयः ।२

जातिशुद्धिसमंयुक्तं साधुशब्दोपशोभितम् ।
पूर्वपक्षोक्तिसिद्धान्तपरिनिष्ठासमन्वितम् ।३

त्रिदशानांयथाविऽणुदिपदाँब्राह्मणो यथा ।
भूषणानाचसर्वेषांयथःचूड़ामणिर्वरः ।४

यथायुधानांकुमिशमिन्द्रियाणांयथामनः ।
तथेहसर्वशास्त्राथांयहाभारतमुत्तमम् ।५

अत्रार्थश्चैवधर्मश्चकामोमोक्षश्चवर्ण्यते ।
परस्परानुबन्थाश्चसानुवन्धाश्चतेपृथक् ।६

धर्मशास्त्रमिदश्रैष्ठमर्थशास्त्रमिटंपरम् ।
कामशास्त्रमिदंचाग्यं मोक्षशास्त्रंयथोतमम् ।

चतुराश्रमवर्माणामचारस्थितिसाधनम् ।
प्रोक्तमेतन्महाभागवेदव्यासेनश्रीमता ।८

हे भगवान् ! महात्मा वेदव्यास जी न जिस 'भारत' ग्रन्थ को कहा है, वह अनेक शास्त्रों से धर्मार्थ वाला है ।२। पवित्र शब्द से युक्त, छन्दालकारों से सम्पन्न कानो को सुखप्रद है तथा उसमे वर्णित यथार्थ प्रश्नों का उत्तर सन्निविष्ट है ।६। जैसे देवगण मे विष्णु, मनुष्य में ब्राह्मण और आभूषणों में चूड़ामणि ।४। अस्त्रों मे वज्र तथा इन्द्रियो मे मन प्रमुख है, वैसे हीं सम्पूर्ण शास्त्रों में एक मात्र महाभारत ही है।५। इसमें धर्म, अर्थ, काम मोक्ष का पारस्परिक सम्बन्ध है तथा वे प्रकट और पृथक-पृथक कहे गये हैं ।६। इसलिए यही धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र कामशास्त्र और मोक्षशास्त्र है ।७। हे महाभाग ! महर्षि वेदव्यास ने इसमें चारों आश्रम, उनका आचार अवस्थान तथा साधन, सभी कुछ विशेष रूप से कहा है ।८।

तथातातकृतं ह्येतत्व्यासेनादारकर्मणा ।
यथा व्याप्तं महाशास्त्रविरोधैर्नाभिभूयते ।
व्यासवाक्यजलोर्घनकुतर्क तरुहारिणा ।
वेदशैलावतीर्णेसनीरअस्कामहोकृता ।१०
कलशब्दमहाहंसमहाख्यानपराम्बुजम् ।
कथाविस्तीर्णं सलिलकार्णवेदमहाह्लदम् ।११
तदिदं भारतास्यानं बह्वश्रुतिविस्तरम् ।
यत्त्वतोज्ञातुकामोपूं भगवस्त्वामुपस्थिति ।१२
कस्मान्मानुषतांप्राप्तोनिर्गुणोऽपिजनार्दनः ।
वासुदेवोजगात्सूतिस्थितिसयमकारणम् ।१३
कस्माच्चपाण्डुपुत्रामेकासाद्रुपदात्मचा ।
पञ्चानांमहिषीकृष्णाह्यत्रनःसाशयोमहान् ।१४

उन उदारकर्मा व्यासजी ने इस महाशास्त्र को इस प्रकार रचा है कि उसके अत्यन्त विस्तृत होने पर भी इसमें कोई स्थल किसी भी स्थल का परस्पर विरोधी नहीं हैं ।९। वासुदेव की वचन रूप जल राशि वेद रूप पर्वत से प्रकट हुई और उसने कुतर्क रूप को उखाड़ कर भूमि को रजहीन बना दिया ।१०। यह पंचम वेदरूप जलाशल महाशब्द रूप हंसों और महान ख्यान रूप अरबिन्दों से सुशोभिततथा विस्तीर्ण कथा नीर के द्वारा परिपूर्ण हुआ है ।११। हे प्रभो ! जो महाभारत शास्त्र वेदार्थ और श्रुतियोंसे सम्पन्न हैं, उसका यथार्थ जाननेके निमित्त ही आपके निकट उपस्थित हुआ हूँ ।१२। विश्व सृष्टि, स्थिति और संहारकर्ता जनार्दन वासुदेव निर्गुण होते हुए भी मनुष्यत्व को किसलिए प्राप्त हुए ।१३। द्रुपद सुता द्रोपदी एक ही पाँच पांडवों की पत्नी कैसे हुई, इस विषय में मुझे अत्यन्त शंका है ।१४।

भेषजंब्रह्मायहत्याबलदेवोमहाबलः ।
तीर्थयात्राप्रसङ्गनकस्माच्चक्रेहलायुधः ।१५
कथंचद्रौपदेयास्तेऽकृतदारामहारथाः ।
पाण्डुनाथमहात्मानोवधमापुरनाथवत् ।१६
एतत्सर्वं विस्तरशाममाख्यातुमिहार्हसि ।
भवन्तोमूढबुद्धीनामवबोधकराः सदा ।१७
इतितस्यवचःश्रुत्वामार्कण्डेयो महामुनिः ।
दशाष्टदोषरहितोवक्तुंसमुपचक्रमे ।१८
क्रियाकालोऽयमस्माकं सम्प्राप्तो मुनिसत्तम् ।
विस्तरेचापि वक्तव्येनैपकाल.प्रशस्यते ।१९
येतु वक्ष्यन्तिवक्ष्येऽद्यतानह जेमिनेतव ।
तथाचनष्टसन्देहंत्ववांकहिष्यन्तिपक्षिण ।२०
पिङ्गाक्षश्चविबोधश्चसुपुत्रःसुमुखस्तथा ।
द्रोणपुत्राःखगश्रेष्ठास्तत्वज्ञाः शास्त्रचिन्तका. ।२१

तथा महाबली वल्देवजी ने तीर्थ यात्रा के प्रसंग में कै ' ब्रह्म-हत्या का प्रायश्चित किया ? ॥१५॥ पाण्डवोंसे रक्षित द्रोपदी के महारथी पुत्रों ने अनाथ के समान ही अविवाहितावस्था मे ही कैसे प्राण छोड़ दिये ? ॥१६॥ यह सब मेरे प्रति विस्तार सहित कहिये, क्योंकि आप ही अज्ञानियों को ज्ञानोत्पन्न करनेमें समर्थ हैं।१७। योग शास्त्र मे वर्णित अठारह दोषों से बचे हुए महर्षि मार्कण्डेयजी ने मुनि श्रेष्ठ जैमिनीके यह वचन सुनकर कहा ।१८। मार्कण्डेयजी बोले-यह समय मेरे संध्या वन्दनादि का है, विस्तार सहित कुछ कहने का नहीं हैं ।१९। परन्तु इस विषय को तुम्हारे प्रति जो पक्षी कहेंगे और तुम्हारा संदेह नष्ट करेंगे, उनका वर्णन तुम्हारे प्रति कहता हूँ ।२०। पिंगाक्ष, विबोध , सुपुत्र और सुमुख इत्यादि द्रोण- पुत्र पक्षी श्रेष्ठ, सब शास्त्रों का तत्व जानने वाले हैं।२१।

वेदशास्त्रार्थविज्ञानेयेषामध्याहृतामतिः ।
विन्ध्यकन्दरमध्यस्तथास्तानुपास्यचपृच्छच ।२२
एवमुक्तम्नदानेनमार्कंडेयेनधीमता ।
प्रत्युवाचर्षिशार्दूलोविस्मयोत्फुल्ललोचनः ।२३
अत्यद्भुतमिवब्रह्मन्खगवागिवमानुषी ।
यत्पक्षिणस्तेविज्ञानमापूरत्यन्तदुर्लभम् ।२४
तिर्यग्योन्यांयादिभवस्तेषाज्ञानंकुतोऽभवत् ।
कथञ्चद्रोणतनयाः प्रोच्यन्ततेपतत्रिण ।२५
कश्चद्रोणःप्रविख्याहोयस्यपुत्रयतुष्टयम् ।
जातंगुणवत्तातेषांधर्मज्ञान महात्मनाम् ।२६
श्रृणुष्वावहितो भूत्वायद्वृत्त नन्दननेपुरा ।
शक्रस्याप्सरसांचैवनारदस्यचसगमे ।२७

वे विंध्याचल की कन्दरामे निवास करते हैं, उनकी बुद्धि वेदशास्त्र के अर्थ मे कभी अवरुद्ध नही होती, उनकी उपासना करके प्रश्न करोगे तो सम्पूर्ण विषयो का ज्ञान तुम्हें हो सकेगा ।२२। मेधावी मार्कण्डेयजी के यह वचन सुनकर उन मुनि शार्दूल जैमिनि ने विस्मय से विस्फारित हुए नेत्रो से प्रश्न किया ।२३। जैमिनि बोले-प्रथम तो यही आश्चर्य की बात है कि पक्षी भी मनुष्य के समान वार्ता कर सकते है, फिर अत्यन्त आश्चर्य यह है कि उन्हें अलभ्य शास्त्र ज्ञान प्राप्त हो चुका है ।२४। उनका जन्म यदि तिर्यग्योनि मे हुआ है तो ऐसे ज्ञान की उपलब्धि उन्हें कहां से हुई और वे द्रोणपुत्र किस प्रकार कहे जाते हैं? ।२५। यह द्रोण कौन है, जिसके पुत्र यह चार पक्षी है तथा इन गुणज्ञ एवं महात्मा पक्षियों को धर्म-ज्ञान की प्राप्ति किस प्रकार हुई? ।२६। मार्कण्डेयजी ने कहा—हे जैमिने! प्राचीन काल में इन्द्र, नारद तथा अप्सराओं के नन्दन वन में एकत्र मिलन होने पर जो घटना हुई, उसे एकाग्र मन होकर श्रवण करो ।२७।

नारदोनन्दनेऽपश्यत्पुंश्चलीगणमध्यगम् ।
शक्रसुराधिराजानतन्मुखासक्तलोचनम् ।२८
सतेनर्षिवरिष्ठदृष्टमात्रःशचीपतिः ।
समुत्तस्थौस्वकंचास्मदावासनमादरात् ।२९
तं दृष्ठावलवृत्रघ्नमुत्थितं त्रदशाङ्गनाः ।
प्रणेमुस्ताश्चदेवर्षिविनियाबनताः स्थितः ।३०
ताभिरभ्यार्चितःसोऽथ उपविष्टे शतक्रतौ ।
यथार्हतसंभाषःकथाश्चक्रमनोरमा ।३१
ततः कथान्तरेशक्रस्तमवाचमहामुनिम् ।
देह्याम्नानृत्यतामासीतवयाभिमतेतिवै ; ।३२
रम्भावाकर्कशावथउर्वश्यथ तिलोत्तमा ।
घृताचीमेनकावापियत्रवाभववोरुचिः ।३३
एतच्छ्रुत्वाद्विजश्रेष्ठोव चशक्रस्यनारदः ।
विचिन्त्याप्सरसः प्राहविनयावनताः स्थिताः ।३४

एक दिन नारदजी ने वहां पहुंचकर देखा कि देवराज इन्द्र अनेक वीराङ्गनाओं से घिरे हुये उनके ही मुख को देख रहे हैं ।२८। शचीपति इन्द्र महर्षि श्रेष्ठ नारद को देखते ही उठे और अत्यन्त आदरपूर्वक उनके निमित्त अपना आसन दिया ।२९। इन्द्र को उठता हुआ देखकर उन वाराङ्गनाओं ने भी उठकर महर्षि नारद को प्रणाम किया और विनय-पूर्वक नतमस्तक हुई खड़ी रही ।३०। उनके द्वारा इस प्रकार पूजित हुये नारदजी इन्द्र के सहित बैठकर परस्पर अनेक प्रकार की बातें करने लगे ।३१। इसी मध्य उन महर्षि से इन्द्र बोले-हे महाभाग ! यदि आपकी इच्छा हो तो नृत्यगान की आज्ञा दीजिये।३२। रंभा मिश्रकेशी, तिलोत्तमा, उर्वशी,घृताची या मेनका मे से जिसे आप चाहें उसी को नृत्य करने का आदेश दे ।३३। द्विजोत्तमनारद जी ने इन्द्र की यह बात सुनी तो कुछ समय विचार कर उन्होंने विनय से झुकी हुई उन अप्स-राओं से कहा ।३४।

युष्माकमिहसर्वांमा रूपोदार्यगुणाधिकम् ।
आत्मानं मन्यतेयातुमानुत्यतुममाग्रत: ।३५
गुणरूपविहीनाया सिद्धिर्नाटयस्यनास्तिवै ।
चार्वधिष्ठानवन्नृत्यं नृत्यद्विडम्बनम् ।३६
तद्वाक्यसमकालञ्चएकं कामतानतास्तत: ।
अहं गुणाधिकानत्वं नत्वं चान्यान्याब्रवीदिदम् ।३७
तासांसम्भ्रमालोक्य भगवान्पाकशासन: ।
पृच्छयतामुनिरित्याह्वत्तायांवोगुणाधिकाम् ।३८
शक्रच्छन्दानुयाताभि पृष्टताभि:सनारद: ।
प्रोवाचयत्तदावाक्तं जैमिनेतन्निबोधमे ।३९
तपस्यतंनगेन्द्रस्थं याव:शोभयतेब्रलात् ।
दुर्वासमं मुनिश्रेष्टं तावामन्येगृणाधिकाम् ।४०
तस्ययद्वचनश्रु त्वामर्वावेपितिकन्धरा: ।
अशक्यमतादस्माकभितिताश्चकिं रेकथा: ।४१

देखो, तुम्हारे मध्य जो अधिक रूपवती हो, तथा जो अपने में उदारता आदि गुणों को पाती हो वही मेरे समक्ष नृत्य करे ।३५। क्योंकि नाट्यशास्त्र में रूपवती और गुणवती नारी के अतिरिक्त किसी अन्य की सिद्धि नहीं तथा हाव, भाव कटाक्ष, विक्षेपादि से सम्पन्न नृत्य ही नृत्य कहा जाता है ।३६। मार्कण्डेयजी ने कहा—नारदजी की यह बात सुनकर अप्सराये परस्पर में विवाद करने लगीं—सब गुणों से विभूषित विशिष्ट मैं ही हूँ तुम नहीं हो ।३७। उनमें इस प्रकार विवाद होता देखकर इन्द्र बोले- इन मुनि से ही पूछो कि तुम से से गुणवती कौन-सी बात है ? इस बात को वही कह सकते है ।३८। हे जैमिने ! इन्द्र की इच्छा पर उद्यत करने वाली अप्सराओं द्वारा पूछने पर उस समय नारद जी ने कहा वह कहता हूँ ६७। नारदजी ने कहा—पर्वत पर मुनिवर दुर्वासा तप करते है तुम में से जो कोई उन्हें मोहित कर सकेगी, वही अधिक गुणवती होगी ।४०। मार्कण्डेयजी ने कहा—

उनकी बात सुनकर सब अप्सराओं का मस्तक घूम गया और वे बोली कि हम इस कार्य मे समर्थ नही है ।४१।

तत्राप्सरावपुर्नाममुनिक्षोभणगर्विता ।
प्रत्युवाचानुयास्यामियत्रासोसस्थितोमुनिः ।४२
अद्यतदेहयन्तारं प्रवृत्तेन्द्रियवाजिनम् ।
स्मरशस्त्रगलद्रश्मिकरिष्यामिकुमारथिम् ।४३
ब्रह्मार्जनार्दनोवापियदिवानीललोहितः ।
तमप्यद्यकरिष्यामिकामवाणक्षतान्तरम् ।४४
इत्युक्त्वाऽजगामाप्राथलेयाद्रिवपुस्तदा ।
मुनेस्तप प्रभावेणप्रशान्तश्वापदाश्रमम् ।४५
सापुंस्कोकिलमाधुर्ययत्रास्तेममहामुनिः ।
क्रोशमात्रं स्थितास्मादगायतवराप्सराः ।४६
तद्गीतध्वनिमाकर्ण्यमुनिर्विस्मितमानसः ।
जरामतत्रयत्रास्तेसाबालरुचिरानना ।४७
तांदृष्ट्वाचारुसर्वाङ्गींमुनिः संस्तभ्यमानसम् ।
क्षोभणायागतांज्ञात्वाकोपामर्षसमन्वितः ।४८

परन्तु उनमें वपु नाम की एक अप्सरा अनेक मुनियों का तप भंग कर चुकी थी,इसलिए उसने सगर्व कहा कि आप मुझे आज्ञा करें,दुर्वासाजी जहाँ निवास करते है, मै वहा जाने को उद्यत हू ।४२। मैं उनकी मन रूप लगाम को काम बाण मे काट कर इन्द्रिय रूप अश्वो को उल्टी दिशा में फेरकर देह रूप रथको बुद्धि रूप सारथी से विहीन कर डालूँगी ।४३। यदि, ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव भी हो, तो भी मै उनके अन्तर को काम बाणसे अवश्यही जर्जर कर डालूँगी ।४४। यह कहकर वह अप्सरा हिमालय में पहुंची, वहां दुर्वासा के तपके प्रभाव से आश्रम के हिंसक जीव भी अत्यन्त शान्त रहते थे ।५। जहाँ दुर्वासा रहते थे, वहाँसे एक कोस दूर रह कर वह अप्सरा श्रेष्ठ वपु अपने कोकिल कण्ठ से गायन

करने लगी ।४६। जहाँ पर वह कोकिल कंठी गारही थी, वहाँ उस गान को सुनकर आश्चर्यान्वित हुए दुर्वासा पहुँचे।४७।और उन्होंने उस सर्वाङ्गसुन्दरी को देखकर मन को रोकते हुए सोचा कि यह मेरी तपस्या मे विघ्न करने को उपस्थित हुई हैं और क्रोध मे भरकर बोले ।४८।

उवाचेदन्ततोवाक्यं महर्षिस्तांमहातपाः ।४९
यस्माद्दु खार्जितस्येहतपसोविघ्नकारणात् ।
आगतासिमन्दोन्मत्ते ममदु खायखेचरि ।५०
तस्मात्सुपर्णगोत्रेत्व मत्क्रोधकलुषीकृता ।
जन्मप्राप्स्यसिदुष्प्रज्ञे यावद्वर्षाणिषोडश ।५१
निजरूपं परित्यज्यपक्षिणीरूपधारिणी ।
चत्वारस्तेचतनयाजनिष्यन्तेऽधमाप्सराः ।५२
अप्राप्यतेषुचप्रीतिशस्त्रपूतापुनर्दिवि ।
वासमाप्स्यसिवक्तव्य नोत्तरंतेकथचन ।५३

इति वचनमसह्यं कोपसंरक्तदृष्टिश्चंकलवलयांतांमनिनीं श्रावयित्वा । तरलतरङ्गागांपरित्यज्यज्यविप्रः प्रथितगुणगणोघांमं प्रयातः खगङ्गाम् ।।

उन महा तपस्वी महार्षि ने उसके प्रति कहा ।४९। अरी मदोन्मत्त खेचरी!कष्टों से उपार्जित मेरे इस तपमें विघ्न करने के लिए ही तू यहाँ आई है ।५०।हे दुर्बुद्धि वाली ! तू मेरे क्रोध से कलुषित होकर पक्षी कुलमें जन्म लेकर सोलह वर्ष तक रहेगी ।५१। अरी अधम अप्सरे ! अपने इस रूप को छोड़कर पक्षी रूप धारण करेंगी, उस समय तेरे चार पुत्र होंगे ।५२। तू पुत्रोत्पत्ति की प्रीति से वंचित रहेगी और शस्त्र के आघात से पापों से छूटकर पुनः स्वर्ग को प्राप्त होगी अब इसमे किसी प्रश्नोत्तर की आवश्यकता नहीं है ।५३। विप्र श्रेष्ठ दुर्वासा क्रोधपूर्ण रक्त नयनोंसे मनोरम कंकणको धारण करने वालीं मानवती वपुने इतना कहकर पृथ्वी को त्याग कर प्रसिद्ध गुणों वाली आकाश गंगा को चले गये ।५४।

।।प्रकर्ण–२ महाभारत संग्राम में पक्षी शावको का जन्म ।।

अरिष्टनेमिपुत्रोऽभूदगरुडोनामपक्षिराट् ।
गरुडस्याभवत्पुत्रः सम्पातिरितविश्रुतः ।१
तस्याप्यासीत्सुतः शूरःसुपार्श्वोंगायुर्विक्रमः ।
सुपार्श्वंत नयः क्रन्ति क्रन्तिपुत्र प्रलोलुपः ।२
तस्यापिदनयावास्तांकङ्कः कन्धरएवच ।३
कङ्ककैलासशिखरेविद्युद्रूपेतिविश्रुतम् ।
ददर्शाम्बुज नेत्राक्षाक्षस धनदानुगम् ।४
अपानासक्तममलस्त्रग्दामाम्बर धारिणाम् ।
भार्यामिहायमासीनशिलापट्टेऽमलेशुभे ।५
तद्दृष्टमात्रं कङ्केनरक्षःक्रोधसमन्वितम् ।
प्रोवाचकस्मादायातस्त्वमितोह्यण्डनाधम ।६
स्त्रीसन्निकर्षेतिष्ठन्तकस्मात्मामुपसर्गेपि ।
नैषधर्मः सुबुद्धिनामिथोनिष्पाद्यवस्तुषु ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा—अरिष्टनेमि के पुत्र पक्षिराज गरुड हुए तथा गरुड का पुत्र सम्पाति हुआ ।१। उस सम्पति का अत्यन्त बली एवंवायु के समान विक्रम वाला पुत्र सुपार्व हुआ, सुपार्श्व का पुत्र कुन्ति और क्रन्ति का पुत्र प्रलोलुप हुआ ।२। प्रलोलुप के कर्क और कन्धर नाम के दो पुत्र हुऐ ।३। कर्क एक दिन कैलाश पर्वत में गया और वहां उसने कमलपत्र के समान विशाल नेत्र वाले कुबेर-किंकर विद्युद्रूप नाम के राक्षस को देखा ।४। वह राक्षस उस समय स्वच्छ माला और श्रेष्ठ वस्त्र धारण किये एक स्वच्छ शिल पर अपनी पत्नी के सहित बैठाहुआ मद्य पी रहा था ।५। कंक को देखते ही वह राक्षस अत्यन्त क्रोधपूर्वक बोला—हे पक्षिय अधम ! तू यहां किसलिए उपस्थित हुआ है ? ।।६।। मैं इस समय अपनी भार्या के साथ बैठा

हूँ तब तू मेरे पास क्यों आया है ! रहस्य कार्य में बुद्धिमानी को ऐसा आचरण उचित नहीं है ।७।

साधारणोऽयशोलेन्द्रोयथातवतथामम ।
अन्येषांचैवजन्तुनाँमता भवतोऽत्रका ।८
ब्रुवाणमित्थखड्गनकङ्कचिच्चेदराक्षसः ।
क्षरत्स्रूतजबोभन्सविस्फुरन्तमचेतनम् ।९
कङ्कविनिहतंश्रुत्वाकन्धरःक्रोधमूर्छितः ।
विद्युद्रूपवधायाशुमनश्चक्रेण्डजेश्वर ।१०
सगत्वाशैलशिखरंकङ्कोयत्रहतःस्थित ।
तस्य संकलनंचक्रे भ्रातुर्ज्येष्ठस्यखेचरः ।
कोपामर्षविघृत्ताक्षो नागेन्द्रइवनिःश्वसन् ।११
जगामाथसयत्रास्तेभ्रतृहातस्यराक्षसः ।
पक्षयातेनमहता चालयन्भूधरांन्वरान् ।१२
वेगात्पयोदजालानिविक्षिपन्क्षतजेक्षणः ।
क्षणात्क्षयितशत्रुसपक्षाभ्यांक्रांतभूधरः ।१३
पानासक्तमतितत्रतददर्शनिशाचरन् ।
आताम्रवक्तयनहेमपर्यङ्कमाश्रितम् ।१४

कंक बोला—इस पर्वत पर सभी का समान अधिकार जैसा है तुम्हारा अधिकार है, वैसा ही मेरा तथा अन्य-अन्य जीवों का है, फिर तुम्हें इसके प्रति इतना ममत्व क्यों है ? ।८। मार्कण्डेयजी ने कहा—कंक की यह बात सुनकर अत्यन्त क्रोधित हुए उस राक्षस ने खड्ग से उसका शीश काट डाला, उस समय अधिक रक्त गिरने से अति भयानक कार्य हुआ और कंक की मृत्यु हो गई ।९। फिर पक्षिय श्रेष्ठ कन्धर ने कंक का मरण सुना तो अत्यन्त क्रोधित होकर उसने विद्युद्रूप राक्षस को मार डालने का विचार किया । १०। फिर कंक से ज्येष्ठ भ्राता कन्धर ने कैलाश में जहां कंक की मृत्यु हुई थी वहां पहुंचकर उसकी अन्त्येष्टि की और विस्फारित नेत्रों से सर्प के समान श्वांस लेने लगा । ।११। और जहाँ कंक का हत्यारा वह विद्युद्रूप राक्षस था,

वहाँ पहुंचा उसके जाते समय उनके अनेक पंखों की हवा के वेग से बड़े पर्वत हिलने लगे।१२। और समुद्रका जल भी इधर उधर फैलने लगा। एकमात्र पंखों के बल से ही कंधर ने पर्वत पर आक्रमण किया।१४। उसने वहाँ जाकर देखा कि सुवर्णमय शैया पर स्थित वह राक्षश मद्य-पान कर रहा है।१४।

स्रग्दामापूरितंशिखहरिचन्दनभूषितम् ।
केतकीपत्रगर्भैर्दन्तैर्भ्रंरतगाननम् ।११५
वामोरुमाश्रितांचास्यददर्शायतलोचनाम् ।
पत्नींमदनिकांनामपुंसकोकिलस्वनाम् । १६
ततोरोषपरीतात्माकन्धरः कन्दरस्थितम् ।
तमुवाक्सुदुष्टात्मन्न हियुध्यस्त्रवैमया ।१७
यस्माज्येष्ठोमम भ्राताविश्रब्धाघातिनस्त्वया ।
तस्मा वांमदसंसक्तं नयिष्येयमसादनम् ।१८
विश्वस्तघातिनांल्लोकायेन्त्रस्त्राबालघातिनाम् ।
यास्यसे निरयान्सर्वान्तांस्त्वद्यमयाहतः ।१९
इत्येवंपतगेन्द्रेणप्रोक्तः स्त्रीमन्निधौतदा ।
रक्षकक्रोधम्ममात्रिष प्रत्यभाषतपक्षिणम् ।२०

जिसका मुख मण्डल और दोनों नेत्र रक्त वर्ण के हो रहे हैं उसके मस्तकमें माला पड़ी है तथा वह सर्वाङ्ग चन्दनसे चर्चित है और उसका मख मण्डल केतकी पुष्प के गर्भ पत्र के तुल्य श्वेत दन्त पंक्तिसे सुशोभित है।१५। तथा उसने वह भी देखा कि एक सर्वाङ्ग सुन्दरी, कोकिलकण्ठ वाली नारी उसके समीप बैठी है,उसके दोनों नेत्र विशाल हैं वह उसकी पत्नी है, जिसका नाम मदनिका है । ६। फिर पक्षिय श्रेष्ठ कन्धर ने पर्वत कंदरा में स्थित उस राक्षस को क्रोधपूर्वक बुलाकर कहा-अरे दुष्ट आत्मा वाले ! तू शीघ्र यहाँ आकर मुझसे संग्राम कर।१७। तू ने मदोन्मत्त होकर मेरे भाई की हत्या की है, इसलिए मैं तुझे अवश्य ही यम सदन को भेज दूँगा।१८। जिन नरकों को विश्वासघात करने वाले स्त्री और बालकों के हत्यारे प्राप्त होते है उन्हीं नरकों में तुझे भी मेरे

हाथ से प्राणत्याग करना पड़ेगा।१९। मार्कण्डेयजी ने कहा—कंधर के ऐसे वचन सुनकर वह राक्षस अत्यन्त क्रोध पूर्वक उस पक्षिराजसे कहने लगा।२०।

यदितेनिहतोभ्रातापौरुषं तद्धिदर्शितम् ॥
त्वामप्यद्यहनिष्येऽहंखड्गे नानेनखेचर ॥२१
तिष्ठक्षणमात्रजीवन्पतगाधमयास्यसि।
इत्युक्त्वाञ्जनपुञ्जाभं विमलखड्गमाददे ॥२२
ततः पन्नगराजस्ययक्षाधिपभटस्यच।
बभूवयुद्धमतुलंयथागरुणशक्रयोः ।२३।
ततः सराक्षसःक्रोधात्खड्गमाविध्यवेगवान्॥
चिक्षेपपतगेन्द्रायनिर्वाणाङ्गारवर्चसम् ॥२४
पतगेन्द्रश्चतखड्गंकिञ्चिदुत्प्लुत्यभूतलात् ॥
वक्त्रेणजग्राहतदागरुणःपन्नगं यथा ॥२५
वक्त्रादनलभङ्क्त्वाचक्रोधभमथाण्डजः।
तस्मिन्भग्नेततः खगोबाहुयुद्धमवर्तत ।२६

अरे तेरे भाई की मृत्यु से मेरा पौरुष ही प्रकट हुआ है, इसलिए अब इस खड्ग द्वारा तेरा भी वध करूँगा।२१। अरे अधम! तू क्षणभर ठहर मेरे पास से अब तू जीवित कदापि नहीं जा सकता यह कर उस राक्षस ने निर्मल खड्ग को हाथ में ग्रहण किया।२२। जिस प्रकार प्राचीन कालमें इन्द्र गरुड़का तुमुल संग्राम हुआ था, उसी इस राक्षसमें और कंधर में युद्ध होने लगा।२३। फिर अत्यन्त क्रोध में भर कर उस राक्षस ने अग्नि के समान चमचमाते हुए उस खड्ग को वेग पूर्वक कंधर के ऊपर चलाया।२४। परन्तु जिस प्रकार गरुड़ सर्पों को चोंच में दबा लेता है, उसी प्रकार कन्धर ने कुछ कूद कर खड्ग को चोंच में दाब लिया।२५। तथा उस खड्ग को चोंच के प्रहार से तोड़कर अत्यन्त क्रोधित हुआ और अब उन दोनों में बाहु युद्ध होने लगा।२६।

ततःपतंगराजेनवक्षस्याक्रम्यराक्षसः ।
हस्तपादकरैराशुशिरसाचवियोजितः ।२७
तस्मिन्विनिहितेशास्त्रीखगशरणमभ्यगात् ।
किञ्चिन्सञ्ज तसन्त्रासाप्रहास्त्रभार्याभवामिते ।२८
तामादायखगश्रेष्ठःस्वकंग्रहमगात्पुनः ।
गत्वासनिष्कृतिभ्रातुर्विद्युद्रूपनिपातनात् ।२९
कन्धरस्यचसावेश्मप्राप्येच्छारूपधारिणी ।
मेनकातनयासुभ्रुः सौपर्णरूपमाददे ।३०
तस्यांसजनयामासताक्षींनामसुतांतदा ।
मुनीनापाग्निविप्लुष्टांवमुमप्सरसांवराम् ।
तस्यानामतदाचक्रेताक्षींमिती वहागमः ।३१
सन्दपालसुताश्जत्वारोऽमितबुद्धयः ।
जरितारिप्रभृतयोद्रोणान्ताद्विजसत्तमाः ।३२
तेषांजघन्योधर्मात्मावेदवेदांगपारगः ।
उपयेमेसतांताक्षींनन्धरानुमतेशुभाम् ।३३

फिर वह राक्षस कन्धर के द्वारा वृक्षस्थल में चोट मारे जाने से जर्जर हो गया और उसकी नाड़ी हाथ, पाँव मस्तक शरीर से अलग हो गये ।२७। उस राक्षस की मृत्यु होने पर उसकी पत्नी भय से व्याकुल होकर कीं शरण में गई और बोली कि' मैं आप की पत्नी हाती हूँ' ।२। ७८पक्षिवर कन्धर राक्षस को मारकर भाई के शोक में निवृत्त हो गये और मदनिका को साथ लेकर अपने घर पहुंचे ।२९। वह राक्षसी मदनिका इच्छानुसार रूा ग्रहण करने वाली मेनका की पुत्री थी, वह कन्धर के घर में पक्षिय रूप धारण कर रहने लगी ।३०। दुर्वासा की शापाग्नि से पीड़ित वपु नाम की अप्सरा ने इसी के उदर में जन्म पाया और कन्धर ने उसका नाम ताक्षी रखा ।३१। हे ब्रह्मन्! मन्दपाल नामक एक ब्राह्मण था, उसके चार पुत्र थे, उनमें बड़े नाम जितारि और छोटे पुत्र का नाम द्रोण था, वे सभी अत्यन्त मेघावी

थे ।३२। वेद वेदान्तों के तत्वज्ञाता द्रोण के साथ पक्षीराज कन्धर की अनुमति से वह सर्वांग सुन्दरी तार्क्षी विवाही गयी थी ।३३।

कस्यचित्त्वथकालस्यतार्क्षीगर्भमवापह ।
सप्तपक्षाहितेगर्भेकुरुक्षेत्रं जगामसा ।३४
कुरुपाण्डवयोर्युद्धे वर्तमानेसुदारुणे ।
भावित्वाच्चैवकार्यस्यरथमध्येविवेशसा ।३५
तत्रापश्यतयुद्धसासर्वेषांपृथिवीक्षिताम् ।
शरशक्त्यृष्टिभिभोमं यथादेवासुररणम् ।३६
तत्रापश्यत्तदायुद्धं भगदत्तकिरीटनोः ।
निरतरं शरै रासादाकाशशलभैरिव ।३७
पार्थकोदण्डनिर्मुक्तमासन्नमतिवेगवत् ।
तस्यन्भल्लमहिश्योमत्वचच्छेददजाठराम् ।७८
भिन्नेकोष्ठेशशाङ्करभभूमावण्डचतुष्टयम् ।।
आयुषःसावशेषत्वात्तूलराशाविवापतात् ।३९
तत्पातसमकालचसुप्रतीकाद्गजोत्तमात् ।
पपातमहतीघण्टाबाणसंछिन्नबन्धना ।१५०

कुछ समय व्यतीत होने पर तार्क्षी गर्भवती हुई, गर्भ धारण के दिन से सात पखवारे व्यतीत होने पर तार्क्षी कुरुक्षेत्र गई ।३४। उस समय वहाँ कौरव पाण्डवों का भीषण सग्राम चल रहा था, परन्तु भवितव्य को कोई नही मिटा सकता, इसलिये तार्क्षी उससंग्राम भूमिमें पहुंच गई ।३५। वहाँ काकर उसने देखा कि भगदत्त और अर्जुन में घोर युद्ध हो रहा है और उनके द्वारा निरन्तर छोड़े जाने वाले बाणोंसे व्योम टीढ़ीदल के समान व्याप्त है ।३६।३७। पार्थ के धनुष से वेग पूर्वक निकले हुए एक बाण ने तार्क्षी के जठर की त्वचा बींध दी ।३८। उसकी कोष्ठ विदीर्ण होने पर चन्द्रमा के समान शुभ्र चार अण्डे ऊपर से गिरकर भी आयु होने के कारण रुई के समान सुख पूर्वक पृथिवीमें आ गिरे ।३९। उसी समय भगदत्त के सुप्रतीक नामक हाथी के कन्ठ का घण्टा बाण से कट कर भूमि पर गिरा ।४०।

समसमन्तात्प्राप्तातुनिर्भिन्नधरणीतला ।
छादयन्तीच्च मण्डास्थितानिपिशितोपरि ।। ४१
हतेचतस्मिन्नृपतौभगदत्तोनरेश्वरे ।
बहूहान्यभुद्यद्धं कुरुपाण्डवसैन्योः ।।४२
वृत्त युद्धे धर्मपुत्रे गतेशान्तुनवान्तिकम् ।
भीष्मस्यगदतोऽशेषान्श्रोतुं धर्मान्महात्मनः ।।४३
घण्टागतानितिष्ठन्तियत्रान्डानिद्विजोत्तम् ।
काजगामतमुद्दं शशमीकोलामसयमी ।।४४
सतत्रशब्दमश्रृणोच्चिचीकुचोतिवाशताम् ।
बाल्यादस्फुटवाक्यानांविज्ञानेऽपि परेमति ।।४५
अर्थर्षिःशिष्यसहितोघण्टामुत्पाटयविस्मितः ।।
अमातृपितृपक्षाणिशिशुकानिददशह ।।४६

यद्यपि दोनों एक समय ही पृथ्वी पर गिरे थे, परन्तु दैववश माँस पिण्ड के सब अन्डों को चारों ओर ऊपर से ढकता हुआ वह घन्टाढक्कन के समान हो गया । ४१। राजाओं मे श्रेष्ठ भगदत्त के वध होने पर भी कौरव पाडव सेनाओं मे बहुत समय तक युद्ध चलता रहा ।४२। जब युद्ध समाप्त हो गया तब धर्मपुत्र युधिष्ठर अनेक प्रकार के धर्म विषयक उपदेश सुनने के लिए शान्तुन पुत्र भीष्म के पास गये ।४३।

फिर सयंम चित्तवाले विप्र श्रेष्ठ शमीक मुनि जहां घन्टे से ढके हुए पक्षी के बालक थे, बहाँ सहसा जा पहुंचे ।।४४।। और उन्होंने घन्टे के भीतर उन बालकों का चिची कुची शब्द सुना । यद्यपि बालकों को बहुत ज्ञान होगा या था, फिर भी वह बाल्यावस्था के कारण समझ में न आने वाले शब्द ही बोल रहे थे ।।४५।। फिर शिष्यों सहित उन ऋषि ने पक्षि बालकों का शब्द सुनकर आश्चर्य सहित घन्टे को भूमि से उठाया तब उन्हे माता, पिता तथा पंखो से रहित वे बालक दिखाई दिये ।४६। उन शमीक मुनि ने पृथिवी पर उन बालकों का यथावत् देखकर आश्चर्य सहित अपने साथी ब्राह्मणों से कहा ।४६,

तानितनूतथाभूमौगमोकोभगवान्मुनिः ।
दृष्ट्वासविस्मयाविष्टः प्रोवाचानुगनान्द्विजान् ।४७
सम्यगुक्तं द्विजाग्रयेणचुक्रेणोशनसास्वयम् ।
पलायनपर दृष्ट्वादैत्यसन्यसुरार्दितम् ।४८
नगन्तव्यंनिवर्तध्वंकस्मादव्रजतकातराः
उत्सृज्यशौर्य्यंयशसीक्वगतानमरिष्यथ ।४९
नश्यतोयुध्यतोवापिता वदभवतिजीवितम् ।
यावद्धातासृजत्पूर्वंनयविन्मनसेप्सितम् ।५०
एकेम्रियन्तेस्वगृहे पलायन्मोऽपरे जनताः ।
भुञ्जन्तोऽन्नतथैवापःपिवन्तोनिधनगताः ।५१
विलासिनस्तथैवायेकामयानानिरामयाः ।
अविक्षतांगाः शस्त्रैश्चप्रेतराजवशंगता ।५२
अन्येतपस्यभिरतानातां प्रेतनृगानुगैः ।
योगाभ्यासेरताश्चान्येनवप्रापुरमृत्युताम् ।५३
शम्वरायपुराक्षिप्तं वज्रं कुलिशपाणिना ।
हृदयेऽभिहतस्तेनतथापिनमृतोसुरः ।५४
तेनेवखलुवज्रणतेनवेन्द्रेणदानवाः ।
प्राप्तेकालेहतादैत्यास्तत्क्षणान्निधनगताः ।५५
विदित्वैवनसत्रास कर्त्तव्योविनिवतत ।
तो निवृत्तास्तेदैत्यास्त्यक्त्वामरणजभयम् ।५६

हे ब्राह्मणो ! पुराकाल में देवताओं द्वारा ताड़ित दैत्य सेना के इधर उधर भागने पर द्विजोत्तम शुक्राचार्य जी ने उससे स्वयं ही कहा था ।४७। हे दैत्यों ! तुम मत भागों, रुको, इस प्रकार कातर होकर क्यों भागते हो ? शौर्य और यश को छोड़कर कहां जाओगे ? क्या तुम्हारी मृत्यु कभी नहीं होगी ? जिस विधाता ने तुम्हें उत्पन्न किया है उसकी जब तक इच्छा न हो, तब तक मत भागों संग्राम करो इससे तुम किसी भी प्रकार मृत्यु को प्राप्त न होंगे ।४८। घर रहते हुए भी कोई मर जाता है, कोई भाग कर भी मर जाता है तथा कोई भोजन करते हुए या पान करते हुए ही मृत्यु को प्राप्त हो जाता

है ।५०। कोई काम का अनुगत होकर, कोई स्वस्थ रह कर, कोई दिव्य भोग विलास करता हुआ, कोई शस्त्र आदि से घायल न होने पर भी काल के कराल गाल में जा पड़ता है ।४५। कोई तपस्यो से रत रहता हुआ तथा कोई योगाभ्यास करता हुआ हो यमपुर को प्राप्त हो गया, परन्तु अमर कोई भी नहीं हो सका ।५२। पुराकाल में वज्रपाणि इन्द्रने शम्बर पर बज्र आघात किया और हृदय विदीर्ण हो जाने पर भी वह असुर नहीं मर सका ।५३। उसी इन्द्र ने उसी से सब असुरों पर आघात किया और उनका काल था, इसलिए वे सब मृत्यु को प्राप्त हो गए ।५४। इसलिए यह सब जानकर भी तुम त्रास क्यो करते हो ? उस से निवृत्त होओ, यह सुनकर दैत्यो ने मृत्यु भय त्याग दिय और वें भागने से रुक गये ।५५। हे ब्राह्मणो ! पक्षी के इन बालकों ने शुक्राचार्य के वे वचने सत्य कर दिये । अहो' इस अद्भुत युद्ध मे भी इनके प्राण नहीं गये ।५६-५७।

इतिशुक्रवचः सत्यं कृतमेभिःखगोत्तमैः ।
येयुद्धेऽपिनसंप्राप्ताः पञ्चत्वमतिमानुषे ।५७
काण्डानांपतनं विप्राः क्वघण्टापतनं समम् ।
क्वचमांसवसारक्तैर्भूमेरास्तरणक्रिया ।५८
केऽप्येतेसर्वथाविप्रनैतेसामान्यपक्षिणः ।
दैवानुकूलतालोके महाभाग्यप्रदर्शिनो ।५९
एवमुक्त्वासातन्वीक्ष्यपुनर्वचनब्रवीन्नत् ।
निवर्तताश्रमंयातगृहीत्वापक्षिबालकान् ।६०
मार्जाराखुभयंयत्रनैषामण्डजजन्मनाम् ।
श्येनतोनकुलाद्वापिस्थाप्यतांयतत्र पक्षिणः ।६१
द्विजाःकिंवातियत्नेनमार्यन्तेकर्मभिःस्वकैः ।
रक्ष्यन्तेचाखिलाजीवायथैतेपत्रिबालकाः ।६२
तथापियत्नः कर्तव्योनरैः सर्वेयुकर्मसु ।
कुर्वंन्पुरुषकारं तुवाच्यतांयातिनोसताम् ।६३

इतिमुनिवरचोदितास्ततस्तेमुनितनयाः परिगृह्यपक्षिण स्तान् ।
तरुविटपसमाश्रितालिधंघययुरथतापसरध्यमाश्रमं स्वम् ।६४

सचापिवन्यं मनसाभिकामितंप्रगृह्यमूलंकुसुमर्मैफलकुशान् ।
चकारचक्रायुधरुद्रवेधसांसुरेन्द्रवैवस्वतजातवेदसाम् ।६५
अपाततेगींष्पतित्तिरक्षिणोः समीरणस्थापितथाद्विजोत्तमः ।
धातुर्विधातुस्तनथवैंश्वदेविका.श्रुतियुक्ताविविधास्तुसत्क्रियाः।६६

कितने आश्चर्य का विषय है कि कहाँ तो सब अण्डों का पृथ्वी पर गिरना और उसी समय घंटेका गिरना और कहाँ मांस, रक्त, और वसा से पृथिवी का ढका जाना, यह सब परस्पर भिन्न होते हुए भी, एक ही समय मे हो गया ।५८। हे ब्राह्मणो ! यह कौन है ? प्रतीत होता है कि सामान्य पक्षी तो नहीं है, क्योंकि दैव की अनुकूलता से भाग्य भी अनुकूल होता है ।५९। इतना कहकर महर्षि शमीक उन्हें देखकर पुनः कहने लगे —हे ब्राह्मणो ! निवृत्त होकर पक्षि बालकों को ले लो और आश्रम में जाओ ।६०। जहां बिल्ली, नकुल, बाज आदि का भय न हो, इन पक्षिशावकों को वहीं रखो ।६१। हे ब्राह्मणो ! अधिक यत्न की आवश्यकता नहीं है क्योंकि प्रत्येक जीव अपने कर्म मे ही अवध्य और रक्षित होता है, यह बालक यहाँ जिसके द्वारा रक्षित हुए थे ? ।२२। फिर भी सब कार्यों में मनुष्य का प्रयत्न करना चाहिये, यदि पुरुषार्थ न किया जाय तो साधुजनों के समक्ष निन्दनीय होना होता है ।६२। महर्षि के वचन सुनकर मुनि-बालकों ने पक्षि के उन बच्चों को उठा लिया और वे वृक्ष-शाखों में गुंजारते हुए भ्रमरों से युक्त अपने रमणीय आश्रम को गये ।६४। इधर महर्षि शमीक ने उनके फल, मल, पुष्प और कुश, लेकर ब्रह्मा, विष्णु, शिव, इन्द्र यम और अग्नि का पूजन किया। वरुण ब्रहस्पति, कुबेर, पवक, धृता और विधाता का पूजन तथा वेदोक्त विधान से हवन आदि कर्म किए ।६५-६६।

प्रकरण—३ पक्षियों का शाप वृत्तान्त

अहन्यनिविप्रेन्द्रसतेषांमुनिसत्तमः ।
चकाराहारपयसातथागुप्तवान्पोषणम् ।१
मासात्रेणजग्मुस्तेभानोः स्यन्दनवर्मनि ।
कोतूहलविलोलाक्षैर्दृष्ट्वामुनिकुमारकैः ।२
दृष्ट्वा मषीसनगरांसाम्भोनिधिसरिद्वराम् ।

रथचक्रप्रमाणांतेपुनराश्रममागताः ।३
श्रमक्लांतांतरात्मानोमहात्मानोनियोनिजाः ।
ज्ञानचप्रकटीभूतं तत्रतेषांप्रभावतः ।४
ऋषेःशिष्यानुकम्पार्थंवदतोधर्मनिश्चयम् ।
कृत्वाप्रदक्षिणंसर्वेचरणावभ्यवादयन् ।५
ऊचुश्चरणाद्घोरान्मोक्षिताः स्मस्त्वयामुने ।
आवासक्ष्यपयांत्वनोदातापितागुरुः ।६
गर्भस्थनांमृतामातापित्रानैवापिपालिताः ।
त्वयानोजीवितदत्तं शिशवोरक्षिताः ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा-हे विप्रेन्द्र ! मुनीवर शमीक नित्यप्रति उन पक्षि शावकों को आहार देकर रक्षा एवं पोषण करने लगे ।१। मुनि के द्वारा इस प्रकार पोषण को प्राप्त हुये, वे बालक एक मास के भीतर ही आकाश मार्ग में उड़ने लगे और कौतूहल में भर मुनि बालक उनको देखने लगे ।२। वे तिर्यक योनि में उत्पन्न हुऐ महात्मा पक्षी नद, नदी सागर, नगर आदि मे रथ-चक्र के समान घूमते हुऐ पृथिवी को देखते और थकने पर आश्रम में लौट आते । तभी मुनि के ज्ञान प्रभाव वश उन्हें क्रमशः ज्ञान प्राप्त हुआ ।३-४। एक समय अपने शिष्यो पर कृपा करके महर्षि शमीक धर्मोपदेश कर रहे थे, तभी उन पक्षियों ने प्रदक्षिणा करके मुनि चरणो में प्रणाम किया ।५। और कहने लगे—हे मुने ? आपने घोर मृत्यु के कष्ट से हमारी रक्षा की है, आपने ही हमको निवास आहार, और जल प्रदान किया हैं, इसलिए आप हीं हमारे पिता एवं गुरु है ।६। हमारी माता की गर्भवास के समय ही देहान्त हो गया और पिता द्वारा भी हमारा पालन नहीं हो सका, आपने ही हमारी उस समय से अब तक रक्षा की है ।७।

क्षितावक्षततेजास्त्वंकृमीणामिवशुष्यताम् ।
गजाघण्टांवमुत्पाट्यकृतवान्दुःखरेचनम् ।८
कथंनद्धेयुरबलाःखस्थान्द्रक्ष्याम्यहं कदा ।
कदाभूमेद्रूमंप्राप्तंद्रक्ष्येबृक्षांतरंगताम् ।९
कदामेसहजाकान्तिः पांसुनानाशमेष्यति ।

एषांपक्षनियोत्थेनमत्समीपविचारिणाम् ।१०
इतिचिन्तयतातातभवताप्रतिपालिताः ।
तेसांप्रतप्रवृद्धास्मः प्रबुद्धाः करवामकिम् ।११
इयृषिश्चवचनतेषांश्रु त्वामंस्कारवत्स्फुटम् ।
शिष्यै परिवृतः सर्वैः सहपुत्रेणशृङ्गिणा ।१२
कौतूहलपरोभूत्वारोमांचपटसवृतः ।
उवाचतत्वतोब्रू तप्रवृत्तौ कारणगिर ।१३
कस्य शापादियप्राप्ताभवदर्भिविक्रियापरा ।
रूपस्यबचसश्चैवतन्मेवक्तुमिहार्हथ ।१४

हे अक्षय तेज वाले मुनिवर ! जब पृथिवी मे पड़े हुए हम कृमि के समान सुख रहे थे, तभी आपने घण्टा उठाकर हमारा संकट दूर कर दिया ।८। यह दुबल पक्षि शावक किस प्रकार बुद्धि को प्राप्त हों, कब पृथिवों से वृक्ष पर पहुंचे और एक वक्ष से दूसरे वृक्ष पर जाये तथा आकाश में उड़ने लगे ।९। तथा मेरे पास विचरण करते हुए कब उड़ेंगे और कब इन पङ्ख चलाने से निकली हुई वायु से उड़ी हुई धूलि द्वारा मेरी सहज कान्ति नष्ट होगी ।१०। आपने इस प्रकार विचार करते हुए हमारा पालन किया है, अब हम बड़े हो गए और आपकी कृपा से हमे ज्ञान भी प्राप्त हो गया है, अब हम क्या करें, वह आज्ञा करिये ।११। शिष्यों सहित महर्षि शमीक उनके इस प्रकार संस्कारमय वचन सुनकर अपने पुत्र शृङ्गी सहित अत्यन्त आश्चर्यान्वित हुए है ।१२। अत्यन्त कुतूहल से पुलकायमान शरीर होकर उन पक्षियों के प्रति बोले ।१३। हमें सत्य बताओ कि तुमने ऐसे स्पष्ट वचनों का उच्चारण किस प्रकार किया है ? किस के शाप से तुम्हारे रूप वाणी की ऐसी विक्रिया हुई है ।१४।

विपुलस्वानितिख्यातः प्रागासीन्मुनिसत्तमः ।
तस्यपत्रद्वयजज्ञे सुकृषस्तु बुरुस्तथा ।१५
सुकृष स्यवयंतुत्राश्चत्वारः संयतात्मनः ।
तस्यर्षेविनयाचारभक्तिनम्राः सदैवहि ।१६
तपश्चरणशक्तस्यमानेन्द्रियस्य च ।

यथाभिमतमस्माभिस्तदातस्योपपादितम् ।१७
समित्पुष्पादिकसर्वयच्चैवाभ्यवहारिकम् ।
एवतत्राथवसतांतस्यास्माकंचकानने ।१८
आजगाममहावर्ष्मांभिग्नपक्षोजरान्विवः ।
आताम्रनेत्रः स्रस्तात्मापक्षीभूत्वासुरेश्वरः ।१६
सत्यशौचक्षमाचारमतीवोदारमानसम् ।
जिज्ञासुस्तमृषिश्रेष्ठमस्मच्छापभवायच ।२०
द्विजेन्द्रमांक्षधाविष्टं परित्रोतुमिहार्हसि ।
भक्षणार्थीमिहाभागगतिर्भवममातुला ।२१

पक्षियों ने कहा—हे मुनिश्रेष्ठ ! पुराकाल में त्रिपुलस्वान नामक एक मुनि थे उनके सुकृष और तुम्बरु नामक दो पुत्र हुए ।१५। उन जितेन्द्रिय महात्मा सुकृष के हम पुत्र है, सदा विनय, आचार, भक्ति और नम्रता पूर्वक ही उनके पास रहते थे ।१६। जब वे संयतचित्त से तपस्या में लगे रहते, तब हम उनकी स्वेच्छा के अनुसार वस्तु ला देते थे ।१७। हर ही उनके समिधा, पुष्प तथा भोजन की सम्पूर्ण सामग्री ले आते थे, इस प्रकार वह हमारे साथ वनमें रहते थे ।१८। एक दिन देवराज इन्द्र एक विशालकाय पक्षी के रूप में हमारे पास आये, उनके सभी पङ्ख टूटे हुए तथा नेत्र ताम्रवर्ण के हो रहे थे और उनका आत्मा शिथिल हो रहा था ।१९। वह उन सत्य, शौच, क्षमा और आचार युक्त मुनि से कोई बात पूछने लगे, हम समझते हैं कि, हमारे प्रति पितृ-शाप होने के कारण ही वहाँ उनका आगमन हुआ था ।२०। पक्षी ने कहा—हे द्विजेन्द्र ! मैं क्षुधा से अत्यन्त आतुर एवं नितान्त भक्षणार्थी हूँ, आप ही मेरी गति हैं अतः मेरी रक्षा कीजिए ।२१।

विन्ध्यस्यशिखरेतिष्ठन्पत्रिपत्रैरितेनवं ।
पतितोऽस्मिमहाभागश्वसनेनातिरंहसा ।२२
सोहंमोहसमाविनोभूमौसप्ताहसस्मृतिः ।
स्थितस्तत्राष्टमेन ह्लाचेतनांप्राप्तवानहम् ।२३
प्राप्तचेताः क्षुधाविष्टोभवन्तंशरणागतः ।
भक्ष्यार्थीविगतानन्दो दूयमानेनचेतसा ।२४

तत्कुरुष्वामलतेमत्त्राणायाचलां मतिम् ।
प्रयच्छभक्ष्यं विप्रर्षेप्रार्थयाक्षाक्षमंम ।२५
यएवमुक्तः प्रोवाचतमिन्द्रं पक्षिरूपिणम् ।
प्राणसन्धारणार्थायदास्येभक्ष्यंतवेत्सितम् ।२६
इत्युक्त्वापुनरप्येनयपृच्छत्सद्विजोत्तमः ।
आहारः कस्तवार्थायउपकल्प्योभवेन्मया ।
मजाहनरमांसेनतृप्तिर्भवतिमेपरा ।२७

हे महाभाग ! मै विन्ध्याचल के शिखर चूड़ा में रहता हूँ और पक्षिराज गरुड़ के पङ्खों की वायु के वेग से यहां गिर कर मूर्च्छित हो गया था ।२२। उसी अवस्था में पड़े हुए मुझे एक सप्ताह हो गया और आठवें दिन मूर्च्छा नष्ट होकर चैतन्यता प्राप्त हुई ।२३। कुछ देर मैं जब स्वस्थ हुआ, तब भूख से आतुर होकर आपकी शरण में आ गया। मेरा हृदय भूख से अत्यन्त कातर होने के कारण सम्पूर्ण आनन्द का हरण किये लेता है ।२४। हे ब्रह्मर्षे ! मेरी रक्षा का प्रयत्न करिये, जिससे मेरी भूख मिट सके, ऐसा भोजन मुझे दीजिए ।२५। पक्षी रूप धारी इन्द्र की ऐसी बात सुनकर उन महर्षि ने कहा—हे खग ! तुम अपने प्राण-धारण के लिए उपयोगी किस आहार को चाहते हो मैं तुम्हारे भोजनार्थ किस द्रव्य को उपस्थित करूं ? ।२६। हे ब्रह्मन् ! इतना कहकर मुनि ने पुनः कहा—कहा, क्या भोजन करोगे ? तुम्हारे लिए आहार को लाऊँ इस पर उसने उत्तर दिया कि मेरी परम तृप्ति मनुष्य की मांस खाने से ही होगी ।२७।

कौमारतेव्यतिक्रांतमतीतंयौवनंचते ।
वयसःपरिणामस्तवर्ततेनूनमण्डज ।२८
यस्मिन्नराणांसर्वेषामशेषेच्छानिवर्त्तते ।
सकस्माद्वृद्धभावेऽपिसुनृशंसात्मकोभवान् ।२९
क्वमानुषस्यपिशितंक्ववयश्चरमंतव ।
सर्वथादुष्टभावनां प्रथमोनोपपद्यते ।३०
अथवाकिमर्यंतेनप्रोक्तेनास्तिप्रयोजनम् ।
प्रतिश्रुत्यमदादेयमितिनोभावितमनः ।३१

इत्युक्त्वातंसविप्रेन्द्रस्तथेतिनिश्चयः ।
शीघ्रमस्मान्समाहूयगुणतोऽनप्रशष्यच ।३२
उवाचक्षुब्धहृयुयोमुनिर्वाक्यमुनिष्ठुरम् ।
विनयावनतान्सर्वान्भक्तिन्तांजलीन् ।३३
कृता मानोद्विजश्रेष्ठऋणैयु क्तामयास्मह ।
जातश्रेष्ठमपत्य वोयूथ ममयथाद्विजाः ।३४
गुरुः पूज्योयदिमतोभवतां परमः पिता ।
ततः कुरुतमेवाक्यानिव्यलाकेनचेतमा ।३५

ऋषि ने कहा तुम्हारी कौमारावस्था जाकर युवावस्था आई और वह भी व्यतीत होकर वृद्धावस्था आ गई है।२८ जिससे सभी कामनाएें अशेष हो जाती है, फिर भी तुम वृद्धावस्था को प्राप्त होकर इतने नृशंस क्यों हो? ।२९। मनुष्य मांस के भक्षण और वृद्धवस्था दोनों में अन्तर है, तो भी दुष्ट जीवी की दुराशा नही मिट पाती ।३०। परन्तु मुझे इस सब की आलोचना क्यों करनी चाहिए? अङ्गीकृत विषय का दान करना चाहिए ऐसा सोचना ही ठीक है ।११ उस पक्षी से इतनाकहकर निश्चय को कार्य रूप देने वाले मूर्ति ने तुरन्त हमे बुलाकर हमारे गुणो की प्रशंसा की ।३२। तथा हमारे विनय और भक्ति पूर्वक हाथ जोड़ खड़े होने पर अत्यन्त क्षोभसहित हमारे पिता ने यह निष्ठुर बचन कहे। ३३ तुमसब विद्वानहो, ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ तथा सन्तानोत्पत्ति द्वारा मेरेसामान ही ऋण-मुक्त हो चुके हो। जसे श्रेष्ठ तुम मेरे पुत्र हो, वैस ही श्रेष्ठ पुत्र तुम्हारे हो चुके है ।३४। मै तुम्हारा पिता हूँ, तुम यदि मुझे बड़ा और पूज्य मानते हो तो कपट रहित हृदय से मेरे वचनो का पालन करो ।३५।

तद्वाक्यसमकालेचप्रोक्तमस्माभिराहततं. ।
यद्वक्ष्यतिभवांस्तद्वै कृतमेवावधार्यताम ।३६
मामेषशरणप्राप्तोबिहंगः क्षुत्तृषान्वितः ।
युष्मन्मांसेनयेनास्यक्षणतृप्तिभवेतभैं ।३७
तृष्णाक्षयश्चरक्तेनतथाशीघ्र विधीयताम् ।
ततोवयंप्रव्यथिताः प्रकम्पोदभूतसाध्वसाः ।

कष्टण्टमितिप्रोच्यनतत्क मैतिचाब्रुवन् ।३८
कथपम्शरीस्यहेतोर्देहं स्वकबुध; ।
विनाशयेद्घातयेद्वायथाह्यात्तातथासुत: ।३९
पितृदेवमनुष्याणांन्पुत्कानिऋणानिवैं ।
तान्यपाकुरुनेपुत्रानशरीरप्रदसुत: ।४०
तस्मा न्नैतत्करिष्यां मोनोचीर्णयत्पुरातनै ।
जीवन्भद्राण्यवाप्नोति जीवन्पुण्यं करोतिच ।४१
मृतस्यदेहनाशश्चधर्माद्यु परतिस्तथा ।
आत्मा नं सब तोरक्ष्यमाहुधमविदोजना: ।४२

यह सुनकर हमने भी आदर साहित कहा—आपकी जो आज्ञा होगी उसका समादन हमारे द्वारा हुआ ही समझिए ।३३। तब उन्होने कहा—पुत्रो ! यह पक्षी भूख-प्यास स आतुर होकर यहाँ आया है, इस समय तुम्हारे माँस का आहार करके इसकी क्षुधा मिटेगी ७ तथा रक्त पानद्वारा भय से कांप उठे और बोले कि यह अत्यन्त कष्टप्रद कार्य हमसे होना संभव नहीं है ।३८। कौनसा मनुष्य विद्वान होकर पराये शरीर का पुष्टि के लिए अपने जीवन का नाश करेगा ? क्योंकि आत्मा की भी सन्तान के समान रक्षा करनी उचित है ।३९ शास्त्र में जिस पितृ ऋण, देव ऋण और मनुष्य ऋण का आदेश हैं उसी को सन्तान चुकाती है, परन्तु शरीर-दान नहीं किया जा सकता ।४०। इसलिए यह कार्यहमारे द्वारा संभव नहीं है, पहिले भी कभी किसी के द्वारा ऐसा आचरण नहीं मिलता, जीवन है तो पुण्यादि के आचरण द्वारा मोक्ष की प्राप्ति हो सकती है ।४१। मर जाने पर शरीर नष्ट हो जाने से धर्माचरण आदि नष्ट हो जाते हैं, इसीलिए धर्मज्ञाता पंडितों ने आत्मा की सदा रक्षा करने का उपदेश दिया हैं ।४२।

इत्थंश्रुत्वावचोऽस्माकं मुनि: क्रोधादिवज्वलन् ।
प्रोवाचपुनरप्यस्थान्निदहन्निवलोचनैः ।४३
प्रतिज्ञातंवचोमह्यं यस्मान्नैतत्करिष्यंथ ।
तस्मान्मच्छापनिद ग्धास्तिर्यंग्योनौंप्रयास्यंथ ।४४

एवमुक्त्वातदासोस्मांस्तं विहंगममब्रवीत ।
अन्त्येष्टिमात्मन: कृत्वाशास्त्रतश्चौर्ध्वदैहिकम् ।४५
भक्षयस्वसुविश्रब्धोमामश्वद्विजसत्तम ।
आहारीकृतनेतेमयादेहमिहात्मन: ।४६
एतावदेवविप्रस्यब्राह्मणत्वंप्रचक्षयने ।
यावत्पङ्करुजातग्रग्र यस्वसत्यपरिपालम् ।४७
नयज्ञं दीक्षणावद्भिस्तत्पुण्यप्राप्यतेमहत् ।
कर्मणान्येनवाविप्रैर्यंत्स यतग्पिालनात् ।४८

हमारे इन वचनों को सुनकर मुनि श्रेष्ठ क्रोधानल से दग्ध होने लगे और क्रोध से हुए लाल नेत्रों से जैसे हमको भस्म करना चाहते हों, देखते हुए पुन: कहने लगे ।४३। अरे दुर्वृत्तो ! मैंने इससे प्रतिज्ञा की है, और तुम मेरा वचन पालन नहीं कर रहे हो, इसलिए मेरे शाप से भस्म होकर तिर्यक योनि को प्राप्ति हो जाओगे ।४४। हे द्विजोत्तम ! इतना कहकर ही उन्होंने शास्त्र विधि से अपनी उर्ध्वदैहिक अन्त्येष्टि क्रिया का सम्पादान किया और पक्षी से बोले ।४५। हे पक्षी ! तुम विश्वस्त चित्त से मेरा भक्षण करो, मैंने अपना ही शरीर तुम्हारे आहार के निमित्त दिया ।४६। हे खग श्रेष्ठ ! जब तक ब्राह्मण अपने सत्य के पालन में दृष्ट है, तभी तक ब्राह्मण कहलाता है ।४७। जितना पुण्य सत्य के प्रति पालन में होता है, उतना दक्षिणा वाले यज्ञ के अथवा किसी अन्य कर्म के द्वारा भी नहीं होता ।४८।

इत्यृषेवंचनं श्रुत्वासोऽन्तर्विस्मयनिर्भर: ।
प्रत्युवाचमुनिशक्र:पक्षिरूपधरस्तदा ।४९
योगमास्थायविप्रेन्द्रत्यजेद्रत्यजेदस्वंकलेवरम् ।
जीधज्जंतु हिविप्रेन्द्रनभक्षामिकदाचन ।५०
तस्यद्वचनं श्रुत्वायोगयुक्तोऽसवन्मुनि: ।
तंतस्यनिश्चयंज्ञात्वाशक्रोऽप्याहस्वदेहभृत ।५१
भोभोविप्रेन्द्रयुध्यस्वबुद्ध्याबोध्यंबुधात्मक ।
जिज्ञासार्थंमयाऽयंतं अपराध: कृतोऽनध ।५२
तत्क्षमस्वामलमतेकाचेच्छाक्रियतांतव ।

पालनात्सत्यवाक्यप्रीतिर्मेपरमात्वयि ।५३
अद्यप्रभतिनेज्ञानमैन्द्रं प्रादुर्भविष्यति ।
तपस्यथतथाधर्मेननेविघ्नोभविष्यति ।५४
इत्युक्त्वातुगतेशक्रे पिताकोपसमन्वितः ।
प्रणम्यशिरसास्माभिरदमुक्तोमहामुनिः ।५५

ऋषिवर के यह वचन सुनकर उस खग रूपी इन्द्र ने अत्यन्त आश्चर्य चकित होकर उनसे कहा ।४६। हे ब्रह्मन् ! आप पहिले योग के अवलम्बन से अपने शरीर का त्याग कर दें, तब मैं आपके मांस को खाऊंगा क्योंकि जीवित प्राणी के मास का मैंने कभी आहार नहीं किया ।५०। पक्षी की यह बात सुनकर मुनि ने योग का आवलम्बन किया और उन को अपने संकल्प में दृढ़ देखकर इन्द्र ने अपना देह धारण करके कहा ।५१। हे पंडितों में अग्रणी ब्रह्मर्षे ! ज्ञातव्य विषय का बुद्धि से जानिए, हे पाप रहित! आपको भले प्रकार जानने के लिए ही मैंने आपने प्रति यह अपराध किया है ।५२। हे स्वच्छचित्त ! मुझे क्षमा कीजिए, आपकी जो अभिलाषा हो वह मेरे प्रति कहिए, सत्य वचन के प्रतिपालनार्थं आपके प्रति मुझको अत्यन्त प्रीति हुई ।५३। अब आप को इन्द्रज्ञान की उत्पत्ति होगी और तपस्या के आचरण में कथा भी विघ्न उपस्थित न होगा ।५४। देवराज इन्द्रके इसप्रकार कह कर वहाँ से चले जाने पर हमने उन क्रोधयुक्त महामुनि, अपने पिता के चरणों में प्रणाम करके कहा ।५५।

विभ्यतांमरणातातत्वमस्माकंमहामते ।
क्षन्तुमर्हसिदीनानांजीवितं यताहिनः ।५६
त्वगस्थिमांससघातेपूयशोतणितपूरिते ।
कर्त्तव्यानरतिर्यत्रतात्रास्माकंमियंरतिः ।५७
श्रूयतांचमहाभागयथालोकोविमुह्यति ।
कामक्रोधादिभिर्दोषैरवशः प्रवलारिभिः ।५८
प्रज्ञाप्राकारसयुक्तमस्थिरस्थूणंपरं महत् ।
चर्मभित्तिमहारोधमांसशोणितलेपनम् ।५९
नवद्वारंमहायाससर्वतः स्नायुवेष्टितम् ।

नृपश्चपुरुषस्तत्रचेतानावान्स्थितः ।६०
मन्त्रिणौतस्यबुद्धिश्चमनश्चवविरोधिनौ ।
यतेतेवैरनाशयात बुभावितरेतरम् ।३१
नृपस्यमस्यचत्वारेन शमिच्छति विद्धिशः ।
कामः क्रोधस्तथालोभोहश्चान्तस्तथारिपुः ।३२
यदातुसनृपस्त निद्वाराण्यावृत्यतिष्ठति ।
सदासुस्थबलश्चंबनिरातंकश्चजायते ।६३

हे पिता, हे महामुने ! मृत्यु के भय से अत्यन्त डर कर हमने अपने जीवन के प्रति मोह करके ऐसा कहा था, इसलिए हमको क्षमा कर दीजिए ।५६। यह शरीर, हड्डी, माँस, त्वचा रक्त आदि से भरा हुआ है इसके प्रति किञ्चित भी मोह न करे परन्तु उसीशरीर के प्रतिहमारा मोह बढ़ा हुआ है । ।५७। हे महाभाग ! प्रबल शत्रु रूप काम क्रोध दि दोषों के द्वारा ही सब लोक मोहित हुए सुने जाते हैं ।५८। हे पिता ! प्रज्ञा रूप प्रचीरों वाली इस देह नारी का अस्थि ही स्तम्भ है, जो चर्म रूप भित्ति से रुद्ध और रक्त मास रूप कीचड़ से लिप रही है ।५९। उसे नसें चारों ओर से घेरे हुए हैं, उसके नौ बड़े द्वार हैं और चैन्यत रूपी पुरुष उसमें राज्य करता है ।६०। उस राजा के दो मन्त्री मन बुद्धि रूपी हैं, परन्तु वे परस्पर विरोधी होने के कारण एक दूसरे के विनाश के लिए सदा प्रयत्नशील रहते हैं ।६१। काम, क्रोध, लोभ, मोह नामक चार शत्रु उस राजा को नष्ट करने की चेष्टा में लगे रहते है ।१२। जब वह राजा नौ द्वारों को रोककर स्थित होता है, तब वह अत्यन्त स्वस्थ और आतङ्क रहित होता है ।६३।

जातानुरागोभवितशत्रुभिर्नाभिभूयते ।६४
यदातृसर्वद्वराणिविवृतानिसमु चति ।
रागोनामदायत्रुतंत्रादिद्वामृच्छति ६५
सर्वव्यापीतहायामः पश्चाद्वारप्रवेश ।
तस्यानुमार्गविशतिद्वै घोररिपुत्रयम ।६६
प्रविश्याथसवैतत्रद्वारैरिन्द्रियसज्ञकैः ।
रागः रांश्लेषमायातिसनसाचसहेतरः ।६७

इन्द्रियाणिमनश्चबवशोकृत्वादुरासद. ।
द्वाराणिचवशेकृत्वाप्राकारनाशयत्यथ ।६८
मनस्तस्याश्रितदृष्ट्वाबुद्धिर्नश्यतितत्क्षणात् ।
अमात्यरहितस्तत्रपौरवर्गोज्झितन्तथा ।६९
रिपुभिर्लब्धविवरः सनृपोनाशमृच्छति ।
एवरागस्तथामोहोलोभः क्रोधस्तथैवच ।७०
प्रवर्तनेदुरात्मानोमनुष्यस्मृतिनाशकाः ।
रागात्क्रोधः प्रभवतिक्रोधाल्लोभोऽभिजायते ।७१

तथा उस समय उसके प्रतिमान् होने के कारण उसके शत्रु उसे अभिभूत करने में समर्थं नहीं होते ।६४। वह जब सभी द्वारों को खोल कर अवस्थान करता है, तब नेत्रादि सब द्वारों पर अनुराग नामक शत्रु आक्रमण कर देता है ।६५। यह अत्यन्त बलवान् शत्रु सर्वत्र व्यापी है, जब यह अनुराग रूप शत्रु चक्षु आदि द्वारों में प्रविष्ट होता है, तब उसके पीछे-पीछे लोभ, मोह और क्रोध रूप तीनों शत्रु दौड़ पड़ने है ।६६। अनुराग रूप वह शत्रु इन्द्रियादि सब द्वारों से पुरी में प्रवेश करके मन और बुद्धि से संगीत करने की इच्छा करता है ।६७। वह इन्द्रियों को और मन को अपने वश मे करके बुद्धि रूपी पारकोटे को तोड डालता है ।६८। मन को उसके आश्रित हुआ देखकर बुद्धि भी तत्काल नाश को प्राप्त होती है, इस प्रकार मंत्रियों और प्रजावर्ग से हीन हुआ ।६९। वह राजा शत्रुओं के आक्रमण से विवर होने के कारण नष्ट हो जाता है, तब काम, क्रोध, लोभ, मोह रूप ।७०। दुरात्मा उस पुरी में वास करने लगते है । उस समय मनुष्य की स्मरण शक्ति नष्ट हो जाती है, अनुराग से क्रोध और क्रोध से लोभ की उत्पत्ति होती है ।७१।

लोभाद्भवतिसम्मोहा सम्मोदात्स्मृतिविभ्रमः ।
स्मृतिभ्रंशाद्बुद्धिनाशोबुद्धिनाशात्प्रणश्यति ।७२
एवप्रणष्टबुद्धीनांरागलोभावनुवर्जिनाम् ।
जीवितेचसलोभानांप्रसादकुरुसत्तम ।७३
योऽयेशापोभगवतादत्तः सनभवेत्तथा ।
नतामसीगतिकष्टांव्रजेत्संमुनिसत्तम ।७४

यन्मयोक्तं नतन्मिथ्याभविष्यतिकदाचन ।
नमवागनृतंप्राहयावद्येतिपुत्रकाः ।७५
दैवमात्रपरं मन्येधिक्पौरुषमनर्तकम् ।
अकार्यकारितोयेनवलादहमचिन्तितम् ।७६
यस्माच्चयुष्याभिरहप्रणिपत्यप्रसादितः ।
तस्मात्तिर्य्यक्त्वमान्नाःपरं ज्ञानमवाप्स्यथ ।७७
ज्ञानदर्शितमार्गाश्चनिर्धूतक्लेशकल्मषाः ।
मत्प्रसादादसन्दिग्धाः परांसिद्धिमवाप्स्यथ ।७८

लोभ से मोह उत्पन्न होता और मोह स्मृति को नष्ट कर देता है, स्मृति के नष्ट होने से बुद्धि नष्ट होती और बुद्धि नष्ट हो जाती है तो मृत्यु हो जाती है ।७२। राग और लोभ के वश मे पड़ कर ही हमारी बुद्धि नष्ट हो गयी, इसलिए जीवन के प्रति इतना मोह हममें है, अतः प्रसन्न हो ।७३। आपका दिया हुआ शाप हम पर फलित न हो, हम पर प्रसन्न होकर ऐसा ही करे, जिससे हमको यह कष्ट देने वाली गति न मिलेगी ।७४। ऋषि ने कहा हे पुत्रो ! मेरा कथन कभी मिथ्या नहीं होगा, मेरे मुख से कभी भी कोई मिथ्या वचन नहीं निकला ।७५। अनर्थक पौरुष को धिक्कार है, मैं समझता हूँ कि दैव बलवान् है, उसी ने मुझे इस प्रकार के अकार्य में प्रवृत्त किया है, ।७६। तुमने जिस प्रकार प्रणामादि से मुझे प्रसन्न किया है, उससे तिर्यक योनि मे उत्पन्न होकर भी अत्यन्त ज्ञानी होंगे ।७७। मेरे अनुग्रह से ज्ञान के द्वारा तुम सन्मार्ग को देखते हुए अपने पापों को नष्ट करते हुए असन्दिग्ध कित के द्वारा प्रधान सिद्धि को पा सकोगे ।७८।

एवंशप्ताःस्मभगवन्पित्रादैववशात्पुरा ।
ततःकालेनमहतायोन्यन्तरमुपागताः ।७९
जाताश्चरथमध्येवैभवतापरिपालिताः ।
वयमित्थंद्विजश्रेष्ठखगत्वंसमुपागताः ।८०
नास्त्यसाविहसंसारेयोनदिष्टे नवाध्यते ।
सर्वेषामेवजन्तूनांदैवाधीन हिचेष्टितम् ।८१
इतितेषावचःश्रुत्वाशभीकोभगवन्मुनिः ।

प्रत्नुवाचमहाभागः समीपस्थायिनोद्विजान् ।८२
पूर्वमेवमयाप्रोक्तं भवतांसन्निधाविदम् ।
सामान्यपक्षिणोनैतेकेप्येतेद्विजसत्तमाः ।
येयुद्धेऽपिनसंप्राप्ताः पंचत्वमतिमानुषे ।८३
ततःप्रीतिमतातेऽनुज्ञातामहात्मना ।
जग्मुःशिखरिणांश्रेष्ठविंध्यंद्रुमलतायुतम् ।८४
पावदद्योस्थितास्तस्मिन्नचलेधर्मपक्षिणः ।
तपः स्वाध्यायनिरता समाधौकृतनिश्चयाः ।८५
इतिमुनिवरलब्धसत्क्रियास्तेमुनितनयाविहगत्वमभ्युपेताः ।
गिरिवरगहनेऽतिपुण्यतोयेतामनसोनिवमन्तिविन्ध्यपृष्ठे ।८६

हे भगवन् ! पुराकाल में दैववश हमारे पिता ने हमको इस प्रकार शाप दिया था तथा कुज समय व्यायीत होने पर हमने पक्षि-योनि में जन्म लिया। ९। हे द्विजोत्तम ! हमरा जन्म रणभूमि में हुआ, आपने यहाँ लाकर हमारा पालन किया और अब हम आकाश मार्गमें बिचरण करने योग्य हो गए है।८०। हे मुने ! विश्व में ऐसा जीव कोई भी नहीं है, जो प्रारब्ध के वश में न हो, प्राणियों की जितनी भी चेष्टाए हैं, वह सब दैवाधीन ही है।८१। मार्कण्डेय ने कहाँ—पक्षियों की यह बात सुन षडगुण सम्पन्न महर्षि वर शमीक ने अपने पास बैठे हुए ब्राह्मणो से कहा।८२। हे ब्राह्मणो ! मैं पहिले ही कह चुकाहूँ कि जब यह युद्ध भूमि मे भी मृत्यु मुख में नहीं जा सके, तो यह सामान्य पक्षी नहीं अवश्य ही कोई ब्राह्मण पुत्र है।८३। फिर वह पक्षी प्रसन्न हुए महर्षि शमीक की आज्ञा पाकर वृक्ष लता आदि से परिपूर्ण विन्ध्याचल पर्वत को चले गये ।८४। वह धर्मखग उस पर्वत में रहते हुए तप और स्वाध्याय निरत रहकर समाधि में रहने के लिए तत्पर हुए।८५। शमीक मुनि से समस्त क्रिया का उपदेश ग्रहण करके, उनकी आज्ञा से वह रूपी मुनि कुमार उस अत्यन्त स्वच्छ जल से परिपूर्ण गिनि-शिखर पर आनन्द सहित रहने लगे ।।८३।।

प्रकरण ४—भगवान का चतुर्व्यूहावतार

एवतेद्रोणतनयाः पक्षिणोज्ञानियोऽभवन् ।
व्रसन्तिह्यचलेविष्तानुपास्वचपृच्छच ।१

इत्युर्वेवचनंश्रुत्वामार्कण्डेयस्यजैमिनिः।
जगामविन्ध्यशिखरंयत्रतेधर्मपक्षिणः ।२
तन्नगासन्नभूतश्चशुश्रावपठतांध्वनिम्।
श्रुत्वाचविस्मयाविष्टश्चिन्तयामासजमिनः ।३
स्थानसौष्ठवसम्पन्न जितश्वासमविश्रमम्।
विस्पष्टमपदोषंचपठ्यतेद्विजसत्तमैः ।४
वियोनिमापसप्राप्तानेतान्मुनिकुमारकान्।
चित्रमेतदहमन्येनजहातिसरस्वती ।५
बन्धुवर्गस्तथामित्रंयच्चेष्टमपरंगृहे।
त्यक्त्वागच्छतितत्सर्वंनजपातिसरस्यती ।६
इतिसंचिन्तयन्नेवविवेशगिरिकन्दरम्।
प्रविश्यचददर्शासौशिलापट्टगतान्द्विजान् ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा हे जैमिने! वह सब ज्ञानवान पक्षी इस प्रकार द्रोणपुत्र हुये और अब वह विन्ध्याचल में निवास करते हैं, तुम उनकी उपासना करके प्रसन्न करो। मुनिवर मार्कण्डेय के वचन सुन कर महर्षि जैमिनि उन धर्मपक्षियों के निवास स्थान विन्ध्य पर्वत को चले।२। विन्ध्य पर्वत के समीप पहुँचते ही उन पक्षियों द्वारा वेदपाठ करने का शब्द सुनाई पड़ा तब वे अत्यन्त आश्चर्य पूर्वक विचार करने लगे।३। अहो, कैसा आश्चर्य हैं कि विप्रगण पक्षी होकर भी स्थान की श्रेष्ठता से श्वांस को जीत कर दोष रहित, विश्राम रहित एवं स्पष्ट रूप वेदपाठ करते हैं।४। इन बालकों को तिर्यक योनि प्राप्ति होने पर भी सरस्वती ने उनको नहीं छोड़ा, यह आश्चर्य की बात है।५। इससे प्रतीत होता है कि बन्धु, मित्र या घर की सभी इच्छित वस्तुयें त्याग कर चली जाती हैं परन्तु सरस्वती कभी त्याग नहीं करती।६। ऐसा विचार करते करते मुनिवर जैमिनि पर्वत की कन्दरा में घुसे और वहां देखा कि वे ब्राह्मण पाषाण-शिला पर विराजमान है।७।

पठतस्तान्समालोक्यमुखदोषविवर्जितान्।
सोऽथशोकेनहर्षेणसर्वानेवाभ्यभाषत ।८
स्वस्त्यस्तुवोद्विज श्रेष्ठाजमिनिमानिवोधत।

व्यासशिष्यमनुप्राप्तंभ वतांदश नोत्सुकम् ।९
मन्युर्नखलुकर्तव्यस्तयोर्यात्पित्राताविमन्युना ।
शप्ता:खगत्वमापन्ना.सर्वथादिष्टमेवतत् ।१०
स्फातद्रव्येकुलेकेचिज्जा:किउमनर्नास्न: ।
द्रव्यनाशोद्विजन्द्रास्तेशबरेणसुसान्त्विता: ।११
दत्वायाचन्तिपुरुषाहत्वावध्यन्तिचापरे ।
पातयित्वाचपास्यन्तेनएवतपस:क्षयात् ।१२
एतद्दृष्टसुबहुशोविपरीतंतथामया ।
भावाभावसमुच्छेदैरजस्त्र व्याकुलजगत् ।१३
इतिसचिन्त्यममसानशोक कर्तुं मर्हथ ।
ज्ञानस्यफलमेतावच्छोकहर्षै रधृष्यता ।१४

जैमिनि ने उन सब दोषों से रहित पक्षियों का वेदपाठ करतेदेखकर हर्ष शोक मिश्रित कहा।८। हे श्रेष्ठ द्विजो? तुम्हारा कल्याण हो, मैं व्यास शिष्य जैमिनि तुम्हारे दर्शन की इच्छा से इस स्थान में उपस्थित हुआ हूँ ।९। तुम्हें अत्यन्त कुपित पिता के शाप वश पक्षि रूप ग्रहण करना पड़ा परन्तु इसके प्रति शोक न करना चाहिए क्योंकि यह सब प्रारब्ध का ही परिणाम है।१०।धन, सम्मान आदि युक्त ऐश्वर्य सम्पन्न उत्तम उत्तम वंश में कोई महात्मा जन्म लेता है,और द्रव्यादि के नष्ट होने पर भीलों के द्वारा उसी को सान्त्वता प्राप्त होती है ।११। कोई दानी भी भिखारी हो जाता है, कोई हत्या करके भी अवध्य रहता है, कोईदूसरे की मृत्यु से रक्षा करके भी दूसरों के द्वारा मारा जाता है, तप क्षीण होने पर ऐसी घटनाएं होती रहती है ।१२। मैं अनेक बार ऐसी घटनाएं देख चुका हूँ, इस प्रकार भाव और अभाव की परम्परा से सम्पूर्ण विश्व व्याकुल है । निरन्तरऐसा विचार कर शोक मत करो, क्योंकि हर्ष या शोक से अभिभूत न होना ही तप का फल हैं ।१३।१४।

ततस्येजैमिनिसर्वैपाद्याघ्यार्घ्यामपूजयत् ।
अनामयंचपप्रच्छु प्रणिपत्यमहामुनिम् ।१५
अथोचु:खगमा:सर्वंव्यासशिष्यंतपोनिधिम् ।
सुखोपविष्टं विश्रांतं पक्षानिलहृतक्लमम् ।१६

अद्यनःसफलजन्मजीवितंचसुजीवितम् ।
यत्पयस्ययामः सुरेन्द्यतवपादाम्बुजद्वयत् ।१७
पितृकोपाग्निरुद्भूतोथोनोदेहेषुवर्त्तते: ।
सोद्यशान्तिगतोविप्रयुष्मद्दर्शनवारिणा ।१८
कच्चित्ते कुशलब्रह्मन्नाश्रमेमृगपक्षिषु ।
बृक्ष ष त्रथलतागुल्मत्ववसारतृणजातिषु ।१९
अथवानैतदुक्तंहिसम्यगस्माभिराहृते: ।
भवतःसंगमोपेषातेयासकुशलकृतः ।२०
प्रसादचकुरुष्वात्रब्र ह्मागमनकारणम् ।
देवानामिवससर्गोभवतोऽभ्युदयोमहान् ।
केनास्मद्भाग्यगुरुणाआनीतोदृष्टिगोचरम् ।२१
श्रु यतांद्विजशार्दूलाकारणयेनकन्दरम् ।
विन्ध्यस्येहागतोरम्यरेवावारिकणोक्षितम् ।
सन्दहान्भारशास्त्रे तान्प्रष्ट्टगतत्रानहम् ।२२
मार्कण्डेयमहात्मानंपूर्वंभृगुकुलोद्वहम् ।

इसके पश्चात् उन धर्मपक्षियों ने पाद्यार्घ आदि से महामुनि का पूजन किया तथा प्रणाम के पश्चात् कुशल-प्रश्न किया ।१५। उनके पङ्खों की हवा से व्यास शिष्य जैमिनि का श्रम दूर हुआ और वे सुख पूर्वक बैठे, तबवे पक्षिगण उनसे बोले ।१६। पक्षियो ने कहा—हे महाभाग ! हमारा जन्म और जीवन जबकि सफल हो गया क्यं कि देवताओं द्वारा पूजित आपके चरणाविंदों का हमे दर्शन प्राप्त हुआ है ।१७। हे ब्रह्मन् ! हमारे पिता की जो क्रोधाग्नि हमारे शरीर में अत्यन्त प्रबल रूप से रहती है, वह आपके दर्शन रूप जल से शान्त हो गई है ।१८। हे विप्र ! आपके आश्रम के मृग, पक्षिवृन्द, लतादि सब कुशल पूर्वक तो हैं ।१९। अथवा हमारा यह प्रश्न ही उचित नहीं है, क्योंकि आपके समीप निवास करने वालों के लिए अमङ्गल ही कैसा ? ।।२०। अब आप यहाँ किस लिये पधारे है, यह हमको कृपा पूर्वक बताईये, आपका आगमन और देवताओं का संसर्ग यह समान ही हैं, यह समझ में नही आता कि भाग्य कि किस प्रबलतासे आपका दर्शन प्राप्त हो सका है।२१।

तमहपृष्टवान्प्राप्यमन्देहान्भारतप्रति ।२३
मचपृष्टोमयाप्राहमन्त्रिविन्ध्येमहाचले ।
द्रोणपुत्रामहात्मानस्तेत्रक्ष्यन्त्यर्थविस्तरम् ।२४
तद्वाक्यचोदितश्छेममागतोऽहंमहागिरम् ।
तच्छ्रणुष्वशेषेणश्रुत्वाव्याख्यातुमहथ ।२५
विषयसतिवक्ष्यामीनिर्विशङ्कं शृणुष्वतम् ।
कथंतन्त्रवदिष्यामोयदस्मद्ब द्विगोचरम् ।२६
चतुष्वपिहिवेदेषुधर्मशास्त्रषुचं वहि ।
समस्तेषुतथाङ्ग षुयच्चात्यद्वदसमन्वितम् ।२७
एतेषुगोचरोऽस्नाकबुद्धे व्राह्मणत्तम ।
प्रतिज्ञांतुसमावोद्धुं तथापिनहिशक्नुमः ।२८

जैमिनी ने कहा रेवा नदी जलकणों द्वारा सीचे हुए इस विन्ध्य पर्वत की मनोहर कन्दरा में, मैं जिस लिए उपस्थित हुआ हूँ वह सुनो ! हे विप्रगण ! महाभारत शास्त्र है अनेक संदेह होने के कारण उनके समाधानार्थ ।२२। मैं महात्मा मार्कण्डेयजी के पास गया था और उनसे यह भारत के प्रति संदेह-प्रश्न किये थे ।२३। इन्होंने कहा कि विंध्या पर्वत में महात्मा द्रोण के पुत्र रहते है। वहाँ जाकर उनसे ही यह बात पूछो इन प्रश्नो का सविस्तार वर्णन वही करेंगे ।२४। उन्हीं के आदेश से मैं इस महापर्वत में उपस्थित हुआ हूँ । मेरे उन प्रश्नोंकी भले प्रकार सुनकर उनकी व्याख्या करदो ।२५। पक्षी बोले यदि कहने योग्य होगा तो अवश्य कहेंगे आप शकर रहित चित्त मे कहें जो हमारी बुद्धि में आयेगा उसे क्यों न बतायेंगे ? ।२३। चारोंवेद, सभी धर्मशास्त्र, वेदांग अथवा अन्य कोई भी वेद सम्मत शास्त्र। २६। यद्यपि हमारी बुद्धि के लिए गौचर है, फिर भी हम इसकी प्रतिज्ञा नही करेंगे ।२८।

तस्माद्वदस्वविश्रब्धनन्दिग्धयद्धिभारते ।
वक्ष्यामस्तवधर्मज्ञनकंन्मोहोभविष्यति ।२९
सन्दिग्धानीहवस्तूनभारतप्रतियानिमे ।
श्रृणध्वयममलास्तानिश्रुत्वाव्याख्यातुमर्हथ ।३०
कस्मान्भानुषतांप्राप्तोनिर्गुणाऽपिजनार्दना ।

वासुदेवोऽखिलाधार:सर्वकारणकारणम् ।३१
कस्माच्चपाण्डुपुत्राणामेका साद्रुपदात्मजा ।
पञ्चनांमहिषीकृष्णासुमहानत्रसशय: ।३२
भेषजब्रह्महत्यायाबलदेवोमहाबल: ।
तीर्थयात्राप्रसङ्गे नकस्माच्चकेहनायुध: ।३३
कथंचद्रौपदेयास्तेऽकृतदारामहारथा: ।
पाण्डुनाथामहात्मानोबधमापुरनाथवत् ।३४
एतत्सर्वकथ्यतामेमन्दिर : भारतप्रति ।
कृतार्थोऽहं सुखयेनगच्छेयंनिजनाश्रमम् ।३५

इसलिए आपका महाभारत के प्रति जो शङ्का है,उने व्यक्त कीजिए, हे धर्मज्ञ ! यदि माह न हुआ तो उसे आपके पति अवश्य ही कहेंगे ।२९। जैमिनि ने कहा—स्वच्छ चित्त खगगण ? महाभारत के जिन स्थलों में मुझे संदेह है, उन्हें सुनो और व्याख्या करो ।३०। मेरी शंका है कि सम्पूर्ण कारणो के कारण और समस्त ब्रह्माण्डके आधार जनार्दन वासुदेव गुण-रहित होकर भी मनुष्य किस कारण हुए ।३१। तथा द्रुपद की एक ही कन्या पाच पाडवों की महिषी किसी प्रकार हुई, यह अत्यन्त संशय है ।३२। महाबली बलरामजी तीर्थयात्रा के प्रसंग में ब्रह्महत्या के पाप से किस प्रकार मुक्त हुए थे ? ।३३। तथा युधिष्ठिर आदि पाँचों पांडवों द्वारा रक्षित द्रौपदी के अविवाहित पुत्र अनाथ के समान मृत्यु को किस प्रकार प्राप्त हुए थे ।३४। इन सब विषयों के प्रति मुझे अत्यन्त संदेह है, इन संदेहों का अपने उत्तर से समाधान करके मुझे कृतार्थ करो तो मैं सुख पूर्वक अपने आश्रम को लौट सकूंगा ।३५।

नमस्कृत्यसुरेशायविष्णवेप्रभविष्णवे ।
तुरुषायाप्रमेयायशाश्वतायाव्ययायच ।३६
चतुर्व्यूहात्मनेतस्मेंत्रिगुणायागुणायच ।
वरिष्ठायगरिष्ठायवरेण्यायामृतायच ।३७
यस्मादणतरंनास्तियस्तात्नास्तिबृहत्तरम् ।
येनविश्वमिदंव्याप्तमजेनजगदादिना ।३८

आविर्भावतिरोभावदृष्टादृष्टविलक्षणम्।
वदन्तियत्सृष्टमिदन्तथैवान्तेचसहृतम् ।३९
ब्रह्मणेच।दिदेवायनमस्कृत्यसमाधिना ।
ऋक्समातान्पुद्गिरन्वक्त्रैर्यः पुनातिजगत्त्रयम् ।४०
प्रणिपत्यतथैशानमेकबाणविनिर्जितः ।
अस्यासुरगणैर्थज्ञाविलुप्यन्तेनयज्विनाम् ।४१
प्रवक्ष्यामोमतकृत्स्न व्यासद्भुतकर्मणः
येनभारतमुद्दिश्यधर्माद्याःप्रकटीकृताः ।४२

पक्षियों ने कहा--जो देवताओ के अधीश्वर, सर्वव्यापी, अत्यन्त प्रभावशाली, आत्मा, अप्रमेय शाश्वत एवं अव्यय स्वरूप है ।३६। तथा जो वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध रूप हैं, जो त्रिगुण अथवा निर्गुण है, जो उत्तम, वरिष्ठ, वरेण्य एवं अमृत है ।३७। जो यज्ञाङ्ग तथा चराचर विश्वात्मक हैं, वेदान्त शास्त्रमे जिनके स्वरूप का संक्षिप्त वर्णन हुआ है, सम्पूर्ण संसार मे जिनके समान सूक्ष्मतर या बृहत्तर नही है, सम्पूर्ण जगत् जिससे व्याप्त है जो जगत् के आदि तथा अजन्म है ।३८। जिन भगवान् विष्णु के द्वारा आविर्भाव, तिरोभाव, दर्शन, अदर्शन आदि सभी कार्य सम्पन्न होते है. और जो उनसे अतीत, सृष्टि कर्त्ता और संहारकर्त्ता कहलाते है।३९। जो आदिदेव है तथा अपने चारों मुखों में चारो वेद प्रकट करके त्रैलोक्य को पवित्र करते है उन ब्रह्माजी का ध्यान पूर्वक नमस्कार है ।४०। जिनके एक बाण से ही सम्पूर्ण असुर परास्त होकर याज्ञियो के यज्ञ को नष्ट करने मे असमर्थ होते हैं उन देवाधिदेव महादेव के चरणारविन्दों में प्रणाम करके ।४१। अद्भुत कर्म युक्त महर्षि बादरायण द्वारा महाभारत रूप से प्रकट हुए धर्मादि को महर्षि व्यास के मतानुसार सम्पूर्ण विषय आपको कहेंगे ।४२।

आपो नारा इतिप्रोक्तामुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ।
अयनयस्यता.पूर्वतेनारायणःस्मृतः ।४३
सदेवोभगवान्सर्वव्याप्यनारायणोविभुः ।
चतुर्धासोस्थततोब्रह्मन्सगुणोनिर्गुणस्तथा ४४
एकामूर्तिरनिर्देश्याशुक्लांपश्यन्तितांबुधाः।

ज्वालामालोपरुद्धांगोनिष्ठासायोगिनांपरा ।४५
दुरस्थाचान्तिकस्थ चविज्ञयाम्नागुणातिगा ।
वासुदेवाभिधानोऽसौनिममत्वेतदृश्यते ।४६
रूपवर्णादयस्तस्यानभावाः कल्पमामयः ।
अस्त्येवमादाशुद्धासुप्रतिष्ठैकरूपिणी ।०७
द्वितीयापृथिवीमुध्नांशेषाख्याधारयत्यधः ।
तामसीसाख्यातातियक्त्त्वमुद्राश्रिता ।४८
तृतीयाकर्मकुरुतेप्रजपालनतत्परा ।
सत्वोद्रिक्तातुसाज्ञयार्म संस्थानकारिणी ।४६
चतुर्थीजललजध्यस्थाशेतेपन्नागतल्पगा ।
रजस्तम्यागुणः सर्गसारकरोतिसदेवहि ।५

तत्त्वदर्शी मुनियों ने कहा-'नार' का अर्थ जल है, वह जल ही जिसका अत्यन्त एकमात्र 'अयन' अर्थात गृह है इसलिए वे नारायण कहे हैं।४६। हे भगवन् ! अनन्त लीलामय भगवान् नारायण सगुण तथा निर्गुण दोनों प्रकार से चार मूर्ति से अवस्थित हैं ।४७। उनको जो एक मूर्ति वाणी से परे हैं उसे ज्ञानीजन शुक्लवर्ण कहते है जो योगियों को एक मात्र आश्रम है तथा चन्द्र सूर्य आदि सम्पूर्ण तेजोमय पदार्थ स्वरूप ज्वालमाल ने जिनके सब अङ्ग आच्छादित है ।४५। जो नित्य मूर्ति तीनों गुणोंका अतिक्रम करके दूर तथा सतीप स्थित रहतीहै उस प्रधान मूर्तिका नाम वासुदेव है इसमें ममता किंचित भी नहीं है ।४६। उसके रूप, वर्ण आदि कल्पनात्मक है वह सर्वकाल में विराजमान, एक रूप तथा परम पवित्र है ।४७। जो मूर्ति पाताल मे निवास करक पृथ्वी को अपने मस्तक पर धारण करती है । उसदूसरी मूर्तिका संकरण कहते है, तामसी होने के कारण यह मूर्ति तिर्यग योनि वाली है ।४८। नारायण के जिस मूर्तिसे सभी कर्म भले प्रकारसे साध्य होते हैं। और प्रजापालन आदि सब कार्य सम्पादन होते हैं तथा जो धर्म की रक्षा करने वाली सतोगुणी मूर्ति है उसे प्रद्युम्न कहते हैं ।४९। चौथी मूर्ति जलमें पन्नगशय्या पर शयन करती है, यह रजोगुणी है, उसी के द्वारा सृष्टिकार्य सम्पन्न होता है, उसका नाम अनिरुद्ध है ।५०।

य तृतायहरे मूर्तिः प्रजापालनतत्परा ।
साधुधर्मव्यवस्थानकरोतिनियतभुवि ।५१
प्रोद्धृतानसुरान्हन्तिधर्मविच्छित्तिकारिणः ।
पातिदेवान्सतश्चान्यान्धर्मरक्षापरायणान् ।५२
यदायदाहिधर्मस्यग्लानिर्भवतिजैमिने ।
अभ्युत्थानमधर्मस्यतदात्मानसृजत्यसौ ।५३
भूत्वापुरावराहेण तुण्डेनापोनिरस्यच ।
एकयादंष्ट्रयोत्खातानलिनोववसुंधरा ।५४
कृत्वानृसिंहरूपचहिरण्यकशिपुर्हतः ।
विप्रचित्तिमुखाश्चान्येदान वाविनिपातिताः ।५५
वामनादीस्तथावान्यान्नसख्यातुमिहोत्संहे ।
अवत राश्चतस्येहमाथुरःसांप्रतस्वयम् ।५६
इतिसासात्विक मूर्तिरवतारान्करोतिवै ।
प्रद्युम्नेति रस ख्याातारक्षाकर्मण्यवस्थिता ।५७
देवत्वेऽथमनुष्यत्वेतिर्यग्योनौचसंस्थता ।
गृह्णाति तात्स्वभावचवासुदेवेच्छयासदा ।५८
इत्येतात्ते समाख्यातकृत्योऽपियत्प्रभुः ।
मानुषत्वगतोविष्णुः श्रृणुष्वास्योत्तार पुनः ।५९

प्रजा का पालन का करने वाली तीसरी मूर्ति के द्वारा ही पृथ्वीमें सदैव धर्म संस्थापन कार्य होता ।५१। धर्म को नष्ट करने वाले असुरों पण उसी मूर्ति द्वारा नाश को प्राप्त होते है तथा उसी के द्वारा धर्म रत साधुओं की रक्षा होती ।५२। हे जैमिने ! जब-जब धर्म की हानि और अधर्म की वृद्धि होती है, तब-तब यह मूर्ति धर्म के अभ्युत्थानार्थ प्रकट होती है ।१६। प्राचीन समय में इसी मूर्ति ने वराहों रूप धारण करके दाँतों के अग्र भाग से जल को हटा कर केवल दाढ़ से पृथ्वी को निकाला और पहिले के समान स्थिर किया ।५४। उसी ने नृसिंह रूप धारण कर हिरण्यकशिपु का संहार किया और उसी ने विप्रचित्ति इत्यादि दैत्यों को तारा ।५५। उसके वामनादि अन्यन्या बहुत से अवतार हुए जिनकी गणना नहीं कर सकते, इसी समय वह

मूर्ति श्री कृष्ण के रूप में उत्पन्न हुई है ।५६। इस प्रकार उस सतोगुणी मूर्तिके अद्भुत होने पर उसकी रक्षा प्रद्युम्न मूर्ति करता है ।५७। वह देवत्व मनुष्यत्व अथवा तिर्यक् आदि योनियों में अवस्थान कर वासुदेव की इच्छानुसार उनके स्वभाव का अवलम्बन करती है ।५८। आर्यके प्रति हमने यह सब कहा अब भगवान् विष्णु ने मनुष्य शरीर जिसलिए धारण किया, उसे कहते हैं ।५९।

।। इति ।।

५—द्रौपदी के पाँच पति

त्वष्टावपुत्रे हतेपूर्वं ब्रह्मन्निन्द्रस्य तेजसः ।
ब्रह्महत्याभिभूतस्यपरा ग्लानिरजायत ।१
तद्धर्मप्रविवेशाथशाक्रतेजोऽवचारत. ।
निस्तेजाश्चाभवच्चक्रोधनेतेजसिनिर्गते ।२
ततःपुत्र हतश्रुत्वष्टाक्रुद्धप्रजापतिः ।
अवलुञ्च्यजटामेकामिदवचनमब्रवीत ।३
अद्यपश्यन्तुमेवीर्यत्रयोलोकाःसदेवताः ।
सचपश्यतुदुर्बुद्धिर्ब्रह्महापाकशासनः ।४
स्वकर्मभिरतोयेनमत्सुतोविनिपातितः ।
इत्युक्त्वाकोपरक्ताक्षोजटामग्नौजुहावताम् ।
ततावृत्तः समुत्तस्थौज्वालामालीमहासुरः ।
महाकायोमहादंष्ट्रोभिन्नाञ्जनचयप्रभुः ।६
इन्द्रशत्रुरमेयात्मात्वष्टृवंतेजोपवृंहित ।
अहन्यहनिसोऽवर्द्धं दिषुपातमहाबलः ।७

पक्षियों ने कहा—हे ब्रह्मन् ! प्रजापति त्वष्टा का पुत्र त्रिशिरा अधोमुख होकर तप कर रहा था, उसके तप से डर कर इन्द्र ने उसे मार डाला, उसके मारने से ब्रह्महत्या से उत्पन्न पातक से इन्द्र का तेज नष्ट हो गया ।१। अधर्म का आचरण करने से इन्द्र के तेज ने धर्म में प्रवेश किया और इस कारण इन्द्र निस्तेज हो गये ।२। त्रिशिरा की मृत्यु वृत्तान्त सुनकर त्वष्टा अत्यन्त क्रोधित हुए और अनेक उन्होंने

अपने मस्तक की एक जटा उखाड़ कर कहा ।३। देवगण सहित स्वर्ग और पाताल में निवास करने वाले सभी लोग इस समय मेरे तेज को देखें तथा मेरे पुत्र का हत्यारा दुर्बुद्धि वाला इन्द्र भी मेरे विक्रम को देखें ।४। जिसने अपने कर्म में लगे हुए मेरे पुत्र का बध किया है, यह कह कर उन्होंने रक्त नेत्र किये हुए क्रोध पूर्वक उस जटा को अग्नि में होम दिया ।५। तब तत्काल ज्वालमालायुक्त विशालकाय, विशाल दष्ट्राओं से युक्त, अंजनपिण्ड जैसा रूप धारण किये वृत्र नामका एक घोर असुर अग्नि से प्रकट हुआ ।६। त्वष्ट के तेज से उत्पन्न हुआ वह शक्रारि वृत्र धनुष से छूटे हुए बाण की ऊँचाई के समान नित्य वृद्धि को प्राप्त होने लगा ।

वधायचात्मनोदृष्ट्वावृत्रंशक्रोमहासुरम् ।
प्रेषयामाससप्तर्षीन्सन्धिमिच्छन्भयातुरः ।८
सख्यंचक्रुस्ततस्तस्यवृत्रेणसमयांस्तथा ।
ऋषयःप्रीतमनसःसर्वभूतहितेरताः ।९
समयस्थितिमुल्लंघ्ययदाशक्रेणघातितः ।
वृत्रोहत्याभिभूतस्यतदाबलमशीर्यत: ।१०
तच्छक्रदेहाद्विभ्रष्टंबलमारुतमाविशत् ।
सर्वव्यापिनमव्यक्तंबलस्यैवाधिदैवतम् ।११
अहल्यांचयदाशक्रोगौतमंरूपमास्थित.
धर्षयामासदेवेन्द्रस्तदारूपमहीयत ।।१२
अङ्गप्रत्यङ्गलावण्ययदतीवमनोरमम् ।
विहायदुष्टंदेवेन्द्रंनासत्यावगततत. ।१३
धर्मेणतेजसात्यक्तंबलहीनमरूपिणम् ।
ज्ञात्वासुरेशदेतेयास्तज्जयेचक्रुरुद्यमम् ।१४

अपने बध के लिए उस घोर असुर वृत्र का उत्पन्न हुआ देखकर इन्द्र भय से अत्यन्त आतुर हुये और उन्होंने उससे संधि करने के उद्देश्य से मरीच्यादि से सप्त ऋषियों को भेजा ।८। सब जीवों की कल्याणकामना वाले सप्तऋषियों ने इन्द्र, और वृत्रासुर के मध्य परस्पर प्रतिज्ञाकरो के मित्रता कराई।९। प्रतिज्ञा की मर्यादा का उल्लंघन करके

जब वृत्तासुर इन्द्र के द्वारा वज्र को प्राप्त हुआ तब उसी ब्रह्महत्या से उत्पन्न पाप के कारण इन्द्र का बल नष्ट हो गया ।१०। यह बल इन्द्र के देह से निकल कर बल के मात्र अधिदेव सर्वव्यापी एवं अव्यक्त पवन देवता में प्रविष्ट हो गया ।११। और जब इन्द्र ने गौतम का रूप धारण कर अहिल्या से संगति की तब भी उसका स्वरूप श्री हीन होगया ।१२। उस समय उस दुरात्मा इन्द्र का अङ्ग प्रत्यङ्ग का सम्पूर्ण लावण्य उसका त्याग करके दोनो अश्विनी कुमारों में प्रवेश कर गया ।१३। उस समय इन्द्र का धर्म और तेज के द्वारा त्याग हुआ तथा बल और रूप से भी हीन समझ कर दैत्यों ने उन पर विजय प्राप्त करनेका प्रयत्न किया।।१४।

राज्ञामुद्रिक्तवीर्याणां देवेन्द्रविजिगीषवः ।
कुलेऽतिबलादैत्या अजायन्तमहामुने ।१५
कस्यचित्त्वथकालस्यधरणीभारपीडिता ।
जगाममेरुशिखरं सदोयत्रदिवौकसाम ।१६
तेषासाकथयामासभूरिभाराविपीडिता ।
यनुजात्मजदैत्योत्थखेदकारणमात्मन ।१७
एतेभवद्भिरसुरानिहताः पृथुलोजसः।
तेसर्वेमानुषेलोकेजातागेहेषुभूभृताम् ।१८
अक्षौहिण्योहिवहुलस्तद्भारात्त्रिजाम्यत्र.।।
तथाकुरुध्वंत्रिदशायथाशांतिभवेन्मम् ।१९
तेजेभागैस्ततोदेवाअवतेरुर्दिवीमहीम् ।
प्रजानामुपकारार्थं भूभारहरणामच ।२०

हे महामुने ! महान् बल वाले दैत्यों ने इन्द्र पर विजय प्राप्त करने की अभिलाषा से, बल, वीर्य और मद युक्त राजाओं के वंश में जन्म लिया । १। फिर कुछ समय व्यतीत होने पर दैत्यों के भार से पृथ्वी बोझिल हो गई और वह सुमेरु पर्वत में देवताओं की सभा में पहुंची ।१६। और वह अत्यन्त बोझकी पीड़ा वाली देवी वसुन्धरा दैत्य-दानवों के कारण होने वाले अपने दुःखका सम्पूर्ण कारण वहां कहने लगी।१७। हे देवगण ! तुमने अत्यन्त बली असुरों का संहार किया था, उन्होंने

अब मृत्यु लोक के राजवंशों में जन्म धारण किया है।१८। वे दैत्य असंख्य अक्षौहिणी संख्यक है, इसलिए उनके भार से अत्यन्त पीड़ित हुई मैं नीचे की ओर झुकी जा रही हूँ, देवगण ! मुझे जिस प्रकार शान्ति मिल सके, वही करो।१९। पक्षियो ने कहा—हे मुनिवर ! इसके पश्चात् प्रजा के उपकार और पृथिवी के भार हरणार्थ देवताओं ने अपने-अपने तेजांश से भू-मडल पर जन्म लिया।२०।

यदिन्द्रदेहजन्तेजस्तन्मुमाचस्वयंवृषः ।
कुन्त्याजातोमहातेजास्ततोरजायुधिष्ठिरः ।२१
बलमुमोचपवनस्तमोभीमोव्यजायत ।
शक्रवीर्यार्धताश्चैवजज्ञेपार्थोधनंजय ।२२
उत्पनौयमलौमाद्रयांशक्ररूपौमहाद्युती ।
पञ्चधाभगवानित्यमवतीर्णःशतक्रतुः ।२३
तस्योत्पन्नामहाभागापत्नीकृष्णाहुताशनात् ।२४
शक्रस्यैकस्यसापत्नीकृष्णानान्यस्यकस्यचित् ।
योगेश्वराः शरीराणिकुर्वंतिबहूलन्यपि ।२५
पचानामेकपत्नीत्वमित्येतत्कथितंतत्र ।
श्रूयतांबलदेवोऽपिवथायातःसरस्वतीम् ।२६

तब इन्द्र के शरीर से उत्पन्न उस तेजको स्वयं धर्म ने कुन्ती के गर्भमें स्थापित किया, उसी से अत्यन्त तेजस्वी रजायुधिष्ठिर की उत्पत्ति हुई।२१। और देवताओं में श्रेष्ठ वायु ने इन्द्र के जिस तेज को कुन्ती के गर्भ में स्थापित किया उससे भीमसेन और इन्द्रके आधे बलसे कुन्ती के गर्भ से ही अर्जुन उत्पन्न हुए।२२। इन्द्रके आधे बलको धारण करने वाले दोनों अश्वनी कुमारों ने माद्री में गर्भ धारण कर दो (यमल) कुमारों को उत्पन्न किया, इस प्रकार इन्द्रही इन पाँचोंरूपों में प्रकट हुए।२६। तथा उन्हीं इन्द्र की भार्या शची यज्ञभाग एवं याज्ञसेना रूप से अग्नि के द्वारा उत्पन्न हुऐ।२४।इससेनिश्चय हुआ कि द्रोपदी केवल एक इन्द्रकी ही महिषी थी क्योंकि महात्मा एवं योगीश्वर अपने देहके अनेक विभाग करने में समर्थ हैं।२५। जैसे वह द्रोपदी पांच व्यक्तियों की एकही पत्नी हुई वह कारण बता दिया, अब बलदेवजी जिस प्रकार सरस्वती में पहुंचे, वह श्रवण करो।२३।

६—बलदेव द्वारा ब्रह्महत्या

रामःपार्थेपरांप्रीतिंज्ञात्वाकृष्णस्यलाङ्गली ।
चिन्तयामासबहुधाकिंकृतंभवेत् ।१
कृष्णंनहिविनाहं यास्येदुर्योधनान्तिकम् ।
पाण्डवान्वासमाश्रित्यकथंदुर्योधनंनृपम ।२
जामातरं तथाशिष्यंघातयिष्येनरेश्वरम् ।
तस्मात्पार्थंयास्यामि नादुर्योधनंनृपम् ।३
तीर्थस्नानैरात्मानं शोधयिष्यामि ....मना ।
कुरूणांपाण्डवानांचक्षावदन्तायकल्पते ।४
इत्यातथ्यहृषीकेशपार्थदुर्योधनावपि ।
जगामद्वारकांशौरिःस्वसैन्यपरिवारितः ।५
गत्वाद्वारवतींरामोहृष्टजनाकुलाम् ।
स्वागन्तव्येषु पयोपान हलायुधः ।६
पीतपानोजगामाथरैवतोद्यानमृद्धिमत् ।
हस्तेगृहीत्वाहमदांरेवतीमप्सरोपमाम् ।

पक्षियो ने कहा—अर्जुन के प्रति श्रीकृष्ण की अत्यन्त प्रीति देखकर बलरामजी क्या करने में मंगल होगा, इस विषय पर अनेक प्रकार विचार करने लगे ।१। श्रीकृष्ण को साथ लिए बिना ही मैं एकाकी दुर्योधन के पास नहीं जाऊँगा इन पाडवों का पक्ष लेकर ।२। अपने ही जमाता और शिष्य राजा दुर्योधन का किस प्रकार बध करूं ! अतएव मैं राजा दुर्योधन और अर्जुन दोनों में से किसी के पास नहीं जाऊंगा ।३। इस लिए कौरव पाडवों का जब तक नाश न हो जाय तब तक मैं इकलाही तीर्थयात्रा करता हुआ अपने आत्मा को पवित्र करूं ।४। ऐसा निश्चय करके बलरामजी ने हृषीकेश, अर्जुन और दुर्योधन को आमन्त्रण करते हुए अपनी सेना से घिरे हुए द्वारका को प्रस्थान किया ।५। जब से हृष्ट-पुष्ट मनुष्यों वाली द्वारका नगरी में पहुंचे तब तीर्थ यात्रा का विचार करते हुए उन्होंने ताड़ी कांप्रेस पान किया ।६। रस पीने के उपरान्त अप्सरा के समान गर्वित रेवती जी का कर ग्रहण

करते हुए अनेक वैभवों से युक्त रैवत उद्यान में पहुँचे ।७।

स्त्रीकदम्बकमध्यस्थोययौमत्तःपदास्खलन् ।
ददर्शचवनवीरारमणीयमनुत्तमम् ।८
सर्वर्तुफलपुष्पाढ्यं शाखामृगगणाकुलम् ।
पुण्यपद्मवनोपेतसल्वलमहावनम् ।।९
सश्रृण्वन्प्रीमिजननान्बहून्मदकलाञ्शुभान ।
श्रोत्ररम्पान्सुमधुराञ्शब्दाःखगमुखेरितान् ।।१०
सर्वर्तुधलभाराढयान्सवर्नुकुसुमाज्ज्वलान् ।
अपश्यत्पादपाँस्तत्रविहगैरनुादितान् ।।११
आम्रानाम्रातकान्भव्यान्नारिकेलान्पातिन्दुकान् ।
आविल्वकास्तथाजीरान्दाडिमान्बीजपूरकान् ।।१२
पनसांल्यपनकुचान्मोन्नीपाश्चातिमनोहरान् ।
पारावतांश्चकङ्कोलान्नलिनानम्लवेतासान् ।।१३
भल्लातकानामालकास्तिन्दुकांश्चमहाफलान् ।
इंगुदान्करमर्दाश्चहरीतकविभीतकान् ।।१४
एतानन्याँश्चसत्तरुन्ददर्शयदुनन्दनः ।
तथैवाशोकपुन्नागकेतकीबकुलानथ ।।१५

मद्यपान से उन्मत्त होने के कारण स्त्रियों से घिरे रहकर क्रीडा रत होने पर उनके पात्र डगमगाने लगे फिर स्वस्थ होकर उन्होंने फिर अत्यन्त रमणीय रैवत वन देखा ।८। वह समस्त ऋतुओं में उत्पन्न होने वाले फलों, पुष्पों से सुशोभित, बन्दरोंसे व्याप्त, कमलवन से सम्पन्न तथा छोटे सरोवर और महावन से सम्पन्न था ।९। रेवती जी के साथ उस वन मे प्रविष्ट होकर बलरामजी आह्लाद उत्पन्न करने वाले तथा कानों को सुख देने वाले विभिन्न प्रकार के पशु-पक्षी का मधुर कूजन सुनने लगे ।१०। वहाँ वृक्षों में सब ऋतुओं के फल लगे हैं, उन वृक्षों पर प्रसन्न पक्षी चहचहा रहे हैं तथा सभी ऋतुओं के पुष्प प्रफुल्लित हो रहे हैं और सभी रङ्गों के फल शोभा दे रहे है ।११। आम, अम्रातक, नारियल, विन्दु, बेल अन्जीर, अनार, निम्बु ।१२। कटहल, बड़हल, मोचरस कदम्ब, पारावत, कोल, नलिनी अम्ल,

वेत ।१३। भिलाचा, तिल, तैंदू, हिंगोट, करौदा, हरड, बहेड़ा ।१४। वहाँ इन सब वृक्षों का बलरामजी ने देखा तथा अशाक, पुन्नाग, केतकी, मौलश्री ।१५।

चम्पकान्सप्तपर्णांश्चिकारान्सस लतीन् ।
पारिजातान्कोविदारान्दाश्चबदरांस्तथा ।१६
पाटलान्पुष्पित न्रम्यान्देवदारुद्रुमास्तथा ।
सालांस्तालांस्तमालांश्चकिंशुकान्वजुलान्वराम् ।१७
चकोरे पातपवेश्चभृंगराजैस्तथाशुकै: ।
कोकिलै कलविकैश्चहारीतेर्जीवजोवकै । ८
प्रिय पुत्रैश्चातकैश्चतथान्यैर्विविधै:खगै: ।
श्रोत्ररम्यं सुमधुर कूजद्भिश्चाप्यधिष्ठितम् ।१९
स्मरांसिचमनोज्ञानिप्रसन्नसलिलानिच ।
कुमुदै पुण्डरीकैश्चतथानीलोत्पलै:शुभै: ।२०
कह्लारै:कमलश्चापिआचितानिसभतत: ।
कादम्बैश्चकूवाकैश्चतथैवजलकुक्कुटै: ।२१
कारण्डवैप्लहंसैकर्ममद्गुभिरेवच ।
एभिश्चान्यैश्चकीर्णानिसमग्ताश्चलच।रिभि: ।२२

चम्पा. कन्नेर, सप्तवर्ण पारिजात, मालती, कोविदार, मान्दर, बेर ।१६। पाटेल, देवदार सुखुआ, ताल, तमाल, पलाश और वंजुल आदि उत्तमोत्तम फल-पुष्पों से सम्पन्न बृक्षों से वह वन सुशोभित है। ।१७। उन बृक्षों पर चकोर जातपत्र, भृङ्गराज, शुक्र, सारिका, कोकिला रैल जीवजीवक ।१८। प्रियपुत्र तथा चातक आदि विभिन्न प्रकार के पक्षी सुनने में मनोहर शब्द करते हुए, इन सब वृक्षों की शाखाओं के आश्रय में निवास करते है ।१९। उस रैवतक वन में स्वच्छ जल वाले सुशोभित हैं, जिन्हें देखते ही चित प्रसन्न होता है कुमुद, पुण्डरीक, नील- पद्मा ।२०। कह्लार और कमल आदि पुष्पों से सर्वत्र शोभायमान तथा कलहंस, चदवा और जल कुक्कुट ।२१। प्लव, हंस तथा कारण्डव आदि जलचर आदि के सहित अत्यन्त सुशोभित ।२२।

क्रमेणेत्थवननशौरिप्रीक्ष्यमाणोमनोरमम् ।
जगामानुगत:स्त्रीभिलतागृहमतनुत्तमम ।२३
सददर्शद्विजांस्तत्रवेदवेदागपारगान् ।
कोशिकान्भार्गवांश्चैवभरद्वाजान्सगौतमान् ।२४
विविधेषुचसंभुनान्वशेषुद्विजत्तमाम् ।
कथाश्रवणबद्धात्कानु 'विष्टान्महत्सुख ।२५
कृष्णाजिनोशरीयेषुकुशेच् युचबृसीषुच ।
सूतचतेषामध्यस्थंकथयान कथा:शुभा: ।२६
पौराणिकी:सुरर्षीणामाद्यानाँचरिताश्रया: ।
दृष्ट्वारामंद्विजा:सर्वेमधुपानारुणेक्षणम् ।२७
मत्तोऽयमिति मन्वाना.समुत्तम्थुस्त्वरान्विता: ।
पूजयत्तोहलधरमृनेततसूतनशजम् ।२८

उस बन को देखते हुए बयरामजी स्त्रियों के सहित एक अत्यन्त श्रेष्ट लतागृह मे पहुंचे ।२३। वहाँ उन्होंने देखा कि अनेकों वेदवेदाँग ज्ञाता ब्राह्मण, कौशिक वंशी भृगुवंशी, तथा भारद्वाज और गौतम के बंशधर ।२४। तथा आन्याय वशों के पवित्र ब्राह्मण और श्रेष्ट मनुष्य कुशाओ पर और काई घास पर बैंठे है तथा उनक मध्य में पुराण की कथा कहने वाले सूत जी कल्याणमयी कथा कर रहे है ।२६। उस कथा मे देवताओं और ऋषियों का वर्णन था । उसी समय उन ब्राह्मणों ने मदिरा के मद से लाल हुए नेत्रों वाले बलरामजी को देखा ।२७। सब मुनियों उन्हें मदोंन्मत्त देख उस समय सूतजी के अतिरिक्त अन्य सभी ने उठकर अत्यन्त आदर पूर्वक बलराम जी का पूजन किया ।२८।

तत:क्रोधसमाविष्टोहलीसूतं महाबल: ।
निजधानवृवित्ताक्ष:क्षोभिताशेषदानव: ।२९
अध्यायतिपदंब्राह्मं तस्मिन्सूतोनिपातिते ।
निष्क्रान्तास्ते दिजा:सर्वे त्रनात्कृष्णाजिनाम्बर: ।३०
अवधूतंतथात्मानं मन्यमानोहुलायुध: ।

चिन्तायामाससुमहन्भगापापमिदकृतम् ।३१
ब्राह्मं स्थानं गतोह्येषयत्सूतोविनिपातितः ।
तथाहिमेद्विजाःसर्वेमामवेक्ष्यविनिगताः ।३२
शरीरस्यचमेगन्धोलोहस्येवासुखावहः ।
आत्मानं चावगच्छामिब्रह्मघ्नमिवकुत्सितम् ।३३
धिगमर्षं तथामद्यमतिगानमभीरूताम् ।
यै राविष्टेनसुकहन्मयापापमिश्कृतम् ।३४
तत्क्षयार्थंचरिष्यामिव्रतं द्वादशवार्षिकम् ।
स्वकर्मख्यापनं कुर्वन्प्रायश्चित्तमनुत्तमम् ।३५
अथयेयसमारब्धातीर्थयात्रामयाधुना ।
एतामेवप्रयास्यामिप्रतिलोमासरस्वतीम् ।३६
अतोजगामरामोसौप्रतिलोमांसरस्वतीन् ।
ततःपरश्रृणुष्वेमपाण्डवेयेकथाश्रयम् ।३७

फिर दानवो के हन्ता महान् पराक्रमी बलरामजी ने सूतजी के द्वारा अपना तिरस्कार समझकर अत्यन्त क्रोध से लाल नेत्र कर सूतजी को मार ढाला ।२९। पुराणवेत्ता सूतजी के मर-कर स्वर्ग में पहुंचने प मृगछालाओं पर बैठे हुए सभी ब्राह्मण वहां से उठकर चले गये ।३०। तब जिन बलरामजी की देह पर पद प्रतीत हो रहा था, वह चिन्ता और पश्चाताप करने लगे कि मैं ऐसा घोर पाप क्यो कर बैठा ? ।३१। मैंने जिन सूतजी को मारा वह ब्रह्मस्थान को प्राप्त हुये और सभी ब्राह्मण मुझे देखते ही चले जाते हैं ।३२। मेरे देह से असुरत्व प्रदर्मित करने वाली लौह तुल्य गन्ध निकल रही हैऔर आत्मा की ब्रह्महत्या से उत्पन्न पाप से कलुषित प्रतीत होती है ।३३। अरे अमर्ष ! तुझे धिक्कार है, अरे मद्य तुझे भीं धिक्कार हैं, अत्यन्त सम्मान और साहस को भी धिक्कार हैं क्योंकि इन्हीं के वशीभूत होकर मैं ऐसा घोर पातक कर बैठा ॥ ३४ ॥ अब इस ब्रह्महत्या से उत्पन्न महापातक को दूर करने के लिए बारह वर्ष तक व्रत करता हुआ अपने पाप को सर्वत्र विख्यात करने इसका प्रायश्चि करूंगा ।३५। अथवा जिस तीर्थ यात्रा का जो उद्यम मैं कर रहा हूँ उसी यात्रा में प्रतिलोमा सरस्वती

में जाऊंगा ।३६। हे मनु ! ऐसा कहकर यदुकुल धुरंधर बलरामजी प्रतिला सरस्वती को जाकर प्राप्त हुए, अब तुम्हारे प्रति पाण्डव पुत्रों का वृत्तान्त कहते हैं, उसे श्रवण करो ।३७।

७—द्रौपदी के पांच पुत्रों की मृत्यु

हरिश्चन्द्र तिराजर्षीरासीत्त्रे तायुगेपुरा ।
धर्मात्मापृथिवीपालः प्रोल्लसत्कीर्तिरुत्तमः ।१
नदुर्भिक्षनचव्याधिर्ताकालमरणनृणाम् ।
नाधर्मरुचयः पौरास्तस्मिन्शासतिपार्थिवे ।२
वभूवुर्नतथोन्मत्ताधनवीर्यतपोमदैः ।
नाजनयन्तस्त्रियश्चैवकाश्चिदप्राप्तयोवनाः ।३
सकदाचिन्महाबाहुरण्येऽनुसरन्मृगम् ।
शुश्रावशब्दमसकृत्त्रायस्वेतिचोपिताम् ।४
सविहायमृगं राजामभीषोरित्यभाषत ।
मयिशासतिदुर्मेधःकोऽयमन्यायवृत्तिमान ।५
तत्क्रन्दितानुसारिचसर्वारम्भविघातकृत ।
एतस्मिन्नन्तरेरौद्रोवघ्नराट्समचिन्तयत् ।६
विश्वामित्रोऽयमतुलयपआस्थायवीयवान् ।
प्रगसिद्धाभवादीनावोंघ्नसाधयतिव्रती ।७

धर्मात्मा पक्षियों ने कहा--हे जैमिनी ! पुराकाल में त्रेता में हरिचन्द्र नाम के एक धार्मिक नरेश हुए, वह अत्यन्त कीर्ति से युक्त पृथिवी का पालन करने वाले श्रेष्ठ पुरुष थे ।१। उनके शासन—काल में दुर्भिक्ष नहीं पड़ा और प्रजा को रोग, काल मृत्यु का कल तथा अधर्म फल नहीं भोगना पड़ता था ।२। उनकी प्रजा भी धन, बल या धर्म कामद से उन्मत्त नहीं होती थी, स्त्रियां भी यौवना वस्था प्राप्त किये बिना सन्तानवती नहीं होती थी ।३। ऐक ममय की बात है वह आखेट के लिए बन मे गये, उसी समय उन्होंने अनेक स्त्रियों के कंठ से 'रक्षा करो, रक्षा करो' का शब्द सुना ।४। तब राज मृगया छोड़ कर, 'डरो मत' कहते हुए बोले कि मेरे शासनकाल में कौन दुर्बुद्धि अन्याय का आचरण करता है ? ।।५।। यह कर उन्होंने

उस करुण स्वर का अनुसरण किया, उसी समय सब कार्यों को नष्ट करने वाला भयंकर विघ्नराज सोचने लगा ।३। इस वन में जिन साधनों को पहिले कोई नहीं साध सका उन्हें भवादि सम्पूर्ण विद्याओं का साधन प्रतालम्बन एवं घोर तप द्वारा महामुनि विश्वामित्रजी कह रहे हैं ।७।

साध्यमाना:क्षमामौनचित्तसंयमिनाऽमुना ।
तावैभयात्तौः क्रन्दन्तिकथंकयंमिदंमया ।८
तेजस्वीकौशिकश्श्रेष्ठोवयमस्थसुदुर्वलाः ।
क्रोशन्त्येतास्तथाभीतादुष्पारं प्रतिभातिमे ।९
अथवायंनृप प्राप्तोनाभैरितिवदन्मुहुः ।
इममेवप्रविश्यशुसाथयिष्येयथैप्सितम्।१०
इतिसंचिन्त्यरौद्रेणविघ्नराजेनववैततः ।
तेनाविष्ठानृपः कोहादिदंवचन मब्रवीत् ।११
कोऽयंब्रध्नातिवस्त्रान्तेपावकंपापकृन्नरः।
बलोष्णतेजसादीप्तेमयिपत्यावुपस्थिते ।१२
सोऽद्यमत्कामुकाक्षपविदिपितदिगन्तरैः।
शरैविभन्नसर्वांगोदीर्घनिद्रांप्रवेक्षति ।१३
विश्वाभित्रस्ततः क्रूद्धाश्त्वातन्नुपहृतेर्वच ।
क्रुद्धेचषेवरेतस्मिन्नेशुविद्याः क्षण नताः १४

क्षमा, मौन और चित्त के समय द्वारा वे मुनिवर जिन विद्याओं के साधनमे अहर्निश श्रद्धासे रत है,वे विद्याएं अत्यन्त भतभीतहो नारीरूप मे 'रक्षा करो कहता हुई रोती है, अब मुझे कर्त्तव्य है ? ।८। क्योंकि वश्वामित्रजी अत्यन्त तेजस्वी हैं और इनके समक्ष मैं अत्यन्त दुर्बल हूँ और यह विद्याएं भी भयसे रुदन कर रही हैं. इस प्रकार अत्यन्त कठिन वार्ता उपस्थित है ।९। अथवा मुझे किसी प्रकार चिन्तित नहीं होना चाहिए, क्योकि राजा हरिश्चन्द्र 'डरो मत' कहता हुआ आपहुंचा है, इस लिए इस राजा के देहमें घुसकर ही अपनी इच्छा पूर्ण करता हूँ।१०उस समय भयकर विघ्नराज ने इस प्रकार विचार कर राजाके देह में प्रवेश किया, तब राजा नें और भी क्रोध पूर्वक कहा ।११। यह कौन पापी,

वस्त्र में अग्नि को बांध रहा हूँ ! जब मैं साक्षात् बल रूप अत्यन्त तेजस्वी भूपति हरिश्चन्द्र यहा आ गया है ।१२। इस समय कौन मूर्ख धनुप से छूट कर दिशाओं में प्रकाश करने वाले मेरे बाणों से छिदकर योग निद्रा को प्राप्त होगा ।१३। तब राजा हरिश्चन्द्र के यह अहंकार मय वचन सुनकर मुनिश्रेष्ठ विश्वामित्र जी क्रोधित हो उठे और उनके क्रोध करते ही सब विद्या नष्ट हो गई ।१४।

सचापिरजातं दृष्ट्वा विश्वामित्रं तपोनिधिम् ।
भित:प्रावेपतात्यर्थं सहसाश्वत्थपर्णवत् ।१५
सदुरात्मन्नितियदामुनिस्तिष्ठेतिचाब्रवीत् ।
ततः सराजाविनयात्प्रणि मित्याभ्यभाषत १६
भगवन्नेषधर्म्मोमेआपराधाममप्रभो ।
नक्रोद्धुमर्हसिमुनेनिजधर्मं रतस्ममे ।१७
दातव्यक्षतव्यचधर्मज्ञैर्नमहाक्षिता ।
चापचोद्यम्ययोद्धव्य धर्मशास्त्रानुसारतः १८
दातव्यकस्यकेरक्ष्या. कैर्योद्धव्यचतेन्नृप: ।
क्षिप्रमेतत्समाचक्ष्वयद्यधर्मोभयंतव ।१६
दातव्यविप्रमुख्येभ्योयेचान्येचान्येकृशवृत्तयः ।
रक्ष्याभीताः सदायुद्धं कर्त्तव्यः परिपन्थिभि ।२०
यदिराजभवान्सम्यग्राजधर्ममवेक्षते ।
निर्वेष्टुकामोविप्रोऽहं दीयतामिष्टदक्षिणा ।२१

सहसा तपोनिधि विश्वामित्रजी देखकर राजा हरिश्चन्द्र अत्यन्त भयभीत होकर पीपल पत्र के समान कापने लगे ।१५। उसी समय मुनि वर विश्वामित्र ने कहा 'दुरात्मन् ! ठहर' यह सुनकर राजा ने उनको प्रणाम किया और विनयपूर्वक बोले ।१६। हे भगवन्! मेरा धर्म यहीहैं, आप मेरे अपराध को न मानिए,मैंने अपने धर्म का त्याग नहीं कियाहै, इसलिए मेरे प्रति क्रोध न करिये।१७। धर्मज्ञ नरेशों का कर्त्तव्य होधर्मानुसार दान, रक्षा और धनुष धारण करके युद्ध करना है ।१८। विश्वामित्र बोले--राजन् यदि तुम्हें अधर्म से भय है तो यह बताओ कि

दान किसको करना चाहिए, किसकी रक्षा और किस के साथ युद्ध करना उचित है ? ।१६। हरिश्चन्द्र बोले -जो सदैव व्रत अनुष्ठान मे पत्थर और ब्राह्मण श्रेष्ठ है, उसी के लिए दान करे, भयभीत की रक्षा करे और शत्रुओं के साथ युद्ध करे ।२०। विश्वामित्र ने कहा कि राजन् ! यदि तुम्हें सम्पूर्ण राजधर्म का ज्ञान है तो मैं मुमुक्षु ब्राह्मण हूँ, मुझे इच्छित दक्षिणा प्रदान करो ।२१।

एतद्राजावचःश्रुत्वाप्रहृष्टेनातरात्मना ।
पुनर्जातमिवात्मानंमेनेप्राह चकौशिकम् ।२२
उच्यताभगवन्तेदातव्यमविशङ्कितम् ।
दातमित्यंवतद्विद्धियद्यपिस्यात्सुदुर्लभम् ।२३
हिरण्यंवासुवर्णवापुत्र स्त्रियंकलेवरम् ।
प्राणराज्य पुरं लक्ष्मीर्य्यं दभिप्रेतमात्मनः ।२४
राजन्यतिग्रहीतोऽयंयस्तेदतःप्रतिग्रहः ।
प्रयनछप्रथमंनावदक्षिणंराजसूयिकोम् ।२५
ब्रह्मंस्तामपिदास्यामिदक्षिणाभवतोह्यम् ।
संसाररांघरासेतांसभूभृद्ग्रामत्तनाम् ।
राज्यंचसकत्रवीर रथाश्वगजसकुलम् ।२७
कोष्ठागारंचकोवचयच्चान्यद्विद्यतेतव ।
विराभर्याचपुत्रंचशरोरंत्रतवानघ ।२८
धर्मंचसवधर्मज्ञयीयान्तमनुगच्छति ।
बहुनावाकिमुक्तेनसर्वमेतत्प्रीयताम् ।२६

पक्षियों ने कहा हे जैमिने—राजा हरिश्चन्द्र ने यह बात सुनकर आह्लाद और प्रफुल्लता युक्त होकर अपना नया जन्म समझते हुए मुनि से कहा ।२२। हे भगवन् ! आप अपनी अभिलाषा कहें, मैं उसे देने के लिए तत्पर हूँ तथा प्रतिज्ञा करता कि कठिन से कठिन बात को भी पूरी करूंगा ।२३। आपको स्वर्ण, रत्न, पुत्र, स्त्री, देहप्राण, राज्य, ग्राम,धन जिस वस्तु की इच्छा हो वही बतलाइए।२४। विश्वमित्र ने कहा--आप

जो देंगे, वही मैने ग्रहण कर किया समझो, परन्तु अब प्रथम राजसूय यज्ञ की दक्षिणा मुझे दो ।२५। राजा बोले--ब्रह्मन् ! देने को मैं तत्पर हूं, राजसूय यज्ञ की दक्षिणा के रूप में आपकी जो इच्छा हो सो आज्ञा करे ।२६। विश्वामित्र ने कहा समस्त नगर, ग्राम पर्वत, सागर आदि से युक्त पृथिवी एवं रथ, अश्व, हाथी सहित सम्पूर्ण राज्य ।२७। अन्तं-गृह, राजकोश आदि तुम्हारी वस्तुएं बिना भार्या, पुत्र तथा अपने शरीर के ।२८ तथा धर्मशास्त्र के अनुसार तुम्हारे पास जो कुछ हैं, सब कुछ मुझे दे दो ।२९।

प्रहृष्टेनवमनमामोऽविकारमुखोनृपः ।
तस्यष वचनं श्रुत्वतथेत्याहकृताञ्जलिः ।३०
सर्वस्वयदिमेदत्तं राज्य मूर्वींवलं धनम् ।
प्रभुत्वकस्यराजर्षे राज्यस्थे तापसेमयि ।३१
यस्मिन्नपिमयाकालेब्रह्मन्दत्तावसुन्धरा :
तस्मिन्नपिभवान्स्वान्स्वामीकिमुताद्यमहीपतिः।३२
यदिराजंस्त्वयादत्तामसर्वा बसुन्धरा ।
यत्रमेविषयेस्वाम्यं तस्मान्निष्क्रातुमर्हसि ३३
तरुवल्कलमाबध्यसहपत्न्यासुतेन च ।३४
तथेतिचोक्त्वाचराजा गन्तु प्रक्रमे ।
स्वपत्न्योशैब्ययासाधवास्त्रकेनात्मजेनच ।३५

पक्षियों ने कहा--मुनि के वचन सुनकर राजा ने प्रसन्नता पूर्वक हाथ जोड़कर 'जो आज्ञा, ऐसा ही होगा' मुख से कहा ।३०। विश्वामित्र ने कहा-तुमने पृथिवी, बन, धन इत्यादि सर्वस्व ही मुझे अर्पण कर दिया है, तब तपस्वी होकर राज्य करने से किसका प्रभुत्व रहेगा ? ३१।हरिश्चन्द्र बोले ब्रह्मन् ! जब से मैंने यह वसुन्धरा आपको दे दी, तभी से आप इसके स्वामी है, फिर आप प्रभुत्व का प्रश्न क्यों करते हैं ।३२।विश्वामित्र ने कहा---राजन् ! तुमने जब यह वसुन्धरा मुझे दे दी और मेरा स्वामित्व हो गया तो तुम इस राज्य से चले जाओ ।३३। कटि-

भूषण आदि तुम्हारी भार्या और पुत्र के देह में है. उन सबको उतारकर वृक्षों की छाल धारण करके पत्नी पुत्रसहित मेरे राज्य से निकल जाओ।३४ पक्षियों ने कहा-राजा हरिश्चन्द्र ने मुनि विश्वामित्र की आज्ञा के अनुसार देश के कार्य किए और अपनी भार्या शैव्या और पुत्र के सहित जाने लगे।३५।

व्रजतः स ततो रुद्ध पन्थानं प्राह तं नृपम् ।
क्वयास्यसीत्यदत्वा मे दक्षिणां राजसूयिकीम् ।६३
भगवन्स राज्यमेतत्ते दत्तं निसतकण्टकम् ।
अवशिष्टमिदं ह्यन्नचदेहत्रयं मम ।३७
तथापि खलु दातव्या त्वया मे यज्ञदक्षिणा ।
वेशषतो ब्राह्मणः नाहन्त्यदत्तं प्रतिश्रुतम् ।६८
तावदेव तुल्या दक्षिणा राजसूयिका ।६
प्रतिश्रुत्य च दातव्य योद्धव्यं चाततायिभिः ।
रक्षितव्यास्तथा चार्त्ता यत्वया वप्राकप्रतिश्रुतम् ।४०
भगवन्साम्प्रतेनास्ति दास्ये कालक्रमे गते ।
प्रसादं कुरु विप्रर्षे सद्भावमनुचिन्त्य च ।४१
किं प्रमाणो मया कालः तीक्ष्यस्ते जनाधिप ।
शीघ्रमाचक्ष्व शापाग्निरन्यथा त्वां प्रदक्ष्यति ।४२

तभी विश्वामित्र ने उनका मार्ग रोका और कहने लगे हे राजन् राजसूय यज्ञ की दक्षिणा दिये बिना कहा जा रहे हो ।३६। हरीश्चन्द्र ने कहा—हे भगवन् मैंने आपको अपना सम्पूर्ण राज्य निष्कंटक रूप से दे दिया है, अब तीन प्राणियों के शरीर के अतिरिक्त मेरे पास कुछ भी नही हैं ।३७। विश्वामित्र बोले-यदि इन तीनों शरीर के अतिरिक्त कुछ और नही हैं तो भी यज्ञ की दक्षिणा तो देनी ही होगी क्योंकि ब्राह्मण से कही वस्तु न देने से सब कुछ नष्ट हो जाता हैं।३८हे नरेश राजसूय यज्ञ में ब्राह्मण जिस वस्तु से सन्तुष्ट हो वही उसकी यज्ञ दक्षिणा है ३९ तुम्हारी तो प्रतिज्ञा है कि अंगीकृत दान आततायी से युद्ध और आर्त्त पुरूष की रक्षा करनी चाहिए ।४० हरिश्चन्द्र

बोले--हे ब्रह्मर्षे ! आप साधुत्व को अवलम्बन करके प्रसन्न हों, इस समय पास कुछ नही है, काल क्रम से आपको दूंगा ।४१। विश्वामित्र ने कहा-हे राजन ! मैं कब तक प्रतीक्षा करू ? मुझे शीघ्र बताओ नहीं तो शापानल म भस्म हो जाओगे ।४२।

मासेनतव विप्रर्षेप्रदास्येदक्षिणाधनम् ।
साम्पतनास्तिभेवित मनुज्ञातुमर्हसि ।४३
गच्छगच्छ नृपश्रेष्ठस्वधर्ममनुपालय ।
शिवश्चतेऽध्वाभवतुमासन्तुपपरिपन्थिनः ।४४
अनुगातः सगच्छेतिजगामत्ररुधधपिपः ।
पद्भयामनुचितागन्तुमन्वगच्छच्चत्त प्रिया ।४५
तसभार्य नृपश्रेष्ठं निर्यान्तिससुतंपुनात् ।
दृष्ट्वाप्रचुक्रुशु, पौरराज्ञश्चवनुयायिनः ।४६
हानाथिजहास्यस्मान्नित्यात्तिपरिपीडितात् ।
त्वथममत्परोजन्पौरानुग्रहकृत्ताथा ।४७
नयान्स्मानपिरीराजर्षे यदिधर्ममवेक्षवे से
मुहूर्तं निष्ठराजेन्द्रभवतोमुखपङ्कजम्:४८
पिवामीनेत्रमरःकशाद्रक्ष्यामहेबुनः।
यस्याप्रयातस्ययुरीयान्तिपर्षोच पृथिवाः ।४९
तस्ययानुयातिभार्यं ग्रहीत्वाबालकं सुतम् ।
यत्यभृत्याः प्रयातस्ययान्त्यग्रोकुञ्जरस्थिताः ।५०
सएषपदभयाराजेन्द्रोहरिश्चन्द्रोद्यगच्छति ।
हाराजन्सुकुमार तेसुभ्रु सुत्वचमुन्नसम्

हरिश्चन्द्र ने कहा-हे ब्रह्मन् ! मेरे पास कुछ भी नही है, एक माम मे आपकी दक्षिणा उपस्थित कर दूंगा,इसलिए आज्ञा दीजिए।४३। विश्वामित्र ने कहा-हे भूपश्रेष्ठ! जाओ, अपने धर्मके पालनार्थ गमनकरो तुम्हारे विघ्न दूर हों और तुम्हारा कल्याण हो ।४४। पक्षियों ने कहा--हे मुनिश्रेष्ठजैमिने!फिर वह राजर्षि हरिश्चन्द्र मुनिश्रेष्ठ विश्वामित्रद्वारा जाने का अनुमोदन प्राप्त कर चल दिये, रानी शैव्या भी उनके पीछे-२

चली ।४५। इधर नगर में रहने वाले प्रजाजन पुत्रादि के रहित राजा को जाते देखकर ऊंचे स्वर से रोते हुए उनके पीछे चलने लगे ।४६। हे महाराज ! यदि आप धर्म में रहने वाले और अनुग्रह पूर्वक प्रजा के पालन मे तत्पर रहने वाले हैं तो अपनी प्रजा का किस लिए त्यागकर रहे है ? ।४७। हे राजर्षि ! यदि आप धर्म की ओर देखें तो हमको भी साथले चलें, हे राजेन्द्र ! कुछ समय के लिए तो ठहरिये हम एकबार आपके मुखारविंद को ।४८। भौंरों के समान पान कर सके, फिर कब आपका दर्शन हो सकेगा ? जिनके चलते समय भूमण्डल के सभी नरेश आगे पीछे गमन करते थे ।६। उन्ही राजा हरिश्चन्द्र की पत्नी आज अपने बालक को लिये उनका अनुगमन कर रही । जिनके चलते समय सभी भृत्य हाथियों के मस्तक पर चढकर आगे आगे दौड़ते थे ।१०। आज वे राजेन्द्र स्वयं पदयात्रा कर रहे थे ।

पथिपांसुपरिक्लिष्टं मुखंकीदृग्भविष्यति ।
तिष्ठतिष्ठनृपश्रेष्ठस्वधर्म मनुपालय ।५२
आनशस्य परोधर्मः क्षत्रियाणांविशेषतः ।
किंदारैः-किंसुतैः किंधनैर्धान्यैरथापिवा ।५३
सर्वमेतत्परित्यज्यच्छायभूतावयंतव ।
हानाथहामहाराजहास्वामिन्किंजहासिन ।५४
यत्रत्वंतत्राहवयं तत्सुखंयत्रवैभवान् ।
नगरंतद्भवान्यत्रसस्वर्गोयत्रनोनृपः५५
इतिपौरवचःश्रुत्वाराजाशोकपरिप्लुता: ।
अतिष्ठत्सतदामार्गे तेषमेवानुकम्पया ।५६

आपका यह शोभायमान मुख मन्डल मार्ग म धूल धूसरित हो जायगा, उस समय कितनी सोचनीय अवस्था होगी ? इसलिए आप मत जाइये यही रहकर अपना धर्म-पालन कीजिये ।५।क्षत्रियों का मुख्यधर्म हमको पुत्र धन अथवा धान्यादि किसी वस्तु की भी आवश्कता नही है ।३३। हम भी सर्वस्व त्याग कर आपके साथ छाया के समान रहेंगे, इसलिए हे प्रभो आप हमारा त्याग न कीजिये ।५४। जहाँ आप जायगे ,वहीं हम जायेंगे,जहाँ आपको सुख है, हमको भी होगा' जहां

आपरहेंगे, वही हमारा नगर है, जहाँ राजा निवास हो वही स्वर्ग है ।५५। प्रजा के इस प्रकार वचन सुनकर राजा हरिश्चन्द्र शोक मग्न हो गए और उनकी दशा को देखकर कुछ समय मार्ग में खड़े रहे ।५६।

विश्वामित्रोऽपि नं दृष्ट्वा पौरवाक्याकुलीकृतम् ।
रोषामर्षविवृताक्षः समागम्य वचोऽब्रवीत् ।५७
धिक्त्वादुष्टसमाचारमनृतं जिह्मभाषिणीम् ।
ममराज्य च दत्त्वाय. प्राकृष्टु मिच्छसि ।५८
इत्युक्तःपुरुष तेनगच्छामीतिसवेथु ।
ब्रू वन्नेवययौशीघ्रमाकर्षन्दयितांकरे ।५९
कर्षतस्तांतनो भार्यामुकुमारीश्रमातुराम् ।
सहसादण्डकाष्ठेनताडयामासकौशिकः ।३०
तांतथाताडितदृष्टावाहरिश्चन्द्रोमहीपतिः ।
गच्छामीत्याहदुःखार्तो नान्यत्किञ्चिदुदाहरद् ।६१
अथविश्वेतदादेवाः हैचाप्रालुः कृपालवः ।
विश्वातितः सुपापोऽय लोकान्कान्समवाप्स्यति ।६२
येनाय यज्वाँश्रेष्ठःस्वराज्यादवरोमतः ।
कस्यवाश्रद्धयापूतसुत सोम मसाध्वरे ।
पोत्वावय प्रयास्यामोमुदम मन्त्रपुरःसरम् ।६३

तभी प्रजा के वचनों से राजा को आकुल हुआ देखकर विश्वामित्र आ पहुंचे और रोष पूर्वक घूरते हुए कहने लगे । ७ । हुए ! मिथ्याबादिन ! इस सम्पूर्ण राजस्व को अब पुनः मुझसे लें लेना चाहता है, तुझे धिक्कार है। ८। इस प्रकार विश्वामित्र के वचन सुनकर जाता हूं, कहते हुए राजा हरिश्चन्द्र कम्पित गात से चलने को उद्यत हुए और उन्होने शैव्या का हाथ खीचा ।५९। कोमलांगी शैव्या अत्यन्त थक गई थी, राजा उसे चलने को खीच रहे थे फिर भी विश्वामित्र अपने डन्डे से रानी की पीठ में आघात करने लगे ।६० पृथ्वी पति हरिश्चद्र शैव्या को इस प्रकार ताडित होते देखकर अत्यन्त दुःखी हुए फिर भी इतना ही बोले कि भगवान मैं जा रहा हूं

।६१। यह देखकर पाँच जल लोकपाल, विश्वदेवा देवताओं ने दया पूर्वक कहा — इस पापात्मा विश्वामित्र ने श्रेष्ठ राजा हरिश्चन्द्र को राज से भ्रष्ट कर दिया, इसकी कौन-सी गति होगी ? अब हम किसके यज्ञ में सोम पान करके आनन्द को प्राप्त होंगे ? ।६२-६३।

इतितेषाँवचः श्रुत्वाकौशिकोऽतिरुषान्वितः ।
शशापतान्मनुष्यत्वसर्वे यूयमवाप्स्यथ ।६४
प्रस दितिश्चतैः प्राहपुनरेवमहामुनिः ।
मानुषत्वेऽपिभवताभवित्रीनैवसन्ततिः ।६५
नदारसग्रहश्चवभवितानचमत्सर ।
कामक्रोधविनिर्मुक्ताभविष्यथसुराः पुनः ।६६
ततोऽवतेरुरशःस्वैदेवास्तेकुरुवेश्मनि ।
द्रौपदीगर्भसम्भूता पंचवपाण्डुनन्दनाः ।६७
एतस्मात्कारणाष्पचपाण्डवेयामहारथाः ।
नदारसग्रहं प्राप्ताः शापात्तस्यमहामुनेः ।६८
एतत्तेसर्वमाख्यात्त पाण्डवेयकथाश्रयम् ।
प्रश्नचतुष्टयंगीतकिमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ।६९

पक्षियों ने कहा कि उन पांचों विश्वदेवों के वचन से नष्ट होकर विश्वामित्र ने शाप दिया कि अरे पापात्माओं ! तुम सब मनुष्य योनि ग्रहण करोगे ।६४। इस पर विश्वदेवों के प्रार्थना करने पर विश्वामित्र ने प्रसन्न होकर कहा कि तुम यद्यपि मनुष्य तो होगे परन्तु स्त्री सम्पर्क और सन्तानोत्पत्ति से दूर रहोगे ।६५। तुम मात्सर्य से बचे रहोगे और काम क्रोधादि से परे रहोगे ।६६। फिर वही विश्वदेवा द्रोपदी के गर्भ से पाण्डवो की सन्तान रूप में उत्पन्न हुए ।६७। हे महामुने ! विश्वामित्र के शापवश ही उन पाँचों महारथी द्रोपदी-पुत्रों का विवाह नहीं हुआ ।३८। पाण्डवों की कथा के आश्रय से तुम्हारे चारों प्रश्नों का उत्तर दिया जा चुका अब और क्या सुनना चाहते हो, सो कहिए ।६९।

॥ इति श्री मार्कण्डेय पुराण द्रोपदेत्योत्पत्ति कथन ॥

८-राजा हरिश्चन्द्र की कथा

भवद्भिरिदमाख्यातंयथाप्रश्नमनुक्रमात् ।
महत्कौतूहलमेऽस्तिहरिश्चन्द्र कथांप्रति ।१
अहोमहात्मनानेनप्राप्तकृच्छमनुत्तमम् ।
कच्चित्सुखमनप्राप्तताहगेवद्विजोत्तमाः ।२
विश्वामित्रवचश्श्रुत्वासराजाप्रययौशनैः ।
शैव्ययानुगतोदुःखाभार्ययाबालपुत्रया ।३
सगत्वावसुधापालोदिव्यांवाराणसींपुरीम् ।
नैषामनुष्यभोग्याहिशूलपाणेः परिग्रहः ।४
जगामपद्भ्यांदुःखार्तः सहपत्न्यानुकूलया ।
पुरीप्रविश्यददर्शविश्वामित्रमुपस्थितम् ।५
तद्दृष्ट्वासमनुप्राप्त विनतावनतोऽभवत् ।
प्राहचैवाञ्जलिकृत्वाहरिश्चन्द्रोमहामुनिम् ।६
इमप्राणाः सुतश्चन्यमियपत्नीनुनेमम् ।
येनतेकृत्यमस्त्य सुतदग्रहाणाघ्यंमुसुमम् ।७
यतान्यत्कार्यमस्माभिस्तदनुज्ञातुमर्हसि ।८

जैमिनी बोले-हे द्विजश्रेष्ठ ! मेरे प्रश्नो का आपने क्रमानुसार समाधान कर दिया । अब मुझे हरिचश्न्व की कथा में अत्यन्त कुतूहल है ।१ उन महात्मा ने कितना कष्ट पाया ? क्या वैसे ही सुख की प्राप्ति भी हुई ? ।२। पक्षियों ने कहा-विश्वामित्र के वचन सुनकर राजा दुःखी हृदय से धीरे-धीरे चल पड़े तथा बालक पुत्र लिए हुए उनकी रानी भी साथ हो चली ।३। वह वहाँ से चलकरवाराणासी पहुंचे, क्योंकिशूलपाणि शंकर द्वारा निर्मित वह नगर मनुष्यों के लिऐ नहीं है ।४। दुखित चित्त से चिन्ता करते हुए राजा पत्नी के सहितपैदलही वाराणसी मेंगए और उन्होंने वहाँ सामने ही मुनिवर विश्वामित्र को खड़े देखा।५।राजा हरिश्चन्द्र ने उन महामुनि को वहाँ आया देखकर हाथ जोड़े औरविनय पूर्वक कहा ।६। हे प्रभो ! अब तो मेरा प्राण, पत्नी और पुत्र यहीशेष

है। इनमें से जिसे स्वीकार करना चाहे वही आपको अर्घ्य स्वरूप दिया जाय।७। इसके अतिरिक्त आप जैसी आज्ञा दें वैसे मैं करूँ।८।

पूर्ण समासोराजर्सेदीयतांमभदक्षिणा।
राजसूयनिमित्तींहिस्मयंतेस्वचोयदि।९
ब्रह्मन्नद्यैवसंपूर्णामासोऽम्लानतपोधन।
तिष्ठत्येतद्दिनार्धयत्तत्प्रतीक्षस्वमाचिरम्।१०
एवमस्तुमहाराजआगमिष्याम्यहं पुनः।
शापं तवप्रदास्यामिनचेदद्यप्रदास्यसि।११
इत्युक्त्वाप्रययौविप्रोराजाचाचिंतयत्तदा।
कथमस्मैप्रदास्यामिदक्षिणायाप्रतिश्रुता।१२
कुतः पुष्टानिमित्राणिकुतोऽर्थः सांप्रतमम।
प्रतिग्रहः प्रदुष्टोमेनाहृयायामधः कथम्।१३
किंनुप्राणान्विमुञ्चामियांदिशयाम्यकिञ्चनः।
यदिनाशंगमिष्यामिअप्रदायप्रतिश्रुतम्।१४
ब्रह्मस्वहृत्कृमिः पापोभविष्याम्यधमाधमः।
अथवाप्रेष्यतांयास्येवरमेवात्मविक्रयः।१५

इस पर विश्वामित्र ने कहा—आपने राजसूय यज्ञ के उपलक्ष्य में जो दक्षिणा एक मास बाद देने को कहा था उसका समय पूरा हो चुका अब उसे तत्काल दो।९। हरिश्चन्द्र ने निवेदन किया हे ब्रह्मन्! एक मास आज संध्या तक पूरा होगा- अभी आधा दिन शेष है, आप उतनी देर और प्रतीक्षा कीजिए, उसी समय मैं चुका दूंगा।१०। विश्वामित्रजी बोले—हे राजा यही हो महाराज! मैं संध्या के समय आऊंगा यदि उस समय दक्षिणा नहीं दोगे तो तुम्हें शापग्रस्त होना पड़ेगा।११। पक्षियों ने कहा कि इस प्रकार कहकर विश्वामित्र तो चले गये और राजा यह चिन्ता करने लगे कि इनको वह दक्षिणा किसप्रकार दी जा सकती है। इस समय न तो मेरा कोई अर्थ-सम्पन्न बान्धव यहां है और न सम्पदा में से कुछ शेष रहा है। ऐसी दशा में क्या मुझे दान न चुकाने के लिए पतित होना पड़ेगा।१२-१३। अब तो मेरे पास कुछ भी नहीं रहा। मैं कहाँ जाऊं? अगर अंगीकार की हुई

वस्तु को दिए बिना मै प्राण भी त्याग दूँ तो वह भी एक पापकर्म होगा और ब्रह्मअंश को हरण करने के पाप से या तोमैं कृमयोनि मे जाऊंगा अथवा आत्मा को बेच कर सन्यासी होना पड़ेगा ।५।

राजानंव्याकुलदीन चिन्तयानमधोमुखम् ।
प्रत्युवाचतदापत्नीवाष्पद्गदयागिरा ।१६
त्यजचिन्तामहाराजस्वमत्यमनुपालय ।
श्मशानवद्वर्जनोयोनरः सत्यवहिष्कृतः ।१७
नातः परतरं धर्मदन्तिपुरुपस्यतु ।
यादृशपुरुषव्याघ्रस्वसत्यपरिपालनम् ।१८
अग्निहोत्रमधीतवादानाद्यश्चाखिलाः क्रियाः ।
भजन्तेतस्यवैफल्ययस्यवाक्यम कारणम् ।१६
सत्यमत्यन्तमुदितधर्मशास्त्रे सुधीमताम् ।
तारणायानृतंतद्वत्पातनायाकृतात्मनाम् ।२०
सप्ताश्वमेधानाहृत्यरासूयं त्रपार्थिवः ।
कृतिर्नामच्युतः स्वर्गादसत्यवचनात्सकृत् ।२१
राज्ञातमपत्य मेइत्युक्त्वाप्ररुरोदह ।
वाष्पाम्बुप्लुतनेत्रातामुवाचेदं महीपतिः ।२२

पक्षियो ने कहा हे मुने ! इस प्रकार राजा को नीचा मुख किये घोर चिन्ता मे देखकर रानी शय्या ने आँसू बहाते हुए गद्गदकण्ठ सेकहा— हे महाराज ! चिन्ता मत कीजिये औरजा वचन दिया है उसका पालन कीजिए । क्योकि असत्य व्यवहार करने वाला व्यक्ति श्मशान के समान त्याज्य है ।१६-१७। वचन के असत्य होने पर अग्निहोत्र, फल, वद-पठन और दान आदि सभी सकर्म व्यर्थ हो जाते है. हे महावीर ! विद्वानो का कथन है कि सत्य-पालन का जितना महान् धर्म होता है । वैसा किसी अन्य प्रकार नहीं होता है ।१८। धर्म-शास्त्रों का यही मतहै कि सत्य वचन मनुष्य को तारने वाला और असत्य नीचे गिराने वाला है ।१६-२०। हे पृथ्वी नाथ ! आपने सात अश्वमेघ करके राजसूय यज्ञ किया है इस समय पर क्यों एक छोटी-सी बात के लिए उस सब को नष्ट करने पर स्वर्ग से वंचित होंगे ।२१। हे

महाराज ! मेरे सन्तान हो चुकी है'' इतना कहकर वह रोने लगी । तब राजा उस अश्रु वर्षा करती हुई रानी से कहने लगे ।२२।

विमुचभद्रे सतापमयंतिष्ठति बालकः ।
उच्यतांवक्तुकामासियद्वात्वगजगामिनी ।२३
पाजञ्जातमपत्यंमेसतांपुत्रफला: स्त्रियः ।
समांप्रदायवित्तेनदेहिविप्रायदक्षिणाम् ।२४
एतद्वाक्यमुपश्रुत्ययर्यौमोहमहीततिः ।
प्रतिलभ्यचसंज्ञासविललापातिदुःखितः ।२५
महद्दुखमिदंभद्रे यत्वमेवंब्रवीषिमाम् ।
किंतवस्मितसंल्लापाममपाहस्यविस्मृता: ।२६
हाहाकथात्वयाशक्य वक्तुमेतच्छुचिस्मिते ।
दुर्वाच्यमेपदुचनं कर्त्तुं शक्तोम्यहं कथम् ।२७
इत्युक्त्वासनश्रेष्ठौधिग्धिगित्यकृदश्रुवन् ।
निपपातमहीपृष्ठेमूर्च्छाभिपरिप्लुत ।२८

राजा हरिश्चन्द्र ने रानी से कहा—शोक को त्याग करजोकहने की इच्छा हो कहो । तुम्हारी सन्तान तो यह मोजूद ही है ।२३। रानीबोली—हे महाराज ! मेरे सन्तान हो गई है इसी उद्देश्य मे साधु पुरुषोंकोपत्नी को आवश्यकता होती है।इससे अब आप मुझें बेचकर ऋषि की दक्षिण चुका दें ।२४। पक्षियों ने कहा——राजा हरिश्चन्द्र अपनी भार्या काऐसो वचन सुनकर शोक से मूर्च्छित से हो गये । फिर चैतन्यहोकर दुःखप्रकट करते हुए कहने लगे हे प्रिये जो कुछ कहा वह अत्यन्त कष्टदायक है यह पापी हरिश्चन्द्र क्या स्मितपूर्वक भाषण करना भूल गया ।२५-२६ नहीं तो तूम्हारे मुख से ऐसी अशुभ बात क्यों निकलती और मैं भीऐसे वचन सुनकर किस प्रकार सहन करता ।२७। राजा हरिश्चन्द्र इसप्रकार कहकर अपने को धिक्कारते हुए पृथ्वी पर गिरकर बेसुध हो गऐ ।२८।

शयानं भूवितंदृष्ट्वाहरिश्चन्द्र महापतिम् ।
उवाचेदकरुणंराजपत्नीसुदुःखिता: ।२६
हामहाराजकस्येदमपध्यानमुपस्थितम् ।

यत्रनिपतितोभूमौराङ्रुत्रास्तरणोचितः ।३०
येनकोटयग्रशोवित्तविप्राणामपवर्जितम् ।
सएषपृथिवीनाथोभूमोस्वपितिमेपतिः ।३१
हाकष्टंकितवानेनकृतदेवमहीक्षिता ।
यदिद्रोपेन्द्रतुल्योऽप्यनीतः पापाभिमांदशाम् ।३२
भर्तृदुःखमहाभारेणासह्येननिपीडिया; ।३३
तौततापतितौभूमावनाथौपितरौशिशूः ।
दृष्टवात्यंतसुधाविष्टः प्राहवाक्यमुदुःखित ।३४
तातातवदस्वान्नभम्वाम्वभोजनदः ।
क्षुन्मेबलवजाताजिह्वाग्रं शुष्यतेतथा ।३५

महाराज हरिश्चन्द्र को इस प्रकार पृथ्वी पर लेटते देख महारानी शैव्या अत्यन्त दुःखी हुईं और करुण स्वर से कहने लगी कि आज कैसे कष्ट का दृश्य देख रही हूँ कि जो महाराज मृग चर्म की कोमल शैय्या पर शयन करते थे वे आज इस प्रकार कठोर भूमि पर पड़े हैं।२९-३० जिन्होने करोड़ों गौऐं ब्राह्मणो को दान दी वही पृथ्वीनाथ हरिश्चन्द्र भूमि पर पड़े हैं।३१। हा दैव ! इन्होंने कौनसा ऐसा अपराध किया है, जिससे एक उपेन्द्र की समता वाले पुरुष को पापियों की सी दुर्दशा हो रही है।३२। इस प्रकार महारानी शैव्या शोक संतप्त होती हुई अचेत होकर मूर्च्छित हो गई। जब राजपुत्र ने माता और पिता को इस प्रकार बेसुध पड़े देखा और उसे भूख भी लगी तो रोकर कहने लगी–हे तात ! हे माता ! मुझको बड़ी भूख लगी है, भोजन दो । मेरी जीभ सूख रही है।३३-३४-३५।

एतस्मिन्नन्तरेप्राप्तोविश्वामित्रोमहातपाः ।
कालकल्पइव क्रुद्धोधनंसमार्गितुतदा ।
दृष्टवातुंहरिश्चन्द्रापतितोभुविमूर्च्छितः ।३६
सवारिणासमभ्युक्ष्यराजानमिदब्रवीत् ।
उत्तिष्ठोत्तिष्ठराजेन्द्रतांददस्वेष्टदक्षिणाम् ।
ऋणंधारयतोदुःखमहन्यहनिवर्द्धते ।

आप्यायमानः सतदाहिम ीतेनवारिणा ।३८
अवाप्यचेतनांराजाविश्वामित्रमवेक्ष्यच ।
पुनर्मोह समापेदेसचक्रोध ययौमुनिः ।३९
ससमाश्वास्यराजनं वाक्यमहाद्विजोत्तमः ।
दीयतांदक्षिक्षासामेयदिधर्ममवेक्षसे ।४०
सत्येनार्कः प्रतपतिसत्तेतिष्ठतिमेदिनो ।
सत्यंचोक्त परोधर्मः स्वर्गः सत्येतप्रतिष्ठः ।४१
अश्वमेघसहस्राद्धिसत्य चतुरयाधृतम् ।
अश्वमेघसहस्राद्धिस।यमेवविशिष्यते ।४२

पक्षियों ने कहा कि उसी महात्मा विश्वामित्र अत्यन्य क्रोध प्रकट करते हुए वहां आ पहुँचे । उन्होंने जब राजा को मूच्छित अवस्था में पृथ्वी पर पड़े देखा तो जल के छींटे देकर उसे चैतन्य किया और कहा——राजन् ! उठकर मेरी दक्षिणा दो, क्योंकि जबतक तुम परयह ऋण बना रहेगा तब तक दुःख इसी प्रकार बढ़ता रहेगा । शीतल जलकेस्पर्श से राजा हरिश्चन्द्र चैतन्य हुए, पर सामने ही विश्वामित्र को खड़ादेख कर फिर मूच्छित हो गए तब विश्वामित्रजी ने कहा——हे राजा यदि तुम धर्म की रक्षा करना चाहते हो तो मेरी दक्षिणा देने में बिलम्ब न करो ।३६ से ४०। सूर्य सत्य के बल ही से ही तपते है, पृथ्वी सत्यको महिमा से ही टिकी है सत्य ही सबसे बड़ा धर्म है और स्वर्ग भी एक मन्त्र सत्त के ऊपर ही स्थित है ।४१। अगर एक तराजू के पलड़े पर सत्य को रखी जाय और दूसरे पर हजार अश्व में यज्ञो के फल को तो सत्य का पलड़ा ही भारी रहेगा ।४२।

अथवाकिंममैतेनसाम्नाप्रोक्तेनकारणम् ।
अनाय पापसकल्पेक्रूरेचानृतवादिनि ।४६
त्वयिराज्ञिप्रभवतिसद्भावा श्रूयतामयतम् ।
अद्यमदक्षिणाँराजन्नदास्यतिभवान्यदि ।४४
अस्ताचलप्रयातेऽर्केशप्स्यामित्वातोध्रुवम् ।
त्युक्त्वासययौविप्रोराजाचासीद्भातुरः ।।४५
कन्दिग्भूतोऽधनोनि.नृश सघनिनादितः ।

भार्यास्यभूय:प्राहेदंक्रियतांवचनमम ।४६
माशापानलनिर्दग्ध:पचत्वमुपयास्यसि ।
सतयाचोद्यमानस्तुराजापत्यापुन:पुन: ।४७
प्राहभद्रेकरोम्येषविक्रयंतवनिर्घृण. ।
नृशंसैरपियस्कर्तुंनशक्यतत्करोम्यहम् ।४८
यदिमेशक्यतेवाणीवक्तुमीदृक्सुदुर्वच: ।
एवमुक्त्वाततोभार्यागत्वानगरमातुर: ।
बाष्पाहितकण्ठाक्षस्ततोवचनमब्रवीत् ।४९

पर जाने दो, मुझे अनार्य, पापी, क्रूर, मिथ्यावादी राजा को समझाने बुझाने की आवश्यकता ही क्या है ।४३। मैं स्पष्ट रूप से कहे देता हूँ कि यदि तुम आज मेरी दक्षिणा नहीं दोगे, तो सूर्य के अस्ताचल गामी होते ही मैं निश्चय रूप से शाप दे दूँगा? विश्वामित्र ऐसा कहकर वहाँ से चले गये, और राजा ब्रह्म शापकी आशंका से अत्यन्त घबराने लगे कि अब दक्षिणा कहां से और कैसे चुकाऊं । मैं तो इस समय पूर्णत: निर्धन हूं और धन वाले बड़े कठोर है । अब किस प्रकार करने से ठीक होगा? हम कहाँ जायें ? यह देख कर रानी शैव्या ने कहा कि महाराज मैंने आपसे कहा है वही कीजिये ।४४-४५-४६। जब यह उपाय मौजूद है तो ऋषि के शाप से ग्रस्त होकर नाश को प्राप्त होने की क्या आवश्यकता है । इस प्रकार पत्नि के बार-बार आग्रह करने पर हरिश्चन्द्र ने कहा-अच्छा मैं इस घृणित कार्य को भी करूँगा, यद्यपि यह मेरी सामर्थ्य के बाहर है तो भी यही करूंगा ४७-४८। देखता हूं कि मैं ऐसे कठोर वचन कह भी सकता हूँ या नहीं ? तब नगर में गये और आँसुओं को जबर्दस्ती रोक कर कहने लगे ।४९।

भोभोनागरिका:सर्वेश्रृणुध्ववचनमम ।
किमपृच्छथकस्त्वभोनृशंसोऽहममानुष ।५०
राक्षसोवातिकठिनस्तत:पापतरोऽपिवा ।
विक्रेतुंथितांप्राप्तोयोनप्रणांस्त्यजम्यहम् ५१
यादिव:कस्यचित्कार्यंदास्याप्राणोष्ठयामम ।
सब्रवीतुत्वरायुक्तोयावत्सन्धारय:म्यहम् ।५२

अथवृद्धोद्विज.कश्चिदागत्याहनराधिपम् ।
समर्पयस्वमेदासीमहंक्रेताधनप्रदः ।५३
अस्तिमेवित्तमस्योकंसुकुमारीजमेप्रिपा ।
गृहकर्मनशक्तोमिकर्त्तुमस्मात्प्रयच्छमे ।५४
कर्मण्यतावयोरूपशीलानांतवयोषितः ।
अनुरूपामिदंवित्तंगृहाणापियमेऽक्नाम् । ५५
एवमुक्तस्यविप्रेणहरिश्चन्द्रस्यभूपतेः ।
व्यदीर्य्यतमनोदुःखान्नचैनंकिंचिदब्रवीत् । ५६

राजा कहने लगे—यदि आप जानना चाहते है कि मैं कौन हूँ, तो मैं बतलाऊँगा कि मैं एक नृशंश अत्याचारी हूँ, मनुष्य नहीं हूँ। मैं राक्षस हूँ या उससे भी अधिक निर्दयी हूँ, पापात्मा हूँ। क्योंकि प्राणप्यारी पत्नी को बेचने के लिए तैयार होने पर भी मेरा प्राण नहीं निकला ।५०-५१। अस्तु जब तक संध्या न हो, और मेरा प्राण देह के भीतर रहे तब तक इस मेरी प्राणों से प्यारी दासी को यदि खरीदना चाहो तो कहो ।५२। पक्षी बोले — उसी अवसर पर ऐक बूढ़े ब्राह्मण ने वहा आकर कहा—मुझे दासी की आवश्यकता है मैं उसका मूल्य देने को तैयार हूँ। मेरे पास पर्याप्त धन-सम्पत्ति है और मेरी स्त्री बड़ी कोमल है जिससे घर का काम नहीं कर सकतीं अतएव यह दासी मुझे दे दो ।५३-४। तुम इस अपनी स्त्री की कार्य दक्षता, अवस्था, रूप और स्वभाव के अनुपम यह अर्थ राशि लेकर इसे मुझे दो ।५५। ब्राह्मण के वचनों को सुनकर शोक से राजा का हृदय फटने लगा और उससे कुछ उत्तर नहीं दिया जा सका ।५६।

ततः सविप्रोनृपतर्वल्कलान्तेदृढ़धनम् ।
बद्धाकेशेष्वथादायनृपपत्नीमकर्षयत् ।५७
रुरोदरोहितास्योऽपिदृट्वाकृष्टांतुमातरम् ।
हस्तेनवस्त्रमाकर्षन्काकपक्षधरःशिशुः ।५८
मुंचार्यमुंचतावन्मांयावत्पश्याम्यहंशिशुम् ।
दुर्लभ दर्शनंतातपुनरस्यभविष्यति ।५९
पश्येहवत्समामेवमातरंदास्यतांमताम् ।

मांनाम्क्षीराजपुत्रअस्पृयाहंतावाधुना ।६०
ततःसबाल;सहसाद्दष्टवाक्रुष्टांतुमातरम् ।
समभ्यधावदम्बेतिरून्नस्राविलेक्षणः ।६१
तमागः द्विज क्रोधाद्वालमभ्याहनत्पदा ।
वदस्तथापिसोऽम्बेतिनैयामुंचतमातरम् ।६२
प्रसादंकुरूमेनाथक्रिणोष्वेमंचबालकम् ।
क्रीतापिनाहंभवतोविनैनंकार्य्यसाधिका ।६३
इत्थंममाल्यभाग्याथाःप्रसादसुखोभव ।
मांसयोजयबालेनवत्सेगेवपयस्विनीम् ।६४

तब उस ब्राह्मण ने दासी के मूल्य स्वरूप वह धनराशि राजा के वस्त्र से बांध दी और रानी को वे पकड़ कर ले जाने लगा ।५७। यह देख कर उसका पुत्र रोहिताश्व उसका आचल खींचता रोने लगा ।५८। रानी ने ब्राह्मण से कहा—हे आर्य ! मुझे जरा देर के लिए अपने पुत्र को प्यार कर लेने दो, फिर मैं इसे कहाँ देख सकूंगी? हे पुत्र ! अब मैं तुम्हारी माता दासी हुई हूं, इससे अब मुझे मत छूना, मैं अब इस योग्य नही रही ।५९-६०। इसके पश्चात् बालक माता को खिचती हुई जाती देखकर रोते-रोते "माँ-माँ" कहता हुआ उसके पीछे दौड़ा ।६१। वृद्ध ब्राह्मण ने गुस्सा होकर उसे जोर से एक लात मारी पर वह बालक "मां मां" रहकर दौड़ता ही रहा और उसने किसी प्रकार माता को न छोड़ा ।६२। रानी ने ब्राह्मण से कहा—हे स्वामी ! कृपा करके इस बालक को भी खरीद लीजिये, क्योंकि यद्यपि मैं बिक चुकी, पर इस बालक के बिना मुझसे काम नहीं किया जायगा । इसलिये आप मुझ अभागिनी पर दया कीजिये कि जिस प्रकार दूध देने वाली गाय को बछड़े के संग ही लाया जाता है उसी प्रकार इस बालक को भी मेरे साथ ही रहने दीजिये ।६३-६४।

गृह्यतांवित्तमेतत्ते दीयताँबालकोमम ।
स्त्रीपुंसोर्धमशास्त्रज्ञैः:कृतमेवहिवेतनम् ।
शतंसहस्त्रंलक्षचकोटिमूल्यंतथापरै ।६५
तथैवतस्यतद्वितंबद्धोत्तरपटेततः ।

प्रगृह्यबालकमात्रासहैकस्थमबन्धवत् ।३६
नीयमानौतुतौदृष्टवाभार्य्यापुत्रौसपर्थिवः।
विललापसुदुःखार्तनिःस्योष्णपुनःपुनः ।६७
यानवायुर्नचोदित्योनेन्दुर्नचपृथग्जनः ।
दृष्टवत पुरापत्नीयेयदासीत्वमागता ।६८
सूयवंशप्रसुतोऽयंसुकुमारकरांगुलिः ।
संप्राप्तीविक्यबालोधिड मामस्तुमुदुर्मतिम् ६९
हाप्रियेहाशिशोवत्समममानार्यस्यदुर्नयः ।
दैवाधीनांदशांप्राप्तानमृतोऽस्मितथापिधिक ।७०

ब्रह्मण ने कहा-अच्छा, बालक को भी मुझे दो और उसके बदल में यह धन ग्रहण करो। धर्म शास्त्रो मे स्त्री पुरुष दोनो का ही मूल्य शत, सहस्त्र, लक्ष व करोड़ मुद्रा बतलाया है।६५। पक्षियो ने कहा—हे जैमिने! यह कह कर उस ब्राह्मण ने वह धन भी राजा के वस्त्रो मे बांध दिया और रानी तथा उसके पुत्र दोनोको बाँध कर ले गया।६६। राजा हरिश्चन्द्र पत्नी और पुत्रका इसप्रकार विलय होना हुआ देख कर लम्बी साँस लेकर अत्यन्त शोक करने लगे कि जिसको वायु, सूर्य, चन्द्र व बाहरी व्यक्ति भी अभी तक नही देख पाते थे उसको आज इस प्रकार दासी बनना पड़ा।६७-६८। जिस छोटे बालक ने सूर्य वंशमें जन्मलिया और जो अभी अत्यन्त कोमल है उसको भी बिकना पड़ा, यह मेरी दुर्बुद्धि हैं जिसके लिऐ मै निन्दा का पात्र हूँ।६९। मेरे अन्याय युक्त आचरण के कारण ही इन निर्दोषों की ऐसी गति हुई, पर खेद है अब भी मेरे प्राण नही निकलते।७०।

एवंविलपतोराज्ञःसविप्रोऽन्तरधीयत ।
वक्षगेहादिभिस्तू गैस्तावादायत्वरान्वितः ।७१
विश्वामित्रस्ततःप्राप्तोनृपवित्तमयान्वत ।
तस्मैसमर्पयामासहरिश्चन्द्रोऽपितद्धनम् ।७२
तद्वित्तस्नोकमालोक्यदारविक्रयसंभवम् ।
शोकाभिभूतराजानकुपित.कौशिकोऽब्रवीत् ।७३
क्षणबंधोममेमांत्वसदृशीयज्ञदक्षिणाम् ।

म-यसेयदितस्क्षिप्रपश्यत्वमेबलपरम् ७४
तपसऽत्रसुतप्तस्यब्राह्मणण्यस्यामलस्यच ।
मत्प्रभावस्यछोग्रस्यशुद्धस्याध्ययनस्यच ७५
आन्यादस्यामिगगतन्कालःकश्चित्प्रतीक्ष्ययाम् ।
अनृतनास्तिविक्रीतापत्नीपुत्रश्चबालकः ७६
चतुर्भाग.स्थितोयोऽयदिवसस्यनराधिप ।
एषएवप्रतीक्ष्योमेवक्तव्यनोत्तरत्वया ।७७

पक्षियो ने फिर कहा-राजा हरिश्चन्द्र तो इस प्रकार विलाप करते रहे और उधर वह ब्राह्मण रानी और कुमार को लेकर वृक्षों और महलोंकी आड में चला गया ।७१। उस समय विश्वामित्र मुनि ने आकर राजा से दक्षिणा का धन देनेको कहा तो जितनी मुद्रायें उस के पास थी वे उन्होंने अर्पित कर दी। विश्वामित्र उतने धन को बहुत थोडा देखकर बड़े क्रोध से कहने लगे कि हे नीच ! क्या मेरे यज्ञ करने की उपयुक्त दक्षिणा यही है ? यदि तू ऐसा विचारता है तो मैं तुझे अपनी तपस्या की शक्ति दिखलाता हूँ। तुझे मालूम हो जायेगा कि मेरे ब्रह्मतेज और अध्ययन का कितना प्रभाव है ।७२-७५। राजा ने विनय पूर्वक कहा—महर्षे ! दक्षिणा के लिए मैंने पत्नी और पुत्रको भी बेच दिया और उससे जो धन मिला वह यही है। अब आप थोडी देर ठहरें तो मैं शेष दक्षिणा भी देने की व्यवस्था करता हूं। विश्वामित्र ने कहा कि अब दिन का केवल चौथा भाग शेष है, इतनी देर मै प्रतीक्षा करूंगा। इसके पश्चात् मैं तुम्हारी कोई बात नहीं सुनूंगा। ।७६ ७७।

तमेवमुक्त्वाराजेन्द्रंनिष्ठुर नघृणवंचः ।
तदादायधनतूर्णकुपितःकौशिकोययौ ।७८
विश्वामित्रेगतेराजाभयशोकादिमध्यगः ।
स्यविक्रयंविनिश्चित्यप्रोबाचोच्चैरधोमुखः ।७९
वित्तक्रीतेनयोह्यर्थीमयाप्रेष्येणमानवः ।
सब्रवीतुत्वरायुक्तोयावत्तपतिभास्करः ।८०
अथाजगामत्वरितोधर्मश्चाण्डालरूपधृक ।
दुर्गन्धोविकृतोरूक्षःश्मश्रुलोदन्तुरोघृणी ।८१

कृष्णोलम्बोदरःपिङ्गरूक्षाक्षःपरूषाक्षरः ।
गृहीतपक्षिपुंजश्चशवमाल्यैरलङ्कृतः ।८२
कपालहस्तोदीर्घास्योभैरवोऽतिवदन्मुहुः ।
श्वगणाभिवृतोघोरोयष्टिहस्तोनिराकृति ।८३
अहमर्थीत्वयाशीघ्रं कथयस्वात्मवेतनन् ।
स्तोकेनबहुनावापियेनवैलभ्यतेभवान् ।८४

पक्षियों ने कहा—विश्वामित्र मुनि राजा ने ऐसे कठोर और क्रोध युक्त वचन कह कर उस धनको लेकर चले गये। तत्पश्चात राजा हरिश्चन्द्र भय और शोकसे अभिभूत होकर और अन्तिम निश्चय करके उच्च स्वरसे कहने लगे कि यदि किसी को सेवक खरीदने की इच्छा हो तो यह मुझे सूर्यास्त से पहले ही क्रय करले।७८-७९-८०। उस समय चण्डालके रूपमे धर्म वहा उपस्थित हुआ। उसके शरीर से बुरी गन्ध आती थी, आकृति बडी रुखी, डाढी मूँछोसे युक्त थी। स्वभाव बड़ा भयंकर दाँत ऊंचे और रूर घृणा उत्पन्न करने वाला था। काले रङ्ग का, लम्बे, पेटका, पिंगल, रूखे नेत्र वाला कर्कश था। उसके हाथ में कितने ही पक्षी थे, गले मे मुंडों की माला, एक, हाथ मे नरकपाल,और दूसरेमें लाया हुआ मृग शरीर था बड़ा दुबला-पतला,बहुतसे कुत्तोंको साथ लिये और ऊंट-पटांग बकता था।८१-८२-८३। वह धर्मराज इस प्रकार चाण्डाल के वेशमें आकर राजा से कहने लगे-मै तुमको खरीदना चाहता हूँ। तुम्हारा जोकुछ कम या अधिक मूल्य हो वह बतलाओ ?।८४।

ततादृशमथालक्ष्यक्रूरदृष्टिसुनिष्ठुरम् ।
वदन्दमतिदुःशीलकस्त्वमित्याह पार्थिवः ।८५
चण्डालोऽहमिहनख्यातःप्रवीरेतिपुरोत्तमे ।
विख्यातोवध्यवधकोमृतकम्बलहारकः ।८६
नाहचंडालदासत्वमिच्छेयंसुविगर्हितम् ।
वरंमापाग्निनादग्धोनचण्डालवशंगतः ।८७
तस्यैववदतःप्राप्तोविश्वामित्रस्तपोनिधिः ।
कोपामर्षविवृत्ताक्षःप्राहचेदनराधिपम् ।८८

चण्डालोऽयमनल्पतेदातु ंवित्तमुपस्थितः ।
कस्मान्नदीयतेमह्यमशेषायज्ञदक्षिणा ।८९
भगवन्सुर्यवशोत्थमात्मानवेदमिकौशिक ।
कथचण्डालदासत्वंगमिष्येवित्तकामुकः ।९०
यदिचण्डालवित्तं त्वमात्मविक्रयजमम ।
नप्रदास्यसिकालेनशप्स्या मत्व मसशयम् ।९१

पक्षियो ने कहा बहुत कठोर बोलने वाले, क्रूर दृष्टि और कर्कश व्यवहार वाले उस चाण्डालको देखकर कर राजाने जिज्ञासाकी कि तुम कौन हो ? ।८५। उसने उत्तर दिया मै चाण्डाल हूँ और इस महानगरीमें मेरा निवास स्थान है । मेरा नाम प्रबीर है और पेशा वध करने योग्य पुरुषो को मरने का है । मै मरे हुए पुरुषोंका कम्बल (कफन) भी लेता हूँ ।८६।राजा ने कहा—चाण्डाल के यहा दास कार्य करना तो बहुत ही बुरा है, इस कारण मै इसे स्वीकार नही कर सकता । मेरे ऊपर तो पहले ही शाप रूपी कोर पडा हुआ है, पर यह चाण्डाल का दासत्व तो और भी नीच है ।८७। पक्षियों ने कहा-राजा ने इतना कहा ही था; तभी विश्वामित्र वहां आगये और क्रोधपूर्वक लाल नेत्र करके बोले।८८। विश्वामित्र ने कहा—राजन् यह चान्डाल तुम्हें बहुत-सा धन देरहा है, तो तुम मेरी दक्षिणा क्यों नहीं देते ? ।८९। राजा ने कहा-हे भगवन् ! मै अपने को सूर्यवंशी मानता हूं, इसलिये धनके लोभ से चाण्डाल का दासत्व कैसे स्वीकार करू ं ।९०। विश्वामित्र बोले-यदि तुम अपने को इस चाण्डाल के हाथ बेचकर मुझे समय के भीतर धन नहीं दोगे तो मैं तुम्हें अवश्य ही शाप दूंगा ।९१।

हरिश्चन्द्रस्ततोराजाचिन्तावस्थितजीविमा ।
प्रसीदेतिवदन्पादावृषंर्जग्राहविह्वलः ।९२
दासोस्म्यार्त्तोऽस्मिभीत्तोऽस्मित्वद्भक्तश्चविशेषतः ।
कुरूप्रसादविप्रर्षेकष्टश्चण्डालसङ्करः ।९३
भवेयवित्तशेषेणसर्वकर्मकरोवशः ।।
तवैवमुनिशार्दूलप्रेष्यश्चित्तानुवर्त्तकः ।९४
यदिप्रेष्योममभवांश्चण्डालायततोमया ।

दासभाव मनुप्राप्तोदत्तोवित्तार्बुदेनवै ।९५
यद्यसौशक्यतेविप्रकौशिक:परितोषितुम ।
ततोगृहाणमामद्यदासत्वतेकरोम्यहम् ।९६
शतयोजनविस्तीर्णानानाग्रामैरलंकृताम् ।
भूमिरक्षामयीकृत्वादास्येहंकौशिकप्रनि ।९७

पक्षियों ने कहा—फिर राजा हरिश्चन्द्र ने व्याकुल मन से 'भगवन् ! प्रसन्न हो कहते हुए विश्वामित्र के दोनों चरण पकड़ लिए ।९२। मैं आपका दास इस समय अत्यन्त भयभीत एवं व्याकुल हूँ, मैं आपका ही भक्त हूँ, ब्रह्मर्षे ! कृपा करिये चाण्डालका दास होना अत्यन्त ही कष्टदायक होगा ।९३। हे प्रभो मेरे पास धन नहीं है, फिर भी मैं आपका दास होकर रहूँगा, आप जो आज्ञा देंगे वही करूंगा तथा सदा आपके चित्त के अनुसार ही कार्य करूंगा ।९४। विश्वामित्र ने कहा – राजन्! यदि तुम मेरे अधीन होते तो मैंने तुम्हें इस चाण्डाल को एक अर्बुद मुद्रा में बेच दिया है, अब तुम इसके ही दास बनो ।९५। हरिश्चन्द्र बोले–जिससे यह विश्वामित्रजी संतुष्ट हों वहीं करो, मैं तुम्हारा दास होकर सेवा कार्य करूंगा ।९६। चाण्डाल बोला—सौ योजन विस्तार वाली भूमि, जो अनेकों ग्रामों से युक्त है, उसे मैं विश्वामित्र जी को दे रहा हूँ ।९७।

एवमुक्ते तदातेनश्वपत्कोहृष्टमानसः ।
विश्वामित्रायतद्द्रव्यंदत्वाबद्ध्वानरेश्वरम् ।९८
दण्डप्रहारसंभ्रान्तमतीवव्याकुलेन्द्रियम् ।
इष्टबन्धुवियोगार्तमनयन्निजपक्कणम् ।९९
सरिश्चन्द्रस्ततोराजावसंश्चाण्डालपक्कणे ।
प्रातर्मध्याह्नसमयेसायंचैतदगायत।१००
बालांदीनमुखीदृष्ट्वाबालंदीनमुखपुरः ।
मांस्मरत्यसुखाविष्टामोचयिष्यतिनौनृपः ।१०१
उपात्तवित्तोविप्रायदत्त्वावित्तमतोऽधिकश्च ।
नसामांमृगशावक्षीवेत्तिपापतरंकृतम् ।१०२
राज्यनाशःसुहृत्त्यागोभार्यातनयविक्रयः ।

प्राप्ताचण्डालताचेयमहोदुखपरम्परा ।१०३
एवसिनिवसन्नित्यंसस्मारदयितसुतम् ।
भार्याचात्मसमाविष्टाहृतसर्वस्वआतुरः ।१०४
कस्यचित्वथकालस्यमृतचैलापहारकः ।
हरिश्चन्द्रोऽभवद्राजाश्मशानेतद्वशानुगः ।१०५

पक्षियो ने कहा—फिर राजा के मुख मे जो आज्ञा' शब्द निकलतें ही चाण्डाल रूपी धर्म ने विश्वामित्र को वह धन देकर राजा को बांध लिया और अपने निवास को गया ।९८। राजा हरिश्चन्द्र भार्या तथा पुत्र के वियोग से पहिले ही अत्यन्त कातर थे, फिर चाण्डाल द्वारा डडें मारने से वे और भी व्याकुल हो गये ।९९। फिर चाण्डाल के यहाँ रहते हुए वे प्रातः मध्याह्न, सायंकाल आदि सब समय इसी प्रकार कहते रहते थे ।१००। वह दीन मुख वाली रानी, अपने दीनमुख बालक को देखकर, दुःखी चित्त से सोचती होगी कि धनोपार्जन कर राजा इस ब्राह्मण को अधिक धन देकर हमें छुड़ा लेंगे, परन्तु उसे यह क्या मालुम होगा । कि मैं चाण्डाल के दासत्व रूपी पाप की दशा मे गिर गया हूं ।१०१-१०२। राज्य का नाश, सुहृदो से विछोह, पत्नी पुत्र का विक्रय और अन्तमे चाण्डालत्व की प्राप्ति अहो, दुःख पर दुःख मिल रहा है ।१०३। सर्वस्व से भ्रष्ट वह राजा चाण्डाल के घर रहता हुआ दुःखित चित्त से प्रिय पुत्र भार्या का स्मरण करनें लगा ।१०४। फिर कुछ समय व्यतीत होने पर चाण्डाल के दास राजा हरिश्चन्द्र को शमशान में मृतकों से वस्त्र लेने के कार्य पर नियुक्त किया गया ।१०५।

चण्डालेनानुशिष्टश्चमृतचैलापहारिणा ।
शवागमनेमन्विच्छन्निहतिष्ठन्दिवानिशम् ।१०६
इदंराज्ञेऽपिदेयंषड्भागन्तुशवप्रति ।
त्रयस्तुममभागास्युद्वौभागौतववेतनम् ।१०७
इतिप्रतिसमादिष्टोजगामशवमंदिरम् ।
दिशातुदक्षिणायत्रवारायस्यांस्थिततदा ।१०८
श्मशानंघोरसंनादंशिवाःशतसमाकुलम् ।
शवमौलिसमाकीर्णंदुर्गन्धबहुधूमकम् ।१०९

पिशाचभूतवेतालडाकिनीयक्षसङ्कुलम् ।
सहागणमहाभूतनरवकोलाहलायुतम् ।११०
गृध्रगोमायुसकीर्णश्ववृन्दपरिवारितम् ।
अस्थिसघातसकीर्णमहादुर्गन्धसकुलम् ।१११
नानामृतसुहृन्नादरौद्रकोलाहलायुतम् ।
हापुत्रमित्रहाबन्धोभ्रातर्वत्सप्रियाद्यमे ।११२
हापतेभगिनिमातर्हामातुलपितामह ।
मातामहपितः पौत्रक्वगतोऽस्येहिब्रान्भवः ।११३

मृतकों के वस्त्र का अपहरण करने वाले चाण्डाल ने आदेश दिया कि दिनरात श्मशानमें रहकर कौन मुर्दा आता है,यह देखो तथा।१०६। प्रत्येक मतक से जो धन प्राप्त हो, उसका छटा भाग राजा को, तीन भाग मेरे लिए और दो भाग अपने वेतन में लो।१०७। इस प्रकार चाण्डाल की आज्ञा प्राप्त कर राजा हरिश्चन्द्र दक्षिण दिशा में स्थित श्मशान मे गये।१०८। उसकी चारों दिशाएं घोर शब्द से प्रतिध्वनित हो रहीं थीं, गीदडियोंसे युक्त मृत मस्तकोंसे व्याप्त तथा दुर्गन्धित धूम्र से आच्छन्न।१०९। भूत, पिशाच, डाकनी, यक्ष ग्रध्र आदिसे युक्त और उनके शब्दोंसे निनादित था तथा इधर-उधर अनेक श्वान घूम रहे थे, वह स्थान अस्थियों और महा दुर्गन्ध से भर रहा था।११०-१११। मृतक सम्बन्धियों के आर्त्तनाद के कारण अत्यन्त कोलाहलमय था, वहाँ हा मित्र, हा पुत्र, हा वत्स, हा बन्धो, हा प्रिये। हा नाथ! हा बहिन हा माता, हा मामा, हा पिता. हा पितामह, हा मातामह, हा पौत्र आज किधर गये, एक बार तो आओ।११३।

इत्येवंवदतांयत्रध्वनिः सश्रूयतेमहान् ।
यत्रनेत्रैरनिमिषैशवाभयमिवविशन् ।११४
निमिलितैश्चनयनैर्धुचितापर्थस्थितः ।
ज्वलन्मांसवसामेदश्छमच्छमितसाँकुलम् ।११५
अर्द्धदग्धाःशवाःश्यामाविकसद्दन्तपँक्तयः ।
हसन्त्येवाग्निवध्यस्थाःकायस्येयद्दशात्विति: ।११६
अग्नेश्चचटाशब्दोवयसामस्थिपंक्तिषु ।

वान्धवाक्रन्दशब्दश्चपुल्कसेषुप्रहर्षजः ।११७
गायतांभूतवेतालपिशाचगणरक्षामाम् ।
श्रूयतेसुमहान्घोरःकल्पान्तइवनिःस्वननः ।११८
महामहिषकारीषगोषकृद्राशिसकुलम् ।
तदुत्थभस्मकटश्चवृतनास्थिभिरूच्रतैः ।११९

इस भांति अनेक प्रकार के विलाप युक्त आर्त्त स्वर वहाँ सुनाई पड़ते थे, यथा मृतक बिना पलक मारे देखते हुए लगते थे उनसे भी भय प्रतीत होता था ।११४। कोई नेत्र खोले हुए बन्धु-चिन्तन में था, माँस मज्जा मेद के दग्ध होने पर छन-छन शब्द निकलता था। उससे चारो दिशाएं व्याप्त होती थीं ।११५। कोई शव अग्नि मे पड़कर अध-जला होने पर काला होगया, दन्तपंक्ति निकल गई उसे देखने से लगता उस देहकी यह दशा ? जैसे विचार उसकी हँसी उड़ा रहे हों ।११६। हड्डियो पर बैठे हुये कौओं के विभिन्न प्रकार के शब्द हो रहे थे, मृतकों के बाँधव आर्त्त नाद कर रहे, अग्नि क चट-पट और चाण्डालों के आनन्द सूचक शब्दो से श्मशान भर रहा था ।११७। कहीं भूत पिशाच बैताल और राक्षसो क नृत्य गान के स्वर उठ रहे थे, जिमसे वह स्थान भयंकर प्रलयात्मक प्रतीत होता था ।११८। कहीं-कहीं भस्म के और गोबर के ढेर दिखाई देरहे थे वे भस्म कर्ण कभी उड़ उड़ कर अस्थियो पर गिरते हुए पर्वत जैसी सुन्दर दिखाते थे ।११९।

ननोपहारस्त्रग्दीपकाकविक्षेपसकुलम् ।
अनेकशब्दबहुलश्मशाननरकायते ।१२०
सवह्यगर्भेत्रशिवैः शिवारुतैर्निनादितभीषणरावगह्वरम् ।
भयंभंस्याप्युपसज्जनैर्भृशंश्मशानमाक्रन्दविरावदारूणम् ।१२१
सराजयत्नसंप्राप्तोदुःखितःशोचनोद्यतः ।
हाभृत्यामन्त्रिणोविप्राक्वतद्राज्यविधेगतम् ।१२२
हाशब्येपुत्रहाबालमांत्यक्त्वामन्दभाग्यकम् ।
स्वामित्रस्यदोषेणगताः कुत्रपितेमम ।१२३
इत्येवचिन्तयंस्तत्रचण्डालोक्तपुनःपुनः ।

मलिनोरूक्षसर्वांगःकेशवान्गन्धवान्ध्वजी ।२४
लगुडीकालकल्पश्चधावंश्चापिततस्ततः ।
अस्मिञ्शवइदंमूल्यप्राप्तंप्राप्स्यामिचाच्युत ।१२५
इदंममइदंराज्ञेमुख्यचण्डालकेत्विदम् ।
इतिधावन्दिशोराजाजीवन्योन्यन्तरंगतः ।१२६

कहीं काकबली की माला और दीपक पड़े थे, कहीं, सियार अमंगल सूचक शब्द बोल रहे थे,इस कारण वहस्थान नरक तुल्य प्रतीत हो रहा था ।१२०। कहीं सियारों का भयंकर शब्द, मनुष्यों की क्रंदन ध्वनि सुनाई पड़ रही थीं,जिससे भय भी अत्यन्त भीत हो रहाहो।१२१। राजा हरिश्चन्द्र उस घोर श्मशान में आकर सोचने लगे वह सेवक गण मन्त्रिगण, विप्रगण और वह राज्य कहां गया ?।१२२। हा शैव्या ! हा पुत्र ! तुम इस अभागे को त्याग कर कहाँ गये ? देखो ! अकेले विश्वामित्र के क्रोध से ही मेरा सर्वस्व छिन गया ।१२३। इस प्रकार चिन्ता करते हुए भी चाण्डाल के वचन की चिन्ता अधिक थी । उसका मलिन वेश,रूखा शरीर मस्त देहमें बाल और दुर्गंधि तथा ध्वजा ।१२४। और लाठी लेकर यमराजके समान चलना तथा इस पर विचार करना कि इस मृतकका इतना मूल्य हुआ, इतमें इतना मिल गया और इतना अभी लेना है ।१२५। यह मेरा, यह राजा का और यह उसी चाण्डाल का, ऐसी चिन्ता करते हुए इधर-उधर घूमते तब प्रतीत होता कि जीवित ही प्रेत हो गए हैं ।१२६।

जीर्णकर्पटसुग्रन्थिकृतकन्थापरिग्रहः ।
चिताभस्मरजोलिप्तमुखबाहूदरांघ्रिकः ।१२७
नानामेदोवसामज्जलिप्तपाण्यगुलिःश्वसन्ः ।
नानाशवौदनकृताहारस्तृप्तिपरायणः ।१२८
तदीयमाल्यसश्लेषकृतमस्तकमण्डनः ।
नरात्रौनदिवावेतेहाहेतिप्रवदन्मुहुः ।१२९
एवंद्वादशमासास्तुनीताःशतसमोपमाः ।
सकदाचिन्नृपश्रेष्ठश्रान्तो बन्धुवियोगवान् ।१३०
निद्राभिभूतोरूक्षाङ्गो निश्चेष्टःसुप्तएवच ।

तत्रापिशयनीयेसदृष्टवानद्भुतंमहत् ।१३१
श्मशानाभ्याशयोगेनदेवस्यबलवत्तथा ।
अन्यदेहेनदत्वातुमुखेनगुरुदक्षिणाम् ।१३२
तदाद्वादशवर्षाणिदुःखदानात्तनिष्कृतिः ।
आत्मानंसददर्शाथपुल्कसीगर्भसंभवम् । ३३
तत्रस्थश्चाप्यसौराजासोऽचिंतयदिदंतदा ।
इतोनिष्क्रान्तमात्रोहिदानधर्मंकरोम्यहम् ।१३४

फटे हुए वस्त्रमें गांठ लगाकर कन्था धारण किये हुये तथा मुख, भुजा, उदर और पांवो में चिता भस्म लगाये हुए ।१२७। हाथ की अंगुलियों में मेद, वसा और मज्जा लगी रहती थी और मृत पिण्डोंसे शेष भात का अहार करके रहते थे ।१२८। मृतक की उतारी हुई माला को धारण कर 'हा, हा, शब्द कहते हुए दिन या रात्रि कभी भी नहीं सोते थे ।१२९। इस प्रकार श्मशान में रहते हुए उनका एक वर्ष सौ वर्षोंके समान व्यतीत हुआ फिर किसी दिन वे बन्धु वियोग से श्रान्त होकर ।१३०। रूखे शरीर से निचेष्ट सो गए, तब स्वप्न मे उन्हें एक अत्यन्त अद्भुत बात दिखाई पड़ी ।१३१। श्मशानके अभ्यास या दैवेच्छा से उन्होंने देखा कि अन्य देह धारण करके गुरु को दक्षिणा देकर ।१३२। बारह वर्ष दुःख भोग लेने पर मुझे मुक्ति मिलेगी, फिर उन्होंने देखा कि मैं डोमनी के गर्भ मे स्थित हूँ ।१३३। उस डोमनी के गर्भ में पड़े हुए ही वे सोचने लगे कि इस गर्भ से निकलते ही दान धर्म का आचरण करूंगा ।१३४।

अनन्तरंसजातस्तुतदापुल्कसबालकः ।
श्मशानमृतसंस्कारकरणेषु सदोद्यतः ।१३५
प्राप्तेतुसप्तमेवर्षेश्मशानेऽथमृतोद्विजः ।
आनीतोबन्धुभिर्दृष्टस्तेनतत्राधनोगुणी ।१३६
मूल्यार्थिनातुतेनापिपरिभूतास्तुब्राह्मणः ।
ऊचुस्तेब्राह्मणास्तेत्रविश्वामित्रस्यवेष्टितम् ।१३७
पापष्ठमशुभंकर्मकुरुत्वंपापकारक ।
हरिश्चन्द्रःपराराजाविश्वामित्रेणपुल्कसः ।१३८

कृतःपुण्यविनाशेनब्राह्मणस्वापनाशनात् ।
यदानक्षमतेतेषांतैःसशप्तोरुषातदा ।१३९

तभी पुनः दिखाई दिया कि उसी गर्भसे उत्पन्न होकर उसी जाति कर्म में उद्यत हूं ।१३५। जब चाण्डाल के बालक रूप में सात बर्ष की आयु हुई तब किसी गुणज्ञ एवं अनाथ ब्राह्मण के शव को लोग श्मशान में लाये ।१३६। उस समय दाह करने का मू य देने में असमर्थ ब्राह्मण उनसे अत्यन्त तिरस्कृत होते हुए बोले कि विश्वामित्र का कौनसा पापमय कार्य था ? अरे पापकर्मा ! तू ऐसे ही अशुभ कर्म करता रहता है, पूर्व जन्म में तू राजा हरिश्चन्द्र था, तुझे विश्वामित्र ने चाण्डाल बना दिया है ।१३७-१३८। तूने ब्रह्मस्त्र न देकर पुण्य नष्ट किया, इससे विश्वामित्र के द्वारा तुझे चाण्डाल-योनि में आना पड़ा? जब वे ब्राह्मण शवदाह का मूल्य न देने के कारण दाह न कर सके, तब उन्होंने अत्यन्त क्रोध पूर्वक राजा को शाप दिया ।१३९।

गच्छत्वनरकन्घोरमधुनैवनराधम् ।
इत्युक्तमात्रेवचनेस्वप्नस्थःसनृपस्तदा ।१४०
अपश्यद्यमदूतान्वैपाशहस्तान्भयावहान् ।
तै संग्रहीतमात्मानंनायमानंतदाबलात् ।१४१
पश्यतिस्तभश खिन्नोहामातः पितरद्यमे ।
एवंवादी सनरकेतैलद्रोण्यानिपातितः ।१४२
क्रकचैःपाट्यमानस्तुक्ष ुरधाराभिरप्यधः ।
अन्धेतमसिदुःखार्त्तःपूयशोणितभोजनः ।१४३
सप्तवर्षमृतात्म मपुल्कसत्वेददर्श ह ।
दिनदिनं तुनरकेदह्यतेहुच्यतेऽन्यतः ।१४४
खिद्यतेक्षोभ्यतेऽन्यत्रमार्यतेपाट्यतेऽन्यतः ।
क्षार्यतेदीप्यतेऽन्यत्रशीतबाताहतोऽन्यतः ।१४५
एकंदिन वर्षशतप्रमाणंनरकेऽभवत् ।
तथावर्षशतंतत्रश्रावितनरकेभटैः ।१४६
ततोनिपातिभूमौविषाशीश्वाव्यजायत ।
वान्ता शीशीतदग्धश्च मासमात्रे मृतोऽपिसः ।१४७

अरे नराधम ! तू अभी घोर नरक को प्राप्त हो, ब्राह्मणों की बात सुन कर स्वप्न देखते हुए उस राजा ने ।१४०। देखा कि भयङ्कर यमदूत अपने हाथो मे पाश लिए हुऐ चले आते हैं और बलपूर्वक मेरी आत्मा को बांध ले चले ।१४१। तब वे खेद पूर्वक 'हा माता, हा पिता, आज मेरी ऐसी दशा हो गई इस प्रकार विलाप करने लगे, तभी यमदूतो ने उन्हें नरकमे ले जाकर तैल-द्रोणी में डालकर ।१४२। तीक्ष्ण धार वाले आरी से चीर कर अन्धतम नरक में गिराकर पीव और रक्तका आहार दिया ।१४३। इस प्रकार वह आत्मा सात वर्ष तक नरक मे पड़ी हुई दिखाई देने लगी, कभी जलता हूँ, कभी कोल्हू में पिलता हूँ ।१४४। कभी खिन्न और कभी क्षुब्ध होता हूँ, कभी चीरा जाता, कभी खायीमें फेंका जाता और कभी शीत वायु से आहत होता ।१४५। उनका एक-एक दिन सौ-सौ वर्षके समान व्यतीत हो रहा था, इस प्रकार दुःख भोग करते-करते एक दिन नरक रक्षकोंमे सुना कि सौ वर्ष पूरे हो गये हैं ।१४६। तब उन्हें यमदूतो ने पृथिवी में गिराया और उन्होंने विष्ठा खाने वाले श्वान की योनि मे जन्म लिया और एक दिन भयङ्कर शीत से व्याकुल होकर एक मास में ही मर गये ।१४७।

यथापश्यत्खरं देहं हस्तिनं वानरपशुम् ।
छाँगबिडालकङ्कचमगाामविपक्षिणकृमिभू ।१४८
मत्स्यकूर्म वराहं चश्वाविफकुक्कुटशुकम् ।
शरिकांस्थावराँश्चेवसर्गम।याश्चदेहिनः ।१४९
दिवसेदिवसेजन्मप्राणिनःप्राणिनस्तदा ।
अपश्यतदुःखसन्तप्तोदिवर्षशतंतथा ।१५०
एवं वषशतंपूर्ण गतंतात्रकुयोनिषु ।
अपश्यच्चकदाचित्सराजातात्स्वकुलोद्भवम् ।१५१
तत्रस्थितास्यापि राज्यं द्यूतेनहारितम् ।
भार्य्याहृताचपुत्रश्चसकेकाकीवनं गतः ।१५२
तत्रापश्यत्ससिंहं गौव्यादितास्यभयावहम् ।
विभक्षयिषमायाँतांशरभेणसमन्वितम् ।१५३

पुनश्चभक्षितःसोऽपिभार्याशोचितुमुद्यतः ।
हाशैब्येक्वगतास्यद्यमामिहापास्यदुःखितम् ।१५४
अनश्यत्पुनरेवापिभार्यास्वाहतपुत्रकाम् ।
त्रायस्वत्वंहरिचन्द्रकिंद्यू तेनतवप्रभो ।१५५
पुत्रास्तेशोच्यतांप्राप्तोभार्य्ययाशैब्ययासह ।
सनापश्यत्पुनरपिधावमानः पुनःपुनः ।१५६

फिर गधेकी योनिमें, फिर हाथी, बन्दर, छाग, बिलाव, कौआ, गो, मैंढ़ा, पक्षी और कृमि ।१४८।फिर मछली, कछुआ, शूकर मृग, मुरगा, तोता, मैंना, ऋक्ष, अजगर आदि विभिन्न योनियों में ।१४९।तथा अन्य कुयोनियों में जन्म लेकर दुख भोगते हुए सौ वर्ष व्यतीत होगये ।१५०। फिर देखाकि वह पुनः अपने ही कुल मे उत्पन्न होकर राजा बने हैं ।१५१। वहां कभी जुआ खेल कर राज्य, स्त्री और पुत्रादि को हार गये और एकाकी वन में गये ।१५२। वहां देखा कि एक भयानक सिंह मुख फैलाये हुए उनका भक्षण करनेके निमित्त उनकी ओर आरहाहै ।१५३। फिर उसके द्वारा खाये जाते हुए हा शैब्ये ! इस दुःखी हृदय का त्याग कर तुम कहां जाती हो. इसप्रकार जैसे ही शोक विह्वल हुये ।१५४। वैसे ही देखा कि रानी शैब्या पुत्र सहित वहां आकर 'हा राजन् ! हमारी रक्षा करो, जुआ खेलने मे आपका क्या कार्य है ।१५५। देखिये आपकी पत्नी शैब्या अपने पुत्र के सहित किसी शोचनीय दशामें पड़ गयी है, इस प्रकार विलाप कर रहीहैं, वे बार-बार उसे देखने के लिए इधर उधर जाते हैं, परन्तु उसे देख नही पाते ।१५६।

अथापश्यत्पुनरपिस्वर्गस्थःसनराधिपः ।
नीयतेमुक्तकेशीसादीनाविदसनाबलात् ।१५७
हाहावाक्यं प्रमुंचन्तीत्रायस्वेत्यसकृत्स्वना ।
अथापश्यत्पुनस्तत्रवर्मराजस्यसनात् ।१५८
आक्रन्दन्त्यन्तरिक्षस्थाआगच्छेहराधिप ।
विश्वामित्रेणविज्ञप्तोयमोराजस्तवार्थतः ।१५९
इत्युक्त्वासर्पपाशैस्तुनोयतेबलवद्भिः ।

श्राद्धदेवेनकथितविश्वामित्रायचेष्टितम् ।१६०
तत्रापितस्यविकृतिर्नाधर्मोत्थाऽप्यवर्द्धत ।
एताःसर्वादशास्तयाःस्वप्नेनसम्प्रदर्शितः ।१६१
सर्वास्तातेनसम्भुक्तायावद्वर्षाणिद्वादश ।
अतीतेद्वादशेवर्षेनीयमानोभटैर्बलात् १६२

फिर राजा हरिश्चन्द्र ने अपने को स्वर्ग में वास करते हुए देखा तथा दीन, वस्त्र विहीन और खुले केश वाली रानी शैव्या को किसी पुरुष द्वारा बल पूर्वक हरण करते हुए देखा।१५७। वह 'महाराज रक्षा करो, रक्षा करो कहती हुई बारम्बार चिल्ला रही है, फिर देखा कि यमराज के शासन में स्थित यमदूत ।१५७। आकाश में कह रहे हैं कि राजन् ! विश्वामित्र जी ने यमराज को आपके विषय में सूचना दी है. अत: आप यहाँ आयें, ऐसा कह कर घोर शब्द करते हैं, ।१५९। फिर देखा कि इतना कहने के पश्चात् यमदूत मुझे नागपाश में दृढ़ता से बांध कर ले चले और यमराज तथा विश्वामित्र के चरित्र को कहतेहैं।१६०। यद्यपि राजा हरिश्चन्द्र विभिन्न प्रकार के यत्रणा भोग रहे थे, फिर भी उनके चित्त में कोई अधार्मिक विकार नहीं आया । इस भाँति जो जो दशा उन्होंने स्वप्न में देखी ।१६१ वह सब उन्होंने इस बारह वर्ष के समय में निरन्तर भोगी थीं, बारह वर्ष व्यतीत होने पर यमदूतों के द्वारा बल पूर्वक ले जाये गये ।१६२।

यमसोऽपश्यदाकाशाद्दूतवचनराधिपम् ।
विश्वामित्रस्यकोपाऽयदुर्निवार्य्यांमहात्मनः ।१६३
पुत्रस्यतेमृत्युमपिप्रदास्यतिसकौशिकः ।
गच्छत्वमानुपलोकदुखशेषचभुक्ष्ववै ।
गतस्यतराजेन्द्रश्रेयस्तवभविष्यति ।१६४
व्यतीतेद्वादशेवर्षेदु:खस्यान्तेनराधिपः ।
अन्तरिक्षाच्चपतितोयमदूतःप्रणादितः ।१६५
पतितोयमलोकाच्चविवुबोभयरंभ्रमात् ।
अहोकष्टमितध्यात्वाक्षतक्षारावमेचनम् ।१६६
स्वप्नेदुःखमहत्दृष्टेयस्यान्तोनालभ्यत ।

स्पप्नेद्दष्ट मयायत्त् किन्तुमेद्वादशी.समा: ।१६७
गतेत्यपृच्छत्तास्थापुल्कसास्तुसज्ञ भ्रमान् ।
नेत्यूच:केचित्तान्नस्थामेवापरेऽब्रुवन् ।१६८

वहां उन्होंने यमराज का दर्शन किया तब यमराज बोले-राजन् ! यह महात्मा विश्वामित्रजी के क्रोध का दुनिवार्य फल हैं ।१६३। वे विश्वामित्रजी आपके पुत्र की करायेंगे, इसलिए आप मृत्यंलोक में जाकर शेष दु.खों को भोगिये, वहां जाने पर तुम्हारा कल्याण होगा ।२६४। वहाँ बारह वर्ष व्यतीत होने पर दु:खों का अन्त हो जायगा, यमराज के ऐसा कहने पर यमदूतों ने उन्हें आकाश में फेंक दिया।१६५ यमलोक से गिरते ही भय और भ्रम से वे सहसा जाग पड़े और सोचने लगे कि घाव में नमक लगाने के समान अब यह क्या हुआ !।२६६।जैसे स्वप्न में घोर दु:ख दिखाई दिये है, वे तो असीमित ही है मैं। स्वप्न मे जो देखा क्या वे बारह वर्ष व्यतीत हो चुके।१६७।यह कहकर उन्हं ने अपने पास के चांडालो से पूछा तो उनमे से किसी ने कहा कि अभी १२ वर्ष व्यतीत नहींहुए और किसीने कहा बीत भी सकते है ।.६८

श्रुत्वादुखोदाराजादेवाञ्शरणमीयिवात् ।
स्वस्तिकुर्वन्तुमेंदेव:शैव्यायाबालकस्यच ।१६६
नमोधर्मायमहतेनम:कृष्णायवेधसे ।
परावरायशुद्धथनुराणायाव्ययायच ।१७०
नमोब्रहस्पतेतुभ्यंनमस्तेवासवायच ।
एवमुक्त्वासराजातुयुक्त पुल्ककर्मणि ।१७१
शवानामूल्यकरणेपुननष्टस्मृतिर्यथा ।
मलिनोजटिल:कृष्णोलगुड।विह्यलोनृप: ।२७२
नैवपुत्रोनभार्य्यातुतस्यवैस्मृदिगोचरे ।
नष्टोत्साहोराज्यनाशाच्छमशानेनिवसत्तदा १७३
अथाजगमस्वसुतमृतमादायलापिनी ।
भार्यातस्यनरेन्द्रस्यसर्पंदष्टं हिबालकम् ।१७४
हावत्सहापुत्रशिशोइत्थवैवदतीमुहु: ।

कृशाविवर्णाविमनापामुध्वस्तशियोरुहा ।१७५

यह सुनकर राजा हरिश्चन्द्र ने देवताओं की शरण लेते हुए कहा- हे देवगण ! आप मेरे रानी शैव्या और पुत्र का मंगल करें ।१५६सर्व प्रधान धर्म को नमस्कार है, विधाता रूप कृष्ण को नमस्कार है, सर्व श्रेष्ट अव्यय एवं पुराण पुरुष को नमस्कार है ।१७०। हे बृहस्पते ! आपको नमस्कार है, हे वासव ! आपको नमस्कार है, ऐसा कहकर राजा हरिश्चन्द्र पुनः चाण्डाल रूप कार्य ।१७१। मृतक का मूल्य निर्धारण करने में लगे और उसी प्रकार मलिनवेष, जटा धारण किये हुए लकुटिधारीकृष्णवर्ण युक्त स्मृति को भुलाये हुए विह्वल हो उठे ।१७२। उन समय उनकी स्मृति में भार्या या पुत्र कोई भी नहीं आया, क्योंकि राज्य से भ्रष्ट होकर श्मशान में उन्माद होन रहते थे ।१७३। तभी उनका जो पुत्र सर्पदंश से मृत्यु को प्राप्त होगया था, उसे लेकर उनकी पत्नी रोती हुई श्मशान मे आयी ।१७४। वह अत्यन्त कृश देह दुखी हुई बाली शिर में धूलि धूसरित थी, वह बारम्बार, हा पुत्र पुकारती हुई रुदन कर रही थी ।१७५।

हाराजन्नद्यबालत्वपश्यसीममहीतले ।
रममाणंपुराहृष्ट पुष्टाहिनामृतम् ।१७६
तस्याविलापशब्दमाकर्ण्यसनराधिप,।
जगामत्वारतोऽद्रो निभवितामृतकम्बलः ।१७७
सतारोरुयतीभार्यानाभ्यजानात्त् पार्थिवः।
चिरप्रवाससन्तप्तांपुनर्जातामिबाबलाम् १७८
सापितचारूकेशान्तपुरादृष्ठवाजठालकम्
नाभ्यजानान्नृपसुतशुष्कवृक्षोपमनृपम् । १७९
सोऽपिकृष्णपटेशालदृष्टवाशीविशपीडितम् ।
नरेन्द्रलक्षणोपेतचिन्तामापनरेश्वर ।१८०

रानी कहने लगी राजन्! जिश चन्द्रमा के समान बालक को आप खिलाते थे, उसने आज सर्पदंश से प्राण छोड़ दियाहै उसे एकबार तो देखो ।१८०। उस विलापको सुनकर मृतक-वस्त्र प्राप्त होगा' ऐसा विचार करते हुए राजा हरिश्चन्द्र शीघ्रता पूर्वक वहा पहुंचे ।१८१। वे प्रवास क

सन्तान से और पुत्र शोक से दु:खित हुई अबला पत्नी को न पहिचान सके ।।१७८।। रानी शैव्या ने भी राजा को मनोहर केश युक्त देखा था और अब वे जटिल तथा शुष्क वृक्ष के समान हो रहे थे, इसलिए वह उन्हें न पहिचान सकी ।।१७९।। उस समय सर्प दंश से मृत उस बालक को काले वस्त्र से लपेटा हुआ, परन्तु राजचिह्नों से युक्त देखकर राजा विचार करने लगे ।।१८०।।

तस्यस्यचद्रबिबाभसुभ्रु रम्यससुन्नतम् ।
नालाकेशाःकुंचिताश्चसमादीर्घास्तरंगिताः ।१८१
राजीवनेत्रयुगुलोर्विबोष्ठपुटसवनः ।
चतुर्दष्ट्रश्चतुःकिष्कुर्दीघायोदीर्घबाहुकः ।१८२
चतुर्लेखकरौमत्स्ययवयुक्चैकपवतः ।
शिरालुपादोगंभीरंसूक्ष्मत्वकत्रिवलीधरः।१८३
अहोकष्टंनरेन्द्रस्यकस्याप्येषकुलेशिशुः।
जातोनीतःकृतान्तनकामध्याशादुरात्मना ।१८४
एवंदृष्ट्वाहितबालेमातुरुत्सङ्गशायिनम् ।
स्मृतिमभ्यागतोबालोरोहिताश्चोब्जलोचन ।१८५
सोप्येतमेवत्सोवयोऽवस्थमुपागतः ।
नीतोयदिनघोरेणकृतान्तनात्मनोवशम् ।१८६
हावत्सकस्यपापस्यनशध्यानादिदमहत्।।
दुखमापतितघोररयस्यान्नोनोपलभ्यते ।१८७
हानाथराजन्भवतामामाज्ञश्चस्युदु:खिताम् ।
क्वापिसन्तिष्ठतास्थानेविप्रब्धरणोयतेंकथम् ।१८८
राज्यनाश:सुहृत्यागोभार्य्यातनयविक्रयः।
हरिश्चन्द्रस्यराजर्षे,किंविधेनकृतंत्वया ।१८९

जिसका चन्द्र के समान मुख, सुन्दर भौं उच्च नासिका । घुँघराले केश समान दीर्घ तरङ्ग युक्त ।।१८१।। पद्म जैसे दोनों ओष्ठ, चार दाढ़ें, सुशोभित मुख और विशाल भुजाएं ।१८२। हाथ में मत्स्य 'जौ युक्त तथा पर्वत रेखा कंठ के पीछे की नाड़ी और पैर गंभीर, पतली

त्वचा एवं उदर कंठ में त्रिवली रेखा का दिखाई देना।१८३। इससे इसने किसी राजकुल में जन्म लिया प्रतीत होता है, अहो, काल ने इसकी क्या दशा कर दी है।१८४। फिर माता की गोद में पड़े हुए उस बालक को भले प्रकार देखने पर उन्हें रोहिताश्व की याद आ गयी।१८५। उन्होंने सोचा कि यदि दुरात्मा काल के वशीभूत न हुआ हो तो मेरा रोहिताश्व भी इतनी अवस्था का हो गया होगा।१८६। इधर रानी बोली-हा पुत्र ! किस पाप के कारण इस असीम घोर दुःख की प्राप्ति हुई है।१८७। हे नाथ ! हे राजन ! तुम इस संतप्ता को त्याग कर निष्ठुर चित्त से कहाँ किस प्रकार रहते हो।१८८। एक राज्य का छिनना, उस पर भी बंधुओं से वियोग, फिर पत्नी पुत्र का विक्रय, हा विधाता ! क्या तूने राजर्षि हरिश्चन्द्र का सर्वनाश ही नहीं कर डाला? ॥१८९॥

इतितास्यवचःश्रुत्वाराजास्वस्थानताच्युतः ।
प्रत्याभिज्ञायदयितांपुत्रचनिधनगताम्।१९०
कैपानामसूहेयुक्तामसयोषद्विराभवेत् ।
बालश्चसमृतःकस्यदिशिराजाविचारयन् १९१
कष्टशंचैयमेषाहिमबालोऽयमितीरयन् ।
रुरोददुःखसन्तप्तोमूर्च्छामभिजगामच ।१९२
साचप्रत्यभिज्ञायतामवस्थासुपंगताम् ।
मूर्च्छितानिपपाताताताविश्चेष्टाधरणीतले ।१९३
चेताःसम्प्राप्यराजेन्द्रोराजपत्नीचतौसमम् ।
विलेपतुःसुसन्तप्तौशोकभारातिपीडितौ १९४
हावत्ससुकुमारतेस्वक्षिभ्रुनासिकालकम् ।
पश्यतोमेमुखदीनहृदयकिनदीर्यते ।१९५
राततातेतिमधुरब्रुवाणंस्वयमागताम् ।
उपगुह्यवदिष्येकंवत्सवत्ससेतिसौहृदात् ।१९६

उसके वचन सुनकर राजा ने अपने पुत्र और स्त्री को पहिचान लिया, तथा अपने स्थान से गिर पड़े ।१९०। यह स्त्री कौन है, क्या मेरी पत्नी है? यह मृत बालक कौन है? इस प्रकार विचार करते हुए राजा हरिश्चन्द्र

व्याकुल हो उठे ।१६१। हा कैसा दुःख है ? यही वह शैय्या है और यहा वह बालक है ऐसा कहते हुए अत्यन्त संताप से रोने लगे और मूच्छित होकर पृथिवी पर गिर पड़े।१६२।रानी भी राजा को पहिचान कर मूर्च्छा को प्राप्त होकर पृथिवी में गिर पड़ी ।१६३। फिर दोनों ही चैतन्य होकर शोक से संतप्त होकर अत्यन्त विलाप करने लगे ।१६४। राजा ने कहा—हे वत्स! तुम्हारे सुन्दर नेत्रादि से युक्त सुकोमल बदन को इस प्रकार मलीन देखकर हृदय फट क्यों नहीं जाता ? ।१६५। मीठे स्वरों से तात,तात, कहता हुआ अब मेरे कौन पास जायेगा ?अब मैं किसे स्नेह पूर्वक गोदी मे लेकर वत्स कहूंगा ।१६७।

कस्यजानुणीतेनांपिङ्गनक्षितिरेणुना ।
ममोत्तरीयमुत्सङ्ग तथाङ्ग मलशेष्यति ।१६७
अङ्गप्रत्यङ्गसम्भूतोंमनोहृदयनन्दन
मयाकुपित्राहावत्सविक्रातोयेनवत्सुवत् ।१६८
हृत्वाराज्यमशेषमेमबान्धवधनमहत् ।
देवाहिनानृशमेनदष्ठोमेननयस्ततः ।१६६
अहदेवाहिदष्टस्यपुत्रस्याननपङ्कजम् ।
निरीक्षन्नपिघोरेणवियेणान्धीकृतोऽधुना ।२००
एवमुक्त्वातमादायबालकं बाष्पगद्गदः ।
परिष्वज्यचनिश्चेष्टोमूर्च्छयानिपपातह ।१
अयसपुरुषव्याघ्रःस्वरेणैवोपलक्ष्यते ।
विद्वज्जनमनश्चन्दोहरिश्चन्द्रोनसंशयः ।२
तथास्तनासिकातुंगाअग्रतोऽधोमुखगता ।
दाताश्चमुकुलप्रख्याःख्यातकीर्त्तेर्महात्मनः ।३
श्मशानमागतःकस्माद्द्यैषसनश्वरः ।
अपहायपुत्रशोकसापश्यत्पतितांपतिम् ।४

अब किसी की जांघ में लगी धूलसे मेरा उतरीय और शरीर मैला होगा?।१६७। हा तुम मेरे अंग-प्रत्यंग से उत्पन्न होकर मन और हृदय के लिए आनद देनेवाले थे, तो भी मैंने तुम्हें सामान्यवस्तु के समान बेचदिया

समान बेच दिया ।१९८। हा देव रूपी दुष्ट नाग ने मेरा राज्य, साधन तथा सर्वस्वहरण करके अन्त मे तुम्हें भी डस लिया ।९९। दैव रूपी सर्प द्वारा इस पुत्र का मुखारविन्द देखते हुए मैं भी उसके भीषण विष से अंधा हो रहा हूं ।२९०। राजा ने गद्‌गद् कंठ से इस प्रकार विलाप करते हुए बालक को अपने गोद मे उठाया और तुरन्त मूर्च्छित होकर गिर गये ।२०१। रानी बोली-स्वर से प्रतीत होता है कि यही पुरुषसिंह महाराज हरिश्चन्द्र हैं इसमे संशय नहीं ।२०२। इनकी ऊँची नासिका अग्रभाग मे उन्हीं के समान अधोमुख हुई है, इनको दंत पंक्ति भी उन्हीं के समान कली जैसी है।२०३। परन्तु यह राजा हरिश्चन्द्र आज श्मशान मे क्यों है, यह कहती हुये रानी मूर्च्छित पड़े हुए अपने स्वामी को देखने लगी ।२०४।

प्रहृष्टाविस्मितादीनाभर्तृपुत्राधिपीडिता ।
वीक्षन्तासामतोऽपश्यद्भर्तृदण्डजुगुप्सितम् ।५
श्वापाकार्हमनोमोहजगामायतलोचना ।
प्राप्यचेनश्चशनकैःसगदगदमभाषत ।६
धिक्त्वांदेवाष्यकरुणंमिर्मर्यादंजुगुप्सितं
येनायनमरप्रख्योनीतोराजाश्वपाकताम्
राज्तनातसुहृत्यागंभार्यातनयविक्रयम्
प्रापयित्वापिनोमुक्तश्चण्डालाऽयकृतोनृपः
हाराजञ्जातम तापामित्थमंधरणीतलात्
उत्थाप्यनाद्यपर्यङ्कापोपतिकिमुच्यते ।९
नाद्यपश्यामितेच्छत्रभृंगारमथवापुनः ।
चामर व्यजन चापिकोऽयंविधिविपर्ययः।।११

उस दुर्बलाँगी शैव्या ने विस्मय पूर्वक पीड़ा से इधर-उधर देखते हुए राजा के उस चाण्डाल दंड को देखा ।२०५। मैं चाण्डाल की पत्नी हूँ कहती हुई रानीमोहित होकर गदगद कंठ से बोली ।२०३। अरे, मर्यादा हीन, निन्दित,नृशंस दैव तुझे धिक्कार है,जो तूने मेरे देव-तुल्य स्वामी चांडाल बनाया है ।२०७। तू राज्य से भ्रष्ट करके, बन्धुओं से वियोग कर तथा पत्नी-पुत्र को बिकवाकर भी शान्त नहुआ और अब चांडालत्व

प्राप्त करा दिया ।२०८। हे राजन् ! इस प्रकार संताप ग्रस्त हुस इस पृथ्वी पर पड़ी हूँ, आज आप वहाँ से उठाकर पलङ्ग पर बैठने को क्यो नही कहते ।।२०९।। आज आपका छत्र और भृङ्गार दिखाई क्यों नहीं देता ? वह चमर, वह पंखा कहा है ? दैव की कैसी विडम्बना है ।।२१०।।

यस्याग्रे व्रजतःपूर्वराजानोभृत्यतांगता. ।
स्वोत्तरीयैकुर्वन्तनीरजस्कमहीतलम् ।११
सोयंकपालसंलग्नघटीघटनिरन्तरे ।
मृतनिर्माल्यसूत्रान्तर्गूढकेशेदारुण ।१२
वसानिष्यन्दसशुष्यमहीपुटकमण्डिते ।
भस्तमाङ्गाराद्धदग्धास्थिमज्जामंघट्टभीषणे ।१३
गृध्रगोमायुनादार्त्तनष्टक्षुद्रविहगमे ।
चिताधूमायतिरुचानीलीकृतदिगन्तरे ।१४
कुणपास्वादनमुदासंप्रहृष्टनिशाचरे ।
चरत्यमेध्येराजेन्द्रःश्मशानेदुःखपीड़ितः ।१५
एवमुक्त्वासमाश्लिष्यकण्ठराज्ञोनृपात्मजा ।
कष्टशोकशताधाराविललापार्त्तयागिरा ।१६

जिन राजा हरिश्चन्द्र के चलते समय राजा लोग मार्ग की धूल अपने दुपट्टे से झाड़ते थे, वही आज असह्य दुःख से दुःखित हुए इस अपवित्र श्मशान में एकाकी घूमते है ।२११। जहाँ मृतकों के कपालों साथ घड़े चारों दिशाओमे पड़े हैं तथा मृतकोके निर्माल्य सूत्र में बहुत से बाल लगे रहने के कारण जो घोर दिखाई दे रहा है ।२१२। मृतदेह से टपकती बसा और शुष्क काष्ठ से चारों दिशाऐं भर रहीं हैं और जो भस्म, अङ्गार और अधजली हड्डी और मज्जा के कारण अत्यन्त भयंकर हो गया है ।२१३। गृध्र तथा गोमायु के शब्द से छोटे-छोटे पक्षी जहां से भागते है तथा जहाँ चिता के धूम्र से दिशा-विदिशा नील वर्ण की हो गई है ।२१४। और माँस से प्रसन्न हुए राक्षस इधर-उधर घूमते हैं, उसी स्थान में यह महाराज संतप्त हुए एकाकी फिरते हैं ।२१५। इस प्रकार कहती हुई रानी शैव्या राजा के कंठ से लिपट कर विलाप करने लगी ।२१६।

राजन्स्वप्नोऽथतथ्यंवायदेतन्मन्यतेभवान् ।
तत्कथ्यतांमहाभागमनोवैमुह्यतेमम् ।१७
यद्येतदेवंधर्मज्ञानास्तिधर्मेसहायता ।
तथैवविप्रदेवादिपूजनेपालनेभुवः ।१८
नास्तिधर्मःकुतःसत्यमार्जवचानृशंसत्ता ।
यत्रत्वंधर्मपरमःस्वराज्यादवरोपितः ।१९
इतितस्यावचःश्रुत्वानिश्वस्योष्णंमचदगद्म् ।
कथयामासतन्वग्यायथाप्राप्तस्चपाकता ।२०
रुदित्वासापिसुचिरंनिश्वस्योष्णंवदुखिता ।
स्वपुत्रमरणंभीरुयथावृत्तंन्यवेदयत् ।२१
श्रुत्वाराजातदात्यर्थंनिपपातमहीतले ।
मृतस्यपुत्रस्यतद्राजिह्वालेलिहन्मुखम् ।२२
यमस्यभिक्षांयाचाव.कृपणौपुत्रगर्द्धिनौ ।
तस्माच्छीघ्रंव्रजावोयपुत्रोयत्रप्रियोगत ।२३
प्रियेनरोचयेदीर्घंकालक्लेशशुपासितुम ।
नात्मायत्तश्चतन्वङ्गिपश्यमन्दभाग्यताम् ।२४

रानी बोली—हे राजन् ! मैं जो देख रही है वह स्वप्न है अथवा सत्य ? आपको जो ज्ञात हो वह बताइये, क्योंकि मैं तो मोहवश विचार शक्ति को खो चुकी हूँ ।२१७। यदि यह सत्य है तो धर्म सहायक नहीं हुआ तथा देवताओं और ब्राह्मणोंका पूजनभी निष्फल हुआ तथा पृथिवी का पालन भी व्यर्थ ही रहा ।२१८। इसलिए धर्म नहीं, सत्य नहीं, सरलता और सदयता भी नहीं, आपका तो धर्म ही परम बल है, फिर भी राज्य से भ्रष्ट होगये ।२१९। रानी शैव्या की बात सुनकर उष्ण-श्वास छोड़ते हुए राजा ने चाण्डालत्व प्राप्ति का यथावत वर्णन किया । ।२२०। उसका वृत्तान्त सुनकर रानी भी बहुत समय तक रोती रही और उसने पुत्र मृत्युका सम्पूर्ण वृत्तान्त कहा ।२२१। रानी की बात सुन राजा पृथिवी पर गिर पड़े और अपने मृतक पुत्र के मुख को चाटने लगे ।२२२। राजा ने कहा—हम उस पुत्र लोभी यमराज से भिक्षा, मांगे, हमारा पुत्र जहां गया है, हम भी अब वहीं

चले ।२२३। हे प्रिये ! मैं अब अधिक क्लेश नहीं सहना चाहता, परन्तु मैं कैसा मन्द हूँ कि मेरी आत्मा भी मेरे वश मे नही है ।२२४।

चण्डालेनाननुज्ञात प्रवेक्ष्येज्वलनयदि ।
चाण्डालदासतांयास्येपुनरप्यन्यजन्मनि ।२२५
नरकेचपतिष्यामिकीटकःक्रमिभोजनः ।
वैतरण्यांमहापूयवसासृक्स्नायुपिच्छिले ।२२६
असिपत्रवनेप्राप्यछेदं प्राप्स्यामिदारुणम् ।
तापप्राप्स्यामिवाप्राप्यमहारौरवरौरवौ ।२२७
मग्नस्यदुःखजलधौपारःप्राणवियोजनम् ।
एकोऽपिबालकोयोमेसोऽपिवंशकरःसुतः ।२२८
ममदेवाम्बुवेगेनमग्नःसोऽपिवलीयसा ।
कथप्राणान्विमुञ्चामिपरायत्तोऽस्मिदुर्गतः।२२९
अथवानार्तिनाक्लिष्टनर पापमवेक्षते ।
तिर्यक्त्वेनास्ति तद्दुःखनासिपत्रवनेनथा ।२३०
वैतरण्यांकुतस्तादृशपुत्रविप्लवे ।
सोऽहंसुतशरीरेणदीप्यमानेहुताशने ।२३१
निपतिष्यामितन्वङ्गिक्षन्तव्यकृतंमम ।
अनुज्ञाताचगच्छस्वविप्रवेश्मशुचिस्मिते ।२३२

यदि मैं चाण्डाल की आज्ञा के बिना अग्नि प्रवेश करूंगा तो मुझे पुनर्जन्म में भी चाण्डाल का ही दास होना होगा ।२२५। अथवा कृमि भक्षक कीटा होकर नरक मे पड़ना होगा अथवा वैतरणी, पीव, वसा रुधिर आदि से युक्त नरक की यंत्रणा भोगनी होगी।२२३। अवा असि पत्र वन को प्राप्त होकर दारुण छेदन यंत्रणा भोगूंगा या रौरव अथवा महारौरव में दुःसप ताप में पड़ूंगा ।२२७ दुःख रुपी सागर में डूबने वाले के लिए पार भूमि प्राण त्याग ही है अहो मेरा जो एक बालक वंश की वृद्धि वाला था ।२२८। वह भी दैव रुपी जल में डूब गया, इस असीम दुर्गति रुप भोग के होते हुए भी पराधीन होने के कारण प्राण भी कैसे त्याग सकता हूँ ।।२२१।। अथवा आर्त पुरुष को पाप का क्या देखना ? जो असह्य दुःख पुत्रका है, वैसा तिर्यग् योनि, असि

पत्र वन ।२३०। अथवा वैतरणी में भी नहीं है, इसलिए पुत्रदेह के साथ मैं भी प्रज्जवलित अग्नि से जल जाऊँगा, हे तन्वङ्गी ! मेरे द्वारा हुए अन्याय आचरण को क्षमा करो और मेरी आज्ञा से ब्राह्मण के गृह जाओ ।।२३१-२३२।

ममवाक्यचतन्वंगिनिबोधाद्दतमानमा ।
वदिदत्तंयन्हुत गुरवोयदियोषिता. ।२३३
पत्त्रसंगमोभूयात्पत्रत्रैणसहचन्वया ।
इहलोकेकृतस्त्वेन इभविष्यतिममेप्सितम् ।२३४
त्वयासममश्वोयोगमनपुत्रमागणे ।
यन्मयाहसताकिंचिद्रहस्यत्राशुचिस्मिने ।२३५
अश्लीलमुक्तंतत्सर्वंक्षन्तव्यं ममयाचन. ।
राजपत्नोतिगर्वेणनावज्ञेय.मतेद्विज ।
सर्वयत्णेनतेतोष्य:स्वामीदेवतवच्छुभे ।२३६
अहमण्यत्रराजर्षेदीप्यमानेहुताशने ।
दु:खभारासहाद्यैवसहाय स्यामिवैत्वया ।२३७
समस्वर्गंचरकंहैवावहिभुंक्ष्वहे ।
श्रुत्वराजातदिवाचएवमस्तुपतिव्रते ।२३८

मेरे कथन को आदर पूर्वक सुनो यदि मैंने दान, हवन अथवा गुरु-जनो की सतुष्टि की है ।२३६। तो मैं इस पुत्र और तुम्हारे साथ पुनर्जन्म में भेंट करुंगा, अब इस लोक में मेरा यह अभिप्राय सिद्ध होना संभव नहीहैं ।२३४। अथवा तुम्हें भी मेरे साथ पुत्रके मार्ग का अनुसरण करना चाहिए, यदि हास्य के रूपमें इस निर्जन स्थान में ।२३५।कुछअनुचित बात निकल गई हो तो उसे क्षमाकरना, उस ब्राह्मण काराजपत्नी-होनेके अहंमे निरादर मत करना उसको स्वामी अथवा देवताके समान संतुष्ट रखना।२३६। पत्नी बोली-हे राजर्षो ! मैं भी अब इस दुख भारको सहन करनेमें समर्थ नहीहूं,इसलिए इस प्रज्जवलित अग्निमें आपकेसाथही प्रवेश करुंगी।२३७। वहाँ मैं,पुत्र और आप हम तीनों ही एक स्थान में रह कर स्वर्ग या नरकका भोग करेंगे, रानी की बात सुनकर राजा ने कहा

हे पतिव्रते ! ऐसा ही करना ।२३८।

ततःकृत्वाचितांराजाआरोप्यतनयस्वकम् ।
भार्यंयासहितश्चासौबद्धाजलिपुटस्तदा ।२ ६
चिन्तयन्परमात्मानमीशानारायणहरिम् ।
हृत्कोटरगुहासीनंवासुदेवश्वरम् ।
अनादिनिधनब्रह्मकृष्णपीताम्बरशुभम् ।२४०
तस्यचिन्तयमानस्यसर्वे देवःमत्वासर्वा ।
धर्मप्रमुखतःआत्वासमजग्सुस्त्वरान्विताः २४१
आगत्यसर्वे प्रोचुस्तेभोभोरःजञ्श्रृण प्रभो ।
अयंपितामहःसाक्षाद्धर्मश्चभगान्स्वयम् ।२४२
साध्याश्चश्वेमरुतोलोकपालाःसचागणा ः।
नागाःसिद्धःसगन्धर्वांरुद्रान्चवतथाश्विनौ ।२४३
एतेचान्येचवहवोविश्वामित्रस्तथैवच ।
विश्वत्रयेणयोमित्रकर्त्तुं वैनाशकत्पुरा २४४
विश्वामित्रस्तुतेमैत्रीतिष्ठचाहर्तुं मिच्छति ।
आरुरोहमम:प्राप्तोधर्मशक्रोऽथगाधिजः ।२४५

पक्षियों ने कहा—राजा हरिश्चन्द्र ने चिता बनाकर अपने पुत्र को उस पर रखा और पत्नी के सहित हाथ जोड़ कर जैसे ही ।२३६। परमात्मा, ईश, वासुदेव, सुरेश्वर, परब्रह्म, कृष्ण, पीताम्बरधारी, शुभदायक, हृदय में वास करने वाले, अनादि निधन, नारायण, हरि को चिन्तन किया ।४०। वैसे ही धर्म को आगे करके इन्द्रादि देवगण शीघ्रता पूर्वक वहाँ पहुँचे ।२४१। वे सभी देवता कहने लगे—हे राजन् ! यह साक्षात् ब्रह्मा हैं, यह साक्षात् धर्म हैं ।२४२। यह साध्यगण, मरुद्गण, विश्वेदेवा, सब लोकपाल नागगण, सिद्धगण गंधर्वों सहित, रुद्रगण तथा दोनों अश्विनीकुमार ।२४३। अथवा अन्याय [illegible] सहित उपस्थितहैं और जो त्रैलोक्य के साथ मित्रता नहीं कर सकते वह विश्वामित्र भी आयेहैं ।२४४।यह सभी आपके साथ मित्रता करनेकोआये हैं, धर्म, इन्द्र और विश्वामित्र यह तीनों राजा के पास आये ।२४५।

मागाजन्हहमंकार्षोधर्मोऽहवामुपागात: ।
तितिक्षादममत्याद्यै स्वगुणै:परितोषित: ॥२४६
हरिश्चन्द्रमहाभागप्राप्तं शक्रोस्मितेऽन्तिकम् ।
त्वायःसभार्यापुत्रेणजिता लोका:सनातना: ॥२४७
आरोहत्रिदिवंराजन्भार्यापुत्रसमन्वित ।
सुदुष्प्रापनरैरन्यैर्जितमात्मीयकर्मभि: ॥२४८
ततोऽमृतमयं वर्षं भपमृत्युविनाशनम् ।
इन्द्र.प्रासृजदाकाशाच्चितास्थानगाम.प्रभु: ॥२४९
पुष्पवर्षं चसुमहद्देवदुन्दुभि नि स्वनम ।
ततस्ततोवर्तमानेसमाजेदैवम कुले ॥२५०
समुत्तस्थौततपुत्रोराज्ञस्तस्तस्यमहात्मन ।
सुकुमारतनु:सुस्थ:प्रसन्ने न्द्रियमानस: ।२५१
ततोरजाहरिश्चन्द्र.परिष्वज्यसुतंक्षणात् ।
सभार्य्य:सुश्रियायुक्तोदिव्यमाल्याम्बरान्वित: ॥२५२

धर्म बोला—राजन् ! अब इस साहसिक कार्य से निवृत्त होइये । मैं धर्म हूँ,मुझे आपने तितिक्षा, दम, सत्य इत्यादि गुणों से सन्तुष्ट किया है। इसलिए स्वयं यहाँ उपस्थित हूँ ।२४६। इन्द्र बोले—हे महाभाग ! मैं इन्द्र हूँ आपने पत्नी पुत्र के सहित सभी सनातन लोकों को जीता है ।२४। इसलिए आप अन्य मनुष्यों को दुर्लभ स्वर्ग में पत्नी और पुत्र के सहित चलो ।२४८। पक्षियों ने कहा इसके पश्चात् इन्द्र चिता स्थान मे गये और वहां उन्होंने अपमृत्यु का क्षय करने वाले अमृत की वर्षा की ।२४९। तथा उस सभा में देवताओं ने पुष्प वृष्टि की और दुंदुभी बजने लगी ।२५०। फिर उस महात्मा राजा का कोमल अंग वाला पुत्र रोहिताश्व भी स्वस्थ होकर प्रसन्न मन से उठ बैठा ।२५१। उस समय राजा ने क्षणभर को पुत्र का आलिंगन किया तथा दिव्य वस्त्र और माला धारण कर पत्नी सहित सुशोभित हुए ।२५२।

स्वस्थ:सम्पूणहृदयोमुदापरमयायुत: ।
बभूवतत्क्षणादिन्द्रोभूयश्चैनमभाषत ।५३

सभार्यस्त्वंसपुत्रश्चप्राप्स्यसेसद्‌गतिपराम् ।
समारोहमाभागनिजानांकर्मणाफलैः ॥२५४
देवराजाननुज्ञातःस्वामिनाश्वपचेनवै ।
अगत्वानिष्कृतितस्यनारोक्ष्येऽहसुरालयम् ।।२५५
तवनंभाविनंक्लेमवगम्यात्ममायया ।
आत्माश्वपाकतांनीतोदर्शितंच्चचापलम् ॥२५६
प्रार्थ्यतेयत्परस्थानंसमतैर्मनुजैर्भुवि ।
तदारोहहरिश्चन्द्रस्थानंपुण्यकृतांनणाम् ॥२५७
देवराजनमस्तुभ्यंवाक्यंचैतन्निबोधमे ।
प्रसादसुमुखंयत्वांब्रवीमिप्रश्रयान्वितः ॥२५८
सच्छोकमग्नदनसःकोसलानगरेजनाः
तिष्ठन्तितानपोह्याद्यकथंयास्याम्यहंदिवम् २५६

तथा भले प्रकार स्वस्थ्य और आनन्दित हुए, तब इन्द्र ने उनसे कहा ।२५३। हे महाभाग ! आप पत्नी पुत्र सहित परम सद्‌गति पायेंगे इसलिए अपने कर्मफल के द्वारा स्वर्ग में निवास कीजिए ।२५४। हरिश्चन्द्र ने कहा मैं अपने स्वामी चाण्डाल की अनुमति के बिना स्वर्ग मे नहीं जा सकता ।२५५। धर्म ने कहा- राजन् ! तुम्हारे भावी क्लेश को जानकर मैंने ही चण्डाल का रूप धारण किया था ।२५६ इन्द्रने कहा -जिस परम स्थान मे पहुंचने के लिए पृथिवी के सब मनुष्य प्रार्थना करते है, तुम उस स्थान को गमन करो ।२५७। हरिश्चन्द्र ने कहा – हे सुरपते ! आपको नमस्कार है, मैं आपसे विनम्र निवेदन करता हूं, उसे सुनिये ।२५८। नगर के सभी मनुष्य मेरे शोक में पड़े है, मै उन्हें छोड कर स्वर्ग में कैसे जाऊँ ।२५६।

ब्रह्महत्यागुरोर्घातोगोवधःस्त्रीवधस्तथा ।
तुल्यमेभिर्महापापंभक्तत्यागेऽप्युदाहृतम् ॥२६०
भजन्तंभक्तमत्याज्यमदुष्टंत्यजतः सुखम् ।
नेहनामुत्रपश्यामितस्माच्छक्रदिवंव्रज ॥२६१
यदितेसहिताःस्वर्गंमयायान्तिसुरेश्वर ।

ततोऽहमपियास्यामिनरक वापितःसह ।२६२
वहूनिपुण्यपापानि॰षाभिन्नानिवैपृक ।
कथासघानभोग्यं त्वंभूयःस्वर्गवाप्स्यसि ।२६३
शक्र भुक्ते नृपोराज्यप्रभावेणकुटुम्बिनाम् ।
यजतेचमहायज्ञै कर्मपौर्त्तं करोतिच ।२६४
यच्चतेषांप्रभादेणमयासर्वमनुष्ठितम् ।
उपकर्त्तृन्नसन्त्यक्ष्येतानहंस्वर्ग लिप्सया ।२६५
तस्माद्यन्ममदेवेशकिंचिदस्तिसुचेष्टितम् ।
दत्तमिष्टमणोजप्तसामान्यतैस्तदस्तुनः ।२६६
बहुकालोपभोग्यहिफलयन्ममकर्मणः ।
तदस्तुदिनमप्यकं नःसमंत्वत्प्रसादतः ।२६७

ब्रह्महत्या,गुरुहत्या,गोहत्या अथवा स्त्री हत्या को जो पाप होता है, वही पाप भक्त का त्याग करने मे है ।२६०। अपने भक्तों का त्याग करने पर लोक परलोक में कोइ सुख नहीं है, अतः आप स्वर्गको गमन करें ।२६१। हे देवेश्वर ! मेरे साथ वह भी स्वर्ग मे जांय तो मैं भीवहां जाऊंगा, अन्यथा उनके साथ नरक में ही निवास करूंगा ।२६२। इन्द्र बोले-उन प्रजाजनों के द्वारा विभिन्न प्रकार के पाप-पुण्य हुए है, तो वे आपके साथ स्वर्ग में कैसे जा सकते है।२६३। हरिश्चन्द्र ने कहा-हे सुरेश्वर । कुटुम्बियों के प्रभाव से ही राजा राज्य भोगता और बावडो, कुए आदि बनाता है ।२६४। मैंने भी जो धर्म कार्य किए है, वह उनके सहयोग से किए हैं, इसलिए सामान्य स्वर्ग के लोभ मे उन उपकार करने वालों का त्याग नहीं करूंगा ।२६५। इसलिए मैंने जो कुछ भी जप, दान, पुण्य किया है, वह उनके सहित सब में समान हो ।२६५। मेरे पुण्य फल का जो भोग बहुत समय तक भोगने योग्य हो वह उनके साथ चाहे एक दिन को ही भोग सकूं, ऐसा कीजिए ।२६७।

एवभवित्यतीत्युक्त्वाशक्रस्त्रिभुवनेश्वरः ।
प्रसन्नचेताधर्मश्चविश्वामित्रश्चगाधिजः ।२५८
गत्वाशुनगरंसर्वंचातुर्वर्ण्यसमायुतम् ।

हरिश्चन्द्रस्यनिकटेप्रोवाचविबुधाधिपः ।२६९
आगच्छंतुजनाःशीघ्रं स्वर्गलोकसुदुर्लभम् ।
धर्मप्रसादात्सं प्राप्तसर्वैर्युष्माभिरेवतु ।२७०
विमानकोटिसम्बद्धं स्वर्गलोकान्महीतलम् ।
गत्वायोध्याजनंप्राहदिवमारुह्यतामित ।२७१
तदेन्द्रस्यवचश्श्रुत्वाप्रीत्यातस्यचभूपते. ।
आनीयरोहिताश्वामित्रोमहातपः ।२७२
अयोध्याख्येपुरेरम्येसोऽभ्यर्षिचन्नृपात्मजम् ।
देवैश्चमनिभःसिद्धैरभिषिक्तनपाधिपः ।२७३
राज्ञासहतदासर्वेहृष्टपुष्टसुहृज्जनाः ।
सपुत्रभृत्यदारास्तेदिवमारुरुहुर्जनाः ।२७४

पक्षियों ने कहा—ऐसा ही होगा' कह कर इन्द्र धर्म और विश्वामित्र जी ।।२६८।। सभी उस नगर में गये और सब प्रजाजनो को राजा हरिश्चन्द्र के सहित एकत्र किया, तब इन्द्र बोले ।।२६९।। हैं मनुष्यों ! तुमने धर्म के प्रसाद से अत्यन्त कठिनता से प्राप्यस्वर्गलोकको प्राप्त किया हैं, इसलिए वहीं चलो ।।२७०।। इसके पश्चात् स्वर्ग से करोड़ों विमान वहां आये और अयोध्यावासियों से कहा गया कि स्वर्ग में जाने के लिए इन विमानों पर शीघ्र चढ़ो ।।२७१।। फिरविश्वामित्र राजा को प्रसन्न करने के निमित्त इन्द्र के वचन से रोहिताश्व को वहां लाये ।।२७२।। और उसे अयोध्यानगरी के राज्य सिंहासन पर अभिषिक्त किया उस समय सब अयोध्या बन्धु बांधव सिद्ध, मुनि और देवगणों के समक्ष अभिषेक कर भार्या पुत्र सेवक आदि से मिलकर सभी स्वर्ग को चले ।१७३।। ।।२७४।।

पदेपदेविमानात्ते विमानमगमन्नराः ।
तदासंभूतहर्षोसौहरिश्चन्द्रश्चपार्थिवः ।२७५
संप्राप्यभूतिमतुलांविमानैःसमहीपतिः ।
आसांचक्रेपुराकारेत्रप्रकारसंवृते ।२७६
ततस्तस्यर्द्धिमालोक्यश्लोकतत्रोशनाजगौ ।
दैत्याचार्योमहाभाग सर्वशास्त्रार्थतत्ववित् ।२७७

हरिश्चन्द्रसमोराजानाभूतोनभविष्यति ।
यश्चैतच्छृणयाद्भक्त्यानैरन्तर्येणमानवः ।२७८
तेनवेदा:पुराणानिसर्वेमन्त्रा.सुसग्रहा: ।
घृष्टा.स्य:पुष्करेतीर्थेप्रयागेसिन्धुसागरे ।२७९
देवागारेकुरुक्षेत्रेवाराणस्यांविशेषत: ।
विषुवद्ग्रहणेचेवंयत्फलंजपतोलभेत् ।२८०

मार्ग मे व एक दूसरे विमान में चढ़ रहे थे, उस समय राजा हरिश्चन्द्र भी बहुत प्रसन्न हुए ।२७५। तब उन्हे विमान में चढ़ने की महान् विभूति का अनुभव हुआ और वे बलयाकार परकोटे से संयुक्त स्थित रहे ।२७६। उस समय सब शास्त्रों के तत्वज्ञाता दैत्यों के आचार्य शुक्राचार्य जी ने राजा के इस ऐश्वर्य का देखकर प्रशस्ति गान किया ।२७७। वे बोले—राजा हरिश्चन्द्र के समान विश्व में न कोई हुआ न भविष्य मे होगा, क्योंकि वे तितिक्षा और दान के फल से अपने नगर निवासियों को भी स्वर्ग मे ले गये इन राजा हरिश्चन्द्र की कथा को भक्ति सहित जो कोई श्रवण करेगा ।२६८। वह वेद पुराण, तथा सभी मन्त्रो के फल को पावेगा । जो कोई पुष्कर, प्रयाग, सिधु सागर देव मन्दिर, कुरुक्षेत्र और वाराणसी में पाठ करेगा उसे विशेष फल मिलेगा,तथा जोफल विषुवती और ग्रहण मे जप करनेसे होताहै।२७९-२८०

तत्फलंद्विगुण चवसयतात्माश्रृणोतिय: ।
श्रुत्वातुपूजयेद्भक्त्यापुराणज्ञ द्विजोत्तमम् ।२८१
गोभूहिरण्यवस्त्रैश्चतथैमाल्यैनजैमने ।
येनैवंयत्कृतपुण्यंतच्छक्यनमयोदितुम् ।२८२
अहोतितिक्षामाहात्म्यमहोदानफलमहत् ।
यदागतोहरिश्चन्द्र पुराचेन्द्रत्वमाप्तवान् ।२८३
एतत्तेसर्वमाख्यातहरिचन्द्रविचेष्टितम् ।
य:श्रृणोतिदुखार्त्तसुखमहदाप्नुयात्: ।२८४
स्वर्गार्थीद्राप्नुयात्स्वर्ग पुत्रार्थीपुत्रमाप्नुयात् ।
भार्यार्थीप्राप्नुयाद्भार्यां राज्यार्थी राज्यमाप्नुयात् ।२८५

अत्त: यरंकथाशेषःश्रूयतांमुनिसत्तम ।
विपाकोराजसूयस्यपृथिवीक्षयकराणम् ।
तद्विपाकनिमित्त'चयुद्धमाडिवकमहत् ।२८३

उससे द्विगुण फल इसे इन्द्रिय के सँयम पूर्वक सुनने से होता है इस कथा को सुनकर पुराण ज्ञाता ब्राह्मण को सातुष्ट करे ।२८१। उसे गो, भूमि स्वर्ण वस्त्र तणा अन्न प्रदान करने सेजो गुण होता है, वह अवर्णनीय है ।२८२। तितिक्षा और दान का महान् फल होता है, उसी के प्रभाव से राजा हरिश्चन्द्र को इन्द्रत्व की प्राप्ति हुई और वे अपने नगर निवासियों सहित स्वर्ग को प्राप्त हुए ।२८३। पक्षियों ने कहा—हे जैमिने ! आपसे हरिश्चन्द्र का सम्पूर्ण वृत्तान्त कहा गया, दुःखों से मनुष्यों को इसके श्रवण से अत्यन्त सुखकी प्राप्ति होती है ।२८४। इसस स्वर्गाकांक्षी को स्वर्ग, पुत्रेच्छु को पुत्र,पत्नी की कामना वाले को पत्नी तथा राज्य की इच्छा वाले को राज्य की प्राप्ति होती है ।२८५। हे मुनिश्रेष्ठ! अब तुम्हारे प्रति पृथवीके क्षय कारण,राजसूययज्ञ का विपाक तथा उस विपाक से महत् आड़िबक युद्ध स्वरूप शेष कथा को कहता हूँ, श्रवण करो ।२८६।

।। इति श्रीमार्कण्डेय पुराण हरिश्चन्द्रोपाख्यान नाम अष्टमोऽध्याय: ।।

६—आड़िबकंयुद्ध

राज्यच्युतेहरिश्चन्द्रे गतेचत्रिदशालयम् ।
निश्चक्राममहातेजाजलवासात्पुरोहित: ।१
वसिष्ठोद्वादशाब्दान्तेगङ्गापर्युषितामुनिः ।
शुश्रावच मस्तन्तुविश्वामित्राविचेष्टितम् ।२
हरिश्चन्द्रस्यनत्यश्चराज्ञश्चोदारकर्मण: ।
चाण्डालसंप्रयोगश्च भार्यातनयविक्रयम् ।३
सश्रुत्वासुमहाभाग:प्रीतिमानधनोपतौ ।
चकारकोप तजस्वीविश्वामित्रमृषिम्प्रति ।४
ममपुत्रशततेनेविश्वामित्रै यगातितम् ।
तत्रापिनाभवत्क्रोधस्तातृशाधादृशोऽद्यमे ।५

श्रुत्वानपाधिपंमिमस्त्रराज्यादवरोपितम् ।
महा मानमहाभागदेवब्राह्मणपूजकम् ।६

यस्मात्ससत्यवावाक्छान्तःशत्रावपिविमत्सरः ।
अनागाश्चैवधर्मात्मा अप्रमत्तामदाश्रयः ।७

सपत्नोंभृत्यपुत्रस्तुप्रापितौऽन्त्यांदशांनृप, ।
सराज्याच्च्याावियोऽनेनबहुश्चखिश्रोकृतः ।८

तस्माद्दुरात्माब्रह्मद्विड्यज्विनामवरोपकः ।
मच्छापापहृतोमूढःसबकत्व नवाप्स्यति ।९

पक्षियों ने कहा—जब राजा हरिश्चन्द्र राज्य से मुक्त होकर स्वर्ग को गये, उसके पश्चात राजा के पुरोहित महातेज वाले वसिष्ठजी जलसे बाहर निकले ।१। वसिष्ठजी बारह वर्षजलवास करके निकले थे, उन्होंने बाहर निकल कर बिश्वामित्र का वृत्तान्त सुना ।२। उदारकर्मा हरिश्चन्द्र जिस प्रकार राज्य से भ्रष्ट हुए और उन्हें चाण्डालत्व की प्राप्ति हुई तथा उनके पुत्र का विक्रय हुआ ।३। यह सब बृत्तान्त सुनकर वसिष्ठजी ने विश्वामित्र पर अत्यन्त क्रोध किया क्योंकि वह राजा से बड़े प्रसन्न थे ।४। वसिष्ठजी ने कहा इतना क्रोध, उस विश्वामित्र के हाथ से अपने सौ पुत्रों के मरने पर भी मुझे नहीं हुआ था, जितना कि देव-ब्राह्मणों का पूजन करने वाले राजा के राज्य से भ्रष्ट होने का बृत्तान्त सुनकर हुआहै ।५। मेरे आश्रित सत्यवादी निर्वैर निरहंकारी, अप्रमत्त और धर्मात्मा राजा को ।५। भार्या, पुत्र तथा सबको के सहित दुर्दशा को पहुंचाया, अपने राज्य से च्युत करके भाँति-भाति के दुःख दिये हैं ।८। इसलिए वह ब्रह्मद्वेषी, दुरात्मा मूर्ख याज्ञियों के यज्ञ को नष्ट करने वाला विश्वामित्र मेरे श्राप से अन्त को प्राप्त होकर बगुले की योनि को प्राप्त हो ।९।

श्रुत्वाशापमहातेजविश्वामित्रोऽपिकौशिकः ।
त्वमप्याडिर्भवबेतितास्मैशापमय च्छत ।१०

अन्योन्यशापात्तौप्राप्तौतिर्यक्त्वपरमद्युती ।
वसिष्ठःसमहाराजाविश्वामित्रश्चकौशिकः ।११

अन्यजातिसमायोगगतावप्यमितौजसौ ।

युयुधातेऽतिसंरब्धौमहाबलपराक्रमौ ।१२
योजनानाँसहस्रे द्वे प्रमाणेनाडिरुच्छ्रितः ।
षण्णवत्यधिकंब्रह्मसहस्रत्रितयंबकः ।१३
तौतुपक्षप्रहाराभ्यामन्योन्यस्योरुविक्रमौ ।
प्रहारन्तौभयतीब्रंप्रजानांचक्रतुस्तदा ।१४

पक्षियों ने कहा——विश्वामित्र जी न शाप की बात सुन कर वशिष्ठ-जीकां शाप दिया-तुझे चील की योनि प्राप्त हो ।१०। वशिष्ठ एवं विश्वा-मित्र दोनों हीअत्यन्त तेजस्वी थे, इसलिए पारस्परिक शाप के वश दोनों ही खग-योनि की प्राप्त हुए ।११।वे दोनों अत्यन्त तेजस्वी महान् बली थे, अतः अत्यन्त क्रोधपूर्वक परस्पर युद्ध करने लगे ।१२। हे ब्रह्मन् ! आदि रूपी वशिष्ठ दो हजार योजन ऊँचा और बगुला रूपी विश्वामित्र तीस हजार छियानवे योजन ऊँचा उड़ा ।१३। उन दोनों अत्यन्त पराक्रमी पक्षियों के परस्पर प्रहारों को देखकर प्रजा को अत्यन्त भय प्राप्त हुआ ।१४।

विधूयपक्षाणिवकोरक्तोद्वृत्ताक्षिराहनत् ।
आडिसोऽप्युन्नतग्रीवोबकंपद्भयामताड़यत् ।१५
तयो पक्षानिलापास्ताः प्रपेतुर्गिरयोभूवि ।
गिरिप्रपाताभिहताचकम्पेचवसुन्धरा ।१६
क्ष्माकस्पमानाजलधीनुद्वृत्ताम्बूंश्चकारच ।
ननामचैकपार्श्वेनपातालगमनोन्मुखी । ७
चेविदगिरिनिपातेनकेचिदंभोधिवारिणा ।
केचिन्महीसचलनात्प्रययुःप्राणिनः क्षयम् ।१८
इतिसर्वपरित्रस्तंहाहाभूतमचेतनम् ।
जगदासोत्सुसंभ्रात पर्यस्तक्षितिमण्डलम् ।१९
हावत्सहाकांतशिशोप्रयाह्य षोऽस्मिसस्थितः ।
हाप्रिपेकांतशैलोऽयपतत्याशुपलायताम् ।२०
इत्याकुलीकृतेलीके संत्रासविमुखेतदा ।
सुरैः परिवृतःसर्वैराजगामपितामहः ।२१

बगुले ने रक्तवर्ण वाले नेत्रों स सभी फैलाए हुए पंखो को चलाकर

चील को आहत किया, तभी चीलने कंठ उठाकर अपने पैर से बगुले पर आघात किया ।१५। उनके पंखों की हवा से अनेक पर्वत टूट कर गिरने लगे जिससे पृथिवी भी कम्पायमान हो उठी ।१६। पृथिवी के कांपने से समुद्र का जल उछलने लगा तथा पृथिवी पार्श्व की ओर झुक गई।१७। उस समय भूमण्डल के सभी जीव कोई पर्वत के गिरने से, कोई समुद्रकी तरंगों से नष्ट होने लगे ।१८। इस प्रकार त्रास को प्राप्त विश्व हा-हा कार करता हुआ भ्रान्त हो उठा और पृथिवी में विपरीतता होने पर ।१९। सभी मनुष्य व्याकुल चित्त से स्वजनों को पुकारते हुए 'भागो' भागो' कहने लगे ।२०। भय से इस प्रकार चिल्लाते हुए कोई कहीं, कोई कहीं गये तब पितामह ब्रह्माजी स्वयं ही सब देवताओं के सहित वहाँ जाये ।२०।

प्रत्युवाचचत्रिदशेशस्तत्वुभावतिकोपिनौ ।
युद्धं वांविरमत्वेतल्लोकाः स्वास्थ्यं ब्रजन्तुच ।२२
श्रृण्वन्तावपितौवाक्यंब्रह्मणेऽव्यक्तजन्मनः ।
कोपामर्षमयाविष्टौयुयुधातेनतस्थतुः ।२३
ततःपितामहोदेवस्तद्दृष्टबालोकसंक्षयम् ।
तयोश्चहितमस्विच्छस्तियग्भावमपानुदत्,।२४
तास्तौपूर्वदेहस्योप्राहदेवः प्रजापतिः ।
व्युदस्ते गम्सभावेवसिष्टकौशिकर्षभौ ।।२५
जहिवत्सवसिष्ठत्वं त्वंचकौशिकसत्तम ।
तामसंभन्वमाश्रित्यईद्द्वन्द्वं चिकीर्षितम् ।२६
राजसूयविपाकोयहरिश्चन्द्रस्यभूपतेः ।
युवयोर्विग्रहश्चायंपृथिवीक्षयकारकः ।२७
नचापिकौशिकश्रेष्ठस्तस्यराज्ञोऽपराध्यति ।
स्वर्गप्राप्तिकरोब्रह्मन्मुपकारपदेस्थितः ।२८

और कुपित हुए दोनों पक्षियों से बोले कि तुम्हारा युद्ध समाप्त हो और भूमण्डल के सभी जीव स्वस्थ हों ।२२।ब्रह्माजीकी यह बात सुनकर भी दोनों पक्षी युद्ध करने से किसी प्रकार न रुके ।२३। तब ब्रह्माजी ने

प्रजाका संहार देख कर उसके हितार्थ दोनों को खगत्व हर लिया ।२४ जब उन्हें पूर्व देह की प्राप्तिहुई तब उनका तमोगुण मिटा,यह देखकर ब्रह्माजी ने उन दिनों से कहा ।२५। हे वशिष्ठ ! हे विश्वामित्र ! तुम तमोगुण के अबलम्वन से जो युद्ध करते थे,उसे छोड़ो ।२६। पृथिवी को नष्ट करने वाले जिस युद्ध को तुम कर रहे के वह राजा हरिश्चन्द्र के यज्ञ करने का फल है ।२७। इन विश्वामित्र ने राजा का कोई अपराध नहीं किया, इसके विपरीत उनको स्वर्ग प्राप्त कराकर उपकार किया है ।२८।

तपोविघ्नस्यकर्त्तारौकामक्रोधवशगतौ ।
परित्यजतभद्रंवोब्रह्मंहिप्रचूरबलम् ।२९
एवमुक्तौततन्तेनलज्जितौतावुभावपि ।
क्षमयामासतुःप्रीत्यापरिष्यज्यपरस्परम् ।३०
ततः सुरैर्कैन्द्यमानौब्रह्मालोकंनिजंययौ ।
वसिष्ठोऽप्यात्मनः स्थानत्कौषिकोऽपिस्वमाश्रम् ।३१
एतदाडिबकंयुद्धंहरिश्चन्द्रकथांतथा ।
कथयिष्यन्तियेमर्त्या सम्यक्श्राष्यन्तिचैवये ।३२
तेषांपापनोदंतुश्रुतह्यंवकरिष्यति ।
नचैवविघ्नकार्याणिभविष्यन्तिकदाचन ।३३

तुम काम, क्रोध के वश मे पड़ कर तप में विघ्न कर रहे हो, इसलिएइन दोनों का त्याग करो,ब्रह्मत्व से बढ़कर अन्य कोई दलनहीं है, तुम्हारा कल्याण हो ।२९। ब्रह्माजी की बात सुनकर दोनो अत्यन्त लज्जित हुई और परस्पर क्षमा मांगते हुए आलिंगन करने लगे ।३०। फिर देवताओं से पूजित हुए ब्रह्माजी अपने लोक को गए और वशिष्ठ तथा विश्वामित्र ने भी अपने-अपने स्थान को गमन किया ।३१। जो व्यक्ति आडिम्बक युद्ध और हरिश्चन्द्र की कथा कहेगा अथवा श्रवण करेगा ।३२। उसके सभी पाप नष्ट होंगे इसे सुनकर कार्यारम्भ करेगा तो उसके कार्य में कभी उपस्थित न होगा ।३४।

१०—मृत्युदशा वर्णन

संशयद्विजाशार्दूलः प्रब्रूतममपृच्छतः ।
आविर्भावतिरोभावौभूतानां यत्रसंस्थितौ ।१
कथसञ्जायतेजन्तुकथंत्रासविवर्धते ।
कथंवोदरमध्यस्थस्तिष्ठत्यङ्गनिपीडितः ।२
निष्क्रान्तिमुदगान्प्राप्यकथवावृद्धिमृच्छति ।
उत्क्रान्तिकालेचचकथंचिद्भावेनवियुज्यते ।३
कृत्स्नोमृतस्तथाश्नातिउभेसुकृतदुष्कृते ।
कथनेचतथातस्यफलमम्पादयन्त्यत ।४
कथनजीर्यतेतत्रपिण्डीकृतइवाशये ।
स्त्रीकोष्ठेयत्रजीर्यन्तेभुक्तानिसुगुरूण्यपि ।५
भक्ष्याणितत्रनोजन्तुर्जीर्य्यतेकथामल्पकः ।
कथभोक्तामसर्वेस्यकमर्णसुकृतस्यैव ।६
एतन्मेब्रूतसकलमन्देहोक्तिविवर्जितम् ।
तदेतत्परमंगुह्यं यत्रसुह्यन्तिजन्तवः ।७

जैमिनी बोले—हे द्विजाशार्दूल ! जिसमें प्राणियों का जन्म मरण संघटित है, उस विषयक मेरे संदेह को दूर करिये ।१। जीवकी उत्पत्ति और वृद्धि किस प्रकार होती है तथा वह पीड़ा को सहन करता हुआ गर्भ में किस प्रकार रहता है ।२। फिर गर्भ से निकल कर वृद्धि को प्राप्त होती, मृत्यु के समय उसका प्राण कैसे निकल जाता है ? ।३। काल के गाल में जाकर जीव पुण्य पाप कैसे भोगता हैं और पाप पुण्य अपने-अपने फलका संपादन किस प्रकार करते है । ४ । जठराशय में जाकर कठिनतासे पाक वस्तुभी पच जाती है तो साधारण पिण्डी वाला हुआ जीव स्त्री के जठर में क्यों नही पच जाता? ।५। जठराग्नि में पच कर जीव नष्ट क्यों होता है तथा सुकृत से फल को किस प्रकार भोगता है ।६। जिस प्रकार मेरा संदेह दूर हो सके, उस प्रकार मुझे बताइये । इस गूढ़ रहस्य मे प्राणी मोहित हैं ।७।

प्रश्नभारोऽयमतुलस्त्वयास्मासुनिवेशितः ।

दुर्भाव्य.सर्वभूतानांभावाभावसमाश्रितः ।८
तश्रृणुष्वमहाभागयथाप्राहपितनुपुरा ।
पुत्र परमधर्म्मात्मासुमतिनमिनामनः ।९
ब्राह्मणोभार्गवः कश्चित्सुतमाहमहामतिः ।
कृतोपनयनशान्तमुमतिजडरूपिणम् ।१०
वेदानधीत्यसुमतेयथानुक्रममादितः ।
गुरुशुश्रूषणे व्यग्रोभैक्षान्नकृतभोजनः ।११
ततोगार्हस्थ्यमास्थायकेष्ट्वायज्ञाननुत्तमान् ।
इष्टमुत्पादयापत्यमाश्रयेथा वनतत. ।१२
वनस्थश्चततोवत्सपरिव्रड् निष्परिग्रहः ।
एवमाप्स्यसितद्ब्रह्मयत्प्राप्यत्वानशोचसि ।१३

पक्षियों ने कहा—आपने प्राणियों के भावाभाव वाला जो प्रश्न किया है, । वह अत्यन्त गूढ़ है ।८। पुराकाल मे अपने पिता के प्रति सुमति नामक एक धर्मात्मा पुत्र ने जो कहा था, वह हम तुम्हारे प्रति वर्णन कहते है, ध्यान से सुनो ।९। एक समय भार्गव वंश के किसी महामति नामक ब्राह्मण ने अपने जड़ भाव युक्त पुत्र सुमति से कहा ।१०। हे सुमते ! गुरु की सेवा में रहकर भिक्षान्न से जीवन निर्वाह करता हुआ प्रथम वेदाध्ययन कर ।११ फिर गृहस्थ धर्म का पालन करता हुआ इच्छित पुत्रोत्पत्ति के पश्चात् वन का प्राप्त हो ।१२। वन में वास करके सॅन्यासी होकर ही ब्रह्मज्ञान प्राप्त होगा, जिसकी प्राप्ति होने पर सोच नहीं रहता ।१३।

इत्थवमुक्तोवहुशोजडत्वान्नाहकिञ्चन ।
पितापितुःसुबहुशः प्राहप्रीत्यापुनःपुनः ।१४
इतिपित्रासुसुतस्नेहात्प्रलोभिममधुराक्षरम् ।
सचोद्यमानोबहुशःप्रहस्येदमथाब्रवीत् ।१५
तातैतद्बहुशोभ्यस्तंतत्त्वयाद्योपदिश्यते ।
तथैवान्यानिशास्त्राणिशिल्पानिविविधानिच ।१६
जन्मनायुतं साग्रं ममस्मृतिपथंगताम् ।
उत्पन्नज्ञानबोधस्यवेदैः किंमेप्रयोजनम् ।

निर्वेद:परितोषाश्चक्षयवृद्धयदयेरना: ।१७
शत्रु मित्रकलत्राणांवियोगा.सङ्गमात्तथा ।
मातरोविविधाद्रष्टाः पितरोविदिधास्तथः । .८
अनुभूतानिसौख्यानिदु खानिचहस्र.. ।
बान्धवाबहव.प्राप्ता पितरश्चपृथग्विधः ।१९
विण्मूत्रपिच्छिलेस्त्रीणांनथाकोष्ठेमयाषितम् ।
पोडाश्चसुभंप्राप्त रोगणाञ्च हस्राग: ।२०
गर्भदु,खान्यनेकानिबाल्त्वेयौवनेतथा ।
वृद्धतायाँतथाप्तानितानितानिपर्त्रागिमंस्मरे ।२१

पक्षियों ने कहा–इस प्रकार पिता द्वारा बहुत-सी बातें कहने पर भी जडता प्राप्त पुत्र ने कोई उत्तर न दिया, परन्तु स्नेह के वशीभूत हुए पिता सबसे बारम्बार कहने लगे ।१४। पिता के प्रलोभन युक्त वचनों को बारम्बार सुनकर सुमति कुछ हंसा और उसने पिता से कहा ।१५। आप इस समय जिस विषय का उपदेश मुझे दे रहे है, उसका अनेक बार अभ्यास कर चुका हूँ, उसके अतिरिक्त अनेकों शास्त्र एवं शिल्प शास्त्र का भी अभ्यास कर चुका हूँ ।१६। कुछ अधिक दश हजार वर्ष की बात मुझे याद है, मैं अनेक बार दुःख पा चुका हूँ, अनेक बार संतुष्ट हुआ हूँ, अनेक बार क्षीणता और वृद्धि को प्राप्त हो चुका हूँ। अब मुझे ज्ञात उपलब्ध है तो वेदाध्ययन से क्या लाभहै ? ।१७। अनेक बार मेरा शत्रु, मित्र. कलत्र सहित संयोग और वियोग हो चुका है,मैंने अपने-अनेक माता-पिता देखें हैं, ।१८। सहस्रों प्रकार के सुख दुःख का मुजे अनुभव है, बांधव और पिता सभी अनेक प्रकार से देख चुका हूँ ।१९ । मैंने अनेक बार मल मूत्र युक्त नारी-जठर में निवास किया हैं, तथा हजारों बार रोगों की यंत्रणा प्राप्त कीहै ।२०। गर्भ की यन्त्रणा, बाल्यकाल, युवावस्था तथा वृद्धावस्था में जितनी बार जो दुःख प्राप्त किया, वह सब मुझे याद है ।२१।

ब्राह्मणक्षत्रियविशांलशूद्राणाञ्चापियोनिषु ।
पुनश्चपशुकीटानांमगाणामथपक्षिणाम् ।२२
तथैवराजभृत्यनांरुज्ञांचाहवशालिनाम् ।

समुत्पन्नोऽस्मिगेहेषुतथैवतववेश्मनि ।२३
भृत्यतांदासतांचैवगतोऽस्मिबहुशोनृणाम् ।
स्वामित्वश्वरत्वचदरिद्रत्वंतथागतः ।२४
हतंमयाहतश्चान्यैर्हतमेघातितंतथा ।
दत्तंममान्यैरन्येभ्योमयादत्तमनेकशः ।२५
पितृमातृसुहृद्भ्रातृकलत्रादिकृतेनच ।
तुष्टोऽसकृत्तथादैन्यमश्रुधौताननोगतः ।२६
एवंसंसारचक्रेऽस्मिन्भ्रमतानानसङ्कटे ।
ज्ञानमेतन्मयाप्राप्तमोक्षसम्प्राप्तिकारकम् ।२७
विज्ञातेयत्रसर्व्वोऽयमृग्यजुःसामसंज्ञितः ।
क्रियाकलापोविगुणोनसम्यक्प्रतिभातिमे ।२८

मैं बहुत बार ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, पशु, कीट, पक्षी आदि योनियों में उत्पन्न हो चुका हूँ ।२२। जैसे आपके यहा उत्पन्न हुआ है, वैसे ही अनेकों बार राज मेत्रकों अथवा वीरोंके यहां उत्पन्न हो चुकाहूँ, ।२३। मैं अनेक बार सेवक एवं भृत्य हुआ हूँ, अनेक बार स्वामी तथा प्रधान हुआ हूँ और अनेक बार दरिद्रता भोग चुका हूँ ।२४। मैंने बहुत से मनुष्यों को मारा और बहुतों ने मुझे भी मारा है, मैंने अनेक बार दानदिया तथा अनेक बार दान ग्रहण किया है।२५। पिता, माता, भ्राता, सुहृद, भार्या आदिमे अनेक बार संतुष्ट हुआ और अनेक बार दीन दशा को प्राप्त होकर अश्रु बहाता रहा ।२६। इस प्रकार इस सङ्कट से परिपूर्ण संसार चक्र में निरन्तर भ्रमण करते-करते मुझे मोक्षके देने वाले ज्ञान की प्राप्ति हो चुकी है ।२७। इस प्रकार ज्ञान मिलने से ऋक्, यजुः, साम नामक सम्पूर्ण क्रिया कलापका मुझे भले प्रकार ज्ञान है ।२८।

तस्मादुत्पन्नबोधस्यवेदैः किंमेप्रयोजनम् ।
गुरुविज्ञानतृप्तस्यनिरोहस्यसद्रोत्मनः ।२९
षट्प्रकारक्रियादुःखसुखहर्षरसैश्चयत् ।
गुणैश्ववर्जितंब्रह्मतत्प्राप्स्यामिपश्पदम्ः ।३०
रसहर्षभयोद्वेगाक्रोधामर्षजरागुरा ।

विज्ञातानृमृग्रग्राहिसंगपाशगनाकुला ।३१
तस्माद्यास्याम्यहतातत्यक्त्वेमांदुःखसन्ततिम् ।
त्रयोधर्ममधर्माढ्यकिंपापफलसन्निभम् ।३२
तस्यतद्वचनश्रुत्वाहर्षविस्मयगदगदम ।
पिता ाहमहाभागःस्वसुतंहृष्टमानसः ।३३
किमेतद्वदसेवत्सनकुतस्तेज्ञानसम्भवः ।
केनतेजडतापूर्वमिदानोचप्रबुद्धता ।३४
किन्नुशापविकारोऽयमुनिदेवकृतस्तव: :
यच्चज्ञानतिरोभूतमाविर्भावमुपागतम् ।३५

इस लिए जब मुझे ज्ञान प्राप्त ही है और मैं गुरु विज्ञानमें तृप्त तथा चेष्टा हीन और सदात्मा हूँ तो वेदज्ञान से मेरा क्या प्रयोजन है ? ।२९। मैं सुख दुःख, हर्ष, रस तथा निर्गुण ब्राह्म पदको प्राप्त हूँ ।३०। तथा रस,हर्ष,भय,उद्वेग,क्रोध अमर्ष और वृद्धावस्था द्वारानितांत व्याकुल और सैकड़ों बन्धनों से व्याप्त रहा हूं ।३१। अतः इस दुखरूपी प्रवाह का त्याग करके मुझे जाना है,त्रयी विद्याका धर्म अधर्म जैसा लगता है मैं इसेछोड़ कर ब्रह्मपद पाऊँगा ।३२। पक्षियों ने कहा पुत्रके इस वचनको सुनकर प्रसन्न चित्त हुए पिता ने हर्ष विस्मय से युक्त गद्‌गद् वचन कहे ।३३। पिता ने कहा–हे पुत्र ! तुम यह क्या कहते हो? तुम्हें ऐसा ज्ञान कहांसे प्राप्त हुआ?तुम जो जड़ स्वभाव वालेथे,अब ऐसी ज्ञान-बुद्धि किस प्रकार उत्पन्न हो गई ? ।३४। तुम्हारा जो छिपा हुआ ज्ञान अब प्रकट हुआ है, वह क्या किसी मुनि या देवता के शाप से अप्रकट था ? ।३५।

शृणुताततयथावृत्तांममेदसुखदुःखदम् ।
यश्चाहमासमन्यस्मिञ्जन्मन्यस्मत्परन्तुयत् ।३६
अहमासंपुरविप्रोन्यन्यस्तात्मापरम त्मनि ।
आत्मविद्याविचारेषुपरांनिष्ठामुपागतः। ३७
सततंयोगयुक्तस्यसतताभ्याससङ्गमात् ।
सत्संयोगात्स्वभावाद्वाविचारविधिशोधनात् ।३८
तस्मिन्नेवपराप्रीतिममासीद्युंजतःसदा ।

आचार्यं तांचसंप्राप्त शिष्यसन्देहहृतम् ।३६
ततःकानेनमहताएकान्तिकमुपागतः ।
अज्ञानाकृष्टमद्भावोविपन्नश्चप्रमादतः ।४०
उत्क्रान्तिकालादरभ्यस्मृतिलोपोनमेऽभवत् ।
यावच्छब्दं गतचैवजन्मनांस्मृतिमागतम् ।४१

पुत्र बाला मैं अपने सुख दुःख को देने वाले सभी वृत्तान्तों को कहता हूं, उन्हें सुनो ।३६। मैं पूर्व जन्म में एक ब्राह्मण था, उस समय ब्रह्म मे आत्मा को लीन करके मैंने आत्मविद्या प्राप्त की थी ।३७। सदैव योगरत रहने के कारण अभ्यास, सत्संग, सत्स्वभाव विचार एवं विधियों का उद्धार ।३८। तथा निरन्तर ब्रह्म मे रत रहने के कारण मै उस जन्म में अत्यन्त प्रसन्न था तथा शिष्यों के सन्देहों का निवारण करने वाला आचार्य था ।३९। कुछ समय व्यतीत होने पर एकान्त में रहने लगा, फिर अज्ञान वश प्रमादी होकर अत्यन्त व्याकुल हुआ ।४०। फिर भी मरण पर्यन्त मेरी स्मृति नष्ट नही हुई, इसलिए जन्म समय से जितने वर्ष व्यतीत हुये उन सभी का मुझे स्मरण है ।४१।

पूर्वाभ्यासेनतेनैवसोऽहंतातजितेन्द्रियः ।
यतिष्यष्यामितथाकर्तुं नभविष्येयथापुनः ।४२
ज्ञानवानफलं ह्येतद्यज्जातिस्मरणमम ।
नह्येतत्प्राप्यतेतातत्रयधिर्माश्रितैर्नरैः ।४३
सोहत्पूर्वाश्रमादेवनिष्ठधर्ममुपाश्रितः ।
एकान्तित्वमुपागम्ययतिष्याम्यात्मने क्षणे ।४४
तद्ब्रूहित्वमहाभागयत्ते संशक्यहृदि ।
एकावतापितेप्रीतिमुत्पाद्यानृण्यमानुयाम् ।४५
पिताप्राहतातःपुत्रश्रद्दत्तस्यद्वचः ।
भवतायद्वयंपृष्ठा,संसारग्रहणाश्रयम् ।४६
श्रृणुतातयथातत्वममुत्तमयऽसकृत् ।
संसारचक्रमजरस्थितियेस्यनविद्यते ।४७
सोऽहं वदामितेसर्वंत्वैवानुज्ञयापिता ।

उत्क्रान्तिकालादारभ्ययथानान्योवदिष्यति ।४८

पूर्वाभ्यास के कारण मैं जितेन्द्रिय होकर अब पुनः उसी प्रकार का यत्न करूंगा ।४२। जिससे ज्ञान और दानके भल-स्वरूप मुझ सब जन्मों का वृत्तान्त यादहै, परन्तु क्षत्री धर्म के आश्रयवालों को जन्म-जन्मान्तर वृत याद नहीं रह सकता ।४३। पूर्व जन्म मे अर्जित निष्ठा धर्म से ही मैं मोक्ष मे यत्न करने वाला हुआ हूँ ।४४। इसलिए आपक हृदय में जो संशय है, उसे कहिये, मैं एक उपाय से ही उस विषय मे आपको प्रीतिमान् करके उऋण हो जाऊँगा ।४५। पक्षियों ने कहा कि पिता ने यह बात सुनकर, जो प्रश्न आपने कि है, वही श्रद्धा सहित अपने पुत्र से किया ।४६। पुत्र बोला— इसका जो बारम्बार मुझे अनुभव हुआ है, वह यथावत कहता हू, इस संसार चक्र की स्थिति कहीं भी नहीं हैं।४७। हे पिता ! आपकी आज्ञा से वह सब वृत्तान्त कहता है जिसका वर्णन करने मे अन्य कोई भी समर्थ नही होगा ।४८।

उष्मा कुपितःकायेतीव्रवायुसमिरतः।
भिनत्तिमर्मस्थानानिदीप्यमानोरिन्धनः । ४९
उदानोनामपवनस्वतश्चोर्ध्वप्रवर्त्तते ।
भुक्तानामम्बुभक्ष्याणामधोगतिनिरोधकृत् ।५०
ततोयनाम्बुदानानिकृतान्यन्नरसास्तथा ।
दत्ताःसतस्यआह्लादमापदिप्रतिपद्यते ।५१
अन्नानियेनदत्तानिश्रद्धापूतेन चेतसा ।
सोऽतृिप्तमवाप्तोबिनाप्यन्नेनवैखदा ।५२
येनानृतानिनोक्तानिप्रीतिभेदःकृतोनच ।
आस्तिकः श्रद्दधानश्चससुखंमृत्युमृच्छति । ५३
देवब्राह्मणपूजायांयेरतानोनसूयवः ।
शुक्लावदान्याह्रीमन्तस्तेनराःसुखमत्यवः ।।५४
योनकाम.न्नसम्भान्नद्धर्ममुत्सृजेत् ।।
यथोक्तकारीसौम्यश्चससुखंमृत्युच्छति ।।५५
अवारिदायिनोदाहक्षुधावान्नदायिन. ।।

प्राप्नुवन्तिनराःकालेतस्मिन्मृत्यावुपस्थिते ।५६

देह-स्थित पित्त कुपित्त होकर बिना ईंधन के ही तीव्र वायु के चलने से दीप्त होकर सब मर्म स्थान को भेदता है ।४९। और देह का उदान वायु उसपर वर्तमान होकर सब जलीय भक्ष्य वस्तु की अधोगति को रोकता है,उस समय प्राणीका आत्मा वियुक्त होता है।५०। जिसने जल, अन्न, रस का दान किया है, वही उस मरण रूप आपत्काल में प्रसन्न रहता है ।५१। जो पवित्र मन और श्रद्धा पूर्वक अन्नदान करते हैं, वह उस समय बिना अन्न के भी तृप्त रहते हैं ।५२। जो पुरुष कभी मिथ्या भाषण नहीं करते किसी की प्रीति मे मन मुटाव नहीं कराते यथा जो आस्तिक एवं श्रद्धालु है, उनकी ही सुख पूर्वक मृत्यु होती है ।१३। जो देव ब्राह्मण का पूजन करते है, असूया रहित शुद्ध चित्त वाले एवं श्रेष्ठ वचन कहने वाले तथा लज्जावान् हैं वे सुख से प्राण त्यागते है तथा जो काम,क्रोध,द्वेषसे धर्मका त्याग नही करते, सत्य वचन कहते है तथा जो सौम्य स्वरूप हैं, उनका प्राण त्याग सुख पूर्वक होता है ।५५। जो प्यासे को जल और क्षुधार्त्त को अन्न नही देते वह मरण कालमें भूख प्यास से पीड़ित होते हैं ।५६।

शीतजयन्तिधनदास्तापचन्दनदायिनः ।
प्राणघ्नींवेदनांकष्टांयेचानुद्वेगकारिण. ।५७
मोहाज्ञानप्रदातार प्राप्नुवन्तिमहद्भयम् ।
वेदनाभिरुदग्राभिःप्रपीडयन्तेऽधमानराः ।५८
कूटसाक्षीमृषावादोयश्चासदनुशास्तिवै ।
तेमोहमृत्यवःसर्वेतथान्मेवेदनिन्दकाः ।५९
विभीषणा पूतिगन्धा कूटमुद्गरप णयः ।
आगच्छन्तिदुरात्मानोयमस्यपुरुषास्तदा ।६०
प्राप्तेधुदृक्पथ तेषुजायतेतस्यवेपथुः ।
क्रन्दत्यविरतसोऽथभ्रातृमातृसुतनथ ।६१
सास्यवागस्फुटाताएकवर्णाविभाव्यते ।
दृष्टिश्चभ्राम्यतेत्रासाच्छ्वासाच्छुष्यत्यथाननम् ।६२

ऊर्ध्वश्वासान्वित.सोऽथदृष्टिभङ्गसमन्वित: ।
ततः सवेदनाविष्टस्तच्छरीरंविसुंचति ।६३

काष्ठका दान करने वालों को मरण काल में शीत तथा चन्दन-दान करने वालों को ताप नही सताता तथा प्राणियों को भयभीत करने वालों को उस समय अत्यन्त यन्त्रणा भोगनी होती है ।५७। जो मोह और अज्ञान की शिक्षा देते हैं, उन अज्ञनो को अत्यन्त भय तथा घोर पीड़ा की प्राप्ति होती हैं ।५८। मिथ्या साक्षी देने वाले, मृषाबादी, वेद-निन्दक तथा कुशासकों की अज्ञान से मृत्यु होती है ।५६। तथा उनके मरण कालमें अत्यन्त घृणित वेश वाले भयङ्कर यमदूत मुद्गर हाथ में लिये हुए आते है ।६०। जैसे ही उन्हे यमदूत दिखाइ पड़ते हैं, वैसे ही वे कम्पित शरीर से भ्राता माता और पुत्र को पुकारते हुए रुदन करते है ।६१। उस समय उदकी बात समझने मे नही आती, वर्ण विकृत होता है और दृष्टि घूमने लगतीहै, त्रास और उच्चवास से मुख भी सूख जाता है ।६२। फिर ऊर्ध्वश्वास चलती है, नेत्र की दृष्टि नष्ट होती हैं और वेदना से ग्रसित होकर प्राण छूट जाताते हैं । ६३ ।

वाय्वग्रसारीतद्र पदेहमान्यत्प्रपद्यते ।
तत्कर्मजंयातनार्थंनमातृपितृसम्भवम् ।
तत्प्रमाणवयोवस्थासस्थानैः प्राग्भवयथा ।
ततोदूतोयमस्याशुपाशैर्बध्नातिदारुणैः ।
दण्डप्रहारश भ्रा तकर्ष तेदक्षि गादिशम् ।६५
कुशकण्टकवल्मीकशकुपाषाणककशैः ।
तथाप्रदीप्तज्वलनेक्वचिच्छ्भ्रशतोत्कटे ।६६
प्रदोप्तादित्यतप्तेनदह्यमानेनदंशुभिः ।
कृष्यतेयमदूतैश्चशिवासन्नादभीषणः ।६७
विकृष्यमाणस्तैर्घोरैर्भक्ष्यमाण:शिवाशतैः ।
प्रयातिदारुणेमार्गेपापकर्मायमक्षयम् ।६८
छत्रोपानत्प्रदातारोयेचवस्त्रदानराः ।
तेयान्तिमनुजामार्गंतंमुखेनतथान्नदा ।६९

विमानै सोज्ज्वलैर्यान्तिभूमिदानप्रदानराः ।
एवंक्लेशाननुभवन्नवश:पापपीडितः ।
नीयतेद्वादशाहेनधर्मराजपुरनर ॥७०

फिर वायु केआगे होकर कर्मफल रूप यंत्रणा का भोग करनेके लिए बिना माता-पिता के उत्पन्न पोने वाले अन्य शरीर को धारण करते है, वह शरीर पहिले के समान वय, अवस्था और सास्था वाल होता है। ।६४। फिर यमदूत उन्हें दारुण पाशमें बांध, दण्ड प्रहार करतेहुए दक्षिण की ओर खींचते हैं ।६५। कुश, काँटे वल्मीक शंकु तथा पत्थर से भी कठोर एवं प्रज्वलित अग्नि से व्याप्त, कहीं सैकड़ों गर्त से युक्त ।६६। सूर्य की अत्यन्त उष्णता से जलते हुए, कहीं सैकड़ों गीदड़ों के शब्द से व्याप्त तथा यमदूतों से खींचे जाते हुए ।६७। इस प्रकार उस प्राणी को सैकड़ों गीदड़ खाते हैं, ऐसे मार्ग से पापी पुरुषों को यमलोक में जाना होता है ।६८। जिन्होंने छत्री, जूता, वस्त्र अन्न दिया है वे उस मार्ग में सुख से जाते है ।६९। जो भूमिदान करते हैं, वे शुभ विमान मे बैठकर वहां पहुंचते हैं, पापी मनुष्य क्लेशों को पाते हुए बारहवें दिन धर्मराज के पूरे में पहुंचते है ।७०।

कलेवरेमह्यमानेमहान्तदाहर्मच्छति ।
ताडयमानेतथंवार्तिछिद्यमानेचदारुणाम् ॥७१
क्लद्यमानेचिरतरजन्तुर्दु:खमवाप्नुते ।
स्वेनकर्मबिपाकेनदेहान्तरगतोऽपिसन् ७२
तत्रयद्बान्धवास्तोयप्रयच्छन्तितिलैः सह ।
यच्चपिण्डप्रयच्छन्तिनीयमानस्तदश्नुते ।७३
तैलाभ्यङ्गबान्धवानामङ्गसंवाहनचयत् ।
तेनचाप्यायतेजन्तुयच्चाश्नन्तिस्वबान्धवाः ॥७४
भूमौस्वपद्भिरत्यन्तंक्लेशमाप्नोतिबान्धवैः ।
दानदद‌्भिश्चतथाजन्तुराप्याय्येतेमृतः ।७५
नीयमानःस्वकंगेहंद्वादशाहंसपश्यति ।
उपभुङ्क्तेतथादत्तंतोयपिण्डादिकंभुवि ।७६

द्वादशाहात्परंघोरमावासंभीषणक्रातिम् ।
याम्यपश्यत्यथोजन्तुः घृष्यमाणःपुरंततः ।७७

शरीर के जलने पर भीषण जलन तथा ताड़ित या छेदितहोने पर घोर वेदना भोगनी होती है ।७१। यह शरीर जब जल में भीगता है, तब देहान्तर आश्रय में भी कर्म फल से सदा दुःख का अनुभव होता है ।७२। उसके निमित्त उसके बाँधव जिस तिल जौ को जल सहित देते है, उस समय वह उसी का भोजन करता है ।७३। बाँधवों को तेलयाउबटन लगाना इसलिए वर्जित है कि मृतक के लिए भोजन में वही वस्तु मिलती है ।७४। बांधवों के धरती में सोने से उसका क्लेश मिटता है और दान करने से उसे प्रसन्नता होती है ।७५। बारहवें दिन उनको फिर उसी घर में जाना होताहै और वहाँ उसके निमित्तजो जलपिण्डादि दिया जाता है, उसका भोजन करता है ।७६। वारहवां दिन बीतने पर पुनः यमदूतों द्वारा खींचा जाकर अत्यन्त भीषण आकार वाले लोहमय यमपुर को जाता है ।७७।

गतमात्रोऽतिरक्ताक्षं भिन्नाज्जानचयप्रभम् ।
मृत्युकालान्तकादीनांमध्येपश्यतिवैयमम् ।७८
दंष्ट्राकरालवसनं भ्रुकुटीदारुणाकृतिम् ।
विरुपैर्भीषणैर्वक्रैर्वृतंव्याधिशतैः प्रभुम् ।७९
दंडासक्तंमहाबाहुं पाशहस्तंसुभैरवम् ।
तन्निर्दिष्टांततेयातिगतिजन्तुः शुभाशुभाम् ८०
रौरवेकूटसाक्षीतुयातियश्चानृतीनरः ।
ब्रह्मघ्नोहत्ययादष्टोगोघ्नश्चपितृघातकः ।८१
क्षेत्रदारापहारीचसीमानिक्षेपहारकः ।
गुरुपत्न्यभिगामीचकन्यागामीतथैवच ।८२
तस्यस्वरूपंगदतोरौरवस्यनिशामय ।
योजनानांसहस्त्रेद्वेरौरवोहिप्रमाणतः ।
जानुमात्रप्रमाणश्चततःश्वभ्रसुदुस्तरः ।८३
तत्राङ्गारचयोपेतं कृतंचधरणीसमम् ।

जाज्वल्यमानस्तीव्रेणतापिताङ्गारभूमिना ।८४

वहा पहुँच कर मृत्यु, काल, अन्तक आदि पार्षदों के सहित यमराज के दर्शन करता है ।७८। वह यमराज अत्यन्त विकराल वदन, भीषणाकार, विरूप तथा वक्र आकृति को असंख्य व्याधियों से घिरे हुए हैं ।७६। वह दण्ड और पाश धारण किये हुए अत्यन्त भयंकर आकार वाले है, उन्हीं के द्वारा निर्दिष्ट श्रेष्ठ अथवा निम्न गति को प्राणी प्राप्त करते है ।८०। मिथ्यावादी तथा मिथ्या साक्षी देने वालों को रौरवनरक में डाला जाता है, ब्रह्म-हत्यारे, गो हत्यारे तथा पिता की हत्या करने वाले ।८१। खेत, सीमा, धरोहर या स्त्री का हरण करने वाले, गुरु-पत्नी या कन्या से समागम करने वाले भी उसी रौरव नरक को प्राप्त होते है ।८२। अब उस रौरव नरक का स्वरूप बताता हूँ उसे सुनो । वह दो सहस्र योजन लम्बा है, उसमे जंघा के बराबर गहरा गर्त है । ।८३। उस गर्त मे मिट्टी जैसे अंगार भरे हैं, उन अंगारों के ताप से प्राणी सदा जलता रहता है ।८४।

तन्मध्येपापकर्माणविमुञ्चन्तियमानुगाः ।
सदह्यमानस्तीव्रेणवह्निनातत्रधावति ।८५
पदेपदेचपादोऽस्यशीर्यतेजीर्यतेपुनः ।
अहोरात्रेणोद्धरणपादन्यासचगच्छति ।८६
एवंसहस्रमुत्तीर्णोयोजनानांविमुच्यते ।
ततोऽन्यत्पापशुद्धयर्थंतादृङ्निरयमृच्छति ।८७
ततःसर्वेषुनिस्तीर्णःपापीतिर्यक्त्वमश्नुते ।
कृमिकीटपतङ्गेषुश्वापदेमशकादिषु ।८८
गत्वागजद्रुमाद्येषुगोष्वश्वेषुतथैवच ।
अन्यासुचैवपापसुदुःखदासुचयोनिषु ।८९
मानुष्यंप्राप्यकुब्जावाकुत्सितोवामनोऽपिवा ।
चाण्डालपुल्कसाद्यासुनरायोनिषुजायते ।९०

पापी मनुष्यो को यमदूत उसमें फैंकते हैं, वे उस तीव्र अग्नि में दाह को प्राप्त हुए इधर उधर भागते है ।८५। इसप्रकार पग-पग पर उनके पाँव अग्नि से जल कर फटते और नष्ट होते हैं, दिन रात्रिमें केवल एकबार

ही पैर रखने और उठाने का सामार्थ्य उसमें होता है।८६। इस प्रकार पैर रखने पर हजार योजन चलने पर वहाँ से मुक्त होकर उसी जैसे अन्य नरक को प्राप्त होता है।८७। इस प्रकार सब नरकों को भोगकर तिर्यक योनि में जन्म लेता है, क्रमशः कृमि, कीट, पतंग, श्वापद, और मच्छर होता है।८८। फिर गौ, अश्व, गज, वृक्ष, लता आदि अनेक पाप योनियों को प्राप्त होता हुआ। मनुष्य जन्म ग्रहण करता है। उसमें भी कुबड़ा कुत्सित, बौना, चाण्डाल, पुल्कस आदि निन्दनीय योनियों में उत्पन्न होता है।८६-६०।

अविशिष्टेतपापेनपुण्येनचसमन्वितः।
ततश्चारोहणीजातिंशूद्रवैश्यनृपादिकाम्।६१
विप्रदेवेन्द्रताञ्चापिकदाचिदवरोहणीम्।
एवन्तुपापकर्म्मणोनरकेषुपतन्त्यधः।६२
यथापुण्यकृतोयांन्तितन्मेनिगदतःशृणु।
तेयमेनविनिर्दिष्टांयान्तिपुण्यांगतिंनरा।६३
प्रगीतगन्धर्वगणैःप्रनृत्ताप्सरसांगणः।
हारनूपुरमाधुर्यशोभितात्युत्तमानिच।६४
प्रयान्त्याशुविमानानिनानादिव्यस्त्रगुज्ज्वलाः।
तस्माच्चप्रच्युताराज्ञामन्येषांचमहात्मनाम्।६५
जायन्तेचकुलेतत्रसद्वृत्तपरिपालकाः।
भोगान्संप्राप्नुवन्त्यग्र्यांस्ततोयान्त्यूर्ध्वमन्यथा।६६
अवरोहिणीञ्चसम्प्राप्यपूर्ववद्यान्तिमानवाः।
एतत्तेसर्वमाख्यतंयथाजन्तुर्विपद्यते।
अतःश्रृणुष्वविप्रर्षेतधागर्भंप्रपद्यते।६७

फिर शेष रहे पुण्ड से मनुष्य योनि मे क्रमशः शूद्र, वैश्य, क्षत्रिय।६१।ब्राह्मण होता हुआ सुरपति तक हो सकता है और(पापाकरण करे तो) अपरोहिणा गतिसे क्रमपूर्वक उन्हीं योनियोंसे गिरता है।६२। अब उसगति को कहता हूँ, जिसे पुण्यवान् मनुष्य पाते हैं। वह भी यमराज के द्वारा निर्दिष्ट गति को प्राप्त करत है।६-।उनके गमन कालमें उनके

चारों ओर गंधर्व गान करते और अप्सरायें नृत्य करती है, तथा हार-नूपुर माधुर्य आदि से युक्त अति श्रेष्ट ।६४। विमान उनके पास आते है और वे दिव्य मालादि धारण पूर्वक उनमें चढ़कर जाते हैं, फिर पुण्य शेष होने पर विमान से पतित होकर महात्मा ।६५। या राजवंश में उत्पन्न होकर सदाचार का पालन करते और अनेक प्रकार के सुख भोग कर क्रमशःऊर्ध्व गति को पाते है ।६६। यदि अवरोहिणी दशा को प्राप्त होते हैं तो प्रथम पूर्वोक्त सब भोग करते हैं, हे मात ! जीवों की जिस प्रकार मृत्यु होतीहै, वह कह दिया,अब गर्भ धारण का प्रकार सुनिये।६७।

१५ — गर्भस्थित वर्णन

निषेषकंमानवस्त्रीणांवीजं प्रोक्त रजस्यथ ।
विमुक्तमात्रोनरकात्स्वर्गाद्वापिप्रपद्यते ।१
तेनांभिभूतंतत्स्थैर्यं यातिवीजद्वयंचततः ।
कललत्वं बुदत्वं ततःप्रशित्वनेवच ।२
पेश्यास्तथायथावीजादंकुरादिसमुद्‌भवः ।
अङ्गानाँचतथोत्पत्तिःपञ्चानामनुभागशः ।३
उपाङ्गान्यंगुलीनेत्रनासास्यश्रवणानिच ।
प्ररोहयान्तिचाङ्गेभ्यस्तद्वत्तेभ्योतखादिकम् ।४
त्वचिरोमाणिजायन्तेकेशाश्चैवततः परम् ।
नारिकलंभर्लयद्वत्सकोश बृद्धिमच्छति ।
तद्वत्पयात्यसौवृद्धिसकोशोऽधोमुखःस्थितः ।५

पुत्र ने कहा—स्त्री-पुरुष के रज-वीर्य मिश्रण काल मे स्वर्गयानरक से छूटते ही मनुष्य उसका अवलम्बन करता हूँ।१। तथा उसमे अभिभूत होकर दोनों बीज स्थिर होकर बुलबुले के लम्बे या गोल आकारकोप्राप्त होतेहै ।२। उस अण्डाकार में स्थित सूक्ष्म बीजको अंकुर कहते है, उस अंकुर के विभाग से पाँचों अंग उत्पन्न होते हैं ।३। फिर सभी उपाङ्ग उत्पन्न होकर उनसे अंकुर और उससे सुखादि उत्पन्न होते हैं ।४। फिर

त्वचा पर रोमावली और केशो की उत्पत्ति होती है, और फिर सब अंग और उद्भवकोणों की समान भाव से वृद्धि होती है। । अर्थात् जैसे नारियल का फल कोष सहित वृद्धि को प्राप्त होता है, वैसे ही गर्भकोष सहित नीचे की ओर मस्तक किये बढ़ता है ।६।

तलेनुजानुपार्श्वाभ्यांकरौन्यस्यसंवर्द्धते ।
अंगुष्ठौचोपरिन्यस्तौजान्वोरग्रतियांगुली ।७
जानुपृष्ठेतथानेत्रे जानुमध्येचनासिका ।
स्फिचौपार्ष्णिगतस्तेचबाहुजंघेबहि स्थिते ।८
एवं वृद्धिक्रमाद्याति जन्तुस्त्रीगर्भसंस्थितः ।
अन्यसत्त्वोदरेजन्तोर्यथारूपतथास्थितिः ।९
काठिन्यमग्निनायातिभुक्तपीतेन जीवति ।
पुण्यापुण्याश्रयमयोस्थितिजन्तोस्मथोदरे ।१०
नाडीचाप्यायनीनाभ्यांतस्यनिबध्यते ।
स्त्रीणांतथान्त्रशुचिरेसातिबद्धोपजायते ।११
क्रामन्तिभुक्तपीतानिस्त्रीणांगर्भोदयथा ।
तराप्यायितदेहोऽसौजन्तुर्वृद्धिमुपैतिवै ।१२
स्मृतितत्रप्रभान्त्यस्यवह्निच.समारभूमयः ।
ततोनिर्वेदमायातिपीड्यमानइतस्ततः । १३

जब निम्न मुख किये प्राणी गर्भ कोष मे रहता है, तब जानु और पार्श्व सहितदोनों हाथ नीचेके भागमें रहते हैं, दोनों अंगूठे जानु परतथा सब अंगुलियाँ जानु के अगले भाग में फैली रहती है ।७। दोनोचक्षु जानु के पीछे और नासिका जानु केमध्यमें रहतीहै दोनों कूल्हे पार्ष्णपर तथा बाहु और जंघा बाहरी भाग में रहती है ।८। गर्भ में प्राणी इस प्रकार बढ़ता है,अन्याय जीवोंमें अपनी-अपनी आकृतिके अनुसार वहाँ रहताहुआ बढ़ता है ।९। उदर की अग्नि में कठिन होता जाता है और खाये पिये पदार्थ द्वारा जीवन धारण होता है। पाप और पुण्यकी अधिकताकेभेदसे गर्भ वास भी विभिन्न प्रकार का है ।१०। उसकी नाभि में निबद्ध आप्यायनी नामक नाड़ी स्त्री की आंत से लगी रहती है ।११। उसी के

छिद्र से सब खाये-पिये हुए पदार्थ उसके देह में जाकर देहको तृप्त करते हुए बढ़ाते हैं।१२।उस समय उसे संसार के अनेक जन्म याद आते हैं और तब वह अत्यन्त दुखित होता है ।१३।

पुनर्नैवंकरिष्यामिमुक्तमात्रइहोदरात् ।
तथातथायतिष्यामिगर्भंनाप्स्याम्यहृयथा ।१४
इतिचिन्तयतेस्मृत्वाजन्मदुःखशतानिनै ।
यानिपूर्वानुभूतानिदैवभूतानियानिवै ।१५
ततः कालक्रमाज्जन्तुःपरिवर्तत्यधोमुखः ।
नवमेदशमेवापिमासिसञ्जायतेततः ।१६
निष्क्राम्यमाणोवातेनप्राजापत्येनपीड्यते ।
निष्क्राम्यतेचविलपन्हृदिदुःखनिपीडितः ।१७
निष्क्रान्तश्चोदरान्मूर्छामसह्यांप्रतिपद्यते ।
प्राप्नोतिचेतनांचासौवायुस्पर्शसमन्वितः ।१८
ततस्तंवैष्णवीमायासमास्कन्दतिमोहिनी ।
तयाविमोहितात्मासौज्ञानभ्रंशमवाप्नुते ।१९
भ्रष्टज्ञानोबालभावंततोजन्तुप्रपद्यते ।
ततःकौमारकावस्थांयौवनंवृद्धतामपि ।२०
पुनश्चमरणंतद्वज्जन्मचाप्नोतिमानवः ।
ततः संसारचक्रेस्मिन्भ्राम्यतेघटियन्त्रवत् ।२१

दैव प्रदत्त शत-शत जन्म के दुःखों को याद कर वह सोचता है कि उदरसे निकलकर फिर कभी एसे कार्य न करूँगा,जिससे फिर भी गर्भ में रहने का दुःख भोगना पड़े ।१४-१५। फिर उस अधोमुखी जीव का जन्म नौवें या दशवें महीने में होता है ।१६। उस समय प्राजापत्य वायु से अत्यन्त पीड़ाको प्राप्त हुआ, दुःखसे पीड़ित तथा विलाप करता हुआ बाहर निकलता है ।१७। उदर से निकलते ही उसे मूर्छा होती और वायु के स्पर्श से चेत होता है।१८। फिर मोहिनी माया उसे मोहित कर देती है, जिससे उसका ज्ञान नष्ट हो जाता है ।१९। ज्ञानके नष्ट होने पर बाल्य, कौमार,युवा और वृद्धावस्था आदि दशाओंको वह क्रमशः प्राप्ति

कपता है ।२०। फिर मर कर उसी रूपमें जन्म लेताहे,इसप्रकार संसार चक्र में वह घटीयन्त्र की भांति निरन्तर घूमता रहता है ।२१।

कदाचित्स्वर्गमाप्नोति कदाचिन्नरकं नरः ।
निरयं च स्वर्गं च कदाचिच्च मृतोऽश्नुते ।२२
कदाचिदत्र वपुनर्जात स्वकर्मसोऽश्नुते ।
दकदाचिद्भुक्तकर्मा च मृतःस्वल्पेनगच्छति ।२३
कदाचिदल्पश्चततोजातेत्रशुभाशुभैः ।
स्वर्लोकेनरकेवापिभुक्तप्रायोद्विजोत्तम ।२४
नरकेषुमहद्दुःखमेतद्यत्स्वर्गवासिनः ।
दृश्यन्तेतातमोदन्तेपात्यमानाश्चनारकाः ।२५
स्वर्गेपिदुःखमतुलंयद्वारोहणालनः ।
प्रभृत्यहंपतिस्यामीत्येतन्मनसिवर्तते ।२६
नरकांश्चैवसंप्रेक्ष्यमहद्दुःखमवाप्यते ।
एतांगतिमहं गतेत्यहर्निशमनिर्वृतः ।२७
गर्भवासेमहद्दुःखजायमानस्ययोनितः ।
जातस्यबालभावेचवृद्धत्वेदुःखमेवच ।२८

कभी स्वर्ग कभी नरक तथा कभी दोनों स्थानों में जाता रहता है ।२२। कभी पुनः इसी स्थानमें जन्म धारण पूर्वक कर्मफल भोगता और कभी सब कर्मोंका भोग करलेने पर अल्पकाल में ही प्राण छोड़ देता है ।२३। कभी साधारण से शुभ या अशुभ कर्म से स्वल्प काल को स्वर्ग या नरक में पड़ता है ।२४। स्वर्गमें निवास करने वालोंको अनेक प्रकार के आमोद प्रमोद करते देखकर पापियों को बड़ा दुःख होता है ।२५। परन्तु स्वर्गमें भी असीमित दुख हैं,वहां के निवास काल में भय लगा रहता है कि पुण्यके क्षीण होने पर पुनःउसीमें गिरना पड़ेगा।२६। उन नरकवासियों की गति देखकर सोचते हैं कि हम भी फिर ऐसी गतिको पायेंगे ऐसा विचारकर उन्हें अत्यन्त दुःख होता रहता है ।२७।प्रथम तो गर्भवासही अत्यन्त दुःखपूर्ण है,फिर योनि-छिद्रद्वारा बाहर निकलनाती नितान्त ही कष्टमय है और जन्म होने पर बाल्यावस्था और वृद्धावस्था

यह दोनों ही कष्ट देने वाली हैं ।२८।

कामेर्ष्याक्रोधसम्बन्धयौवनं चाति दुःसहम् ।
दुखप्रायावृद्धताचमरणेदुःखनुत्तमम् ।२६
कृष्णमाणश्चयार्म्यैश्चनरकेषुच्चयातयतः ।
पुनश्चगर्भाजन्माथमरणं नरकस्तथा ।३०
एवंसंसारचक्रेस्मिञ्जन्तवोघटीयन्त्रवत् ।
भ्राम्यन्तप्राकृतैर्बद्धावध्यन्तिचासकृत्तदा ।३१
नास्तिताततासुखंकिंचिदत्र दुःखशताकुले ।
तस्तान्मोक्षायतताकथंसेव्यामयात्रयी ।३२

काम, क्रोध, ईर्ष्या आदि से परिपूर्ण युवावस्था तो अत्यन्त ही दुःख मय है, उस पर भी वृद्धावस्था को तो दुःख की खान ही समझिये, उससे भी बढ़कर मरण में तो अत्यन्त घोर दुःख है ।२९। इसके पश्चात् जब यमदूत खींचकर नरक मे ढकेलते हैं, तब तो दुखो की सीमा ही नहीं रहती फिर भी गर्भ में रहना, जन्म लेना, मरना और पुनः नरक की प्राप्ति होती है ।३०। इस प्रकार प्राणी इस संसार चक्र में घटी यंत्र के समान निरन्तर घूमते हुए बन्धन के दुःख को बारम्बार भोगते हैं ।३१। असंख्य दुःखों वाले इस संसार में लेश मात्र भी सुख नहीं है, । इसलिए जब मोक्ष प्राप्त के लिए प्रयत्नशील हूँ तो त्रयीविद्या धर्म का क्यो सेवन करूँ ? मुझे तो अपरा विद्या को प्राप्त करना है ।३२।

१२—महारौरवादिनरक वर्णन

साधुवत्सत्वयाख्यातंसंसारगहनंपरम् ।
ज्ञानप्रदानसंभूतंसमाश्रित्यमहाफलम् ।१
तत्रतेनरकाःसर्वेयथावैरौरवास्थता ।
वर्णितास्तान्समाचक्ष्वविस्तारेणमहामते ।२
रौरवस्तेसमाख्यातःप्रथमंनरकोमया ।
महारौरवसंज्ञंतुशृणुष्वनरकंपितः ।३
अगम्यागमनेयेचयेचअभ्यक्षणेरताः ।

मित्रद्रोहकराश्चैवस्वामिविश्र भघातकाः ४
परदाररताश्चैवस्वदारपरिवर्जिनः ।
मार्गभंगकरायेचतडागारामभेदकाः ।५
एतेन्येचदुराचारा दह्यन्तेतत्रकिंकरैः।
योजनानां सहस्त्राणिमप्तपंचममन्ततः।
तत्रतम्रमयीभूमिरधस्तस्याहूताशनः ।६
तत्रापतन्तामासर्वा गेद्यद्विद्युत्समप्रभा ।
विभात्याति महारौद्रा दर्शनस्पर्शनादिषु ।७

पिता ने कहा —हे वत्स ! ज्ञान देने के रूप में महा फलदायक परम संसार-रहस्य का तुमने भले प्रकार वर्णन किया है ।१। रौरव नरक तथा अन्यान्य नरकों का जो वर्णन किया, अब उसी को विस्तार सहित कहो ।२। पुत्र ने कहा- हे पिताजी ! मैंने प्रथम आपको रौरव नरक का वर्णन किया था, अब महा रौरव नरक का वर्णन सुनिये ।३। गमन के अयोग्य मार्ग में जाने वाले, अभक्ष्य भोजन करने वाले, मित्रद्रोही तथा स्वामी से विश्वास घात करने वाले ।४। पर स्त्री का सेवन करने वाले, अपनी पत्नी को त्याग ने वाले, मार्ग, तड़ाग और उपवनों का नष्ट करने वाले ।५। पापियों को वहीं लेजाकर यमदूत दग्ध करते है, उसका प्रमाण चारों ओर बारह योजन है, उसकी भूमि ताम्र-मयी तथी नीचे अग्नि की खान वाली है ।६। अग्नि के ताप से तप्त हुई वह ताम्र वर्ण वाली भूमि बिजली की चमक के समान सब दिशाओं को प्रकाशित करती है उसे देखना या छूना अत्यन्त भयङ्कर है ।७।

तस्यांद्ध;कराभ्यांचपद्भ्यांचैवतानुगः ।
मुच्यतेपापकृन्मध्यलुठयमानःसगच्छति ८
काकैर्वकैर्वृकोलूकैर्मशकैस्तथा ।
भक्ष्यमाणस्तथागृध्रैर्द्रुतंमार्गं विकृष्यते ।९
दह्यमानःपितर्मातभ्रातस्ताततेतिचाकुलः ।
वदत्यसकृदुद्विग्नोनशान्तिमधिगच्छति ।१०
एवं तस्मान्नरैःमोक्षाह्यतिक्रान्तैरेवाप्यते ।

वर्षायुतायुतैःपापं यःकृतंदुष्टबुद्धिभि ११
तथ न्यस्तुतमोनामसोऽतिशीतःस्वभावतः ।
महारोरववद्दीर्घस्तथातितमसावृतः ।१२
गोवधश्चकृतोयेनभ्रातृगांघातएवच ।
अबन्नवालघातीचनीयतेशीतसंकरे ।१३
शीतार्तास्तत्रधा वतिनरास्तमसिदारुणे ।
परस्परसमामाद्यपरिरभ्याश्रयन्तिच ।१४

पापियों के हाथ-पाँव बाँध कर यमदूत उन्हें उसमें डालते हैं तब वे उसमें पड़े लेटते है ।८। मार्ग मे काक, बगुले, भेड़िये, उलूक, बिच्छू, मच्छर और गृध्रादि द्वारा खाये जाते हैं।६।फिर दग्ध होते हुए, माता, पिता भ्राता इत्यादि चिल्लाते हुऐ अत्यन्त उद्विग्न तथा अशान्त रहते हैं ।११। सदापाप करके वाले दुष्टबुद्धि मनुष्य हजार-हजार वर्षमे उसका अतिक्रमण करके मुक्त हो पाते हैं ।११। उसके पीछे ही घोर अन्धकार से आवृत तम नाम नरक है, वह महा रौरव के समान ही विशाल तथा अत्यन्त शीतल है ।१२। उसमे गौ–हत्यारे, भ्रातृ-हत्यारे और बालघातियों को डाला जाता है ।१३। इसनरक मे गिरने वाले जीव उस महान् अन्धकार में शीतसे आर्त्त होकर इधर-उधर दौडते फिरते हैं तथा दूसरे नारकीयों से मिल कर उनसे लिपट कर वहाँ रहते है ।१४

दन्तास्तेषांचभज्यन्ते शीतार्त्तिपरिकम्पिताः ।
क्षुत्तृष्णाप्रबलातत्रथवान्तेऽप्युपद्रवा ।१५
हिमखण्डवहोवायुर्भिदत्यस्थीनिदारुण. ।
मज्जासृग्गलितस्मादश्नुवन्तिक्षुधान्विता । ६
लेमिह्यमानाभ्रम्यन्तेपरस्परसमागमे ।
एवतत्रापिसुमहान्क्लेशस्तमसिमानवैः ।१७
प्राप्यतेब्राह्मणश्रेष्ठयावद्दुष्कृतसंक्षयः ।
निकृन्तनइतिख्यातस्ततोऽन्योनरकोत्तमः ।१८
तस्मिन्कुलालचक्राणिभ्राम्यन्त्यविरतंपितः ।
अनेष्टंदृष्टवद्ब्रूयादश्रुतंश्रुतमेवच ।१९

एकाक्षरं गुरुं यस्तुदुराचारोनमन्यते ।
नश्रृणोतिगुरोर्वाक्यंशास्त्रवाक्यंतथैवच ।२०
एतेपापादुराचारास्तत्रतैर्यमपुरुष ।
तेष्वारौप्यनिकृत्यन्तेकालसूत्रेणमानवा: ।२१
य गनुगांगुल्सिस्थेन आपादनन्लमस्तकम् ।
नचैवाजीवितनभ्र शोजायतेद्विजसत्तम ।२२

शीत मे कांपते रहनेके कारण उनके दांत टूट जाते हैं तथा भूख-प्यास आदि सभी उपद्रव प्रबल हो जाते हैं ।१५। हिम खण्डों को बहाने वाली दारुण वायु उनकी हड्डियों का तोड देती है, जिससे मज्जा और रक्त गिरता है । वे प्राणी क्षुधातुर होकर उसी का भोजन करते हैं ।१६ परस्पर मिल कर शरीरों को चाटते हुए घूमते, इस प्रकार उन्हें अत्यन्त क्लेश रहता है ।१७। जब तक भले प्रकार पापों का क्षय नहीं हो जाता तब तक तुम नामक नरक मे महान् क्लेशों को भोगते हैं उनके पोछे निकुन्तन नामक एक प्रधान नरक है ।१८। वह कुम्हार के चाक के समान निरन्तर घूमता रहता है, उस चक्र में पापियों को काल सूत्र से काटा जाता है और न देखे हुए का देखे हुए के समान तथा न सुने हुए को सुने हुए के समानही वर्णन करता है ।१९। जो दुराचारी मनुष्य एकाक्षर दाता गुरु को ईश्वरके समान नहीं मानता या गुरु और शास्त्र के वचन को नहीं पालता ।२०। वे पापी मनुष्य उस चक्र पर चढाये जाकर काल सूत्र से पैरों से सस्तक तक काटे जाते हैं तो भी उनका जीवन नष्ट नहीं हो पाता ।२१-२२।

छिन्नानितेषांशतशःखण्डान्यैक्यंव्रजन्तिच ।
एवंवर्षसहस्राणिछिन्तेपापकर्मिण: ।२३
तावद्यावदशेषंवंतत्पापंहिक्षयंगतम् ।
अप्रतिष्ठंचनरकंश्रृणुष्वगदतोमम ।२४
यत्रस्थैर्न्नारकैर्दु:खमसह्यमनुभूयते ।
स्वधर्मरतविप्राणांविघ्नयस्तुसमाचरेत् ।२५
सबद्धं दारुणै:पाशैर्नीयतेचक्रसंकरै: ।
तान्येवतत्रचक्राणिघटीयन्त्राणिचान्यत: ।२६

दुःखस्यहेतुभूतानिपापकर्मकृतांनृणाम् ।
चक्रेष्वारोपिताःकेचिद्भ्रम्यन्तेत्रतानवाः ।२७
यावद्वर्षसहस्त्राणिततगास्थितिरन्तरा ।
घटीयन्त्र षुचैभान्योवद्धस्तोयेयथाघटी ।२८

फिर यह सौ-सौ टुकड़े होकर पूर्ववत् मिल जाते हैं और हजार वर्ष तक इसी प्रकार काटे और जोड़े जाते है ।२३। जब तक कि उनके प प नष्ट नहीं हो जाते, अब अप्रतिष्ठ नामक नरक का वर्णन सुनो ।२४ जहां रहकर असह्य क्लेश होते हैं । जो मनुष्य स्वधर्म मे तत्पर ब्राह्मणों के समक्ष विघ्न उपस्थित करता है ।२५। उस दारुण पाश मे बांधकर चक्र लेकर नरक में डालते है, वह चक्र और घटीयन्त्र ।२६।पापियों के लिए दुःखो के कारण रूप होते है, कुछ प्राणी उस चक्र पर चढ़ाकर घुमाये जाते हैं ।२७। उनको उस नरक में एक हजार वर्ष रहना होता है, कोई पापी छोटे घड़े के समान बांधा जाकर ।२८।

भ्राम्यन्तेमानवारक्तमुद्गिरन्तःपुनःपुनः ।
अन्त्रैर्मुखेविनिष्क्रान्तुर्नव रम्रावलम्बिभिः २६
दुखानितेप्राप्नुन्तियान्यसह्यानि जन्तुः।
नसिपत्रबनं नामरकश्रणुचापरम् ।३०
योजनानांसहस्त्रं योज्वल दग्न्यास्तृतावनिः ।
ब्रह्मचारिव्रतानांचतपांविघ्नमाचरेद् ।३१
असिपत्रवनयांतिथेपदोद्वेगकारिणः ।
तप्ता सूर्यकरैश्च डैयत्रात वसुदारुणैः।३२
प्रपतन्तिसदातत्रप्राणिनोनरकौकसः ।
तन्मध्येचवनंरम्यरस्त्रग्धपत्राविभाव्यते ।३३
पत्राणितत्रखडगाराफलाअिद्विजसत्तम ।
श्वानश्चतत्रसबलाः स्वनन्त्ययुतशोभित ः।३४
महाबक्त्रामहाद्रंष्ट्राव्याघ्राइवभयानकाः। ।
ततस्तद्वन्वमालोक्यशिशिरच्छायमग्रतः ।३५
प्रयान्त्यिप्राणिनस्तत्रतुटूतापपरिपीडिताः ।

हामातहातातइतिक्रन्दन्तोऽतीवदुःखिताः ।३६

उसे घटी यन्त्र पर घुमाया जाता है जिससे वह बारम्बार रक्त-वमन करता है। उनकी आंतें मुख द्वारा बाहर निकलती है, रक्त की धारा बहती है और आंखें निकल आती हैं ।२६। वहां ने अत्यन्त पीड़ित होकर असह्य दुःख पाते हैं, इसके पीछे असिपत्र नामक एक दारुण नरक का वर्णन करता हूँ ।३०। यह नरक पृथिवी को सहस्र योजना पार करके स्थित जलती हुई अग्नि से व्याप्त है जो ब्रह्मचारी व्रत और तप से भ्रष्ट होते है ।३१। वे उस असिपत्र वन को प्राप्त होते है, वे भयङ्कर एवं प्रकाण्ड सूर्य किरणों से तप कर इसमें पड़ते है ।३२। उसमें एक अत्यन्त मनोहर-वन है, देखने में उसके सब पत्ते अत्यन्त चिकने प्रतीत होते हैं ।३३। हे द्विजोत्तम ! उसके सभी पत्रङ्ग के फलक जैसे है, वहाँ अत्यन्त बली श्वान भी रहने है ।३४। वे व्याघ्र के समान विशाल दाढ़ वाले थे, जिनकी दाढ़ें तीव्र थीं तथा वे अत्यन्त भयंकर थे। उस वन शीतल छाया से युक्त देखकर ।३५। क्षुधा-पिपासा से कातर जीव उसमें घुसकर दुःखित चित्त से 'हा माता, हा पिता' पुकारते हुए रुदन करते है ।३६।

दह्यमानाङ्घ्रियुगलाधरणीस्थेनवह्निना ।
तेषांगतातानांतत्रासिपत्रसिपत्रपातीसमीरणः।३७
प्रवातितनपात्यन्तेतेषांगात्रयोपरि ।
ततःपतन्तितेभूमौज्वलद्पावकसञ्चये ।३८
ले लह्यमानेचातीवव्याप्त.शेपमहीतले ।
सारमेयास्ततःशीघ्रशातयन्तिशरीरत, ।३९
तेषामंगानिरुदतांत्वचश्चतीवभीषणः ।
असिपत्रवनंतातमयैतत्कीर्तितंतव ।४०
अतःपरंभीमतरम्तकुम्भनिबोधमे ।
समन्ततस्तप्तकुम्भावह्निज्वालासमावृताः ।४१
ज्वलदग्निचयोत्तप्तास्तैलयश्चचूर्णपूरिताः ।
तेपुदुष्कृतकर्माणोयाम्यैःक्षिप्तस्त्वधामुखाः ।४२

आग्न-युक्त पृथिवी से उनके पाव दग्ध होते हैं, तथा असिपत्रों को

गिराने वाला वायु चलता है ।३७। जिससे खङ्गवत् गिरते हुए असिपत्र उन पर पड़ते हैं, फिर वे जलती हुई अग्नि में गिराये जाते हैं ॥३८॥ तब जीभ से चाटते हुए पृथिवी पर गिरते है और वहाँ अत्यन्त भयंकर श्वान उन रुदन करते हुए प्राणियों के सभी अङ्गों को छिन्न-भिन्न कर डालते हैं। हे तात् ! आपसे असिपत्र वन नामक नरक का वर्णन किया गया है ।४०। इसके पीछे जो तप्त कुम्भ नामक भयङ्कर नरक है, अब उसके विषय में कहता हूं। इस नरक के चारों ओर अग्नि की लपटें उड़ती रहती हैं ।४१। प्रज्जवलित अग्नि से तप्त होता हुआ तैल और लोहे से युक्त चूर्ण से युक्त उस नरक में पापी मनुष्य को यम के दूत अधोमुख करके गिराते हैं ।४२।

दूषयेद्धर्मद्धशास्त्राणियेचान्येतीर्थदूषकाः ।
भुक्तभोगांतुयोनारींमिध्यथमाणाप्रियांशुभाम् ।४३
अदृष्टामपिताषेणपत्यजतेमूढचेतनः ।
तेसमानीयपख्यंतेलोहकुम्भेषुशीघ्रतः ।४४
क्वाथ्यन्तेविस्फुटद्गात्रागुयलन्मज्जाजलाविलाः ।
स्फुटत्कपालनेत्रास्थिच्छिद्यमानातिभीषणै ।४५
गृध्रै रुत्पाट्यमुच्छन्तेपुनस्तेष्वेववेगितै ।
पुनःसिमसिमायन्तेतैलेनंक्यैन्ब्रजन्तिच ।४६
द्रवीभूतेःशिरोगात्रस्नायुमांसत्वगस्थिभिः ।
ततोयाम्यैर्भटैराशुदर्वीघट्टनघट्टिताः ।४७
कृतावर्तेमहातैलेमथ्यन्तेपापकर्मिणः ।
एषतेविस्तरेणोक्तस्तप्तकुम्भोमयापितः ।४८

जो धर्म शास्त्रों और तीर्थों को दूषित करने वाले हैं तथा जो जन चाहो शुभ लक्षण स्त्री को ।४३। बिना दोष देखे ही दोष देते है वहइस लौह कुम्भ में गिराये जाते है ।४४। उनक शरीर उसी समय फट जाते हैं और मज्जा, जल आदि जलकरशुष्क हो जाते है। इस प्रकारउनको पकाया जाताहै तथा उनके कपाल नेत्रएवंसम्पूर्ण अस्थियां भयंकरपूर्वक छिन्न-भिन्न करदीजातीहैं ।४५। उसकेपश्चात् अत्यन्तवेगवालेभयंकर ग्रध्र उन्हें उठाकरपुनः उसी में डालतेहैं तथा वे पकते हुए तैलमेंमिलकरउसके

समान ही जाते है ।४६। मस्तक स्नायु, मांस,त्वचा, अस्थि आदि सभी द्रवी भूत होकर तैलमे मिल जाते है तब उन पापियोंको दवी द्वारा कूटा जाकर ।७७।महा तैल के गढ़े में डाल कर मथा जाता है इस प्रकार तप्त कुम्भ आदि नरकों का सविस्तार बर्णन आपके प्रति किया है।४८।

१३—गतलोक वर्णन

अहं वैश्यकुलेजातोजन्मन्यस्मात्तु सप्तमे ।
समतीतेगवारोधनिपानेकृतवान्पुरा ।१
विपाकात्कर्मणस्तस्यनरकभृ ादारुणम् ।
संप्राप्तोऽग्निशिखं पूर्णमयोमुखखगाकुलम् ।२
यन्त्रपीडनगात्रासृक्प्रवाहोद्भू तकर्दमम् ।
विकृष्यमाणदुष्कर्मितन्निपा तरवाकुलम् ।३
पात्यमानस्यमेतत्रसाग्र वर्ष शतंगतम् ।
महाता।पार्त्तितप्तस्यतृष्णादाहान्वितस्यच ।४
तत्राह्लादकरःमद्य.पवन मु त शीतलः ।
करम्भवालुकाकुम्भमध्यस्थेवैसमागत ।५
अकस्मादेवभोस्तातनररत्नसमागतम् ।
तत्सम्पर्कापशेषाणांनाभवद्यातनानृणाम् ।
ममचापियथास्वर्गेस्वर्गि णा न्वृ तिःपरा ।६
किमेयदितिवाह्लादविस्तारस्ति मितेक्षणेः ।
दृष्टमस्मा भरासन्ननररत्नमनुत्तम् ।७

पुत्र बोला—हे तात ! इस जन्म स सात जन्म पूर्व में वश्य योनि में उत्पन्न हुआ था, तब मैंने गौओ को जल पीने से रोका था ।१।उसी के फलसे दारुण नरकको प्राप्त हुआ, वह नरक अग्निकी शिखाओं और लोहेके मुख वाले पक्षियोंसे परिपूर्ण था।२। यन्त्रमें फैंके हुए जीवोंके देह से निकले हुए रक्त के बहने से वहां कीचड़ रहता है तथा यन्त्रमें पड़े हुए उन पापियोके आर्त्तनादसे वह नरक गूंजता रहता था ।३। उ में महापाप की पीड़ा से उत्पन्न पिपासा पूर्वक मैंने सौ से कुछ अधिक

वर्ष व्यतीत किये ।४। तभी एक दिन करम्भ बालु का वाले घड़े के बीच से प्रसन्नता प्रद ठंडी वायु चलने लगी ।५। उसके स्पर्श से मेरी तथा अन्य वासियों की यन्त्रणा मिट गई, उस समय हम सब स्वर्ग में रहने वालों के समान परमानन्द का अनुमव करने लगे ।६। हम प्रसन्नता से उत्पन्न हुए विस्मिय के महित इधर-उधर देखने लगे तभी हमे पास में ही एक श्रेष्ठ मनुष्य हमको दिखाई दिया ।७।

याम्यश्चपुरुषोघारोदण्डहस्तोल्लसत्प्रभः
पुरतोदर्शयन्मार्गमियएहीतिवब्रुवन् ।८
ततस्तेजन्तवःसर्वैमत्वातद्दर्शनात्सुखम् ।
ऊचुःप्रांजलयोभूपंक्षणमात्रस्थिथोभव ।९
त्वदगत्र संगोपवनोह्यस्माकंसुखकारकः ।
ततोसौनरकाभ्याशेउपविष्टःकृपान्वितः ।१०
पुरुषःसतदादृष्ट्वायातनाशनसंकुलम् ।
नरकप्राहतंयाम्यकिङ्करंकृपयान्वितः ।११
भोयाम्यपुरुषाचक्ष्वकिंमयादुष्कृतकृतम् ।
येनेदंयातनाभीमंप्राप्तोऽस्मिनरकपरम् ।१२
विपश्चदितिविख्यातोजनकानामहकुले ।
जातोविदेहविषयेसम्यङ्मनुजपालकः ।१३
चतुर्वर्ण्यस्वधर्मस्थकृत्वासरक्षितमया ।
धर्मतोधर्मकलल्पेनमनुनात्रयथापुरा ।१४

उस समय वज्र के समान दण्ड हाथ में लिए हुए एक भयंकर यमदूत उसे मार्ग दिखा रहा था ।८। उस समय सभी प्राणी उसके दर्शन से सुखी होकर हाथ जोड़े हुए बोले कि आप क्षण भर को यहां रुकें ।९। आपके शरीर के साथ चलने वाला वायु हमें सुख दे रहा है, तब वह मनुष्य अनुग्रह पूर्वक हमारे पास ठहर गये ।१०। फिर उसने सैकड़ों कष्टों वाले नरक को देखा और अनुग्रह भरे हृदय से यमदूतों से कहने लगा ।११। उसने कहा हे यमदूतों ! मैंने ऐसा कौन पाप किया है, जिसके कारण मुझे इस अत्यन्त भयानक नरक में लाया गया हूं, यह मुझे शीघ्र बताओ ।१२। मैंपितृकुल

मे पण्डित कहा जाता था, इसलिए विदेह राज्य में प्रजा पालक था ।१३। चारों वर्णो की मैंने धर्म पूर्वक रक्षा की थी और सभी कार्य मनु के समान ही धर्म से किया था ।१४।

यज्ञैर्मयेष्टंबहुभिर्धर्मतःपालितामही ।
नोत्सृष्टश्चैवसग्रामोनातिथिर्विमुखोगतः ।१५
पितृदेवर्षिभृन्याश्चनचापचरितामया ।
महातापार्तितप्तस्यतृष्णादाहार्दितस्यच ।१६
कृतास्पृहाचनमयापरस्त्रीविभवादिषु ।१७
पर्वकालेधुपितरस्तिथिकालेषुदेवताः ।
पुरुषंस्वयमायान्तिनिपानमिवधेनवः ।१८
यतस्तेविमुखायान्तिनि ःत्वस्यगृहमेधिनः ।
तस्मादिष्टश्चपूर्तंश्चधर्मौद्वावपिनश्यतः ।१९
पितृनिश्वासविध्वस्तंसप्तजन्मार्जितधनम् ।
त्रिजन्मप्रभवदैवोनिश्वासोहन्त्यसंशयम् ।२०
तस्माद्दैवेचपित्र्येचनित्यमेवहितोऽभवम् ।
सोऽहकथमिमप्राप्तोनकभशदारुणम् ।२१

मैंने अनेक यज्ञों के अनुष्ठान पूर्वक धर्म पूर्वक पृथिवी का पालन किया था, मैंने युद्धका त्याग कभी नहीं किया और कभी किसी अतिथि को विमुख नही किया ।१५। मैंने पितृ, देव, ऋषि अथवा सेवको को भी कभी दुःखी नहीं किया तथा महाताप से तप्त और प्यास से आतुर ।१६। प्राणियो की रक्षा मे तत्पर सदा रहा हूँ, परधन या परनारी की कामना मैंने कभी नहीं की ।१७। जैसे गौएं गोष्ठ मे आती है, वैसे ही पूर्वकालमे पितरगण और तिथि कालमें देवगण मेरे यहाँ आते थे ।१८। जिस गृहस्थके यहां से पितर या देवता विमुख होते हैं, जिसके यज्ञ और पूर्त्त का विनाश हो जाता है ।१९। पितरो के विमुख होने से सात जन्म का संचित पुण्य तथा देवताओं के विमुख होने से तीन जन्म का एकत्र हुआ पुण्य नष्ट हो जाता है ।२०। इस कारण मैं पितरों और देवताओं के कार्य में सदा रहता था फिर इस दारुण नरक को क्यों प्राप्त हुआ हूँ ? ।२१।

१४—कर्मफल प्राप्ति

इतिपृष्टस्तदातेनश्रृवतांनोमहात्मना ।
उवाचपुरुषोयाम्योघोरोऽपिप्रश्रितंवचः । १
महाराजयथात्थत्वतथैतन्नात्रसंशयः ।
किन्तुस्वल्पकृपापंभतास्मारयामितत् । २
वैदर्भीतवयापत्नीपीवरीनामनामतः ।
ऋतुर्वन्ध्यस्त्वयातस्याःकृत पुरा । ३
सुभोनायाँकैकेय्यामासक्तेनततोभवान् ।
ऋतुव्यक्रमात्प्राप्तोनरकंघोरमीदृशम् । ४
होमकालेयथावह्निराज्यपायमवेक्षते ।
ऋतौप्रजापतिस्तद्वद्बीजपा मवेक्षते । ५
यस्तमुल्लङ्घ्यधर्मात्माकामेष्वासक्तिमान्भवेत् ।
सतृपित्त्याहृणात्पापमवाप्यनरकपतेत् । ६
एतावदेवतेपापनान्यत्किञ्चनविद्यते ।
तदेह्यागच्छपुण्यानासूपभोगायपार्थिव ।
एतच्छ्रुत्वातुराषिःकृपयाजनकोब्रवीत् । ७

पुत्र बोला—हे तात ! इस प्रकार उस पुरुष के प्रश्न क ने पर यमदूत ने भयङ्कर होते हुए भी जिस नम्रता से उत्तर दिया, उसे मैंने सुना ।१। यमदूत ने कहा हे महाराज ! आप सत्य कहते है, परन्तु आपसे एक सामान्य पाप बन गया था, उसे आपको स्मरण कराता हूँ ।२। आपकी एक पत्नी विदर्भ देश की थी, उसका नाम पीवरी था, आपने उसके ऋतुमती होने पर ऋतु को विफल किया था ।३। आप उस समय केकैय देश की रानी सुशोभना के प्रति अत्यन्त आसक्त थे, इसलिये ऋतुकाल का व्यक्तिक्रमण करने मे आपको इस दारुण नरक की प्राप्ति हुई है ।४। जैसे होम काल में अग्नि आहुति की कामना करता है, वैसे ही प्रजापति ऋतु काल में बीज की कामाना करते है ।४। इसका उल्लंघन करने वाले धर्मात्मा पुरुष भी पितर-ऋण केपाप से लिप्त होकर नरक में पड़ते हैं ।६। आपने यही एक मात्र पाप किया

है. और कोई पाप आपने नहीं हुआ अब आप सभी पुण्यों का फल भोगने के लिये चलिये, यह सुन कर उन राजर्षि ने कृपा पूर्वक कहा।७।

यास्यामिदेवानुचरयत्रमांनयिष्यसि ।
किंचित्पृच्छामितन्मेत्वंयथावद्वक्तुमर्हसि । ८
वज्रतुण्डास्त्वमीकाका पुंसाँनयनहारिण: ।
पुन:पुन:श्चनेत्राणितद्वदेषांभवन्तिहि । ९
किंकर्मकृतवन्तश्चकथैतज्जुगुप्सितम् ।
हरन्तेषांतजिह्वांजायमानांपुनर्नवाम् ।१०
करपत्रेणपाटयन्तेकस्मादेतेऽतिदु:खिता; ।
करम्भवालुकास्ताश्चतथैनेक्वाथतैलगा: । ११
अयोमुखै:खगैश्चैवकृष्यन्तेक्रिविधावद ।
विश्लिष्टदेहबन्धातिमहारावविराविण:।१२
अयश्चचूनिपातेनसर्वाङ्गक्षतविक्षत: ।
किमेतेनि:स्वनन्तोपितुद्यन्तेऽहर्निशनरा: ।१३
एताश्चान्याश्चदृश्यस्पेयातना:पापकर्मिणाम् ।
येनकर्मविपाकेनतन्ममोद्देशतोवद ।१४

राजा बोले--हे यमदूत ! आप मुझे जहा ले जाओगे, वहीं मैं जाऊँगा परन्तु मेरे प्रश्न का यथार्थ उत्तर दो ।८। यह वज्र के समान काला इन पुरुषो के नेत्रों का हरण करते है और उनके वे नेत्र पुन: उत्पन्न हो जाते है, ऐसा बारम्बार हो रहा है ।९। इन्होंने ऐसा कौन-सा निन्दित कर्म किया है, जिससे इनके नेत्र निकाले जाने पर भी पुन: उत्पन्न होते हैं ।१०। यह कर पत्रकी मार से क्यों इतना दु:ख भोग रहे है तथा तप्त बालू और तल मे भूने जा रहे है ।११। लौहमुख पक्षियों द्वारा नोचे जाने पर इनके देह के बन्धन टूटरहे हैजिससे पीड़ाके कारण वह आर्त्तनाद कर रहे हैं ।१२। तथा पक्षियो की लौहमय चोंच के आघात से इनके सभी अंग छिन्न भिन्न हो रहे हैं, इन्होंने ऐसा क्या पाप किया है जिससे निरन्तर ऐसी यन्त्रणा प्राप्त कर रहे हैं ।१३। पापियो को अन्य प्रकार की पीड़ायें मिलते हुये भी देख

रहा हूँ, किस कर्मके कारण इन्हें इन दुःखों की प्राप्ति हो रही है, यह मुझे प्रारम्भ से अन्त तक बताओ ।१४।

यन्मांपृच्छसिभूपालपापकर्मभलोदयम् ।
तत्तेऽहंसंप्रवक्ष्यामिसक्षेपेणयथातथम् ।१५
पुण्यापुण्येहिपुरुषःपर्यायेणसमुश्नते ।
भुञ्जतश्चक्षयंयातिपापपुण्यमथापिवा ।१६
नतुभोगादृतेपुण्यपापंवाकर्ममानवः ।
परित्यजतिभोगाञ्चपुण्यापुण्येनिर्बोधमे ।१७
दुर्भिक्षादेवदुर्भिक्षक्लेशात्कलेशभयाद्भयम् ।
मृतेभ्यःप्रमृतायान्तिदरिद्राःपापकर्मिणः ।१८
गतिंनानाविधांयान्तिजन्तवःकर्मबन्धनात् ।
उत्सवादुत्सवयान्तिस्वर्गात्स्वर्गसुखात्सुखम् ।१९
श्रद्दधानाश्चदान्ताश्चधनदाःशुभकारिणः ।
व्याघ्रकुंजरदुर्गाणिसर्पचौरभयानितु ।२०
हृताःपापेनगच्छन्तिपापनःकिमत परम् ।
सुगन्धिमाल्यसद्वस्त्रसाधुपानासनाशनाः ।२१
स्तूयमानाःसदायान्तिपुण्यैः पुण्याटवीष्वपि ।
अनेकशतसाहस्रजन्मसचयसचितम् ।२२

यमदूतों ने कहा-हे राजन् ! पाप के फलोदय के विषय में जो प्रश्न आपने किया है, उसका वर्णन संक्षिप्त रूप मे कहता हूँ ।१५। कर्मानुसार ही मनुष्यो को पाप-पुण्य भोगने होते है, उसीमे उनके पाप या पुण्य का क्षय होता है ।१६। बिना भोगे पुण्य या पाप से कभी मनुष्य की शुद्धि नहीं होती है । भोगने से ही वह मिटता है, उसी से मनुष्य को मुक्ति प्राप्त होती है । जो पापी हैं वे दरिद्री होते है, वे दुर्भिक्ष, क्लेश, भय, और मृत्यु को पाते है ।१७-१८। कर्म के बन्धनसे विभिन्न प्रकारकी गतियां प्राप्त होती है पुण्यात्मामों को उत्सव, स्वर्ग तथा सुख पर सुख मिलते रहते है ।१९। वही श्रद्धावान्, शान्तचेता, दानी और सुख करने वाले होते हैं, तथा पापी मनुष्य व्याघ्र, हाथी, सर्प, चोकर आदि से भय युक्त स्थान मे । २० । पाप से मर

कर जाते है, उनकी अन्य गति क्या हो सकती है? तथा श्रेष्ठ वस्त्र सुगन्धित मालाएँ, विमान और भोजन ।२१। आदि की प्राप्ति महात्मा पुरुषोंको अपने पुण्य के बल से होती है, वे प्रशंसित होते हुए पवित्र स्थानों को प्राप्त होते है ।२२।

पुण्यापुण्यनृणांतद्वत्सुखदुःखांकुरोद्भवम् ।
यथाबीजहिभूपालपयांमिसमवेक्षते ।२३
पुण्यपुण्येतथाकालदेशान्यकर्मकारकम् ।
स्व पा। कृतपुंसांःशकालोपपादितम् ।२४
पादन्यामकृतदुःखंकण्टकोत्थप्रयच्छति ।
तत्प्रभूततरस्थूलशकुकीलकसम्भवम् ।२५
दुःखं यच्छतितद्वच्चशिरोरोगादिदुःसहम् ।
अपथ्याशनशीतोष्णश्रमतापादिकारकम् ।२६
तथान्योन्यमपेक्षन्तेपापानिफलमङ्गमे ।
एवमहान्तिपापानिदीर्घरोगादिकाऽक्रिया: ।२७
तद्वच्छास्त्राग्निकृच्छार्तिबन्धनादिफलयवै ।
स्वल्पं पुण्यशुभगन्धहेलयासम्प्रयच्छति ।२८
स्पर्शवाप्यथवाशब्दरसरूपमथापिवा ।
चिराद्गुरुतरन्तद्वन्महान्तमपिकालजम् ।२९

अनेक शत सहस्र जन्मोंके पुण्य, पाप को प्राणी संचित करते रहते हैं, वही उनके सुख-दुख रूप में उत्पन्न होते हैं, जैसे सभी बीज जल की कामना करते है ।२३। उसी प्रकार पुण्य, पाप भी काल, देश और पात्र की कामना करते है, यदि देश, काल के अनुसार किंचित् भी पाप किया हो तो ।२४। पैर रखने पर कांटा लगने जैसे दुःखका ही अनुभव होता है, परन्तु अधिक पापोंका आचरण करने पर शूल या कील आदि से उत्पन्न होने वाले ।२५। शिरो-रोग आदि दारुण दुःखों का भोग करना होता है, जैसे अपथ्य अन्न, शीत ताप, श्रम आदि को उत्पन्न करता है । २६ : वैसे ही सब पाप फलके उत्पन्न होने के समय में परस्पर की पपेक्षा करते हैं, महापाप कर्म से दीर्घ रोगादि विकारों की प्राप्त होती है । २७ । शस्त्र पीड़ा, अग्नि का दाह अथवा

बधनादि के कष्ट भोगने होते हैं, कीड़ा के बहाने किंचत् पुण्य करने भी श्रेष्ठ गंध।२८। सुखमय स्पर्श, मधुर वाणी, मीठेरस और सुन्दर रूपका भोग अल्पकाल के लिये ही होता है तथा बहुत पुण्य करनेपर कालक्रम से अधिक फल उपलब्ध होता है।२९।

एवंचसुखदुःखानिपुण्यापुण्योद्भवानिवै ।
भूतानांऽनेकसंसारसम्भवानोहतिष्ठति ।३०
जातिदेशावरुद्धानिज्ञानानफलानिच ।
तिष्ठन्तितत्रपृक्तानिलिङ्गमात्रेणचात्मनि ।३१
कर्मणामनसावाचानकदाचित्कथञ्चिन्नरः ।
अकुर्वन्पापकंकर्मपुण्यंवाव्यतिष्ठते । ३२
यद्यत्प्राप्नोतिपुरुष सुखदुःख मन्यापिवा ।
प्रभूतमथवास्वल्पं विक्रियाकारचेतसः ।३३
तावतातस्यपुण्यंवापापंवाप्यथचेनरे । ।३४
उपभोगात्क्षयं यानिभुज्यमानमिवाशनम् ।
एवमेतेमहापापयातनाभिनर्हर्निशम् । ३५

इस प्रकार प्राणी पाप-पुण्यसे उत्पन्न दुःख या सुखका भोग करता हुआ संसार में वास करता है।३८। जाति, देश, काल आदि सेअवरुद्ध ज्ञान-अज्ञान का सम्पूर्ण फल आत्मामें चिह्नित हो जाता है।३१। वाणी, कर्म से कभी कोई पाप-पुण्य किये बिना उसका फल उत्पन्न नहीं सकता।३२। यह जो कुछ सुख-दुःख की प्राप्ति है, वह अल्प या अधिक चित्त का ही विकार है।३३। उस उतने ही पाप पुण्य के फलकी प्राप्ति होती है।३४। जैसे भोजन किये हुये अन्न का क्षय उसके उपभोग से ही होगा, वैसे ही भोगे बिना पाप का क्षय नहीं हो सकता।३५।

क्षपयन्तिनराघोर नरकान्तिविवर्तिनः ।
तथैवराजन्पुण्यानिस्वर्गलोकेमरैःसह । ३६
गन्धर्वसिद्धाप्सरसांगीताद्यैरुपभुंजते ।
देवत्वेमानुषत्वेचतिर्यक्त्वेचशुभाशुभम् ।३७
पुण्यपापोद्भवभुंक्तेंसुखदुःखोपलक्षणम् ।

यत्त्वंपृच्छसिमाराजन्यातनाःपापकर्मिणाम ।३८
केनकेनातिपापेनतत्ते वक्ष्याम्यशेषतः
दुष्टेनचक्षुषादृष्टाःपरदारानराधमैः ।३९
मानसेनचदुष्टेनपरद्रव्यंचसस्पृहैः ।
वज्रतुण्डाःखगास्तेषांहरंत्येतेविलोचने । ४०
पुनःपुनश्चतेषांभूतिरक्ष्णेरेषांभवत्यथ ।
यावतोऽक्षिनिमेषांस्तुपापमेभिःकृतम् । ४१
तावद्वर्षसहस्राणिनृत्रार्तिप्राप्नुवंत्युत ।
कुमच्चास्त्रोपदेशास्तुर्यैर्दत्तापं श्चमन्त्रिनाः । ४२
सम्यग्दृष्टेर्विनाशायरिपूणामपिमानवैः ।
यैःशास्त्रमन्यथाप्रोक्तयैरसद्वागुदाहृता ।४३

इसलिये नरक म रहकर जीव यातनायें प्राप्त कर के ही महापाप क्षय करते रहते है तथा इसी प्रकार पुण्यात्मा स्वर्गवासी भीदेवोंके साथ रहकर पुण्य को भोगते है ।३६। उन्हें सिद्ध, गन्धर्व, अप्सराओं के गान आदि से पुण्य फल मिलता है,तथा देवता, मनुष्य या खग-योनि पाकर शुभाशुभ ।३७। पुण्य और पापसे उत्पन्न सुख-दुःख युक्तफल भोगतेहैं,हे राजन्!आपने प्रश्न किया की पापीगण किस-२ पाप कर्मसे ऐसी यंत्रणा भोगते है ।३८। अब मैं इन पूर्ण रूप से कहता हूँ जिन नराधम मनुष्यों ने परनारी को दूषित नेत्रों से देखा है ।३९। अथवा पराये धन को हड़पने की इच्छा वाले नेत्रो से देखा है उनके दोनो नेत्रों को यह वज्रतुण्डी पक्षी हरण करते है ।४०। तथा वही नेत्र बारम्बार उत्पन्नहो जाते हैं, इन मनुष्यों ने जितने पलक लगने तक यह पाप किये हैं।४१। उतनेही सहस्र वर्ष यह इस नेत्र पीड़ाको प्राप्त करते रहेगे, जिन्होंनेशत्रु कीभी ज्ञानदृष्टिका हरण करनेके लिए अन्यायपूर्वक विपरीत शास्त्रोपदेश अथवा भ्रमात्मक परामर्श दिया है या मिथ्या भाषण किया है।४२-४४।

वेददेवद्विजातीनांगुरोर्निन्दाचयैःकृता ।
हरतिनषांजिह्वाश्चजायमानाःपुनःपुनः ।४४
तावतोवत्सरानेतेवज्रतुंडा सुदारुणाः ।

मित्रभेदंतथापित्रापुत्रस्यस्वजनस्यश्च ।४५
यज्वापाध्याययोर्मात्रामुतस्यसहचारिणः ।
भार्यापत्योश्चयेकेचिद्भेदंचक्रुर्नराधमाः ।४६
तइमेपश्यपाट्यन्तेकरपत्रेणपार्थिव ।
परोपतापकायेचाह्लादनिषेधकाः ।४७
तालवृन्तानिलादिचन्दनोशीरहारिणः ।
प्राणान्तिकदुस्तापमदुष्टानामचयेऽधमाः ।४८
करम्भवालुकासस्थास्तद्वमेपापभागिनः ।
भुङ्क्तेश्राद्धंतुयोऽन्यस्यनरोन्येहनिमंत्रितः ।४९

जिन्होंने वेद, देवता ब्राह्मण और गुरुजनों की निन्दा की है, यह वज्रतुण्डी पक्षी उनकी जीभ को काटते हैं, जितनी बार यह पाप किया है, उतने हीवर्ष उन्हें ऐसी यन्त्रणा मिलतीहै तथा जिन्होंने मित्रो मैया पिता-पुत्र भेद ने डलवाया है ।४४-४५।अथवा याज्ञिक यजमान मे, माता पुत्र में या पति-पत्नी में मनमुटाव करा दिया है ।४६। वे इस करपत्र से आहत होतेहैं अथवा जो किसीको क्रोध दिलाते या किसीकी प्रसन्नता नष्ट करते हैं, ।४७।जो ताड का पंखा या खस या चन्दन हरण करते अथवा साधुओ को प्राणान्तक पीड़ा देते हैं ।४८। वे पापी तप्त रेत में गिर कर पाप का फल पाते है अथवा जो एक श्राद्ध मे निमन्त्रित होकर दूसरे के यहां भोजन करते हैं उनको यह पक्षीगण व्यथित करतेहै ।४९।

दैवेवाप्यथवापैत्र्येसद्विधाकृष्यतेखगैः ।
मर्माणियस्तुसाधूनामसद्वाग्भिर्निकृन्तति ।५०
तामिमेतुदमानास्तुखगास्तिष्ठन्त्यवारिताः ।
यःकरोतिचपशुन्यमन्यवागन्यथामतिः ।५१
पाट्यतेहिद्विधाजिह्वातस्ययेत्थंनिशितैःक्षुरैः ।
मातापित्रोर्गुरूणांचयेऽवज्ञांचक्रुरुद्धताः ।५२
तइमेपूयविण्मूत्रगर्त्तेमज्जन्त्यधोमुखाः ।
देवतातिथिभूतेषुभृत्येष्वभ्यागतेषुच ।।५३
अभुक्तवत्सुयेऽश्नन्तितद्वत्पित्रग्निपक्षिषु ।

दुष्टास्तेपूयनिर्यासभुजःसूचीमुखास्तुने ।५४
जायन्तेगिरिवष्मर्माणःपश्यैतेयादृशानराः ।
एकपंक्त्यातुयेविप्रमथवेतरवर्णजम् ।५५
विषमंभोजयन्तीहविड्भुजस्तइमेयथा ।
एकसार्थप्रयातयेनिःस्वमर्थार्थिननरम् ।५६

तथा जो झूठी बात बना कर किसी की चुगली करते हैं ।५०। अथवा देवता या पितर कार्य में एक निमन्त्रण स्वीकार करके दूसरे का भोजन करते है ।५ । उनकी जिह्वा इस तीक्ष्ण छुरी के द्वारा दो टूक कर दी जाती है। जो मत्त होकर माता, पिता तथा गुरुजनों का तिरस्कार करते हैं ।५२। वे पीव मल और मूत्र से परिपूर्ण कुन्ड में अधोमुख गिराये जाते है । देवता, अतिथि सेवक, अभ्यागत ।५३। पितरगण, अग्नि और पक्षियों को भोजन दिये बिना स्वयं खा लते हैं वे सूचीमुख होकर पीव और गन्दगी खाते है ।५४। उनका शरीर पर्वताकार होता है, जो ब्राह्मण और अन्य जाति वालों को एक पंक्ति में बैठाकर ।५५। असमान भोजन कराते हैं, वह इनकी विष्ठा खाते है। व्यापार के लिए एक साथ जाते हुए भी अपने धनहीन साथी को छोड़ कर स्वय भोजन कर लेते है, उन्हे यहा कफ का भोजन प्राप्त होता है ।५६।

अपास्यस्वान्नमश्नन्तितइमेश्लेष्मभोजिनः ।
गोब्राह्मणाग्नयःस्पृष्टायेरुच्छिष्टैर्नरेश्वर ।५७
तेषामेतेऽग्निकुण्डेयुप्रज्वलत्स्वाहिताकराः ।
सूर्येन्दुतारकादृष्टायैरुच्छिष्टैस्तुकामतः ।५८
तेषायाम्यैर्नरैर्नत्रे न्यस्तोवह्निन समिध्यते ।
गावोऽग्निर्जनानीविप्रोज्येष्ठभ्रातापितास्वसा ।५९
जामयोगुरवोवृद्धायैःस्पृष्टास्तुपदानभिः ।
बद्धांघ्रयस्तेनिगडलौहैरग्निप्रतापितः ।६०
अंगारराशिसध्यस्थास्तिष्ठन्त्याजानुदाहिनः ।
पायतंकृसरंछागदेवान्नानिचयानिवैः ।६१
भुक्तानियैरस्कृत्यतंषानेत्राणिपापिनाम् ।

निपातितानांभूपृष्टेउद्वृत्ताअनिरीक्षता ।६२

जिन्होंने उच्छिष्ट रहकर गौ, ब्राह्मण या अग्नि का स्पर्श किया है ।५७। उनके हाथ अग्निकुन्डमें गिरकर दग्ध होतेहैं तथा उच्छिष्ट अवस्था में जिन्होंने सूर्य, चन्द्र या तारागणके दर्शन किये है ।५८। उनके नेत्रोंपर यह यमदूत अग्नि रखते है, जिन्होंने गौ,ब्राह्मण,माता-पिता,ज्येष्ठ, भ्राता, भगिनी, अग्नि ।५६। वंश की बहन गुरु अथवा वृद्ध ब्राह्मणका स्पर्श पैर से किया है, उनके पैर अग्निसे तपाई हुई लौह-बेडियों में जकड़े गये है । ।६०। तथा वे ही जाँघ तक अंगारों के ढेरमे खड़े किये गये है । जिन पापियोंने खीर, खिचड़ी या छाछ अथवा अन्य किसी देवान्न का ।६१। संस्कार किये बिना खा लिया है,उन पापात्माओं के नेत्र उखाड़कर भूमि में डाले हुये दिखाई दे रहे है तथा दर्शन करने वाले यमदूतों के मुख मे गिर रहे है । २ ।

सन्दशैःपश्यकृष्ण्तैनरैर्याम्यैर्मुखात्ततः ।
गुरुदेवद्विजानांबेदानांचराधमैः ।६३
निन्दानिशामितायैश्चापापानामभिनन्दताम् ।
तेषांमयोमयान्कीलानग्निवर्णान्पुनःपुनः ।६४
कर्णेषुपूरयन्त्येतेयाम्याविलपतामपि ।
यै प्रपादेवविप्रौकोदेवालयमभाःशुभाः ६५
भङ्क्त्वविध्वससमानीताःक्रोधालोभानुवर्तिभिः ।
तेषामेतैःशितैःशस्त्रैर्मुहुर्विलपतांत्वचः ।६६
पृथक्कुर्वन्तिवैयाम्याःशरीरादतिदारुणाः ।
गोब्राह्मणकमार्गास्तुयेऽत्रमेहन्तिमानवाः ।६७
तेषांमेतांनिकृष्यन्तगुदेनांत्राणिवायसैः ।
दत्त्वाकन्यांयएकस्मैद्वितीयायप्रयच्छति ।६८
सत्वेवंनकध छिन्नक्षारनद्यांप्रवाह्यते
स्वपोषणपरीयस्तुपरित्यजणतिमानवः ।६९
पुत्रभृत्यकलत्रादिबन्धुवर्गमकिंचनम् ।
दुर्भिक्षेसंभ्रमेव पिसोऽप्येवमकिंकरैः ।७०
उत्कृत्यदत्तानिमुखेस्वमांसन्यश्नुतेक्षुधा ।

शरणागतान्यस्त्यजतिलोभाद्दुर्दोत्तजीविकः । ७१

जो गुरु, देवता, ब्राह्मण और वेदकी निन्दा सुनकर उसका अनुमोदन करते हैं, अग्निवर्ण के लोहेकी कीलें यमदूत बार-बार ।६३-६४। उन विलाप करते हुए पापियों के कानों मे घुमाते है। जिन्होंने देवालय, ब्राह्मण का गृह अथवा सभा भवन को ।६५। लोभ अथवा क्रोध के वश होकर विध्वंस किया है, उनका चर्म तीक्ष्ण शस्त्रों के द्वारा ।६६। शरीर से यमदूत अलग करते है तथा जो गौ, ब्राह्मण और सूर्यके मार्ग मे मल-मूत्रका त्याग करते है ।६७। उन पापियों की सब आँतें गुह्य द्वार से कोए खींच लेते है, जो एक बार किसी को कन्या दान करके, वहीं कन्या किसी अन्य को देते है। ६८। उनको इस प्रकार टुकडे-टुकड़े करके खारी नदी मे प्रवाहित किया जाता है, जो अन्य मनुष्यों का पोषण न करके, अपना ही करते हैं ।६९। दुर्भिक्षया अन्य सङ्कट कालमें पुत्र, सेवक, कलत्र तथा बन्धु-बांधवका त्याग करते है, यमदूत ।७०। उसके मांस को काट-काट कर उन्हीं के मुख में डालते है और वे ही क्षुधार्त्त हुए उसी को खाते है ।७१।

सोऽप्येवंयन्त्रपीडाभिःपीड्यतेयमकिंकरैः ।
सुकृतयेप्रयच्छन्तियावज्जन्मकृतनराः ।७२
तेपिष्यन्तेशिलापेषैर्यथैतेपापकर्मिणः ।
क्षत्क्षामास्तृत्पतज्जिह्वातालवावेदनातुराः । ७३
दिवामैथुनिनःपापाःपरदारभुजश्चये ।
तथैवकण्टकैस्तीक्ष्णैरायसैःपश्यशाल्मलिम् ।७४
आरोपिताविभिन्नाङ्गाःप्रभूतासृक्स्रवाविलाः ।
मूषायामपिपश्यैतान्ध्मायामानान्यपानुगैः ।७५
पुरुषैःपुरुषव्याघ्रपरदारावमर्शिनः ।
उपाध्यायमधःकृत्वास्तब्धोयोऽध्यायननरः ।७६
गृह्णातिशिल्पमथवासोऽप्येवंशिरमाशिलाम् ।
विभ्रत्क्लेशमवाप्नोतिजनमार्गेऽतिपीडितः ।७७।७८

जो लोभवश वेतन भोगी अथवा शरणागतका त्याग करते हैं उनको इस प्रकारकी यंत्रसे पीड़ा दीजाती है, जो मनुष्य अपने सब जन्मोंके पुण्य

को मूल्य लेकर बेच देते हैं ।७२। वे इन पापियों के समानही पाषाण के कोल्हूमे पेले जाते हैं, जो किसी की धरोहर हड़पते है उनका सम्पूर्ण देह बन्धनमे पड़ती है ।७३। उन्हें कृमि, वृश्चिक, काक, उल्लू आदि रात-दिन चोंटते रहते है तथा उनकी जिह्वा और तालु क्षुधा पिपासामें शुष्क हो जाते है ।७४। जिन्होंने दिन मे नारी समागम अथवा परस्त्री-गमन किया वह लोहे के तीक्ष्ण कांटो वाले शाल्मलि वृक्ष पर ।७५। चढ़ये जाकर अंग भंग पूर्वक रक्तस्राव से व्याकुल हो रहे है तथा वे धोंकनी मे रख कर जलाये जा रहे है ।७६। यह देखो, परस्त्री मे समागम करने वालों की दशा ऐसी है तथा जो उपाध्याय को नीचा आसन देकर अहंकार पूर्वक अध्ययन ।७७। करते या शिल्प ग्रहण करते है, वह इसी प्रकार सिर पर शिला रख कर बोझ से अत्यन्त क्लेश पाते है ।७८।

क्षुत्क्षामोऽहर्निशभारपीडाव्यथिमस्तकः ।
मूत्रश्लेष्मपुरीषाणियैरुत्सृष्टानिवारिणि ।७९
तइमेश्लेष्मविण्मूत्रदुर्गन्धनरकगताः ।
परस्परश्चमांसानिभक्षयन्तिक्षुधान्विताः ।८०
भुक्तंनातिथ्यविधिनापूर्वमेभिःपरस्परम् ।
अपविद्धास्तुयैर्वेदावह्नयश्चाहिताग्निभिः ।८१
तइमेशैलश्रृंगात्पात्यन्तेऽधःपुनःपुनः ।
पुनर्भूपतयाजार्णायावज्जीवतियेनराः ।८२
इमेकृमित्वमापन्नाभक्ष्यन्तेऽत्रपिपीलिकैः ।
नीचप्रतिग्रहादानद्याजनान्नित्यसेवनात् ।८३
पाषाणमध्यकीटत्वनर सततमश्नुत ।
पश्यतोभृत्यवर्गस्यमित्रस्याप्यतिथेस्तथा ।८४
एकोमिष्टान्नभुग्भुक्तंज्वलदंगारसंचयम् ।
वृकैर्भयंकरैःदृष्ठतित्स्यमस्योपभुज्यते ।८५

बोझके कारण मस्तकमें वेदना पाते हुए क्षुधा-पिपासासे सदा पीड़ित रहते हैं,जिन्होंने मल, मूत्र या कफका जलमें त्याग किया है ।७९। वह इस मल, मूत्र और कफ वाले दुर्गन्धयुक्त नरकको प्राप्त हुए हैं तथा यह

जो क्षुधातुर होकर एक-दूसरे का मांस भक्षण कर रहे है ।८०। इन्होने आतिथ्य सत्कार पूर्वक भोजन नहीं किया था । जिन आहिताग्नि मनुष्यों ने वेद तथा अग्निका निरादर किया है ।८१। वह इस पर्वत-शिखर से बारम्बार गिराये जाते है,जिन्होने दुबारा ब्याही हुई पत्नी का स्वामित्व प्राप्ति कर उसके साथ जीवन व्यतीत किया है।८२।वह कृमि रूप होकर चीटियों द्वारा खाये जा रहे हैं,जिसने नीच पुरुष का दान ग्रहण अथवा सेवा या यजन किया है ।८३। वह पत्थर के भीतर होने वाला कीट होताहै,जो अतिथि बधुओ और भृत्यो का तिरस्कार कर ।८४। मिष्ठान्न का एकाकी भोजन करता है, वह यहाँ प्रज्वलित अंगार भक्षण करताहै तथा इसकी पीठके माँसको भयकर भेड़िये नित्य भक्षण करते हैं ।८५।

पृष्ठमांसंनृपैतेनयतोलोकस्यभक्षितम् ।
अंधोऽथबधिरोमूकोभ्राम्यतेत्रक्षुधातुरः ।८६
अकृतज्ञोऽधमःपुंसामुपकारिषुवर्त्तते ।
अयकृतघ्नोमित्राणामपकारीसुदुर्मतिः ।८७
तप्तकुंभेनिपतितोविलपन्यातिशोषणम् ।
करंभवालुकांतस्मात्ततोयत्रावपीडनम् ।८८
असिपत्रवनतस्सात्करपत्रोणपाटनम् ।
कालसूत्रेतथाच्छेदमनेकाश्चैवयातनाः ।८९
प्राप्यनिष्कृतिमेतस्मान्नवेद्मिकथमेष्यति ।
श्राद्धेसगतिनोविप्राःसमुपेत्यपरस्परम् ।९०
दुष्टाहिभिःनृतंफेनसर्वांगेभ्यःपिबतिव ।
सुवर्णस्तेयीब्रह्मघ्नःसुरापोगुरुतल्पगः ।९१
अधश्चोर्ध्वचदीप्ताग्नौदह्यमानाःसमततः ।९२

जिन्होने किसी की पीठ पीछे निन्दा की, वह यहां अन्धे बधिर और मूक होकर क्षुधार्त्त घूमते है।८६।इस अधम ने उपकारी के प्रति कृतज्ञता प्रकट नहींकी अतःयह दुर्बुद्धि कृतघ्न तथा मित्रोका अपकार करनेवालाहैं ।८७। इसीलिए तप्तकुम्भ मे डाला गया है, यह घोर विलाप करता है, इसके पश्चात् इसे पीसा जायगा, फिर तप्त वालूयन्त्र पीड़ा को भोगकर

।८८। असिपत्र नरक में खड्ग की धार से संग्रम होगा, फिर कालसूत्र नरक में संग-अंग का छेदन होगा, इस प्रकार अनेक विधि यंत्रणा भोग कर ।८६। किस प्रकार इससे मुक्त होगा, इसे मैं नहीं जानता, इन दुष्ट ब्राह्मणों ने परस्पर श्राद्ध-भोजन किया था ।६०। इसलिए उन्हें सर्पों के सर्वांग से निकला हुआ फेन ही खाना पडता है। उसने सुवर्ण की चोरी की है, यह ब्रह्म हत्यारा है, इसने मद्य पान किया है, इसने गुरु-पत्नी का अपहरण किया है ।६१। इसलिए यह चारों ओर से प्रज्वलित अग्नि में दग्ध किये जाते हैं ।६२।

तिष्ठंत्यब्दसहस्राणिसुबहूनिततःपुनः ।
जायन्तेमानवाःकुष्ठक्षयरोगादिचिह्नताः । ६३
मृता पुनश्चनरकपुनर्जाताश्चतादृशम् ।
व्याधिमृच्छतिकल्पांतपरिमाणंनराधिप ।६४
गाध्नोन्यूनतरयातिनरकेऽथत्रिजन्मनि ।
तथोपपातकानांसर्वेषामितिनिश्चय ।६५
नरकप्रच्युतायान्तियैर्यैर्विहितपातकैः ।
प्रयातियोनिजातानितन्मेनिगदतःशृणु । ६६

यहाँ हजारों वर्ष रह कर फिर कुष्ठ, क्षय आदि रोगों से युक्त मनुष्य देह प्राप्त कर ।६३। प्राण त्याग करके पुनः नरक में जाते हैं, इसी प्रकार बारम्बार जन्म-मरण को प्राप्त होते हुए कल्प के अन्त तक दुःख भोगते हैं। गौ हत्या या दूसरे-दूसरे पाप उपपातक करने से तीन जन्म तक नीचे से भी नीचे नरक भोगते होते है, इसमें सन्देह नहीं है ।६५। अब वह वर्णन करता हूँ, जिस प्रकार नरक में पड़े हुए जीव जिस-जिस योनि में जाते हैं ।६६।

१५—नरकस्थोद्धार वर्णन

पतितात्प्रतिगृह्याथखरयोनिंव्रजेद्द्विजः ।
नरकात्प्रतिमुक्तस्तुकृमिःपतितयाजकः ।१
उपाध्यायव्यलोकंतुकृत्वाश्वाभवतिद्विजः ।
तज्जायांमनसावाचाद्द्रव्यंवापिकामयेत् ।२

गर्दभोजायतेजन्तु पित्रोश्चाप्यवमानकः ।
मातापितरावाक्रुश्यमारिकासम्प्रजायते ।३
भ्रातुःपन्यवमन्ताजकपोतत्वप्रपद्यते ।
ताबेवपीडयित्वातुकच्छपत्वप्रपद्यते ।४
भर्तृपिण्डमुपाश्नन्यस्तदिष्ठ ननिषेवते
सोऽपिमोहसमापन्नोजायतेवानयोमृतः ।५
न्यासापहर्त्तानिनरकाद्विमुक्तोजायतेकृमि. ।
नसूयकश्चनरकान्मुक्तोभवतिराक्षसः ।६

यमदूत ने कहा—पतित मनुष्य से धन लेने वाला ब्राह्मण गधेकी योनि को प्राप्त होता है तथा पतित पुरुष को यज्ञ कराने पर नरक से मुक्त होकर कृमि-योनि पाता है ।१। उपाध्याय के प्रति छल कर जेब उसकी स्त्री या अन्य वस्तु की इच्छा करने से श्वान-योनि मिलती है ।।२। माता-पिता का अपमान करने वाला गधा और उन्हें गाली देने वाला भैंमा होता है।३। भाईकी पत्नी का अपमान करने वाला कबूतर होता है, उसे पीड़ित करने से कछुआ बनता है ।४। स्वामी का पिन्ड भोजन करके जो उसका अभिलषित नहीं करता वह मोह मे भर कर मरणान्तर बन्दर बनता है ।५। किसी की धरोहर हड़पने वाला नरक से मुक्त होने पर कृमि होता है, असूया करने वाला नरकान्त मे राक्षस होता है ।६।

विश्वासहन्ताजनरोमीनयोनौप्रजायते ।
धान्ययवांस्तिलान्माषान्कुलत्थान्सर्षपांश्चणान् ।७
कलायन्कयमान्मृद्गान्गोधुमानतसीस्तथा ।
सस्यान्यन्यानिवाहृत्वामोहाज्जन्तुरचेतनः ।८
सञ्जथतेमहावक्त्रोमूषिकोबभ्रुसन्निभः ।
परदाराभिमर्शीधुमृकोघोरोऽभिजायते ।९
श्वासगालोबकोगृध्रोव्यालःकङ्कस्तथाक्रमात् ।
भ्रातभार्य्याचदुर्वृद्धियोधर्षयतिपःपकृत् ।१०
पुस्कोकिलत्वमाप्नोतिसर्चापिनरकाच्यः ।
सखिभार्यागुरोभार्य्याचपापकृत् ११

प्रधर्षयित्वाकामात्मासूकरोजायतेनरः ।
यज्ञदानविवाहानांविघ्नकर्त्ताभवेत्कृमिः ।१२
पुनदर्दातातुकन्यायाःकृमिरेवोपजायते ।
देवतापितृविप्राणामद्वत्वायोऽन्नमश्नुते ।१३

विश्वासघाती को मछली की योनि मिलती है तथा जो धान्य, जौ तिल, उडद, कुलथी, सरसों चना ।७। कैथा, मूंज, मूंग, गेहूँ या तीसी आदि हरण करता है वह मोह से मदमत्त होता है।८। तथा नौले जैसे दीर्घ मुख वाला मूसा होता है परनारी से समागम करने वाला भयंकर भेड़िया बन जाता है ।६। फिर कृमि श्वान, गीदड, बगुला, गृध्र, सर्प या काक बनता है तथा जो भाई की पत्नी से समागम करता है ।१०। वह नरकके दुःख भोग कर कोयल होता है, जो मित्रकी पत्नी या राजा की पत्नी ।११। से समागम करते हैं, वे शूकर होते है, यज्ञ, दान या विवाह कार्यों में विघ्न उपस्थित करने वाले कृषि होते है ।१२। एक बार दानकी हुई कन्या किसी दूसरे को देने वाले मनुष्य भी कृमि योनि पाते हैं तथा जो देवता, पितर, ब्राह्मण को जिमाये बिना स्वयं भोजन करता है वह नरक यातना भोगने के पश्चात् काक होता है ।१३।

प्रमुक्तोनरकात्सोऽपिवायसःसम्प्रजायते ।
ज्येष्ठंपितृसमवापिभ्रातरंयोवमन्यत ।१४
नरकात्सोपिविभ्रष्टःक्रौंचयोनौप्रजायते ।
शूद्रश्चब्राह्मणीगत्वाकृमियोनौप्रजायते ।१५
तस्यामपत्यसुत्पाद्यकाष्ठान्तःकीटकोभवेत् ।
सूकरःकृमिकामद्गुश्चाण्डालश्चप्रजायते ।१६
अकृतज्ञोऽधमःपुसांविमुक्तोनरकान्नरः ।
कृतघ्नःकृमिकःकीटःपतङ्गोवृश्चिकस्तथा ।१७
मत्स्यस्तुवायसःकर्मतुल्यसोजायतेततः ।
अशस्त्रंपुरुषंहत्वानरःसंजायतेखरः ।
कृमिःस्त्रीवधकर्त्ताचबालहताचजायते ।१८
भोजनंचोरयित्वातुमक्षिकाजायतेनरः ।

तत्राप्यस्तिविशेषोवैभोजनस्यशृणुष्वतत् ।१९
हृत्वादुग्धतुमार्जारीजायतेनरकाच्च्युतः ।
तिलड़िण्याकसंमिश्रमन्नंहृत्वातुमूषकः ।२०
धृतहृत्वातुनकुलःकाकोमद्गुरुजामिषम् ।
मत्स्यमांसग्पहृत्काकःश्येनौमेषामिषापहृत् ।२१

तथा ज्येष्ट भ्राता का अपमान करने वाला नरक के पश्चात् क्रौंच पक्षी होता है, ब्राह्मणी में गमन करने वाला शूद्र कृमि योनि में जन्म लेता है ।१४-१५। ब्राह्मण के गर्भ सेपुत्र उत्पन्न करने पर काठके भीतर का कीड़ा, शूकर, कृमि,मल,-कृमि अथवा चाण्डाल होता है ।१६। जो मनुष्योंमें अधम तथा कृतज्ञता रहित है वह नरक से मुक्त होकर कृमि कीट, पतंग, या विच्छू ।७१। मत्स्य. कौआ, कूर्म अथवा डोम योनि में उत्पन्न होता है किसी नि.शस्त्र की हत्या करने पर गधे की योनि में उत्पन्न होता है,किसी निःशस्त्र की हत्या करने पर गधेकी योनि मिलती हैं, स्त्री और बालक कीहत्या करने वाला कृमि होता है ।१८। भोजन चुराने वाला मक्षिका, अब भोजनक विषय में जो विशेष हैं, उसे सुनो ।१९। अन्न चुराने से नरक भोगने के पश्चात् बिल्ली होता हैं, तिल दाना युक्त अन्न हरण करने वाला मूषक होता हैं ।२० घृत हरण करने वाला नौला ,छाग के मांस चुरारे वाला काक तथामृग का मांस चुराने वाला गिद्ध होता है ।२१।

चिरीवाकस्त्वपहृतेलवणेदध्निवाकृमिः ।
चोरयित्वापयश्चापिबलाकासाप्रजायते ।२२
यस्बुचोरयतेतैलतैलपायीसजायते ।
मधुहृत्वानरोदशोऽपूपंहृत्वापिपीलिका ।२३
चीरयित्वाहविष्यान्नजायतेगृहगोधिका ।
आसव चोरतित्वातुतित्तिरित्त्वामवाप्नुयात् ।२४
अयोभृत्वातुपापात्मावायसःसंप्रतायते ।
पात्रेंकांस्तेपिहारीत-कपोतोरोप्यभाजने ।२५
मृत्वत्तुकांचंभाडंकृमियोनौप्रजायते ।
कौशेयंचीरयित्वातुचक्वाकत्वमृच्छति ।२६
काशकारस्चकौशेयेमतेवस्त्रेभिजायते ।

दुकूलेशाङ,गकःपापोहृतेचैवांशुकेथुकः ।२७
ऋक्षश्चैवाविकहृत्वावस्त्रं क्षौमचजायते ।
कार्पासिकेहृतेक्रौंचोवह्नं हृंतबिक.खरः २८

नमक चुराने वाला जलकाक, दही, चुराने वाला कृमि और दूध चुराने वाला बगुला होता है ।२२। तेल चुराने वाला तेली, मधुचुराने वाला डांस और पूये चुराने वाला चीटी होता है ।२३। हविष्यान्न की चोरी करने वाला गीध, आमब चुराने वाला तीतर होता है ।२४।लोहा चुराने वाला काक,पात्र चुराने वाला हारीत तथा चाँदीका पात्र-चोर कबूतर बनता है।२५। स्वर्ण पात्र का चोर कृमि बनता है, रेशम चुराने वालेको चकवे की योनि ग्रहण करनी होती है ।२६। कौशेय वस्त्रचुराने से कौशकर होताहै, दुपट्टा चुराने वाला मोर तथा अंकुश चुराने वाला तोतो होता है।२७।ऊनी और क्षौम के वस्त्र चुराने वाला रीछ, कपास चुराने वाला क्रौंच तथा अग्नि चुराने वाला बगुल या गधा होताहै ।२८।

मयूरोवर्णकान्हृत्वापत्रशाकंचजायते ।
जावञ्जीवकतांयातिरक्तवस्त्रापहृन्नरः ।२९
छुच्छुंरीशुभान्गंधान्वासोहृत्वाशशोभवेत् ।
खजःपलालहरणेकाष्ठहृद्घुणकीटकः । ३०
पुष्पापहृद्दरिद्रस्तुपगुर्यानापहृन्नरः ।
शाकहर्त्ताचहारीतस्तोवहृर्त्ताचचातकः ।३१
भूमिहृन्नरकान्गत्वारौरवादीन्सुदारुणान् ।
तृणगुल्मलतावल्लीत्वक्सारवरुतांक्रमात् ।३२
प्राप्यक्षीणाल्पापस्तुनरोभवतिवैततः ।
वृषस्यवृषणौछित्वाषडत्वंप्राप्नुयान्नरः । ३३
परिहृत्ययाभूयोजन्मनामेकविंशतिः ।
कृमिःकीटःपतंगोवापक्षीतोयचरोमृगः ।३४
पंग्वंधोबधिरःकुष्ठीयक्ष्मणाचप्रपीडितः ।३५
मुखरोगाक्षिरोगैश्चगुदरोगैश्चबाध्यते ।

अपस्मारीचभवतिशूद्रत्वंचसगच्छति ।३६

जो मनुष्य वर्णक या शाकपत्र चुराता है, और लाल वस्त्र चुराने वाला चकवा चकवी होता है ।२६। श्रेष्ठ गंध द्रव्य का चोर छछुन्दर होता है, वस्त्रचोर खरगोश होता है पलाल चोर गंजा और काष्ठ चोर घुन होताहै ।३०। पुष्प चोर दरिद्री यान चोर लंगड़ा, शाक चोर हारीत पक्षी और जलका चोर चातक होता है ।३१। भूमि हरण करने वाला रौरव आदि घोर नरकों में भ्रमता हुआ तृण, गुल्म, लता बल्ली तथा वृक्ष रूप में उत्पन्न होता है ।३२। इस प्रकार क्रम पूर्वक पापों के क्षीण होने पर मनुष्य की योनि प्राप्त हो पाती है, बैलको बधिया करने वाले को जन्मान्तर में नपुंसक होना होता है ।३३। फिर इक्कीस जन्म तक कृमि, कीट पतंग जलचर पक्षी, मृग ।३५। और गाय की योनि प्राप्त करता है, फिर चाण्डाल या डोम आदि होकर लंगड़ा, अन्धा, वधिर, कुष्ठी तथा क्षयी होता है ।३४। तथा मुख रोग, नेत्र और गुह्य रोगसे संतप्त होकर मृगी रोग से आक्रान्त होता हुआ शूद्र बनता है ।३६।

एषएवक्रमोदृष्टोगीसुवर्णादिहारिणाम् ।
विद्यापहारिणाचैवनिष्क्रियभ्रंशिनांगुरी. ।३७
जायामन्यस्यपारक्यांपुरुषःप्रतिपादयेत्ः ।
प्राप्नोतिषढतांमूढोयातनाभ्यपरिच्युतः ।३८
यःकपोतिनरीहांममभिद्धो हुताशने ।
सीजीर्णघनदुःखार्तोमंदाग्निरभिजायते ।३६
परनिंदाकृतघ्नत्वंपरमर्मोपघट्टनम्।
नैष्ठर्यनिघृणत्वंचपरदारोपसेवनम् ।४०
परस्वहरणाशौचदेवतानांचकुत्सनम् ।
निकृत्यावंचनानृणांकार्पण्यचनृणाँवधः ।४१
यानिचप्रतिषितद्धानितद्वर्त्तिचप्रशंसताम् ।
उक्लक्षणानिजानीया मुक्तानानरकाद्रनुः ।४२

जिसने सुवंण आदि वस्तु चुराई है, उसकी भी यही दशा होतीहैजो विद्याका हरण करता है या गुरु के धनका अपहरण करता है।३७।उसे

भी ऐसे ही उग्र द ुःखो को भोगना पडता है तथा जो दूसरे की पत्नीऔर किसी और को दे देता है,वह अनेक प्रकार केदुःख भोगता हुआ नंपुसक हो जाता है ।३८। समिधा के बिना अग्नि में होम करने वाले कोअर्जीर्ण और मदाग्नि सताती है ।३९। परनिन्दा, कृतघ्नता, निष्ठुरता, परमर्म छेदन, परनारि का सेवक तथा लज्जाहीनता।४०।पर धन हरण,देवनिन्दा अपवित्रता, कृपणता,ठगी, हिंसा ।४१। तथा अन्याय निषिद्ध कर्मो का करना और उन-उन विषयों में प्रवृत्त होना, ऐस मनुष्य के विषयमे समझलो कि नरक की यातनायें भोगकर ही उसने जन्म लिया है ।४२।

दयाभूतेषुसद्धादापरलोक प्रतिक्रिया ।
सत्याभूतहिताचोक्तिर्नेदप्रामाण्यदर्शनम् ।४३
गुरुदेवर्षिसिद्धर्षितूजनंसाधुसंगमः ।
सत्क्रियाम्यसनंमैत्रीतद्बुध्येतपंडितः ।४४
अन्यानिचैवसद्धनर्मक्रियाभुतानियानिच ।
स्वर्गच्पुतांलिगानिपुरुपाणामपापिनाम् ।४५
एतदुद्देशतोराजन्भवतःकथितंमया ।
स्वकर्मफलक्षोक्तृणांपुण्यानांपापिनांतथा ।४६
तदेह्यन्यत्रगच्छामीदृष्टसर्वंत्वयाधूना ।
त्वयाचदृष्टोनरकस्तदेवयन्यत्रयम्यताम् ।४७
ततस्तमग्रतःकृत्वासराजागतुमुद्यतः ।
ततश्चसर्वैरुत्कृष्टयातनास्थायिभिर्नृभि. ।४८
प्रसादकुरुभूतेतितिष्ठतावन्मुहूर्त्तकम् ।
त्वदंगसर्गापवमोमनाह्लादयतेहिनः ।४९
परिताप चगात्रेषुपोड़ावाधांचकृत्स्नशः ।
अपहयिनरव्याघ्रकृपांकुरुमहीपते ।५०

सब जीवों के प्रति दया, परलोकार्थ शुभकर्म, दूसरों के हितके लिए भाषण, वेद के लिए भाषण, वेद के दृष्टान्त का देखना।४३। गुरु, देवता सिद्ध ऋषियों का पूजन, साधुओं का संग,सत्कर्म का अभ्यास सबके प्रति मित्रता ।४४। तथा अन्याय सत्कर्म जिसमे हो,उसे समझें कि स्वर्ग का

सुख भोग करने के पश्चात् उसने जन्म धारण किया है ।४५। अपने कर्मफल को भोगने वाले पुण्यात्माओं और पापियों के सम्पूर्ण विषयको मैंने आपके प्रति कह दिया है ।४६। आपको भी नरक देखना पड़ा है, अब आप अन्यत्र चलिये ।४७। पुत्र बोला-जैसे ही वह महाराज यमदूत को आगे करके चलने को हुए वैसे ही नरकमें पड़े सब जीव ऊँचे स्वरसे क्रन्दन करते हुए बोले ।४८। हे राजन् ! प्रसन्न हूजिये एक मुहूर्त्त भर यहा ठहरिये,आपके संसर्ग वाली वायुसे हमारा चित्त अत्यन्त अह्लाद पूर्ण होरहा ।४९। इस वायु ने हमारे अंग-२ का परिताप हर दिया है, अत: हे पृथिवीपते ! हमारे ऊपर दया कीजिए ।५०।

एतच्छ्रुत्वावचयतेपांतयाम्यपुरुषततः ।
पप्रच्छकथमेतेषामाह्लादोमयितिष्ठति ।५१
किमयाकर्मतत्पुण्यमर्त्यलोकेमहत्कृतम् ।
आह्लाददायिनीव्युष्टिथम्तेयंतदुदीरय ।५२
पितृदेवातिथिप्रेष्याशिष्टैनान्नेनतेतमृः ।
पुष्टिमभ्यागतातस्मातद्गतवमनोयत ।५३
ततस्त्वद्गात्रसंसर्गीपवनोह्लाददायकः ।
पापकर्मकृतोराजन्यातनानप्रबध्नते ।५४
अश्वमेधादयोयज्ञास्त्वयेष्टाविधिवद्यत; ।
तातस्त्वद्दर्शनाद्याम्यायन्त्रशस्त्राग्निवायसाः ।५५
पोडनच्छेददाहादिमहादुःखस्यहेतव ।
मृदुत्वमागताराजस्तेजसोपहतास्तत्र ।५६

उनके यह वचन सुनकर राजा ने यमदूत से पूछा—मेरे यहाँ खड़े होने से यह इतने सुखी क्यों हो रहे है ? ।५१। मर्त्यलोक में ऐसा कौन सा पुण्य मैंने किया है, जिससे मेरे कारण इन पर ऐसा आनन्द देने वाली वृष्टि हो रही है ? ।५२। यमदूत ने कहा—हे राजन् ! पहिले आपने देवता, पितर, अतिथि, सन्यासी आदि को भोजन देकर उससे बचा हुआ अन्न खा कर अपनी उदर पूर्ति की थी, और आपका चित इसी में रत था अत: हर समय आपके देह के संसर्ग वाली वायु से इन पापियों की सब यातनायें मिट रही हैं । ५४ । आपने

अश्वमेघ आदि यज्ञ विधिवत् कियेहैं,इसलिए सम्पूर्ण महादुःखोंके कारण रूप यमके यंत्र अग्नि, शस्त्र, काक तथा अन्य पक्षियों ने आपके दर्शन से हत होकर कोमलता में प्रवृत्ति की है ।५५-५६।

नस्वगब्रह्मलोकेवातत्सुख प्राप्यतेनरैः ।
यदार्त्त जंतुनिर्वाणदानोत्थमितिमेमतिः ।५७
यदिमत्सन्निधावेतान्यातनानप्रबाधते ।
ततोभद्रमुखाऽत्राहम्स्थास्येस्थाणरिवाचलः ।५८
एहिराजेन्द्रगच्छामिनिचपुण्यसमार्जितान् ।
भुंक्ष्वभोगांस्तुयातनाःपापकर्मिण ।५९
तस्मान्नतावद्यास्यामियावदेतेमुदुःखिताः ।
मत्सन्निधानात्सुखिनोभवतिनरकौकसः ।६०
धिक्तस्यजीवितंपुंमःशरणार्थिनमागतम् ।
योनार्त्तमनुगृह्णातिवैरिपक्षमपिध्रुवम् ।६१
यज्ञदानतपांसीहपरत्रचनभुनये ।
भवंतितस्ययस्यार्त्त परित्राणेनमानसम् ६२
नरस्ययस्यकठिनमनोबालातुरादिषु ।
वृद्धेषुचनतमन्यमानुषं राक्षसोहिसः ।६३

राजा बोले-मेरा विचार है कि जो सुख दुखियोंकी रक्षामें मिलता है, वह स्वर्ग या ब्रह्मलोक मे भी नहीं मिलता ।५७। यदिमेरे यहा खड़े रहने मात्रसे इनकी यंत्रणा नष्ट होरही है तो मैंअचल होकर यही निवास करूंगा ।५८। यमदूत ने कहा राजन् ! आप चलिए,अपने पुण्यसे संचित सब शुभ फलों को भोगिये, यह स्थान तो पापात्माओं के दुःख भोगने के लिए ही है।५९। राजा बोले-जब तक यह घोर दुःख पायेंगे, तब तक मैं नहीं जाऊंगा, क्योंकि मेरे यहाँ रहने से इन सबको सुख मिलता है ।६०। यदि शत्रु भी दुःख से आतुर होकर शरण में आवे तो जो उस पर कृपा न करे उसे धिक्कार है ।६१। जिसका चित्त आर्त्तपुरुष की रक्षा में नहीं है, उसके यज्ञ, दान, तप सब कुछ लोक-परलोक में सुख नहीं पहुंचा सकते ।२२। बाल, वृद्ध, आतुर आदि के प्रति कठोर चित्त

वाले मनुष्य तो राक्षस ही हैं। ऐसा समझो ।६३

एषांमत्सन्निकर्षात्तुयद्यग्निपरितापम्।
तथोग्रगन्धजवापिदु:खंनरकसंभवम् ।६४
क्षुत्पिपासोद्भवदु:खयच्चमूर्छाप्रदमहन् ।
विनाशमेतितद्भद्रमन्येस्वर्गसुखात्परम्। ६५
प्राप्स्यस्यतेतेयदिसुखं वहवोदु:खितेमयि ।
किंवाऽप्रप्तंमयानस्यात्तस्मात्त्ववदमाचिरम् ।६६
एषधर्मञ्चशक्रश्चत्वानेतुं समुपागतौ ।
अवश्यमस्माद्गन्तव्यतस्मात्पार्थिवगम्यताम् ।६७
मयाभित्वामहस्वर्गवयासम्यगुपासितः ।
विमानमेतदारुह्यमाविलंबस्वगम्यताम् ।६८
नरकेमानवाधर्मपीड्यमानाःसहस्रश ।
आहीत्यमीचक्रं दतिमामतोनब्रजाम्यहम् ६९
कर्मणानरकप्राप्तिरेषांपापिष्ठकर्मणाम्।
स्वर्गस्त्वयापिग तयोनृपपुण्येनकर्मणा ।७०

यद्यपि इनके पास रह कर मुझे नरकाग्नि के भीषण तापसे उत्पन्न तीव्र गन्ध का दु:ख झेलना पड़ेगा ।३४। क्षुधा-पिपासा से उत्पन्न मूर्च्छादायक दु.ख भोगना होगा, फिर भी इनकी रक्षा के विचार से मैं उस महादु.ख को भी स्वर्ग सुख से बढ़कर समझूंगा ।६५। यदि मेरे दु:ख पाने मात्र से दु:खी प्राणियो को सुख मिलेगा? इसलिए हे यमदूत! तुम यहां से चले जाओ, देर मत करो ।६६। यमदूतो ने कहा-राजन्! यह इन्द्र और धम आपको स्वर्गमें ले जाने के निमित्त उपस्थित हुए मैं आपको यहां से अवश्य जाना होगा, इसलिए यहां से चलिये ।६७। धर्म ने कहा राजन्! आपने भले प्रकार से मेरी उपासना की है, इसलिए मैं आपको स्वर्गमें ले जाऊंगा,अब आप देर न करें,इस विमान मे शीघ्र ही बैठें ।६८। राजा ने कहा-हे धर्म! हजारों मनुष्य इस नरक में पड़े हुए आर्तनाद कर रहे हैं, इसलिए मैं इस स्थान को छोड़ कर नहीं जा सकता ।६९। इन्द्र बोले—इन पापियों को स्वकर्म फल से यह नरक-यातनायें भोगनी पड़ रही हैं, आपको अपने पुण्य फल से स्वर्ग

मे जाना चाहिए ।७०।

यदिजानासिधर्मत्वन्त्वंवादेवाकृतो ।
ममयावत्प्रमाणंतुशुभंतद्वक्त्रमर्हथः ।७१
अब्बिन्दवोयथाम्भोधौयथावादिवितारकाः ।
यथावावर्षतोधारागंगायांसिकतायथा ।७२
असंख्येयामहाराजत्वाबायोनिपुजंतव ।
तथातवापिपुण्यस्यसंख्यानैवोपपद्यते ।७३
अनुकंपामिमामद्यनारकेष्वपकुर्वता ।
तदेवशतसाहस्त्रसंख्यानीनत्वयानृप ।७४
तद्गच्छत्वंनृपश्रेष्ठतद्भुङ्क्ष्व ममरान्तरम् ।
ततेतुनरकेपापक्षपयन्तुस्वकमजम् ।
कथंस्पृहांकरिष्यतिमत्संपर्कायमानवाः ।
यदिमत्संनिधावेषामुत्कर्षोनोपपद्यते ७६
तस्माद्यत्सुकृतंकिञ्चिन्ममास्तित्रिदशाधिप ।
मुच्यंतांतेननरकात्पापिनोयातनागताः ।७७

राजा ने कहा—हे धर्म ! हे देवेन्द्र ! मेरा संचित पुण्य कितना है, यदि आपको ज्ञात हो तो मुझे बताइये ।७१। धर्म बोले—राजन् ! समुद्र में जितने जल बिन्दु हैं, आकाश में जितने तारे है, वर्षामे जितनी जल-धारें है, तथा गंगा में जितनी बालू है, आपका उतना ही पुण्य है ।७२। जिस प्रकार जल-बिन्दुकी गणना नही की जासकती उसी प्रकार आपके पुण्य भी सख्यातीत है ।७३। तथा अब इन नरक वासियो के प्रति दया प्रकट करने से आपका पुण्य भी शत-सहस्त्र गुणा अधिक हो गया है । ।७४। इसलिए आप अपने पुण्यका फलभोगने को वहां चले और यह पापी भी नरकमें रहकर अपने को नष्ट करें ।७५। राजा बोले—यदि मेरी निकटता से इन्हें कुछ सुख न हुआ होता तो यह मेरे साथ की अभिलाषा ही क्यों करते ? ।७६। इसलिए मेरा जो कुछ पुण्य है उसी के द्वारा यह नरक यातनाको प्राप्त करने वाले पापी नरकसे मुक्त हों।७७।

एवमूर्ध्वतरंस्थानंत्वया प्राप्तंमहीपते ।

एतांस्तुनरकात्पश्यविमुक्तान्पापकर्मिणः ।७८
ततोपतष्पुष्पवृष्टिस्तस्तस्योपरिमहीपते. ।
विमानचाधिरोप्यैनस्वर्लोकमनयद्धरिः ।७९
अहचान्येचयेतत्रयातनाभ्यःपरिच्युताः ।
स्वकर्मफलनिर्दिष्टततोयोन्यनरंगताः ।८०
एवमेतेसमाख्यातानरकाद्विजपत्तनः ।
येनयेनचपापेनयांयोनिमुपैतिवै ।८१
दत्तत्सर्वंसमख्जातयथादृष्टमयापुरा ।
पृरानुभवजज्ञानमवाप्न कथितान ।
अतःपरमहाभागकिमन्यत्कथयामिते ।८२

इन्द्र बोले हे राजन् ! इसमें आपको और भी उत्तम स्थान प्राप्त हुआ, यह देखिये सब पापी नरक से मुक्त हो गए ।७८। पुत्र बोला फिर उन राजा के ऊपर पुष्प वृष्टि होने लगी और सुरपति उन्हें विमानो में चढा कर स्वर्गलोक को ले गये ।७९। इधर मैंने भी अपने नारकीयो सहित यन्त्रणा से मुक्त होकर स्वकर्म के अनुसार विभिन्न योनियों में जन्म धारण किया ।८०। हे द्विजोत्तम ! इन नरको की सब बात आपके प्रति यथार्थ रूपमें कहदी और यह भी कह दिया कि किस योनि में जाना होता है ।८१। जो कुछ पूर्वकाल मे मैंने देखा वह सब आपसे कह दिया इम सबका मेने स्वयं अनुभव किया है, इसलिए यह नितान्त सत्य है, अब और क्या कहूँ यह यह मुझे आज्ञा दीजिये ।८२।

।। इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे पितापुत्र संवादे पञ्चदशोऽध्याय ।।१५।।

१६—दत्तात्रेय माहात्म्य वर्णन

कथितमेत्यावत्सर्सं सारस्लब्यवस्थितम् ।
स्वरूपमपिदेहस्यघटोयंत्रवदव्ययम् ।
तदेवमेतदखिलमम्गावगतमीदृशम् ।
किमयावदकर्त्तव्यमेवमस्मिन्वस्थिते ।२
यदिमद्वचनतातश्रद्धास्यविशकितः ।

तत्परित्यज्यगार्हस्थ्यंवानप्रस्थमनाभव: ।३
तमानुष्ठायविधि:वह्निहायाग्निपरिग्रहम् ।
आत्मान्यात्मानमाधायनिर्द्वन्द्वोनिष्परिग्रह: ।४
एकांतशीलोवश्यात्माभवभिक्षुरतन्द्रित: ।
तत्रयोगपरोभुत्वाबाह्यस्पर्शं विवर्जित: ।५
तत: प्राप्स्यसिनयोगं दु:खसंयोगभेषजम् ।
मुक्तिहेतुमनोपम्यमनाख्येयमसंज्ञिनम् ।६
तत्संयोगात्नते संयोगोभूतैर्भवितानि ।
वत्सयोगं वचाच्क्ष्वमुक्तिहेतुमत: परम ।७
येनभूतै:पुनर्भूयोनेदृग्दु:खमवाप्नुयाम् ।
यत्राशक्तिपरस्यात्मामसंसारबंधने ।८

पिता बोले-वत्स ! तुमने घटी यन्त्र के समान निरन्तर चलते हुए संसार चक्र का अतिशय स्वरूप मुझे बताया ।१। अब मुझे ज्ञान होगया कि सब ऐसा ही है, अब मुझे क्या करना उचित है ? ।२। पुत्र ने कहा-यदि आप शंका रहित मनसे मेरी बात मानें तो गृहस्थाश्रम का त्याग कर वानप्रस्थ हो जाइये ।3। विधान के अनुसार अग्नि परिग्रह त्याग, आत्मामें आत्माका संयोग स्थापति करके द्वन्द रहित परिग्रह रहित हो जाइये ।४। एकान्त में रहकर आत्माको वशमें करके आलस्य त्याग करिये, इसप्रकार जब बाह्य स्पर्श से परे होंगे ।५। तब आप मोक्ष-कारण, निरूपम वचनातीत, नि:संग दु:ख के लिए औषधि स्वरूप इस योगको प्राप्त करेंगे ।६। इस योगके संयोग से पंचभूत के साथ आपकी पुन: संगति नहीं होगी, पिता बोले-अब तुम मोक्षके कारण रूप उस योग का वर्णन करो ।७। जिसके अवलम्बन से भौतिक संयोग युक्त पुनर्जन्म का दु:ख मुझे फिर कभी न भोगना पड़े, यद्यपि आत्मा निर्लिप्त है फिर भी संसार के विषयों में इसकी आसक्ति है ।८।

नेतियोयमयोगोपितंयोगमधुनावद ।
सपरादित्यतापर्त्तिविप्लुष्यद्देहिमानसम ।९
ब्रह्मज्ञाताँबुशीतेनसिंचमाँवाक्यवारिणा ।

अविद्याकृच्छसर्पेणदष्टंतद्विषपीडितम् । १०
स्ववाक्यामृतदानेनमांजीवयपुनर्मृतम्
पुत्रदारगृहक्षेत्रममत्वनिगडार्दितम् । ११
मांमोचयेष्टसद्भावविज्ञानोद्घाटनैश्चिरम् ।
श्रृणुतातयथायोगोदत्तात्रेयेणधीमता १२
अलर्कायपुराप्रोक्तःसम्यक्पृष्टेनविस्तरात् ।
दत्तात्रेयस्सुतःकस्यकथवायोगमुक्तवान् ।१३
कश्चालर्कोमहाभागोयोयोगंपरिपृष्टवान् ।
कौशिकोब्राह्मणःकश्चित्प्रतिष्ठानेभवत्पुरे ।१४
सोन्यजनकृतैःपापैः कुष्ठरोगातुरोभवत् ।
ततथाव्यधितभार्यापतिदेवमिवार्चयत् ।१५

इसलिए विषयों को पाकर आत्मा उन विषयो में न लगे, हे वत्स! मेरा मन और शरीर भय रूप भास्कर के तापसे तप्त है ।६। तुम ब्रह्मज्ञान मय वचन रूप जल से उस तापको ठंडा करो, मुझे अविद्या रूपी कालसर्प ने दंशित किया है, उसकी पीडासे मैं मृतकके तुल्य हो रहा हूँ ।१०। तुम अपने वचनामृतसे मुझे पुनर्जीवित करो, मैं पुत्र, भार्या घर खेत आदि की ममता रूप बेड़ियों में जकड़ा हुआ हूँ।११। तुम सद्भाव ज्ञान के द्वारा मुझे उससे मुक्त करो । पुत्रने कहा-पुराकाल में अलर्क द्वारा प्रश्न करने पर दत्तात्रेयजी ने जो योग उसे विस्तार सहित बताया था, उसे कहता हूँ, पिता बोले-दत्तात्रेयजी किसके पुत्र थे, और उन्होंने योग का वर्णन किस प्रकार था ।१२-१३। तथा योग का प्रश्न करने वाले अलर्क कौन थे । पुत्र ने कहा--प्रतिष्ठान नगर में एक कुशिक वंशी ब्राह्मण रहता था ।१४। वह पूर्वजन्म के पाप से कुष्ठी होगया, अतिकुष्ठी से आक्रांत होने पर भी उसकी पत्नी देवता के समान उसका पूजन करती थी ।१५।

पादाभ्यंगांगसंवाहनानाच्छादनभोजनैः ।
श्लेष्ममूत्रपुरीषासक्प्रवाहक्षायनेनच ।
रहस्येवोपचारेणप्रियसंभाणेनच ।
सततंपूज्यमानोक्तितायतीवनीतया ।१७

अतितीव्रप्रकोपत्वान्नभर्तस्यतिमारुण ।
तथाविप्रणतासाध्वी तममन्यदेवतम् ।१८
तंतथाप्यनिवीभत्समत्तंश्रेष्ठममन्यत ।
अचक्रमणशीलापिमकदाचिद्द्विजोत्तमः ।१९
प्राहभार्यानियम्बेनित्तेमादस्याग्निनेशनम् ।
याशावेश्यामयादृष्टाराजमार्गेगृहेपना ।२०

वह तेल मलती चरण दाबती, आच्छादन करती, भोजन कराती और मल, मूत्र, कफ, रक्त आदि को धोती थी ।१६। तथा निर्जन में प्रिय भाषण और विनीत भाव के सहित उसका आदर पूर्वक उसका पूजन करती थी ।१७। परन्तु वह ब्राह्मण अत्यन्त क्रोधी था, विनीत भाव वाली पत्नी से पूजित होकर भी झिड़की देता रहता था फिर भी वह देवता मानती थी ।१८। वह उस वीभत्स स्वरूप के ब्राह्मण को सदा सर्वश्रेष्ठ मानती थी। एक समय उस ब्राह्मण मे चलने तककी शक्ति न थी तो भी ।१९। उस अपनी पत्नी से कहा—वह वेश्या राजमार्ग के पार्श्ववर्ती गृह में रहता मैने उसे देखा है ।२०।

तांमेप्रापयधर्मज्ञेसैवमेहृदि वर्तते ।
दृष्टामुर्योदयेबालारात्रिश्चेयमुपागया । २१
दर्शनानन्तरसामेह्यत्रपसर्पति ।
यदिसाचारुसर्वांगोपीनश्रोणिपयोधरा । २२
नोपगूहतितन्वंगितन्मांद्रक्ष्यतिवैमृतम्
वामःकमोमनुष्याणाबहुभिःप्राप्यचेतम ।२३
ममाशक्तिश्चगमनेसकुलप्रतिभातिमे ।
तत्तदावचनश्रुत्वाभर्तुः कामातुरस्यसा ।२४
तत्पत्नीव्याकुलाजातामहाभागापतिव्रता ।
गाढंपरिकरबद्ध्वामुक्लमादायचाधिकम् ।२५
स्कंधेभर्तारमारोप्यजगाममुदुगामिनी
निशिमेघावृतेव्योम्निचलद्विद्युच्चदृश्यते ।२६
राजमार्गेप्रियभर्तुश्चिकीर्षतोद्विजांगना ।

पथिशूलेनदं प्रोतमचोरशंकया ।२७
माण्डव्यमतिदु,खातृम धकारेचसद्विजः ।
पत्नीस्कधममारुढश्चालयामासकौशिकः ।२८

तु मुझे उस वेश्या के घ. ले चल, वह मेरे हृदय में निरन्तर बसी रहती है, मैं प्रातः काल उसे देखा था कब रात्रि का समय हो गया है ।२१। जब मैंने उसे देखा है तभी से वह मेरे हृदय मे पृथक नहीं हो रही है, यदि पुष्ट पयोधरा ।२२। बाला मुझसे न मिलेगी तू अवश्य ही मुझे मृत देखेगी । क्योंकि प्रथम तो कामदेव मनुष्योंके अनुकूल ही नहीं हैं ।२३। उस पर भी अनेकों मनुष्य उसके भक्त हैं मुझमे चलने कीं सामर्थ्य नहीं है इससे और भी विषय सकट प्रतीत हो रहा हूँ उस कामातुर पतिदेव की बातें सुनकर ।२४। वह पतिव्रता व्याकुल हो गइ फिर भी उसने बहुत सा धन लेकर ।२५। पति को अपने कन्धें पर चढ़ाया और धीरे-धीरे चल पड़ी, एक तो अंधेरी रात, दूसरे आकाश में बादल छाये हुए थे, वह बिजली कोचमक में अपने पति क प्रिय कार्य के लिए राजमार्ग मे चलदी उसी मार्ग में शूल गढ़ी हुई थी जिस पर चोरी के मिथ्या अपराध में ।२३-२७। मुनिवर चढ़े हुए दुःखी भोग रहे थे, मार्ग में अधेरा होते मे पत्नी के कन्धे पर स्थित कौशिक ब्राह्मण का भूमि से स्पर्श हुए और पैर विचलित होगया ।।२८।।

वामाँगेनाथसक्रुद्धोमांडव्यस्तमुवाचह ।
येनाहमेवत्यथंदुःखितश्चालितावृथा । २९
इत्थंकष्टमनुप्राप्त मपापात्मानराधमः ।
सूर्योदयेऽवशःप्राणैविवोक्ष्यति न संशयः । ३०
भास्करालोकनादेतसविनाशनवाप्स्यसि ।
तस्यभार्याततःश्रुत्वातशापमतिदारुणम् ।३१
प्रवोचव्यथितासूर्योनैवोदयमुपेष्यति
ततःसूर्योदयाभावादभवत्समम।निशा ।३२
बहुन्यह प्रमाणानिततोदेवभयंययुः ।
निःस्वाध्यायवषटकारस्वधास्वाहाविवर्जितम् ।३३
कथनुखल्विदंसर्वंनगच्छेत्संक्षयंजगम्

अहोरात्रव्यवस्थायाविनामासतु संक्षय: ।३४
तत्संक्षयान्नत्वयनेज्ञायेत्ते दक्षिणोत्तरे ।६५

जिससे माडव्य मुनि ने क्रोध से कहा कि जिसने मेरा पैर विचलित करके मुझे व्यर्थ ही।२९।यंत्रणा दी है वह पापी सूर्योदय होते ही असह्य यंत्रणा भोगता हुआ मृत्युको प्राप्त होगा ।३०। सूर्यके उदय होते ही उस का प्राण अवश्य चला जायगा, इस दारुण शाप को सुनकर उसकी पत्नी ने अत्यन्त व्यथित होकर कि अब सूर्य ही उदय नहीं होगे, उस पतिव्रताके इस वचनसे सूर्योदय नहीं हुआ और इसप्रकार अनेक रात्रियां हुई। यह देखकर देवता भी भयभीत होकर ।३२। विचार करने लगे कि स्वाध्याय, वषटकार स्वधा और स्वाहा के इसप्रकार लुप्त होने से विश्व की रक्षा कैसे होगी? ।३३। अहोरात्र की व्यवस्था टूट जाने से मास और ऋतु का विभाग न होगा, जिसके कारण उत्तरायण या दक्षिणायन ज्ञान भी न हो पायगा ।३४-३५।

विनाचायनविज्ञानंकाल: संवत्सर:कुत: ।
पतिव्रतायावचनान्नोद्गच्जतिदिवाकर: ३६
सूर्योदयविनानैवस्त्रनदानादिका:क्रिया: ।
अग्नेर्विहरणचैवक्रत्वभावश्चलक्ष्यते ।३७
नकालेनविनाचेष्टिनचयज्ञादिका:क्रिया:
नश्यतिसर्वभूतानितामोभूने चराचरे । ३८
नैवाप्यातनमस्काकविनाह्यमेतजायते ।
वयमाप्यानतामर्त्यैज्ञभागयथोचितै: ।३९
वृष्टयादिनानुगृह्णी मोमर्त्यान्सस्याभिवृद्धये ।
निष्पादितांस्त्वौषधीषुमर्यायज्ञै यैज'।तान: ।४०
एवंवयप्रयच्छाम:कामान्वज्ञादिपूजिता ।
अधोहिवर्षामवयंमर्त्याश्चोर्ध्वप्रवर्षिण: ।४१

यह ज्ञान न होने से संवत्सर का स्थिर करना संभव न होगा, तथा आन्यान्य कालोंका ज्ञानभी कैसे हो सकेगा? अब उस पतिव्रताके वचनसे सूर्योदय ही रुक गया है ।३६। सूर्योदय के अभाव में स्नानादि कार्य, हवन

तथा सम्पूर्ण-यज्ञोंका अभी अभाव हो ही गया है ।३७। काल के अभाव से इष्टि तथा यज्ञदानादि क्रिया नहीं हो सकती तथा अन्धकार से व्याप्त होकर सब जीव नाश को प्राप्त होरहे हैं ।३८। यज्ञके विना हमारी तृप्ति का भी अन्य उपाय नहीं है, क्योंकि यज्ञ भाग देकर ही मनुष्य हमे तृप्त करते हैं ।३९। हमभी अनादि की उपलब्धि के लिए वृष्टि करके उन पर अनुग्रह करते हैं, औषधियो के उत्पन्न होने पर उनके द्वारा यज्ञ किये जाते है ।४०। उनके पूजन से सतुष्ट होकर हम इच्छितवर देतेहैं हम नीचे की ओर जल बरसाते और वे ऊपर की ओर घृत बरसाते है ।४१।

तोयवर्षेणहिवयहविर्वर्षेणमानवाः ।
येस्माकंदप्रयच्छतिनित्यनैमितिकीःक्रिया; ।४२
क्रतुभागंदुरात्मानस्स्वयंवाश्नतिलोलुपाः ।
विनाशायवयंतेषाँतोयसूर्याग्निमारुताः ।४३
क्षितिञ्चसंदूषयामपापानामपकारिणम् ।
दुष्टतोयादिदोषेणतेषांदुष्कृतकर्मणाम् ।४४
उपसर्गाःप्रवर्त्तन्तेमरणायसुदारुणाः ।
येत्वस्मान्प्रीणयित्वातुभुंजतेशेषेमात्मना ।४५
तेषापुण्यतमांल्लोकान्गितरामौमहात्मनाम् ।
तन्नास्तिसवमेतद्धिनचोपायव्यवस्थितम् ।४६
कथनुदिनसंगःस्यादन्योन्यमवदसुराः ।
तेषामेवसमेतानाँयज्ञव्युच्छित्तिशंकिनाम् ।
देवानावचनश्रुत्वाप्राहदेवःप्रजापतिः ।
तेजःपरन्तेजसोवतपसाचतपस्तथा ।४८

हम जल बृष्टिसे और मनुष्य हवि देकर परस्पर प्रसन्न होते हैं जो नित्य नैमित्तिक क्रिया हमको अर्पण नहीं करते ।४२। अर्थात् जो नित्य नैमित्तिक क्रिया हमे न देकर यज्ञ भागको स्वयं ही खा जाते हैं, उनके विनाशार्थं हम जल, अग्नि, सूर्य, वायु ।४३। और पृथिवी को दूषितकर देते हैं,जिससे उन पापियों को ।४४। नष्ट करने वाले दारुणरोग उत्पन्न होते हैं, परन्तु जो हमें तृप्त करके शेष मात्र का भोजन करते है ।४५।

उन माहत्माओं को हम पुण्यमय स्थान प्रदान करते है, परन्तु इस समय तो वह सब कार्य अवरुद्ध है और उसका कोई उपात भी दिखाई नही देरहा है ।४३। इस दग्ध सृष्टि की स्थिरता कैसे हो? दिन किस प्रकार कटे ? यज्ञ के नष्ट होने की शंका करते हुए देवगण परस्पर इस प्रकार कहने लगे ।४७। उसके बचनों को सुनकर देवोत्तम प्रजापति ब्रह्माजी बोले ।।४८।।

प्रशाम्यत्यमरास्तस्माज्छणूध्वंवचनम ।
पतिव्रतयासहास्म्यान्नोद्गच्छतिदिवाकरः ।४६
तस्यचानुदयाद्धानिर्मर्त्मानांभवतायथा ।
तत्मात्पतिव्रतामत्र रनसूयातपस्विनीम् ५०
प्रसादयतवैपत्नीभानोरुदयकाम्पया ।
ते साप्रसादितागत्वाप्राहेष्टंव्रियतामिति ।५१
अयाचतदिनदेवाभवत्वितयिथापुरा ।
पतिव्रतायामहाम्म्य नहीमतेकथत्विति ५२
समान्पतांतथासाध्वीतथाप्रेप्याम्यहमुराः ।
यथापुनराहोरात्रसस्थानुपजायते ।५३
यथाचतस्याःसपतिर्न पापान्नशमेष्यति ।
एवमुक्त्वसुरांस्च स्यगत्वासाम दिरमुभ। ५४
उवाचकृश नपृष्टाधर्म भर्तुस्ताय ात्मनः ।
कच्चिन्नदसिदल्यणिस्वभर्तुःसुखदायिनी ।५५
कच्चिच्चाखिलदेवेभ्योमदन्यसेह्याधिकैपतिम् ।
भर्तुःशुश्रुमणादेकुदयाप्राप्तमहत्फलम् ।५६

परम तेज और तप से ही तप का विनाश होता है, इस लिए मेरी बात सुनो पविव्रता की महिमासे सूर्योदय नहीं हो रहा, सूर्योदय के अभाव से तुम्हारी और मनुष्योंकी हानि है यदि तुम सूर्योदय चाहते होतो महर्षि अत्रि की पत्नी अनुसूयाको ।४६-५०। प्रसन्न करो । पुत्रने कहा-तब देवताओं ने जाकर अनुसूया को प्रसन्न किया इसके पश्चात् अनुसूयाने कहाँ तुम इच्छित विषय बताओ ।१५। देवताओं ने कहा पहिले के समान-

सूर्योदय हो जाय। अनसूया बोली पतिव्रत की महिमा कभी नष्ट नहीं हो सकती।५२। फिर भी मैं उस पतिव्रता के समान पूर्वक ऐसा उपाय करूँगी, जिससे दिन निकल आवे।५३। और उसका पति भी शाप के कारण मृत्यु को प्राप्त न हो, ऐसा कहकर अनूसूया उसके घर गई।५४। और उसकी तथा उसके स्वामी की कुशल पूछी—हे स्वामी को सुख देने वाली! तुम उनका सुख देखने से प्रसन्न रहती हो? ।५५। तथा अपने स्वामी को देवताओं से भी श्रेष्ठ मानती हो, मैं भी अपने स्वामी की सेवा से ही महाफल को प्राप्त हुई हूँ।५६।

सर्वकामफलावाप्तिःपत्यृशुश्रूपणात्स्त्रियाः।
पंचर्णानिमनुष्येणसाध्विदेयानिसर्बदा ॥५७
तथात्मवर्णधर्मेणकर्तव्योधनसंचयः।
प्राप्तश्चार्तस्तथापात्रे विनियोज्योविधातः ॥५८
सत्यार्जवतपोदानदयायुक्तोभवेत्सदा।
क्रियाचशास्त्रनिर्दिष्टारागद्वेपविवर्जिता ॥५९
कर्त्तव्याहरंरहःश्रद्धापुरुस्कारेणशक्तितः।
स्वजातिविहितानेवंलोकान्प्राप्नोतिमानवः ॥६०
क्लेशेनमहतासाध्विप्राजापत्यादिकान्क्रमात्।
स्त्रियश्चैवंसमस्पश्यनरैर्दुःखार्जितस्यवै ॥६१
पुण्यस्यार्द्धापहारिण्यःपतिशुषश्रूयैवहि।
नास्तिस्त्रीणांपृथग्योनश्राद्धंनाप्युपोषितम् ॥६२
भर्तुःशश्रूयैवैतालोकानिष्ठाञ्जयंतिहि।
तस्मात्साध्विमहाभागेपतिशुश्रूषणंप्रति।
त्वयामति सदाकार्यायतोभर्तापरागतिः ॥६३

पत्नी की सम्पूर्ण कामनाएँ पति-सेवा मे ही निहित हैं। हे साध्वि! पांच ऋण सर्बदा देय हैं।५७। अपने वर्ण-धर्म के अनुसार धनका संचय करके उपयुक्त पात्रको दान करे।५८। तथा सदैव, सत्य, सरलता, तप, दान और दया परायण रहे और नित्यप्रति राग द्वेषसे रहित शास्त्रोक्त कर्म को श्रद्धा सहित करे, 'ऐसा करने से सब लोकों की प्राप्ति होती है

।५६-६०। तथा प्राजापत्यादि पवित्र धामको प्राप्त होते हैं, परन्तु स्त्रियाँ पति-सेवा से ही उसके सब पुण्यमें आधा भाग प्राप्त कर लेती हैं स्त्रियों के लिए यज्ञ, श्राद्ध अथवा उपवास आदिका कोई पृथक् विधान नहीं।६१।६२। वह तो स्वामी की सेवा मात्र से ही सब इच्छित लोकों को प्राप्त होती हैं इसलिए तुमइसीमें लगी रहो, क्योंकि पत्नी की परमगति पतिही है।६३।

यद्देवेभ्योयच्चपित्रादिकेभ्य‌कुर्याद्भर्ताभ्यर्चनंसत्क्रियाञ्च ।
तस्यार्द्धंवैकैवलानन्यचित्तानारीभुङ्क्ते भर्तृ भर्तृशुश्रूषयैव ।६४
तस्यास्त द्वचनंश्रुत्वाप्रतिपूज्यतदादरात् ।
प्रत्युवाचात्रिपत्नींतामनसूयामिदंवचः ।।६५
धनस्यास्म्यनुगृहीतास्मिदैवस्याप्यवलोकतः ।
यन्मेप्रकृतिकल्याणिश्रद्धांवर्धयसेपुनः ।।६६
जानाम्येतन्ननारीणांकन्चित्पतिसमागतिः ।
तत्प्रीतिश्चोपकारायइहलोकेपरत्रच ।।६७
पतिप्रसादादिहचप्रेत्यचैवयशस्विनी ।
नारीसुखमवाप्यनोतिनार्याभर्त्ताहिदैवतम् ।।६८
सात्वंब्रूहिमहाभागेप्राप्तायाममदिरम् ।
आर्यायाःकिन्नुकर्त्तव्यंमयार्येणापिवाशुभे ।।६९

स्वामी द्वारा किए जानेवाले देवता, पितर, अतिथि आदिका सत्कार या सब सत्कर्म, सभी में स्त्रीको पति-सेवाके कारण अर्द्धांश प्राप्त होता है।६४। पुत्र ने कहा—अनुसूयाके वचन सुनकर उसने आदर सहित अनुसूया का पूजन किया और बोली।७५। आजमे अत्यन्त अनुगृहीत और धन्य होगई हूँ क्योंकि अपने स्वामी के प्रति मेरी श्रद्धाको और भी बढ़ा दिया है, तथा देवताओं ने भी मुझ पर अनुग्रह किया है।६६। मैं जान गई कि स्वामी के अतिरिक्त अन्य कोई गति स्त्री की नहीं है उन्हीं की प्रसन्नता से इहलोक और परलोक बनता है।६७। पति की कृपा से ही स्त्रियाँ इहलोक-परलोक में सुख पाती हैं, क्योंकि उनका देवता पति ही है।६८। जब आप स्वयं ही यहाँ पधरी है, तब मुझे अदेश दीजिए कि मुझे या मेरे स्वामी को क्या करना उचित है ? ।६९।

एतेदेवा:सहेन्द्रेणमामुपागम्यदु:खिता: ।
त्वद्वाक्यापास्तसत्कर्मदिननक्तानिरूपण: ॥७०
याचंतेर्हनिशासंस्थांयथावद्विखंडिताम् ।
अहंतदर्थमायातश्शृणुचैतद्वचोमम् ॥७१
दिनाभावात्समस्तानामभावोयाकर्मणाम ।
तदभावात्सुरा:पुष्टिंनोपयातितपस्विनो ॥७२
अह्नश्चैवसमुच्छेदादुच्छेद:सर्वकर्मणाम् ।
तदुच्छेदादनावृष्ठ्याजगदुच्छेदमेष्यति ॥७३
तत्वमिच्छसिधैर्येणजगदुद्धर्तुमापद: ।
प्रसीदसाध्विलोकानांपूर्ववद्वर्ततांरवि: ॥७४
मांडव्येनमहाभागेशप्तौभर्ताममेश्वर: ।
सूर्योदयोविनाशत्वप्राप्स्यसीत्वतिमन्युना ॥७५
यदितेरोचतेभद्रेततस्तद्वचनादहम् ।
करोमिपूर्ववद्देहंभर्त्तारंवचनात्तव ॥७६
मयापिसर्वशास्त्रीणांमाहात्म्यंवरवर्णिनी ।
पतिव्रतानामाध्यमितिसंमानयामिते ॥७७

अनुसूया से कहा—हे साध्वि ! तुम्हारे वचन से दिन-रात्रि का भेद न रहने से सब सत्कर्म नष्ट हो गये हैं, इसलिए सुरराज इन्द्र के सहित यह सम्पूर्ण देवता मेरे पास आकर ।७०। पहिले के समानही दिन-रात्रि होने को कहते हैं, मैं इसलिए यहाँ आई हूँ ।७१। दिन के न होने से यज्ञानुष्ठान भी नहीं हो रहाहै और यज्ञ के न होनेसे देवताओंकी तुष्टि भी नहीं हो सकती ।७२। दिन के आभाव में सब कर्मोंका नाश होगया तथा कर्म नाश से अनावृष्टिहो गई, इससे संपूर्ण विश्वका नाश संभव है ।७३। यदि तुम इस विपत्तिसे संसारको बचाना चाहो तो सबपर प्रसन्न होओ जिससे सूर्य पूर्ववत् उदयको प्राप्त हो सके ।७४। ब्राह्मणी बोली हे महाभागे ! मुनि माण्डव्य ने क्रोध पूर्वक मेरे स्वामीको शाप दिया हैकि 'सूर्योदय होते ही तेरा पति मृत्युको प्राप्त होगा ।७५। अनुसूया ने कहा-हे कल्याणी ! ऐसा होने परमैं तुम्हारे स्वामीके शरीरको पहलेके समान

पहले के समान कर दूँगी ।७६। पतिव्रता स्त्री की महिमा मेरे लिएसदैव आराधन के योग्य है, इसलिए मैं तुम्हारा सम्मान रखूँगी ।।७७।।

तथेत्युक्तेनथासूर्यमाजुहावतपस्विनी ।
अनसूयार्घ्यमुद्यध्यदचार्धरात्रे तदानिशि ।।७८
ततोविवस्वान्भगान्फुल्लपद्मारुणाकृतिः ।
शैलाधिराजमुदयमारुरोहोरुमंडलः ।।७
समनंतरमेवास्यभर्त्ताप्राणैर्व्ययुज्यत ।
पपातचमहीपृष्ठेपतंन्तंजगृहेवसा ।।८०
नाविषादस्त्वयाभद्रे कर्तव्यःपश्येमेबलम् ।
पतिशुश्रूषयावातंतपसःकिंचिरेणमे ।।८१
यथाभर्तसमंनान्यमपश्यपुरुपक्वचित् ।
रूपतःशीलतोबुद्धयाव ङ्माधुर्यादिभूषणैः ।।८२
तेनसत्येनविप्रोयंव्याधिमुक्तपुनर्युवा ।
प्राप्योनुजीवितभार्यासहायःशरदांशतम् ।।८३

पुत्र बोला कि ब्राह्मणी के 'ऐसा ही हो' कहने पर अनुसूया ने अर्घ्य सहित सूर्यका आह्वान किया, उस समय तक दशरात्रियोंका समय व्यतीत हो चुका था ।७८। फिर प्रफुल्लित कमलके समान लाल वर्णवाले सूर्य जैसे ही उदयाचल में चढ़े ।७६। तभी उस ब्राह्मण का प्राणान्त हो गया, इससे वह ज्योंही पृथ्वी में गिरा त्योंही ब्राह्मणी ने उसे सँभाला ।८०। अनसूया ने कहा-हे भद्रे! तुम विषाद न करो, मैंने पति सेवा से ही जिस तपोवल को प्राप्त किया है,वह तुम्हे अभी दिखाई पड़ेगा ।८१। मैं यदि रूप, शील, वुद्धि, वाणी माधुर्य आदि सद्गुणों मे अपने स्वामी के समान किसी अन्य को नहीं मानती ।८२। तो मेरे उस सत्य के बल से यह ब्राह्मण रोग-रहित होकर युवावस्था को प्राप्तहो और पुनर्जीवन प्राप्तकर सौ वर्ष तक पत्नी के सहित जीवित रहे ।८३।

यथाभर्तृ समंनान्यमहंपस्यामिदेवतम् ।
तेनसत्येनविप्रोयंपुनर्जीवत्वनामयः ।।८४
कर्मणामनसावाचाभर्तु राराधनंप्रति ।

यथाममोद्यमोनित्यंतथायंजोवतादृद्विजः ।।८५
ततोविप्रःसमुत्तस्यौव्याधिमुक्त पुनर्युवा ।
स्वभामिर्भासपन्वेश्मवृन्दारकइवाजरः ।।८६
ततोपतत्पुष्पवृष्टिर्देववद्यानिसस्वनुः ।
लेभिरेचमुदंदेवाअनसूयामथाब्रुवन् ।।८७
वरवणीष्वकल्याणिदेवकार्यमहत्कृतम् ।
आदित्योदयसद्भावाद्वरंवरपसुव्रते ।।८८
त्वयायस्मात्ततोदेवावरदास्तेतपस्विनि ।
यदिदेवाःप्रसन्नामेपितामहपुरोगमाः ।।८९
वरदावरयोग्याचयद्यहभवतामता ।
तद्यांतुममपुत्रत्वंब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ।।९०

मैं यदि अपने स्वामी के समान किसी अन्य देवता को भी नहीं मानती तो मेरे इसी सत्यके बल से ब्राह्मण रोग-रहित होता हुआ पुनर्जीवन को प्राप्त हो ।४८। यदि मन वाणी और काया से मैंने स्वामीकी नित्य आराधना की है तो यह ब्राह्मण जीवित हो ।४६। पुत्र बोला कि वह ब्राह्मण रोग-मुक्त युवा रूप होकर अपनी प्रभा से गृहको प्रकाशित करता हुआ उठ पड़ा ।८६। तब पुरुषों की वृष्टि और देव-वाद्योंकी ध्वनि होने लगी और फिर अत्यन्त प्रसन्न हुए देवताओं ने अनुसूया से कहा ।७८। देवगण बोले—हे कल्याणी ! तुमने देवताओं का महान् कार्य संपादन किया है, अब तुम सूर्योदय के कारण वर माँगो ।८८। सब देवता तुम्हें वर देना चाहते हैं, यह सेनकर अनुसूयाने कहा—हे देवगण ! यदि आप प्रसन्न होकर मुझे वर देना चाहते हैं तों मुझे यह वर दीजिए कि ब्रह्मा, विष्णु और शिव मेरे पुत्र रूप में उत्पन्न हों ।८९।९०।

योगंचप्रःप्नुयांभर्तृ सहिताक्लेशमुक्तये ।
एवमस्त्वितिदेवास्तांब्रह्माविष्णुशिवादयः ।।९१
उक्त्वाजग्मुर्यथान्यायमनुमान्यतपस्विनीम् ।
ततःकालेवहुतिथेद्वितीयोब्राह्मणसुतः ।।९२
स्वभार्यांभगवानत्रिरनसूयामपश्यत ।

ऋतेस्तनातासुचार्वंगीलोभनीयतमाकृतिम् ॥६३
समामोमनस।भेजेसमुनिस्तामनिन्दिताम् ।
तस्याभिपश्यतस्ताँतुविकारोयोभ्यजायत ॥६४
तमपोवाहपनस्तिर्यगूर्ध्वववेगवान् ।
ब्रह्मरूपं चशुक्लाभंपतमानंसमंतत: ॥६५
सोमरूपं रजोरूपं दिशस्तंजगृहुर्दश ।
ससोमोमानसोजज्ञे तस्यामात्र:प्रजापते ॥६६
पुत्र:समस्ततत्वानामायुराधारएवच ।
तुष्टेनविष्णुनाजज्ञे तात्रे योमहात्मना ॥६७
स्वशरीरात्समुत्पन्न.सत्वोद्रिक्तोद्विजोत्तम: ।
दत्तात्रे यइतिख्यात:सोनसूयास्तनंपपौ ॥६८

और मैं अपने पति के सन्निन क्लेश से मुक्त होने के लिए योग को प्राप्त होऊँ। पुत्र बोला—यह सुनकर ब्रह्मा, विष्णु, शिवादि देवगण 'ऐसा ही हो' कह कर।६१। उस तपस्विनी का सम्मान करके चले गए फिर कुछ समय व्यतीत होने पर ब्रह्माजीके द्वितीय पुत्र।६२। भगवान अत्रि ने एक दिन अपनी सर्वाङ्ग सुन्दरी पत्नीको ऋतु से निवृत होकर स्नान करते देखकर।६३। काम वशीभूत होने पर मानसिक सभोग में उनका तेज स्खलित हो गया।६४। वायु ने उस तेज को वहनकर ऊर्ध्व और तिर्यक भाव में प्रवाहित किया, गिरते समय उस तेज ने दशों दिशाओं का अवलम्बन किया और ब्रह्मरूपी सोम पुत्र रूप में अनुसूया से उत्पन्न हुए।६५।६६। संतुष्ट हुए भगवान विष्णु ने सत्वगुण का अवलम्बन कर के श्रीदत्तात्रेय के नाम से उत्पन्न होकर स्तन पान किया।६७।६८।

विष्णुरेवावतीर्णोसौद्वितीयोत्र :सुतोभवत् ।
सप्ताहात्प्रच्युतोमातुरुदरात्कुपितोयत: ॥६९
हैहयेंद्रमुपावृत्तमपराध्यन्तमुद्धतम् ।
दृष्ट्वात्रौकुपित:सद्योदग्धुकाम:सहैहयम् ॥१००
गर्भवासमहायासदु:खामर्षसमन्वित: ।
दुर्वासास्तमस युक्तोरुद्रांश:सौम्यजायत ॥१०१

इतिपुत्रत्रयंनस्याजज्ञे ब्रह्मे शवैष्णवम् ।
सोमोब्रह्माभवद्विष्णुर्दत्तात्रेयोभ्यजायत ॥१०२
दुर्वासा:शंकरोजज्ञे वरदानाद्दिवौकसाम् ।
सोम:स्वरश्मिभि:शीतैर्वीरुदौषधिमानवान् ॥१०३
आप्याययन्सदास्वर्गेवर्त्ततेसप्रजापति: ।
दत्तात्रेव:प्रजा:पातिदुष्टदत्यनिबर्हणात् ॥१०४
शिष्टानुग्रहकृद्योगीश्वेतश्चांश:सवैष्णव: ।
निर्दहत्यवमंतारदुर्वासाभगवानज: ॥१०५
रौद्रभावंसमाश्रित्यदृङ्मनोवाग्भिरुद्धत: ।
सोमत्वंभगवानत्रिपुनश्चक्रेप्रजापति: ॥१०६

यह अत्रि के द्वितीय पुत्र हुए, जो क्रोध के कारण माताके उदर से सातवे दिन ही उत्पन्न हो गए थे ।१६। हैहयराज के उद्धत स्वभाव से अत्रि मुनि को अपमान हुआ था इस अपराधको देखकर हैहय को भस्म करने क प्रयोजन से ।१००। गर्भवास रूप क्लेश से अमर्ष युक्त हो तमो-गुण का आश्रय करके रुद्र के अंश से दुर्वासाजी की उत्पत्ति हुई ।१७२। इस प्रकार ब्रह्मा, विष्णु, और शिव तीनो न ही अनुसूया के पुत्र रूप मे जन्म लिया, ब्रह्मा ने चन्द्रके रूप में, विष्णुने दत्तात्रेय के रूप म ।१७३। शिवजी ने दुर्वासा क रूप में जन्म धारण किया, वह प्रजापति चन्द्रमा अपनी शीतल किरणों से लता, औषधि, मनुष्य आदि को ।१०३। तृप्त करते हुए स्वर्ग मे रहते हैं, विष्णु अंश रूप दत्तात्रेय दुष्टों का सहार ।१०४। और संतजनों के प्रति उपकार दिखाते हुए प्रजा पालन में लगे तथा भगवान दुर्वासा ।१०५। रुद्रात्मक देहसे नेत्र, मन और वाणी द्वारा अपमानकर्त्ता दुष्टों को नष्ट करने लगे, फिर महर्षि अत्रि ने चन्द्रमा को सोमत्व का पद प्रदान करके प्रजापति बनाया ।१०६।

दत्तात्रेयोपिविषयान्योगस्थोदहशेहरि: ।
दुर्वासा:पितरंत्यक्त्वाभातरंचोत्तमंव्रतम् ॥१०७
उन्मत्ताख्यंसमाश्रित्यपरिवभ्राममेदिनीम् ।
मुनिपुत्रवृतीयोगीदत्तात्रेयोप्यसंगिताम् ॥१०८

अभीप्समानःसरसिनिममज्जचिरंविभुः ।
तथापितंमहात्मानमतीवप्रियदर्शनम् ॥१०६
तत्यजुर्नकुमारास्तेसरसस्तीरसंश्रयाः ।
दिव्येवर्षशतेपूर्णेयदातेनत्यजन्तितम् ॥११०
तत्प्रीत्यामरसस्तीरंसर्वेमुनिकुमारकाः ।
ततोदिव्यांवरधरांसुरूपासुनितंबिनीम् ॥१११
नारीमादायकल्याणीमुत्ततारजलान्मुनिः ।
स्त्रीसंनिकर्षिणंह्येतेपरित्यक्ष्यंतिमामिति ॥११२
मुनिपुत्रास्ततोयोगेस्थास्यामितिविचिंतयत् ।
तथापितेमुनिसुतानत्यजन्नियदामुनिम् ॥११३

विष्णु अंश वाले दत्तात्रेयजी योगके अवलम्बनमे दुर्वासातथा माता पिताने पृथक् रहकार श्रेष्ठव्रत ।१०७। पूर्वक उन्मत्त भाव पृथिवी मे विचरण करने लगे। दत्तात्रेयजी के परमयोगी होने के कारण मुनियों के पुत्र इन्हें सदा घेरे रहते थे ।१०८। वह उनसे बचने के लिए बहुत दिनो तक सरोवर मे निमग्न रहे, परन्तु वे अत्यन्त प्रिय लगने वाले महात्मा थे। ।१०६। इसलिए मुनिकुमारों ने उन्हें फिर भी न छोड़ा और वे सरोवर के तट पर ही रहने लगे, इस प्रकार सौ दिव्य वर्ष व्यतीत होने पर भी खड़े रहे ।११०। जब उनकी प्रीति वश मुनिकुमारो ने उन्हें न छोड़ा तो वे दिव्य वस्त्र धारण किए एक स्वरूपवती ।१११। नारीको साथ लेकर जल से निकले और सोचा कि मैं स्त्री के साथ हूँ इसलिए यह अब मुझे छोडकर चले जायेंगे ।११२। और में भी संग रहित होकर योगपरायण हो जाऊँगा, तो भी मुनिकुमारों ने उन्हें नहीं छोड़ा ।११३।

ततःसहतयानार्यामद्यपानमथाकरोत् ।
सुरापानरतंतेनसभार्यंतत्यजुस्ततः ॥११४
गीतवाद्यादिवनिताभोगसंसर्गदूषितम् ।
मन्यमानायहात्मानंतयासहबहिष्क्रियम् ॥११५
नावापदोषयोगीशोवारुणींसपिवन्नपि ।
अंतावसायिवेश्मांतर्मातरिश्वास्पृशन्निव ॥११६

सुरांपिबन्सपत्नीकस्तपस्तेपेसयोगवित् ।
योगीश्वरश्चिन्त्यमानोयोगिभिर्मुक्तिकांक्षिभिः ॥११७
कस्याचित्वथकालस्यकार्त्तवीर्यार्जुनोबली ।
कृतवीर्येदिवंय तेमंत्रिभिःसपुरोहितैः । ११८
पौरैश्चात्माभिषेकार्थसमाहूतोब्रवीदिदम् ।
नाहंराज्यकरिष्यामिमंत्रिणोनरकोत्तरम् ॥११९

तब उसने उस स्त्री के साथ मद्य पीने लगे, सोचा कि स्त्री सहित मद्य पीते देखकर चले जायेंगे ।११४। परन्तु फिर भी उन मुनिकुमारों ने उन्हें महात्मा जानकर नहीं छोड़ा ।११५। वह योगीश्वर दत्तात्रेयजी चाण्डाल के घर रहकर मद्यपान करके भी दूषित नहीं हुए ।११६। वे पत्नी सहित मद्यपान पूर्वक तप करने लगे, इस पर मुनिकुमार उनके चिन्तनीय रहे ।११७। कृतवीर्य के स्वर्ग-गमनके पश्चात् पुरवासी, मन्त्री, पुरोहितादि ने मिलकर उसके पुत्र अर्जुन को राज्य पर अभिषेक करनेके लिए आमन्त्रित किया, परन्तु उसने उत्तर दिया कि हे मन्त्रिगण ! राज्यका परिणाम नरक है, इसलिए मैं राज्य नही करूँगा ।११८-११९।

यदर्थगृह्यतेशुल्कंतदनिष्पादयन्वृथा ।
पण्यानांद्वादशंभागंभूपालायवणिग्जनः ॥१२०
दत्वात्मरथिभिर्मार्गेरक्षितोयातिदस्युतः ।
गोपाश्चघृनतक्रादेःषड्भागंचकृषीवलाः ॥१२१
दत्वान्यद्भूभुजेर्दद्युर्यदिभागंततोधिकम् ।
पण्यादीनामशेषाणांवणिजींगृह्णतस्ततः ॥१२२
अग्निहोत्रंतपःसत्यंवेदानांचैवसाधानम् ।
आतिथ्यंवैश्वदेवंचइष्टमित्यभिधीयते ॥१२३
वापीकूपतडागानिदेवतायतनानिच ।
अन्नप्रदानमर्थिभ्यःपूर्त्तमित्यभिधीयते ॥१२४
इष्टापूर्त्तविनाशायतद्राज्ञश्चौरकर्मिणः ।
यदन्यैःपाल्यतेलोकस्तद्वृत्यंतरसंश्रितः ॥१२५
गृह्णतोबलिषड्भागंनृपतेर्नरकोध्रुवम् ॥

निरूपितमिदंराज्ञ:पूर्वैंरक्षणवेतनम् ॥१२६

इस राज्य का ग्रहण करना अत्यन्त कठिन कार्य है, वेश्या,व्यापारी राजा को आय का बारहवाँ भाग ।१२०। देकर चोरों के भय ये बच जाते हैं, ग्वारिया घृत या मठा आदि का छठवा अंश तथा कृषक भी सब धान्यों का छठवां अंश ।१२१। राजा को देते हैं, यदि अन्य को दे तो वह इनकी वस्तु का अधिक भाग लेगा ।१२२। अग्निहोत्र, तप,सत्य वेद साधन, अतिथ्य, वैश्वदेव कर्म यह इष्ट कहे जाते है ।१२३। तथा कूप वावडी, देवालय का निर्माण और धनेच्छुकों को दान करना पूर्त कहा जाता है ।१२४। अधिक कर लेने वाला राजा इष्टापूर्ति को नष्ट करने वाला कहा है, तथा दूसरों के द्वारा प्रजा का पालन करता हुआ जो स्वयं अन्यवृत्ति करता है ।१२५। और षष्ठभाग ग्रहण करताहै वह राजा अवश्य ही नरक को प्राप्त होता है । पंडितजनों ने प्रजा के रक्षणार्थ ही वेतन स्वरूप षष्ठभाग ग्रहण करने का विधान किया है ।१२६।

अरक्षंश्चोरस्तद्धनंनृपतेर्भवेत् ।
तस्माद्यदितपस्तप्त्वाप्राप्तोयोगित्वमोप्सितम् ॥१२७
भुव:पालनसामर्थ्ययुक्तएकोमहीपति: ।
पृथिव्यामस्त्रभृन्नाद्याप्यहमेवर्द्धिसंयुत: ॥१२८
ननोभविष्येनात्मानंकरिष्येपापभागिनम् ।
तस्यतन्निश्चयंज्ञात्वामंत्रिमध्यस्थितोब्रवीत् ॥१२६
गर्गोनामहाबुद्धिर्मुनिर्भूपवयोतिग: ।
भक्त्यातुकृपयाविष्टस्तंतोषयितुमर्हति ॥१३०
यद्येवंकर्त्तुकामस्त्वंराज्यंसम्यक्प्रशासितुम् ।
तत:श्रृणुष्वमेवाक्यंकुरुष्वचननृपात्मज ॥१३१
दत्तात्रेयंमहात्मानंसह्यद्रोणीकृताश्रमम् ।
तामारधयभूपालपातियोभुवनत्रम् ॥१३२

यदि राजा उसे लेकर प्रजा-रक्षणन करे तो वह चोरी करताहुआ, इसलिए यदि मैं तप करके योगी होता हुआ ।१२७। पृथिवी का पालन करके एकमात्र नराधिप बन सकूँ तो हीमें राज्त करना चाहताहूँ ।१२७।

अन्यथा आत्मा को व्यर्थ ही पाप मार्ग पर नहीं चलना चाहता । अर्जुन का यह विचार सुनकर मंत्रियों के मध्य बैठे हुए ।१२६। वयोवृद्ध मुनिश्रेष्ठ गर्ग भक्ति और कृपा के सहित राजपुत्र को प्रसन्न करते हुए बोले—हे राजपुत्र ! यदि आप भले प्रकार से राज्य शासन करना चाहते हैं तो मेरी बात सुनकर वैसा कीजिये ।१३१। सह्याद्रि पर्वतपर निवास करने वाले त्रैलोक्य पालक दत्तात्रेयजी की आप आराधना कीजिये ।१३२।

योगयुक्तं महात्मानं सर्वत्रसमदर्शिनम् ।
विष्णोरंशंजगद्धातुरवतीर्णधरातले ।।१३३
यमाराध्यसहस्राक्षःप्राप्तवान्पदमात्मनः ।
हृतंदुरात्मभिर्दैत्यैजघानचादितेःसुतान् ।।१३४
कथमाराधितोदेवैर्दत्तात्रेयःप्रतापवान ।
कथंवापहृतदैत्यैरिंद्रत्वंप्रापवासवः ।।१३५
दैत्यानांदेवतानांचयुद्धमासीत्सुदारुणम् ।
दैत्यानामीश्वरेजंभेदेवानांचशचीपतौ ।।१३६
तेषांतुयुध्यमानानांदिव्यःसंवत्सरोगतः ।
ततोदेवाःपराभूतादैत्याविजयोऽभवन् ।।१३७
विप्रचित्तिमुखैर्देवादानवैस्तेपराजितः ।
पलायनकृतोत्साहनिरुत्साहाद्विषज्जये ।।१३८
बृहस्पतिमुपागम्यदैत्यसैन्यवधेप्सवः ।
अमंत्रयंतसहितावालखिल्यैःसहर्षिभि, ।।१३९
विकृताचरणंभक्त्यासंतोषयितुमर्हथ ।।१४०

जो वे परमयोगी,परमभाग समदर्शी तथा विश्वरक्षाणार्थ विष्णु-अंश मे पृथ्वी पर अवतीर्ण हुए हैं ।१३३। जिनकी आराधना करके ही सहस्राक्ष इन्द्र को दैत्यों द्वारा छीने हुए अपने पद की प्राप्ति हुई है ।१३४। अर्जुन ने कहा-देवताओं ने दत्तात्रेयजी की आराधना किस प्रकार की थी और इन्द्र को दैत्यों द्वारा छीने हुए अपने पदकी प्राप्ति कैसे हुई थी ।१३५। गर्ग बोले किसी समय भयंकर देवासुर संग्राम हुआ था, उस समय जम्भदैत्यों

के और इन्द्र देवताओं के अधिपति थे ।१३६। युद्ध करते हुए उन्हें एक दिव्य संवत्सर व्यतीत हो गया और अन्तमें देवताओं की पराजय तथा दैत्यों की विजय हुई ।१३७। तब विप्रचित्ति आदि प्रमुख दानवों से हारते हुए देवगण इधर-उधर भागने लगे और विजय के प्रति निरुत्साहित होकर ।१३८। दैत्यों को मारने की इच्छा से बृहस्पतिजी के पास जाकर बालखिल्य ऋषि सहित मंत्रणा करने लगे ।१३९। बृहस्पतिजी ने कहा हे देवगण ! अब तुम विकृत आचरण वाले अत्रिपुत्र दत्तात्रेय को भक्ति पूर्वक सन्तुष्ट करने का प्रयत्न करो ।१४०।

सर्वोदै त्यविनाशायवरदोदास्यतेवरम् ।
ततोहनिष्यथसुरा:सहिता·दैत्यदानवान् ।।१४१
हंतुं शक्तानसदेहोदत्तात्रेयप्रसादतः ।
इत्युक्तास्तेतदाजग्मुदत्तात्रेयाश्रमंसुराः ।।१४२
ददृशुश्चमहात्मानंक्षांतंलक्ष्म्यासमन्वितम् ।
उद्गीयमानंगन्धर्वेसुरापानरतंमुनिम् ।।१४३
तेयस्यगत्वाप्रणतिंचक्रु.सर्वार्थसाधनीम् ।
भक्त्यातस्योपजहुश्चद्यपस्यसुरादिकम् ।।१४४
तिष्ठंतमनुतिष्ठंतियांतंयांतिदिवौकसः ।
आराधयामासुरध:स्थितास्तिष्टंत्तमासने ।।१४५
सप्राहदेवान्प्रणतान्दत्तात्रेयकिमिष्यते ।
मत्तोमत्रद्भियेनेयंशुश्रूषक्रियतेमम ।।१४६

दत्तात्रेयजी संतुष्ट होकर तुम्हें दैत्यों का विनाश करने वाले वर देगे, उस समय तुम सगठित होकर दैत्यों और दानवोंके सहार में समर्थ होंगे, ।१४१। गर्गजी ने कहा-बृहस्पति द्वारा इस प्रकार कहे जाने पर देवगण दत्तात्रेयजी के आश्रम में गये ।१४२। उन्होंने वहाँ जाकर देखाकि वह महात्मा लक्ष्मीजी सहित मद्य-पान मे रत है तथा उनके समीप गन्धर्व-गण गान कर रहे हैं ।१४। उनके निकट जाकर देवगण सवार्थसिद्ध करने वाली स्तुति करते हुए उनके लिए भक्ष्य, भोज्य तथा मालादि एकत्र करने लगे ।१ ४। वह बैठते तो यह भी बैठते, वह चलते तो वह भी चलते, इस

प्रकार उनके आसन के नीचे भाग में बैठकर देवताओं ने उनका आराधन किया ।१४५। तब दत्तात्रेयजी ने उन देवताओं से कहा—तुम मेरी इस प्रकार सेवा कर रहे हो, इसलिए बताओ कि क्या चाहते हो ? ।१४६।

दानवैर्मुनिशार्दूलजम्भाद्यैर्भूर्भुवादिकम् ।
हृतंत्रैलोक्यमाक्रम्यक्रतुभागाश्चकृत्स्नशः ॥१४७
तद्वधेकुरुबुद्धित्वंपरित्राणायनोनघ ।
त्वत्प्रसाद।दभीप्सामःपुनःप्राप्तुंत्रिविष्टपम् ॥१४८
मद्यासक्तोहमुच्छिष्टोनचैवाहजितेन्द्रियः ।
कथमिच्छयमत्तोहिदूवाःशत्रुपराभवम् ॥१४९
अनघस्त्वंजगन्नाथनलेपस्तवविद्यते ।
विद्य क्षालनशुद्धांतर्निविष्टज्ञानदीधिते ॥१५०
सत्यमेतत्सुराविद्याममास्तिसमदर्शिनः ।
अस्यास्तुयोषितःसंगादहमुच्चिष्टतांगतः ॥१५१
स्त्रीसंयोगोतिदुःखायसातत्येनोपसेवितः ।
एवमुक्तास्ततोदेवोःपुनर्वचनमब्रुवन् ॥१५२
अनधेयंमुनिश्रेष्ठजगन्मातानदुष्यति ।
यासाविद्यातवविभोसर्वज्ञस्यहृदिस्थिता ॥१५३
ययांशुमालासूर्यस्यद्विजचांडालसंगिनी ।
नदुष्यतिजगन्नाथतथेयवरवर्णिनी ॥१५४

देवताओं ने कहा—हे मुनिशार्दूल ! जम्भादि दानवों ने अकमण करके भुर्भुवादि तीनों लोकों और सम्पूर्ण यज्ञ भाग को हर लिया है ।१४७। आप उनके सहारमे मन लगाकर हमारी रक्षा करिये,आपकी कृपासेहम स्वर्गको पुनः प्राप्त करें यह हमारी इच्छा है ।१४८। दत्तात्रेयजी ने कहा-हे देवगणो ! मैं मद्यपान रत, अजितेन्द्रिय और अपवित्रहूँ, तो मेरे द्वारा शत्रुओंके जीते जाने की आशा तुम कैसे कर रहे हो ? ।१४९। देवताओं ने कहा-हे प्रभो ! आपने विद्या से स्वच्छ हुए अन्तःकरणमे ज्ञानरूपी रश्मियो को प्रविष्ट किया है, इसलिए आप पाप रहित एवं विषयों से अलिप्त है । ।१५०। दत्तात्रेयजीने कहा-हे देवगण ! मुझमें विद्या तो है तथा मैं समदर्शी

समदर्शी भी हूँ, परन्तु स्त्री-संसर्ग से अपवित्र हो गया है ।१५१। क्योंकि स्त्री-संसर्ग अत्यन्त दोष की खान है, यह सुनकर देवताओं ने पुनः कहा ।१५२। देवता बोले—हे निष्पाप ! मुनिवर ! जो विद्या तुम्हारे सर्वज्ञ के हृदय में स्थित है, उमसे यह दोष को प्राप्त नहीं होती है ।१५३। जैसे सूर्य रश्मियाँ चाण्डालादि के संसर्ग दोष से दूषित नहीं होती, वैसे ही यह जगन्माता आपके समर्ग से दूषित नहीं हो मकती ।१५४।

एवमुक्तास्ततोदेवैर्दत्तात्रेयोब्रवीदिदिम् ।
प्रहस्यत्रिदशान्सर्वान्यद्येतद्भवतांमतम् ॥१५५
तदाहूयासुरान्सर्वान्यन्युद्धायसुरसत्तमाः ।
इहानयतमद्दृष्टिगोचरंमाविलंब्यालाम् ॥१५६
मदृष्टिपातहुतभुक्प्रक्षीणबलतेजसः ।
येननाशमशेषास्तप्रयांतिममदर्शनात् ॥१५७
तस्यतद्वचनस्त्रुत्वांदेवैर्दैत्यामहाबलाः ।
आहवायसमाहूताजग्मुर्देवगणाश्रमम ॥१५८
तेहेन्यमानादैतेयैर्देवाःसर्वेभयातुराः ।
दत्तात्रेयाश्रमंजग्मुःसमस्ताःशरणार्थिनः ॥१५९
तमेवविशुर्दैत्याःकालयतोदिवौकस· ।
दद्दशुस्तंमहात्मानंदत्तात्रेयंमदालसम् ॥१६०
वामपार्श्वंस्थितामिष्टामशेषजगतःशुभाम् ।
भार्याचास्यसुचार्वंगीलक्ष्मीमिंदुनिभाननाम् ॥१६१

गर्गजी ने कहा—देवताओं के यह वचन सुनकर दत्तात्रेयजी ने कुछ हँसते हुए कहा—यदि तुम्हारा ऐसा ही विचार है ।१५५। तो तुम सब युद्ध के लिए असुरोको यहाँ बुलाकर मुझे दिखाओ, इसमें देर मत करो ।१५६। क्योंकि मेरे दृष्टिपात रूप अग्नि से उनका तेज, बल क्षीण हो जायगा और वे तुरन्त मृत्यु को प्राप्त हो जाँयगे ।१५७। गर्गजी ने कहा उनके एसे वचन सुनकर देवताओंने असुरोंको युद्धके लिए आह्वानकिया और महाबली असुरोंने आकर क्रोधपूर्वक देवताओं पर आक्रमण किया ।१५८। तब दानवों की मारसे भयभीत हुए देवता दत्तात्रेयजी के आश्रम

में शरण पाने के लिए गए ।१५९। दैत्य भी देवताओं को नष्ट करने के विचार से उसी आश्रममें पहुँचे और उन्होंने वहाँ मदसे मस्त हुए दत्तात्रेयजी को देखा ।१६०। तथा उनके वामपार्श्व में स्थित सम्पूर्ण इष्टों के देने वाली उनकी भार्या लक्ष्मीजी को भी उन्होंने देखा ।१६२।

नीलोत्पलाभनयनांपीनश्रोणिपयोधराम् ।
सुदतींमधुराभाषांसत्रयोषित्गुणैर्युताम् ॥१६२
दृष्ट्वाग्रस्तदादैत्याःसाभिलाषमनोभवाः ।
नशेकुरुद्धतादैत्यामनसावोढ्ढमातुराः ॥१६३
त्यक्त्वादेवान्स्त्रियंतांतुहर्तुं कामाहातौजसः ।
प्रेरितास्तेनपापेनह्यसक्तास्तेब्रुवन् ॥१६४
स्त्रीरत्नमेतत्त्रैलोक्यसारंचेद्विदितंभवेत् ।
कृतकृत्यास्ततःसर्वेइतिनोभाविर्तमनः ॥१६५
तस्मात्सर्वेसमुत्क्षिप्यशिबिकायांसुरार्दनाः ।
आरोप्यस्वमधिष्ठाननयामइतिनिश्चिताः ॥१६६
सानुरागास्ततस्तेतुमुनेरंतिकमागमन् ।
तस्यतांयोषितंसाध्वोसमुत्क्षिप्यस्मरातुराः ॥१६७
शिविकायसमारोप्यतर्हितादैत्यदानवाः ।
शिरःसुशिविकांकृत्वास्वस्थानांभिमुखाययुः ॥१ ८

दैत्यगण उस नीलपद्म के समान नेत्र वाली पीनस्तनी सर्वांगसुन्दरी नारीको ।१६२। देखकर उसको ग्रहण करनेकी इच्छा करते हुए कामावेग से अधीर हो उठे ।१६३। तथा देवताओं को छोड़कर उस नारीको हरण करने की इच्छा पूर्वक पाप से मोहित हुए कहने लगे ।१६४। यह स्त्री-रत्न त्रैलोक्य का सार है,हम इस नारी-रत्न को लेकरही कृतकार्य होंगे ।१६५। इसलिये हे दानवो ! इस विषयमें चिन्ता न करो, हम इसे पालकी में बैठाकर अपने घर ले चलेंगे ।१६६। गर्गजीने कहा—उन दैत्यों ने परस्पर इस प्रकार परामर्श किया और और दत्तात्रेयजी की पत्नीको उठाकर ।१६७। पालकी मे चढ़ा लिया, फिर दैत्य दानव ने मिलकर पालकी को उठा कर अपने स्थान की ओर चल दिये ।१६८।

दत्तात्रेयस्तथादेवान्विहस्येदमथाब्रवीत् ।
दिष्टयाचसतदैत्यामामेषालक्ष्मीःशिरोगता ।
सप्तस्थानान्यतिक्रम्यलयन्यमुपेष्यति ॥१६६
कथयस्वजगन्नाथकेषुस्थानेष्ववस्थिता ।
पुरुषस्यफलकिंवाप्रयच्छत्यथनश्यति ॥१७०
नृणांपादस्थितालक्ष्मीर्निलयंसंप्रयच्छति ।
सक्थ्नोश्चसंस्थितावस्त्रं रत्नंनानाविधंवसु ॥१७१
कलत्रदागुह्यसंस्थाक्रोडस्थापत्यदायिनी ।
मनोरथान्पूरयतिपुरुषाणांहृदिस्थिता ॥१७२
लक्ष्मीलक्ष्मीवतांश्रेष्ठकंठस्थाकंठभूषणम् ।
अभीष्टबंधुदारैश्चतथाश्लेषंपवासिभिः ॥१७३
मृष्टान्नंवाक्यलावण्यमाज्ञामवितथातथा ।
मुखस्थिताकवित्वंचयच्छत्युदधिसंभवा ॥१७४
शिरोगतासंत्यजतिततोन्यंयातिचाश्रयम् ।
सेयंशिरोगतादैत्यान्परित्यजतिसाप्रतम् ॥१७५

फिर दत्तात्रेयजीने कुछ हँसकर देवताओंसे कहा हे देवगण ! तुम्हारा भाग्य फिर गया, सप्त स्थान में अतिक्रम करके लक्ष्मी दानवों के मस्तक पर चढ़ गई है इसलिये यह उन्हें छोड़कर दूसरे के पास जायगी ।१६६। देवताओं ने पूछा-हे प्रभो लक्ष्मी के किस-किस स्थान पर जाने से हित अथवा अहित होता है, यह हमें बताइये ।१७०। दत्तात्रेयजी बोले— मनुष्य के पैर में लक्ष्मी रहे तो गृह प्रदान करती है, सक्थिनी अस्थि में रहे तो वस्त्र और विभिन्न प्रकार के रत्न देती है, गुह्य स्थान में रहे तो स्त्री देती है ।१७१। गोदमे रहे तो पुत्र देती है तथा हृदयमे निवास करे तो सभी मनोरथों को पूर्ण करती है ।१७२। यदि लक्ष्मी का वास कंठ में हो तो कंठ भूषण प्राप्त होता तथा प्रवासी प्रियतम, बधु या स्त्री से मिलाप होता है ।१७३। यदि मुखमें लक्ष्मी स्थित रहेतो श्रेष्ठ वाक्य लावण्य और कवित्व की प्राप्ति होती तथा आज्ञा सफल होती है ।१७४। यदि मस्तक में स्थित हो तो उसका त्यागकर अन्य का आश्रय लेती है, आज वही लक्ष्मी इन दानवो के शिर पर चढ़ गई है। इसलिए इनका

परित्याग कर देगी ।१७५।

प्रगृह्यास्त्राणिवध्यन्तांतस्मादेतेसुरारयः ।
नभेऽत्यंभृशत्वेतेमयानिस्तेजसः कृताः ।।१७६
परदारावमर्शाच्चदग्धपुण्याहतौजसः ।
तस्मादेतेभिहन्यंतांद्भिरविशंकितैः ।।१७७
ततस्तेविधैरस्त्रैर्वध्यतानाःसुरारयः ।
शिरःसुलक्ष्स्याप्याक्रांताविनेशुरितिनःश्रुतम् ।।१७८
लक्ष्मीश्चोत्पत्यसंप्राप्तादत्तात्रेयमहामुनिम् ।
स्तूयमानासुरैःसेंद्रैर्दैत्यनाशान्मुदान्वितैः ।।१७९
प्राणपत्यततोदेवादत्तात्रेयमहामुनिम् ।
जयकृष्णजगन्नाथदैत्यांतकहरप्रभो ।।१८०
नारायणच्युतानंतवासुदेवाक्षयाजर ।
त्वत्प्रसादात्सुखंलक्ष्मीराज्यसंपज्जनार्दन ।।१८१
शार्ङ्गधन्वंश्चक्रपाणेभक्तानांनित्यवत्सल ।
इतिस्तुत्वानाकपृष्ठंयथापूर्वंगताःसुराः ।।१८२
तथात्वमपिराजेंद्रयदिच्छसियथेप्सितम् ।
प्राप्तमैश्वर्यमतुलंतूणमाराधयस्वतम् ।।१८३

हे देवगण ! अब तुम भय त्यागकर शस्त्र उठाओ और उन्हें मारो, क्योंकि मेरे दृष्टिपातसे वे तेज रहित होचुके हैं ।१७६। परनारीके साथ बलात्कार से पुण्य भस्म होता है और पराक्रम की हानि होती है, इस लिए अब तुम शंका रहित होकर उनका संहार कर डालो ।१७७। गर्ग जी बोले इसके पश्चात् देवगण तीक्ष्ण अस्त्र-शस्त्रों के द्वारा असुरों का सहार करने लगे, इस प्रकार लक्ष्मी को शिर पर चढ़ाने से असुरों का नाश हो गया ऐसा सुना गया है ।१७८। फिर लक्ष्मीजी उनके मस्तक से उतर कर दत्तात्रेयजी के ही पास आ गयीं और दैत्यों के नष्ट होने से प्रसन्नता को प्राप्त हुए सब देवता उनकी स्तुति करने लगे ।७९। फिर दत्तात्रेयजी को प्रणाम पूर्वक हे कृष्ण ! हे जगन्नाथ ! दैत्यों के नाशक ! हे हर हे ! प्रभो ! आपकी जय हो ।१८०। हे नारायण- हे अच्युत ! हे

अनन्त हे वासुदेव ! हे अक्षय ! हे अजर ! हे जनार्दन ! आपके ही प्रसाद से हमे सुख, लक्ष्मी और राज्य सम्पदा की प्राप्ति हुई है ।८। हे शार्ङ्ग धनुधारी ! हे चक्रपाणि ! आप सदैव भक्तों पर कृपा करते हैं, इस प्रकार स्तुति करके जहाँ से आये थे वहीं लौट गये ।१८२। इसलिए हे राजेन्द्र ! यदि तुम्हें अतुल ऐश्वर्य की कामना है, तो उन दत्तात्रेयजी की शीघ्र ही आराधना करो ।१८६।

१७—दत्तात्रेय उपाख्यान

इत्यृषेर्वचनंश्रुत्वाकार्त्तवीर्योनरेश्वरः ।
दत्तात्रेयाश्रमंगत्वातभक्त्यासमपूजयत् ॥१
पादसंवाहनाद्येनमर्ध्याहरणेनच ।
स्रकचदना रगंधां फलाद्यानयननेनच ॥२
तथान्नसाधनैस्तस्यउच्छिष्टापोहनेनच ।
परितुष्टोमुनिर्भूपंतमुवाचतथैवसः ॥३
यथैवोक्ताःपुरादेवामद्यभोज्यादिकुत्सनम् ।
स्त्रीचेयममपाश्वस्थेत्येतद्भोगानुकुत्सितः ॥४
सदेवाहनमामेदमुपरोद्धुत्वमर्हसि ।
अशक्तमुपकारायशक्तमाराधयस्वभोः ॥५
तेनैवमुक्तोमुनिनास्मृत्वागगवचश्चतत् ॥६
प्रत्युवाचप्रणाम्यैनंकार्त्तवीर्यस्ततोर्जुनः ।
देवस्त्वंहिपुराणोयःस्वांमायसांनुपाश्रितः ॥७

पुत्र बोला—राजा कार्तवीर्य अर्जुन ने गर्गजी की बात सुनकर दत्तात्रेयजी के आश्रम में जाकर भक्ति पूर्वक उनका पूजन किया ।१। चरण संवाहन करके अर्घ्य, पुष्पमाला, सुगंधि, जल तथा चन्दनादि उनके निमित्त प्रस्तुत किया ।१। इसी प्रकार अन्नादि लाते और उनका उच्छिष्ट स्वयं भोजन करते । यह देखकर सन्तुष्ट हुए मुनि ने उनसे उसी प्रकार बोले ।६। जैसे पहिले देवताओं के प्रति अपने निन्दित कर्म कहे थे ऋषि ने कहा—मेरे पास जो यह स्त्री है, मैं इसमें आसक्त रहता हूँ ।६। हे

राजन ! इस प्रकार सदा निन्दित कर्म करता रहने वाला मैं उपकार में असमर्थ हूँ तो मेरी सेवा से तुम्हें क्या लाभ होगा ? इसलिए समर्थ का ही आराधन करो ।३। पुत्र बोला—यह सुनकर तथा गर्गमुनि के वचनों को याद करके ।६। कार्त्तवीर्य ने दत्तात्रेयजी को प्रणाम किया और कहा—हे प्रभो ! आप मुझे इस प्रकार मोहित क्यों करते है ? आप अपनी माया से युक्त हैं ।७।

अनघस्त्वं तथैवेयंदेवीसवभवारणिः ।
इत्युक्तःप्रीतिमान्देवोभूयस्त्वप्रत्युवाचह ॥८
कार्त्तवीर्यमहावीर्यंवशीकृतमहीतलम् ।
वरंवृणीष्वगुह्यमेत्वयानामयदीरितम् ॥९
तेनतुष्टिःपराजातात्वय्यद्यममपार्थिव ।
येचमांपूजयिष्यंतिगंधमाल्यादिभिर्नराः ॥१०
लक्ष्म्यासमेतगीतैश्चब्राह्मणानांतथार्च्चनैः ॥११
वाद्यैर्मनोरमैर्वीणावेणुशङ्खादिभिस्तथा ।
तेषामहंपरांपुष्टिपुत्रदारधनादिकीम् ॥१२
प्रदास्याम्यवधूतश्चहनिष्याम्यवमन्यताम् ।
सत्वंवरयभद्रंमेवरंयंमनसेच्छसि ॥१३
प्रसादसुमुखस्तेहंगुह्यनामप्रकीर्त्तनात् ।
यदिदेवप्रसन्नस्त्वंतत्प्रयच्छर्द्धिमुत्तमाम् ॥१४
यथाप्रजांपालयेयंनचाधर्ममवाप्नुयाम् ।
परानुस्मरणंज्ञानमप्रतिद्वंद्वतांरणे ॥१५

इसलिए आप निष्पाप है यह देवी सम्पूर्ण विश्वको अरणिके समान होनेसे पाप रहित है, राजाके इस प्रकार कहने पर दत्तात्रेयजीने प्रसन्न होकर कहा-हे भूमंडल को वश में करने वाले कार्त्तवीर्यार्जुन ! वर माँगो तुमने मेरे गुप्त नामोंका उच्चारण किया है ।६। इससे मैं अत्यन्त संतुष्ट हूँ तथा जो गंधमाला आदि के द्वारा मेरी पूजा करते हैं ।१०। तथा सब प्रकार सन्तुष्ट करते हुए पूजा के वाद्य ।११। वीणा, वेणु, शङ्खादि बजाते हो उनको मै स्त्री, पुत्र और धनादि के प्रदान द्वारा परम संतोष देता

हूँ ।१२। तथा जो अवधूत कहकर मेरा तिरस्कार करते हैं उनका हनन करता हूँ, इसलिये तुम्हारी इच्छाहो सो माँगो,तुम्हारा मंगल हो ।१३। तुमने मेरे गुणनामों का कीर्तन किया है, इसलिए मैं तुमसे बहुत प्रसन्न हुआ हूँ । अर्जुन बोला यदिआप प्रसन्न हुएहैं तो मुझे ऐसी श्रेष्ठ ऋद्धि दीजिए ।१४। जिससे मैं सहज ही सम्पूर्ण प्रजा पालन करता हुआ पाप भागी न बनूँ और शत्रुओं के अनुसरण में मुझे ज्ञान प्राप्त हो तथा रणक्षेत्र में कोई भी मेरा सामना न कर सके ।१५।

सहस्रमाप्तुमिच्छामिबाहूनांलघुतागुणम् ।
असंगागतयःसंतुशैलाकाशाम्बुभूमिषु ॥१६
पातालेषुचसर्वेषुवधश्चाप्यधिकान्नरात् ।
तथामार्गप्रवृत्तस्यसंतुसन्मार्गदेशिकाः ॥१७
सतुमेतिथयःश्लाघ्यावित्तंवान्यत्तथाक्षयम् ।
अनुष्टद्रव्यताराष्ट्रेममानुस्मरणेनच ॥१८
त्वयिभक्तिश्चदेवास्तुनित्यमव्यभिचारिणी ।
यएतेकीर्तिताःसर्वेतान्वत्ससमावप्स्यसि ॥१९
मत्प्रसादात्प्रभविताचक्रवर्तित्वमैश्वरम् ।
प्रणिपत्यततस्तस्मैदत्तात्रेयायसोर्जुन ॥२०

मैं लघुत्व गुण से युक्त सहस्रबाहु हो जाऊँ, जल, थल, पर्वत, आकाश आदि सब स्थानों में निर्बाध तथा श्रेष्ठ मनुष्य के हाथ से मृत्यु की अभिलाषा है, में सन्मार्ग से प्रवृत्त व्यक्तियो को सन्मार्ग दिखाने की इच्छा करता हूँ ।१६।१७। अक्षय धन-दान एवं आथित्य लाभ करूँ मेरा नाम उच्चारण करने वाला धन हीन न रहे ।१८। आपके पदपद्मों में सदाँ मेरी भक्ति रहे, दत्तात्रेयजी ने कहा—हे वत्स ! तुम्हारा कहा हुआ सभी होगा ।१९। मेरे प्रसाद से तुम चक्रवर्ती नरेश होगे । पुत्र बोला—फिर अर्जुन से दत्तात्रेयजी को प्रणाम किया ।२०।

आनीयप्रकृती सम्यगभिषेकमगृह्णत ।
आगताश्चापिगंधर्वास्तथैवाप्सरसांगणाः ॥२१
ऋषयश्चवसिष्ठाद्यामेत्र्याद्याःपर्वतास्था ।

गङ्गाद्या.सरितःसर्वा.समुद्रारत्नसंभवाः ।२२
प्लक्षाद्याश्चतथावृक्षदेवावैसवादयः ।
वासुकिप्रमुखानागाअभिषेकार्थमागताः ।।२३
ताक्ष्यार्द्याःपक्षिणश्चैवपौराजानपदास्तथा ।
संभाराःसंभृताःसर्वदत्तात्रयप्रसादतः ।।२४
अथासंज्वाल्यतैर्वह्निदेवैर्ब्रह्मादिभिःसहः ।
नारायणेनाभिक्तोदत्तात्रेयस्वरूपिणा ।।२५
समुद्रैश्चनदीभिश्चऋषिभिश्चाभिषेचितः ।
अघोषयामासतदास्थितोराज्येसहैहयः ।।२६
दत्तात्रेयात्परामृद्धिमवाप्यातिबलान्वितः ।
अद्यप्रभृतियःशस्त्रमामृतेन्योगृहीष्यपि ।।२७
हंतव्यःसमयादस्यूःपरहिंसारतोपिवा ।
इत्याज्ञप्तेनतद्राज्येकश्चिदायुधभृन्नरः ।।२८

सम्पूर्ण प्रजाको बुलाकर अभिषेक कराया, उस अमय गंधनर्व और अप्सरायें ।२१। वसिष्ठादि ऋषि सुमेरु आदि पर्वत, गङ्गादि सब नदी और जलसे परिपूर्ण सभी समुद्र ।२२। प्लक्षादि सव वृक्ष, इन्द्रादि सब देवता वासुक्यादि सब नाग ।२३। गरुड़ादि पक्षी, नगर और नगरवासी नथा सभी लोक दत्तात्रेयजीके प्रसादसे सम्पूर्ण सामग्री सजाये हुए अभिषेकार्थ वहाँ उपस्थित हुए ।२४। ब्रह्मादि देवताओंने अग्निको प्रज्जवलित किया तथा दत्तात्रेय रूपी भगवान् नारायण से अभिषेक किया ।२५। फिर समुद्र और ऋषियों ने अभिर्षक किया और हैहय राज्यमें स्थित हो गये, ऐसी घोषणा सर्वत्र की गई ।२६। दत्तात्रेयजीके प्रसादसे अतुलित ऐश्वर्यं को प्रास हुए महाबली हैहय ने राज्य में प्रतिष्ठित होकर आज्ञा दी कि अब मेरे अतिरिक्त जो कोई भी अस्त्र धारण करेगा ।२७। वह हिंसक या दस्यु मेरे द्वारा मारा जायगा । ऐसी राजाज्ञा सुन कर कोई भी अस्त्रधारी न रहा ।

तमृतेपुरुषव्याघ्रंबभूवोरुपराक्रमम् ।
सएवग्रामपालोभूत्पशुपालःसएवच ।।२९

क्षेत्रपाल:सएवासीद्द्वितीयोनचररक्षिता ।
तपस्विनांपालयितासार्थपालश्चसोभवत् ॥३०
दस्युव्यालाग्निशस्त्रारिभयेष्वब्धौनिमज्जताम् ।
अन्यासुचैवमग्नानामापत्सुपरवीरहा ॥३१
सएवसंस्मृत:सद्य:समुद्धर्त्ताभवन्नृणाम् ।
अनष्टद्रव्यताचासीत्तस्मिञ्छासतिपार्थिवे ॥३२
तेनेष्टं वहुभियज्ञै :समाप्तवरदक्षिणै: ।
तपश्चतप्तं सुमहत्संग्रामेवातिचेष्टितम् ॥३३
तस्यर्द्धिमहिमानंचदृष्ट्वाप्राहांगिरामुनि: ।
ननूनकार्त्त वीर्यस्यगतियास्यंतिपार्थिवा: ॥३४
यज्ञै र्दानैस्तपोभिर्वासंग्रामेचातिचेष्टितै: ।
दत्तत्रै यद्दिनेयस्मिसंप्राप्तेर्दिर्नरेश्वर ॥३५

सम्पूर्ण पृथ्वीके एक कार्त्तवीर्यार्जुन ही राजा हुए, उस समय वही ग्राम-पालक एवं पशु-पालक थे ।२९। वही क्षेत्र ब्राह्मण और तपस्वियोंके रक्षक तथा अर्थ पालक हुए ।३०। वही राजा चोर, सर्प, अग्नि, शत्रु, भयङ्कर समुद्र या विभिन्न विपत्तियों में पड़े मनुष्योंकी रक्षा करने वालेहुए ।६१। उनके नाम के उच्चारण मात्र से सबकी विपत्ति दूर होने लगी और उनके शासन काल में कोई धनहीन न रहा । ३३। उन्होंने अनेक प्रकारके दक्षिणामय यज्ञ पूर्ण किये तथा वे महान् तप का आचार करने वाले और युद्धमें अजेय हुए ।३६। उसकी ऐसी समृद्धि देखकर अङ्गिरा मुनि ने कहा था कि 'इनके समान कोई दूसरा राजा नहीं हुआ ।३४। तथा यज्ञ, दान, तप या युद्ध प्रसङ्ग मे कोई इनके समान नहीं होगा वे दत्तात्रेयजी से अतुलित ऐश्वर्यवान् हुए हैं ।३५।

तस्मिन्तस्मिन्दिनेयागंदत्तात्रेयस्यसोकरात् ।
तथैवचप्रजा:सर्वास्तमन्नहनिभूपते ॥३६
तस्यर्द्धिपरमादृष्ट्वायागचक्रु:समाधिना ।
इत्येततस्यमाहात्म्यंदत्तात्रेयस्यधीमत: । ३७
विष्णोश्चराचरगुरोरनंतस्यमहात्मन: ।

प्रादुर्भावः पुराणेषु कथ्यते शाङ्‌र्गधन्वनः ।।३४
अनन्तस्याप्रमेयस्य शङ्खचक्रगदाभृतः ।
एतस्य परमं रूपं यश्चिन्तयति मानवः ।।३९
स सुखी स च संसारात्समुत्तीर्णो चिराद्‌भवेत् ।
सदैव वैष्णवानां च वक्त्याहं सुलभोस्मि भोः ।।४०
पत्रपुष्पफलेनाहं पूर्तिभो मोक्षदोस्मि वैः ।
इत्येवं यस्य वै वाचस्तं कथं नाश्रयेज्जनः ।।४१
अधर्मस्य विनाशाय धर्माथधारार्थमेव च ।
अनादिदिधनो देवा करोति स्थितपालनम् ।।४२
तथैव जन्म चाख्यांतमालर्कं कथयामि ते ।
यथा च योगः कथितो दत्तात्रेयेण तस्य वै ।
पितृभक्तस्य राजर्षेरलर्कस्य महात्मनः ।।४३

उस दिन उन्होंने दत्तात्रेय का यज्ञ किया प्रजा ने भी अपने राजा की ।६६। परम ऋद्धि को देखकर उसी दिन यज्ञ किया, यह दत्तात्रेयजी का माहात्म्य है ।३। उन चराचर के गुरुअनन्त, शार्ङ्गधर, शङ्ख, चक्र, गदाधारी दत्तात्रेय रूपी भगवान् नारायण की उत्पत्ति सब पुराणों में विभिन्न प्रकारसे कही गई है, नारायणके इस रूप का जो मनुष्य चिन्तन करते हैं ।३८। वे सुखी होते हुए तुरन्त संसार रूपी पाशसे मुक्त हो जाते हैं उनकी प्रतिज्ञा है कि हे वैष्णवो ! भक्तिके द्वारा मैं तुम्हारे लिए सदैव सुलभ हूँ, मैं पत्र, पुष्प, फलके द्वारा पूजित होकर मोक्ष देता हूँ' ऐसे भगवान की शरण में मनुष्य क्यों न जाँय ।४०-४१। वह अनादि देवता धर्माचरण और अधर्म-विनाश के लिए स्थिति और मालनादि करते हैं ।४२। हे पिताजी ! अब आपसे अलर्क का वृत्तान्त कहता हूँ, वे महात्मा अलर्क ससार प्रसिद्ध राजर्षि और पितृ-भक्त थे ।४३।

१८—कुवलयाश्व उपाख्यान

प्रागभून्महावीर्यशत्रुजिन्नामपार्थिवः ।

तुतोषयस्ययज्ञेषुसोमावाप्त्यापुरंदरः ॥१
तस्यात्मजोमहावीर्योत्रभूवभूत्रारिविदारणः ।
नाम्नाऋतुध्वजख्यातःसर्वलक्षणसंयुतः ॥२
बुद्धिविक्रमलावण्येर्गुरुशुक्राश्विनासमः ।
ससमानवयोबुद्धिसत्वविक्रमचेष्टितैः ॥३
नृपपुत्रोनृपसुतैर्नित्यमास्तेसमावृतः ।
कदाचिच्छास्त्रसद्भावविवेककृतनिश्चयः ॥४
कदाचित्काव्यसंलापगीतनाटकसभवैः ।
तथैवाक्षविनोदैश्चशस्त्रास्त्रविनियेषु च ॥५
योग्योनियुद्धतागाश्वस्यंदनाभ्यासतत्परः ।
रेमेनृपेद्रपुत्रोसौनरेंद्रतनयैर्वृतैः ॥६

पुत्र बोला-हे पिताजी ! पुराकाल में शत्रुजित नामक एक महाबली राजा थे, उनके यज्ञ में सोमपान करके इन्द सन्तुष्ट हुए ।१। उनके ऋतु-ध्वज नामक एक अत्यन्त पराक्रमी तथा विख्यात पुत्र हुआ ।२। वह बुद्धि में वृहस्पति के तुल्य, विक्रम मे सुरपति के और रूप में अश्विनीकुमारो के समान थे, यह जिन राजकुमारों से मिलते, वे भी आयु, सत्व, बल चेष्टा में उस राजकुमार से कम न थे, वह कभी शास्त्र ज्ञान से उत्पन्न विवेक पूर्वक अवस्थान करते थे ।३-५। कभी काव्य चर्चा, कभी संगीत कभी नाट्यादि से प्रसन्न होते कभी पाश क्रीड़ा, कभी शस्त्रास्त्र, कभी विनय भाव ।५। कभी योग्यपुरुषों से मलयुद्ध, कभी गज अश्व, रथादि की सवारी करते हुए राजपुत्रों से क्रीड़ा करते थे ।६।

यथैवहिदिवातद्वद्रात्रावपिमुदायुतः ।
तेषांतुक्रीड़ातांतत्रद्विजभूपविशांसुताः ॥७
समानवयसःप्रीत्यारंतुमायांत्ययकेकृशः ।
कस्यचित्वथकालस्यनागलोकान्महीतलम् ॥८
कुमारावागतौनागौपुत्रावश्वतरस्युतः ।
ब्रह्मपतिच्छनौतरुणौप्रियदर्शनौ ॥९
तौतंनृपसुतैःसार्द्धंतथैवान्यैद्विजात्मजैः ।

विनोदैर्विविधैस्तत्रस्थतुःप्रीतिसंयुतौ ।।१०
सर्वेचतेनृपसुतास्तेचब्रह्मविप्रांसुताः ।
नागराजात्मजौतौचस्नानसवाहनादिकाम् ।।११
वस्त्रगन्धान्नसंयुक्तांचक्रुर्भोगभुजिक्रियाम् ।
अहन्यहन्यनुप्राप्तेतौचनागकुमारकौ ।।१२
आजाग्मतुर्मुदायुक्तौप्रीत्यासनोर्महीपतेः ।
सचताभ्यांनृपसुतःपरंनिर्वाणमाप्तवान् ।।१३
विनोदैर्विविधैर्हास्यसंलापादिभिरेवच ।
विनाताभ्यांनबभुजेनसस्नौनपपौमधु ।।१४

जैसे आनन्द से दिन व्यतीत होता वैसे रात्रि भी व्यतती होती थी, जहाँ वह खेलते थे, वहाँ सैकड़ों राजपुत्र, ब्राह्मण या वैश्योंके बालक ।७। आ-आकर खेलते, इस प्रकार कुछ समय व्यतीत होने पर पृथ्वी पर नागलोक से ।८। नागराज अश्वतर के दो पुत्र ब्राह्मणके वेशमें आये । वे दोनों ही युवा प्रिय दर्शन थे ।९। यह भी उन राजपुत्रों और ब्राह्मण पुत्रों के साथ विभिन्न प्रकार के विनोद करते हुए प्रीतिपूर्वक वहाँ रहने लगे ।१०। वह राजपुत्र, ब्रह्मपुत्र, वैश्यपुत्र और नागपुत्र सभी भागानुसार भोजन करने लगे, इस प्रकार राजपुत्र की प्रीति से प्रसन्न हुए एक साथ स्नान, विमान पर चढ़ना ।११। वस्त्र धारण, गन्धानुलेपन और भागानुसार भोजन करने लगे, इस प्रकार राजपुत्र की प्रीति से प्रसन्न हुए दोनों नागपुत्र वहाँ नित्य प्रति जाने-जाने लगे ।११-१३। उनके बिविध प्रकार के आमोद-प्रमोद, हास्य-सँलापादि से सुखी हुए वे उनके बिना भोजन स्नान आदि भी नहीं करते थे ।१४।

नरेमेचनजग्राहशास्त्राण्यात्मगुणर्द्धये ।
रसातलेचतौरात्रिंविनातेनमहात्मना ।।१५
निःश्वासपरमौनीत्वाजग्मतुस्तदिनेदिने ।
मर्त्यलोकेपराप्रीतिर्भवतोःकेनपुत्रकौ ।।१६
सहेतिचप्रलपितौतावभौनागदारकौ ।
दृष्टयोरत्रपातालेबहूनिदिवसानिमे ।।१७
दिवारजन्यामेवोभोपश्याभिप्रियदर्शनौ ।

इतिपित्रास्वयंपृष्टौप्रणिपत्रकृतांजली ।।१८
प्रत्यूचतुर्महाभानानुरगाधिपतेःसुतौ ।
पुत्रःशत्रुजितस्तातनाम्नाख्यातऋतध्वजः ।।१६
रूपानावर्जवोपेतःशूरोमानीप्रियंवदः ।
अनावृतकथोवाग्मीविद्वान्मैत्रोगुणाकरः ।।२०

तथा क्रीडा और गुण वृद्धि के लिए शस्त्र भी नहीं उठाते, तथा वे नागपुत्र भी उस राजपुत्रके बिना रात्रिकाल ।१५। रसातल में दीर्घश्वास लेते हुए व्यतीत करते और दिन में उनके पास आते, कुछ काल इस प्रकार व्यतीत होने पर एक दिन नागराज अश्वतर ने अपने दोनों पुत्रों से पूछा—हे पुत्रों ! मर्त्यलोक के प्रति तुम्हारी ऐसी प्रीति क्यों हुई है ? बहुत दिनों से तुम्हें मैं दिन के समय पाताल लोक में नहीं देखता ।६-७। रात्रि होने पर ही तुम दिखायी देते हो इसका क्या कारण है, इस प्रकार पूछने पर उन दोनों ने अपने पिता से प्रणाम करके हाथ जोड़े हुए कहा—हे तात ! मर्त्यलोकमें राजा शत्रुजित् के पुत्र ऋतुध्वज हैं । १८-१६। वह स्वरूपवान्, सरलचित्त शूर, प्रियभाषी, यशस्वी, विद्वान्, मित्रता के योग्य तथा गुणों की खान हैं ।२०।

मान्यमानयिताधीमान्ह्रीमान्विनयभूषणः ।
तस्योपचारसंप्रीतिसंभोगापहृतंमनः ।।२१
नागलोकेऽन्यलोकेवानरतिंविदतेपितः ।
तद्वियोगेननौतातनिशापातालशीतला ।।२२
परितापायतत्संगश्चाह्लादायंरविर्दिवा ।
पुत्रःपुण्यवतोधन्यः सयस्यैवंभवद्विधः ।।२२
परोक्षस्यापिगुणिभिः क्रियतेगुणकीर्तनम् ।
संतिशास्त्रविदोऽशीलासंतिमूर्खाःसुशीलिनः ।।२४
शास्त्रशीलेसमंमन्येयस्मिन्धन्यतरंतुतम् ।
यस्यमित्रगुणान्मित्राण्यामित्राश्चशचपराक्रमम् ।।२५
कथयंतिसदामत्सुपुत्रदांशतेनवैपिता ।
तस्योपकारिणःकच्चिद्भवद्भयामभिवांछितम् ।।२६

किंचिन्नष्पादितंवत्सौपरितोषायचेतसः ।
सधन्योजीवितंतस्यतस्यजन्मसुजन्मनः ॥२७
यस्यार्थिनोनविमुखामित्रार्थेनचदुर्बल ।
मद्गृहेयत्सुवर्णादिरत्नवाहनमासनम् ॥२८
यद्वात्यत्प्रीतयेतस्यतद्देयमविशंकया ।
धिक्तस्तजीवितपुंसोमित्राणामपकारिणः ॥२९

वह मानी, बुद्धिमान् लज्जावाला तथा विनयसे युक्त है, उसकी प्रीति, में हमारा मन आकर्षित होकर ।२१। नागलोक, पृथ्वी अथवा किसी भी अन्य स्थानमें प्रसन्न नहीं रहता । पातालकी शीतल रात्रिभी उनके वियोग में ।२२। हमारे लिए तापदायिनी होती है और उनके संग में, सूर्य के तापसे तप्त दिनभी हमको हर्षजनक होता है । पितासे कहा—वह पुण्यवान् पुत्र धन्य है, क्योंकि तुम्हारे जैसे गुणवान् भी ।२३। पीछे से जिनका गुणगान करते हैं, अनेक शास्त्रज्ञानीभी बुरे स्वभाव वाले तथा अनेक मूर्ख भी सुशील होते हैं ।२४। मेरे विचारमें वह राजपुत्र धन्य हैक्योंकि जिसकी मित्रताका गुण मित्र द्वारा और पराक्रम शत्रु द्वारा प्रकट होता है ।२५। उसी पुत्र के द्वारा पिता पुत्रवान् कहा जाता हैं,तुमने उस उपकार करने वाले के लिए कुछ किया भी है ? ।२६। हे पुत्र ! उस मित्र की संतुष्टि के लिए तुमने कुछ कार्य किया है ? इस जगत्में वही धन्य है और उसीका जन्म सफल है ।२७। जो कामना वालों को विमुख नहीं करता और मित्र के प्रतिभी दुर्बल नहीं है, इसलिए मेरे गृह मे स्वर्ण, रत्न, वाहन, आसन इत्यादि ।२८। जो कुछ भी है, उसे उनकी प्रसन्नता के लिए दे सकते हैं हैं क्योंकि मित्रों का अपकार करने वालों को धिक्कार है ।२९।

प्रतिरूपकुर्वन्योजीवामीत्यवगच्छति
उपकारंसुहृद्वर्गेष्वपकारंचशत्रुषु ॥३०
नमेधोवर्षतिप्राज्ञास्तस्येच्छंतिसदोन्नतिम्
किंतस्यकृतकृत्यकर्तुं शक्येतकेनचित् ॥३१
यस्यसर्वार्थिनोगेहेसर्वकामैःसदार्चिताः
यानिरत्नानितद्देहेपातालेतःनिनःकुर्तः ॥३२

वाहनासनयानानिभूषणान्यंबराणिच ।
विज्ञानंयच्चयत्रास्तितदन्यवनविद्यते ॥३३
प्राज्ञानामप्यसौतातसर्वसंदेहहृत्तमः ।
एकतस्यास्तिकर्त्तव्यमसाध्यंतच्चनीमतम् ॥३४
हिरण्यगर्भंगोविंददशर्वादीनांवराहृते ।
तथापिश्रोतुमिच्छामितस्ययत्कार्यमुत्तमम ॥३५

उपकारी मित्रके प्रति उपकार न करके जो जीवित रहते हैं,उनका जीवनभी असफल है, जो पुरुष बन्धुवर्गके उपकार और शत्रु वर्गके अपकार रूप को सींचते हैं, उन्हीं की उन्नति का साधन देवत करते हैं। पुत्रने कहा—वह स्वयंभी कृत-कृत्य हैं, उनका क्या उपकार कर सकते हैं? ।३०-३१। जिनमे याचक इच्छित पदार्थ द्वारा सदा पूजित होते हैं उनका उपकार करने की सामर्थ्य हमें नहीं है क्योंकि उनके यहाँ जो रत्न हैं, वह पाताल में भी उपलब्ध नहीं हैं ।३२। उनके जैसे वाहन,आसन, यान आभूषण वस्त्र हमारे यहाँ नहीं है और वैसा विज्ञान और कहीं भी नहीं हो सकता ।३३। वह पंडितजी का भी संदेह दूर करने मे समर्थ हैं, उनका एक धर्म है, परन्तु वह हमारे द्वारा साध्य नहीं हो सकता ।३४। हिरण्य गर्भ भगवान् गोविंद तथा शिवादि के अतिरिक्त वह किसी के द्वारा सिद्ध नहीं हो सकता पिता ने कहा—उनके श्रेष्ठ कार्य को मैं सुनना चाहता हूँ ।३५।

असाध्यमथवासाध्यंकिंचासाध्यंविपश्चिताम् ।
देवत्वमरेशत्व तत्पूज्यत्वंचमानवाः ॥३६
प्रयांतिवांछितंवान्यद्दृढंयेव्यवसायिनः ।
नाविज्ञातंनचागम्यंनाप्राप्यदिविचेहवा ॥३७
उद्यतानांमनुष्याणांयतचितेन्द्रियात्मनाम् ।
योजनानांसहस्राणियातिगच्छन्पिपिलिकः ॥३८
अगच्छन्वैनतेयोपिपयोपदमेकंनगच्छति ।
क्वभूवलंक्वचध्रौव्यंस्थानंयत्प्राप्तवान्ध्रुवः ॥३९
उत्तानपादनृपतेःपुत्रःसद्भूमिगोचरः ।

तत्कथ्यतांमहाभागौकार्यंत्रान्येनपुत्रको ।।४०
सभूपालयुत साधूयैनानृण्यंलभेत्वाम् ।
तेनाख्यातमिदंतातपूर्ववृत्तांमहात्मना ।।४१

वह कार्य साध्य हो या असाध्य दृढ़तर उद्योगी पुरुष देवत्व अथवा इन्द्रत्वके पूज्य ज्ञावको भी प्राप्त कर सकते हैं ।३६। दृढ़ पुरुष ही मनो-वांछित पा सकते हैं, स्वर्ग से भी अविज्ञात, अगम्य और कोई वस्तु नहीं है ।३७। मन आत्मा और इन्द्रिय को वश में करने वाले पुरुष मनोरथ को प्राप्त कर लेते हैं। देखो चींटी कितनी छोटी होती है, किंतु अधिक उद्योग वाली होने के कारण चलते-चलते सहस्रयोजन तक जा सकती है ।३८। पक्षिराज गरुण उद्योग न करके एक पग भी नहीं जा सकते । जो उद्योग नहीं करते उनके लिए कुछ भी शक्य नहीं, उत्तान-पाद के पुत्र ध्रुव पृथ्वी में होकर भी अत्यन्त दुर्लभ स्थान को प्राप्त हो गये। कहाँ वह ध्रुव का स्थान और कहाँ वह पृथ्वी ? इसलिए जिस प्रकार उस राजपुत्र का कार्य हो सके, वह बताओ ।३९-४०। तब तुम भी मित्र-ऋण से बच सको। पुत्र बोले—हे तात ! उन महात्मा ने इस प्रकार बताया था ।४१।

कौमारकेयथातस्यवृतंसद्वृत्तशालिनः ।
तस्यशत्रुजितंतातंपूर्वंकश्चिद्द्विजोत्तमः ।।४२
गालवोम्यागमद्धीमान्गृहीत्वातुरगोत्तमम् ।
प्रत्युवाचचराजानेसमुपेत्यःश्रमम् ।।४३
कोपिदैत्याधमोराजन्विध्वंसयतिपापकृत् ।
तत्तद्रूपसमास्थायसिंहेभवनचारिणाम् ।।४४
अन्येषांचातिकायानामहर्निशमकारणात् ।
समाधिध्यानयुक्तस्वमौनव्रतरतस्यच ।।४५
तथाकरोतिवध्नानियथानेच्छामिपार्थिव ।
दग्धुंकोपाग्निनासद्य.समर्थास्तवयंनतु ।।४६
दु.खार्जितस्यतपसोव्यमिच्छामिपार्थिवः ।
एकदातुमयाराजन्नतिर्निर्विण्णचेतसा ।।४७
तत्क्लेशितेननिःश्वासोनिरीक्ष्यांत्ररमुज्झितः ।

ततोबरतलात्सद्यःपतितोयंतुरङ्गमः ।।४८

उन राजपुत्रकी कुमारावस्था में जो हुआ सो सुनो, शत्रुजित् नामक एक श्रेष्ठ ब्राह्मण है ।४२। एक समय गालब नामक द्विजवरने सुन्दर अश्व लेकर आश्रममें आकर राजासे कहा ।४३। कोई पाप कर्म वाला दैत्य मेरे आश्रममे आकर विध्वंस करता है, वह सिह गज,अथवा अन्य जन्तुकेरूप मे आकर मेरे समाधि मग्न होने या मौनव्रत रखने पर मेरा मन विचलितकर देता है, हे राजन् ! मैं उसे अपनी क्रोधाग्नि में भस्म कर सकता हूँ ।४४-४५। इरन्तु मैं ऐसा करके अपनी अधिक दिनोमें दुःख पूर्वक संचित तपस्या को क्षीण नहीं करना चाहता हूँ । हे राजन् ! एक दिन मैंने अत्यंत दुःखित हृदयसे ।४७। क्लेश युक्त होकर आकाश की ओर अपना दीर्घश्वास छोड़ा, जिससे यह अश्व उसी समय आकाशसे आ गिरा ।४८।

वाक्चाशरीरिणीग्राहनरनाथश्रृणुष्वतत् ।
अश्रांतःसकलभूमेर्बलयंतुरगोत्तमः ।।४९
समर्थक्रांतुकर्मेणतवायंप्रतिपादितः ।
पातालांबरतोयेषुनास्यप्रतिहतागतिः ।।५०
समस्तदिक्षुव्रजतीनसङ्गःपर्वतेषु च ।
यतोभूलयंसर्वमश्रांतोय चरिष्यति ।।५१
ततःकुवलोनाम्नाख्यातिलोकेषुयास्यति ।
क्लिश्नात्यहर्निशंपापोश्चत्वादानवाधम ।।५२
तमप्येनसमारुह्यद्विजश्रेष्ठनिष्यति ।
शत्रुजिन्नामभूपालस्तस्यपुत्रऋतध्वजः ।।५
प्राप्यैतदश्वरत्नंचख्यातिमेतेनयास्यति ।
सोहंत्वामनुसंप्राप्तस्तपसोविघ्नकारिणम् ।।५४
तनिवारयभूपालभागभाङ्नृपतिर्यंतः ।
तदेवदश्वरत्नतेमयाभूपनिवेदितम् ।।५५
पुत्रमाज्ञापयतथायथाधर्मोनलुप्यते ।
सतस्यवचनाद्रातंवपुत्रमृतध्वजम् ।।५६
तदश्वरत्नमारोप्यकृतकौतुकमङ्गलम् ।

अप्रैषयतमात्मिामागालवेनसमंतदा ।।५७
स्वमाश्रमपदंसोपितमादाययौमुनिः ।।५८

उस समय जो आकाशवाणी हुई उसे सुनो—हे द्विजवर तुम्हें जोअश्व प्राप्त हुआ है, वह बिना कही रुके सूर्यके समान सर्वत्र गमन करनेमें समर्थ है, पाताल, आकाश, जल कहीं भी इसकी गति का अवरोध नहीं होता ।६-१०। यह सब दिशाओं और पर्वतों तथा पृथ्वीवलय सर्वत्र बिना रुके गमन कर सकता है, इसलिए यह सभी लोकों में 'कुवलय' नासे प्रसिद्ध होगा और जो दानवाधम तुम्हारे लिए दिन-रात्रि क्लेश उपस्थित करता है ।५१-५२। उसे अश्व पर चढ़कर शत्रुजित राजा के पुत्र ऋतुध्वज मारेगे ।५३। तथा इस अश्वरत्न द्वारा अत्यन्त ख्याति को प्राप्त होंगे, इसलिए मैं यहाँ आया हूँ अब आपभी उग्र तप मे विघ्न उपस्थित करने वाले को ।४४। निवारण करें और मेरे द्वारा प्रदत्त इसे अश्वरत्न को लेकर ।५५। अपने पुत्र को एसी आज्ञा दीजिये, जिससे धर्म लुप्त न हो पावें, उस ब्राह्मण की यह बात सुनकर राजा शत्रुजित ने अ ने पुत्र ऋतुध्वज का ।५६। मङ्गलाचार आदि कराकर उस अश्व पर चढाया और गालब मुनि के साथ भेज दिया ।५७। जिन्हें साथ लेकर मुनि भी अपने आश्रम की ओर चल दिये ।५८।

१६—मदालसा उपाख्यान [१]

गालवेनसमगत्वानृपपुत्रेणतेनयत् ।
कृतंतत्कथ्यतांपुत्रौविचित्रायुधयोधिना ।।१
सगालवाश्रमेरम्येतिष्ठन्भूपालनन्दनः ।
सर्वविघ्नोपशमनंचकारब्रह्मवादिनाम् ।।२
वीरःकुबलयाश्वंतंवसंतंगालवाश्रमे ।
मदावलेप।पतोनाजानाद्दानवाश्रमः ।।३
ततस्तगालवविप्रसंध्योपासनतत्परम् ।
सौकरंरूपमास्थायप्रधर्षयितुमागमत् ।।४
मुनिशिष्यैरथोत्कुष्टेशीघ्रमारूह्यतंहयम् ।

अन्वधावद्वराहतनृपपुत्रःशरासनी ॥५
आजघानचवाणेनचन्द्रार्धाकारवर्चसा ।
आकृष्यवलवच्चापंचारुचित्रोपशोणितम् ॥६
नाराचाभिहतःशीघ्रमात्मत्राणपरोमृगः ।
गिरिपादपसंधासोत्यकामन्महाटवीम् ॥७

पिताने कहा—गालब मुनिके साथ जाकर राजकुमार ने क्या किया था, वह मुझे बताओ, वह वर्णन अत्यन्त विचित्र है ।१। पुत्र बोले—राजपु त्र ऋतुध्वजने गालब मुनि के आश्रम मे निवास करके ब्रह्मवादी मुनियों के सभी विघ्न नष्ट कर दिये थे ।२। गालब मुनि के आश्रम में निवास करने वाले वीर कुवलयाश्वके रहनेकी बातको दानव नही जान सका ।३। इसलिए वह शूकरका रूप धारण करके सध्योपाशन मे लीन गालब मुनि के शरीर से अपना शरीर रगड़ने लगा ।४। उस समय मुनि-शिष्यों ने उच्च स्वरमें चीत्कार किया। तब उस अश्व पर चढकर राज-पुत्र ने भी अर्धचन्द्राकार बाण से उस पर प्रहार किया ।६। उस बाण से आहत हुआ दैत्य आत्म रक्षार्थ पर्वत और महावन मे घूमने लगा ।७।

तमन्वधावद्वेगेनतुरगोहौमनोजवः ।
चोदितोराजापुत्रणपितुरादेशकारिणा ॥८
अतिक्रम्याथवेगेनयोजनानिसहस्रशः ।
धरण्यांतिवृतेगर्तेनिपपातालघुक्रमः ॥९
तस्यानंतरमेवाथसंचाश्ववनृपते सुतः ।
निपपातमहागर्तेतिमरौघससमावृते ॥१०
ततोनादृश्यतमृगःसतस्मिन्नाराजसूनुना ।
प्रकाशंचसपातालमपश्यत्तत्रचाचिषा ॥११
ततोपश्यतसौवर्णप्रासादशतसंकुलम् ।
पुरंदरपुरप्रख्य पुरंप्राकारशोभितम् ।१२
तत्प्रविश्यसनापश्यत्तत्रकंचिन्नरपुरे ।
भ्रमताचततोदृष्टातत्रयोषित्वरान्विता ॥१३

सापृष्ठातेनतन्वंगोप्रस्थिताक्वेतिकस्यवा ।
नीत्राचकिंचित्प्रासादमारुरोहचभामिनी ।।१४
सोप्यश्वमेकतोबद्धातामैवानुससारवै ।
विस्मयोत्फुल्लनयनोनिःशंकोनृपतेःमुत. ।।१५

वह वेगवान् अश्व भी राजकुमार की प्रेरणा से उसका पीछा करने लगा ।८। फिर वह हजार योजन लांघकर पृथिवी के गर्भ में स्थित एक विशाल गर्त्त में गिर पडा ।९। उसका पीछा करते हुए अश्वरोही राजकुमार भी उस घोर अंधकार पूर्ण गर्त में जा गिरे ।१०। उस समय राजपुत्र को वह शूकर दिखाई न दिया और जब वह प्रकाशमय पाताल में प्रविष्ट हुए तब भी उन्हें वह दैत्य दिखाई न पड़ा ।११। उस समय वहाँ उन्होंने सैकड़ो स्वर्णिम भवनों से युक्त परकोटे वाले, अमरावती के समान अत्यन्त शोभायमान एक नगरी देखी ।१२। उसमें प्रविष्ट होनेपर उन्हें वहाँ एक भी मनुष्य दिखाई न दिया, परन्तु शीघ्रता पूर्वक इधर-उधर घूमती हुई एक स्त्री को उन्होंने देखा ।१३। राजकुमार ने उससे पूछा—तुम किसकी भेजी हुई किसके पास जा रही हो ? परन्तु, उस स्त्री ने कुछ उत्तर न दिया और वह वेग पूर्वक एक भवन पर चढ़ गई, राजकुमार ने भी अश्व को एक स्थान पर बांध दिया और उस स्त्री का पीछा करने के लिए उसी भवन पर चढ़ गये ।१४।१५।

ततोपश्यत्सुविस्तीर्णेपर्यंकेवेकांचने ।
निषण्णांकन्यकामेकांकामयुक्तांरतियथा ।।१६
विस्पष्टेंदुमुखींसुभ्रं पीनश्रोणीपयोधराम् ।
बिम्वाधराष्ठींतन्वगीनीलोत्पलविलोचनाम् ।।१७
रक्ततुंगनखश्यामांमृदुताम्रकरांघ्रिकाम् ।
करभोरुंसुदंशनानीलसूक्ष्मस्थिरालकाम ।।१८
तांदृष्ट्वाचास्सर्वांगीमनगागलतामिव ।
सोमन्यत्पार्थिवसुतस्तांरसातलदेवताम् ।।१९
साचदृष्ट्ववतंवालानीलकुंचितभूर्धजम् ।
पीनोरस्कंधबाहुंतममस्तमदनंशुभा ।।२०

उत्तस्थौचशुभाचाराचित्तक्षोभमवापसा ।
लज्जाविस्मयदैन्यानांसद्यस्तन्वीवशंगता ॥२१
कोयंदेवोथयक्षोनुगंधर्वोवोरगोपिवा ।
विद्याधरीवासंप्राप्तः कृतपुण्यापतिनरः ॥२२

वहाँ पहुँचकर उन्होंने देखाकि रति के समान साक्षात् चन्द्रमुखी परम सुन्दरी एक नारी स्वर्ण-निर्मित एक पर्यंक पर लेट रही हैं, वह कृशाङ्गी नीलपद्म के समान नयन वाली है।१६।१७। उसके नख लाल रंग के कुछ ऊँचे, देह कोमल, नवीनावस्था, हाथ-पावों के तलुए लाल रंग के, दोनों ऊरु गज-सुण्ड के समान, सुन्दर दन्तावलि और अलकें नीलवर्ण की थीं ।१८। कोमलता के समान उस सर्वांग सुन्दरी रमणी को देखकर राजपुत्र ने उसे पाताल की अधिष्ठात्री समझा।१६। उस रमणी ने भी घुँघराले केश, वक्षःस्थल, पुष्ट स्कंध, और लम्बे बाहु वाले राजकुमार को देखक सोचा कि यह रतिपति अनंग है।२०। तब वह अत्यन्त भाग्य शालिनी रमणी सहसाक्षुभित होकर उठी और लज्जा,विनय तथा दीनता के वशमें होकर ।२१। विचार करने लगीकि यह देवता यक्ष,गन्धर्व,नाग, विद्याधर अथवा कोई पुण्यवान् मनुष्य है, जो यहाँ आया है ।२२।

एवंविचिंत्यबहुधानिःश्वस्यचमहीतले ।
उपविश्यतदाभेजेसामूर्छामिदिरेक्षणा ॥२३
सौंपिकामशराघातमवाप्यनपतेःसुतः ।
तांसमाश्वासयामासनभेतव्यमितिब्रुवन् ॥२४
साचस्त्रीयातदादृष्टापूर्वंतेनमहात्मना ।
तालवृंतसुपादायपर्यवीजयदाकुला ॥२५
समाश्वस्तातदादृष्टातेनसामोहकारणम् ।
किंचिल्लज्जान्विताबालातस्यैसख्यैन्यवेदयत् ॥२६
साचास्मैकथायामावनृपपुत्रायविस्तरात् ।
मोहस्यकारणंसर्वंतद्दर्शनद्भवम् ॥२७
यथातयामसाख्याततद्वृत्तान्तचभामिनी ।
विश्वावसुरितिख्यातोदिविगंधर्वधर्वराट्प्रभो ॥२८

वह लालनेत्र वाली रमणी विभिन्न प्रकारसे विचार करती हुई दीर्घ श्वास छोड़कर मूर्च्छित हो गई।२३। यह देखकर राजकुमार भी 'भय न करो कहते हुए उसे समझाने लगे।२४। जो स्त्री राजपुत्र ने प्रथम देखी थी, वह ताड़का पखा हाथमें लेकर उस रमणी की हवा करने लगी।२५। फिर राजपुत्र ने उसकी मूर्च्छाका कारण पूछातो उस लज्जावतीने उसेकुछ न बताकर अपनी सखी से सब बात कही। २६। राजपुत्र द्वारा पूछे जाने पर उस सखीने उनके देखनेके मूर्च्छित होनेका तथा उस रमणीका विस्तार सहित वृत्तान्त कहा।२७। उसने जो कहा था सो सुनिये। सखी बोली— एक विश्वावसु नामक विख्यात गंधर्वराज स्वर्ग मे रहते हैं।२८।

तस्येयमात्मजासुभ्रूर्नाम्नाख्यातामदालसा।
वज्रकेतोःसुतश्चोगोद्रानवोरिविदारणः ॥२६
पातालकेतुर्विख्यातःपातालांतरसंशयः।
तेनेयमुद्यानगताकृत्वामायांतमोमयीम् ॥३०
अपहृत्यसमानीताबालेयंदुष्टबुद्धिना।
आगामिन्यांत्रयोदश्यामभुक्ष्यतिकिलासुरः ॥३१
सतुनर्हितिचार्वंगींशूद्रोवेदश्रुतियथा।
अतीतेचदिनेबालांचात्मव्यापादनोद्यताम् ॥३२
सुरभिःप्राहानायत्वांप्राप्स्यदानवाषमः।
मर्त्यलोकमनुप्राप्तंयएनंभेत्स्यतेशरैः ॥३३
सतेभर्ता महाभागेह्यचिरेणभविष्यति।
अहत्वस्याःसखीनाम्नाकुंडलेतिमनस्विनी ॥३४

यह मदालसा नाम वाली उन्हीं की कन्या है,एक दिन यह उद्यानमें क्रीड़ारत थी, वज्रकेतु दानव का पुत्र पातालकेतु अपनी तामसी माया के द्वारा।२६।३०। इसे हरण कर लाया और आगामी त्रयोदशी को इसके साथ विवाह करेगा।३१। परन्तु वह इस सौदर्यमयीके लिए योग्य पात्र नहीं है, यह कल जिस समय आत्मघात हेतु तत्पर हुई थी।३२। तभी सुरभिने कहाकि यह दानव तुम्हें नहीं पा सकेगा, जो पुरुष मर्त्य लोकसे आकर बाणों से इसे मारेगा।३३। वही तुम्हारा स्वामी होगा,

मैं इसकी कुण्डला नाम की सखी हूँ ।३४।

सुताविंध्यवत:पत्नीवीरपुष्करमालिन: ।
हतेभर्त्तरिशुंभेनतीर्थात्तीर्थमणुव्रता ।।३५
चरामिदिव्ययागप्यापरलोकार्थमुद्यता ।
पातातकेतुर्दुष्टात्मावाराहंवपुरास्थित: ।।३६
केनापिविद्धाबाणेनमुनीनांणकारणे ।
तथाहंतत्रतोन्विष्यत्वरिताहमिहागता ।।३७
सत्यमेवसकेनापिताडितोदोष्टचमाचरन् ।
इयवमूर्छामगमद्यं नतत्कारणश्रृणु ।।३८
त्वय्रिप्रीतिमतीबालादर्शनादेवामानदं ।
देवपुत्रोपमैचारुवाक्यरूपादिशालिनी ।।३९
भार्याचान्यविहितायेनविद्धःसदानव: ।
एतस्मात्कारणन्मोहान्तमियमागता ।।४०
यावज्जीवचतन्वगीदु:खमेवोपभोक्ष्यति ।
त्पय्यस्याहृदयंरागिभर्त्ताचान्योभविष्यति ।।४१
यानज्जीवमतोदु:खमुरभ्यानान्यथावच: ।
अहंत्वस्या: प्रभौप्रीत्यादु:खितात्रसमागतां ।।४२

मैं विंध्यवान की मनस्विनी पुत्री तथा वीर पुष्करमाली की भार्या हूँ, मेरे पति की मृत्यु शंभु के द्वारा हुई थी, अब मैं तीर्थ-तीर्थ में दिव्य-गति से यात्रा करती हूँ । इस दुष्टात्मा पातालकेतु ने आज शूकर का रूप धारण किया था ।३५।३६। उसे किसी पुरुष ने मुनियों के रक्षणार्थ बाँण से बीधा है, यह सत्य है या नहीं, इसकी खोज में यहाँ आई थी ।३७। यहाँ आकर देखा कि उस अधम को किसीने अवश्य ही माराहै, अबइसकी मूर्छा का भी कारण सुनो ।३८। आपको देखते ही यह आपके प्रति अत्यन्त प्रीतिमती हुई है क्योंकि आप देवपुत्र के समान मनोहर और बाणी से गुणज्ञ हैं ।३९। परन्तु उस दानव को जिस पुरुष ने बीधा है,वह उनके अतिरिक्त अन्य किसी की पत्नी नहीं बन सकती, इसलिए यह अत्यन्त मोहित हुई ।४०।क्योंकि यह आपके प्रति अनुरक्त हुई है औरअन्य

पुरुष इसका पति होगा, इसलिये इसे जीवन पर्यन्त दुःखही भोगना होगा ।४१। क्योंकि सुरभि का वचन कभी मिथ्या नहीं होता, इसलिए जीवन पर्यन्त दुःख भोगेगी'मैं दुःखित चित्तसे इसके स्नेहवशही यहाँ आईहूँ ।४२।

यतोविशेषोनैवास्तिस्त्रसखीनिजदेहयोः ।
यद्येषाभिमतंवीरपतिमाप्नोतिशोभना ॥४३
ततस्त्वहं नपःकुर्यानिर्व्यलोकेनचेतसा ।
त्वंतुकोवाविमार्थंत्रासंप्राप्तोत्रमहामते ॥४४
देवोदैत्योनुगंधर्वःपन्नगःकिन्नरोरिवा ।
नह्यत्रमानुषगतिनचेदृङ् मानुषीगतिः ॥४५
तत्वमाख्याहिकोसित्वंयथैवावितथंमया ।
यन्मांपृच्छसिधमज्ञे कस्त्वासमागतः ॥४६
तच्छृणुष्वामलप्रज्ञेकथयाम्यादिस्तव ।
राज्ञशत्रुजित्पुनःपित्रास प्रेषितःशुभे ॥४७
मुनिरक्षणमुद्दिश्यगालवाश्रमागतः ।
कुर्वतोममरक्षाचमुनीनाँधर्मचारिणाम् ॥४८
विघ्नार्थमागतःकोपिशौकरं वपुरास्थितः ।
मयासविद्धोबाणेनचद्रार्द्धाकारवचता ॥४९

क्योंकि मैं इसके और अपने देह में पृथक्त्व नहीं मानती यदि इसे अपनी इच्छानुसार पति मिल जाय ।४३। तो मैं स्वस्थ मनसे तप करूँ। हे महामते ! तुम कौन हो ? यहाँ क्यों आये हो ? ।४४। क्या तुम देवता दैत्य, गन्धर्व, नाग या उरग हो ? क्योंकि मनुष्य का तो शरीर ही ऐसा नहीं होता, जिससे वह यहाँ आ सके ।४५। इसलिए जैसे मैंने अपना सब वृत्तान्त सुनाया है वैसे ही तुम भी अपना सम्पूर्ण वृत्तान्त सत्य-सत्य सुनाओ । कुवलयाश्व बोले—तुमने पूछा है कि तुम कौन हो और यहाँ क्यों आये हो ? ।४६। वह सब मैं तुम्हें बताता हूँ, सुनो । मैं राजा शत्रु-जित् का पुत्र हूँ और अपने पिता की प्रेरणा से ।४७। मुनियोंके रक्षणार्थ गालव मुनि के आश्रम में रह कर मुनियों की रक्षा करता था ।४८। उसी समय एक शूकर उनके कर्ममें विघ्न उपस्थित करने को वहाँआया

और मैंने उसे अर्धचन्द्र बाण से बींध दिया है ।४६।

अपक्रांतोत्तिवेगेनतमस्म्नुगतोहयी ।
पपातसहसागर्त्तं सक्रोधोश्वश्चमामकः ॥५०
मोहमश्वंसमारूढस्तमस्पेकः परिभ्रमन् ।
प्रकाशमासादितवान्दृष्टाचभवतीमया ॥५१
पृष्टाचनचमेकिंचिद्भवत्यादत्तमुत्तरम् ।
त्वांचैवानुप्रविष्टहमिमंप्रासादमुत्तमम् ॥५२
इत्येतत्कथितंसत्यंनदेवोहनदानवः ।
पन्नगोनगंधर्वं किन्नरोवाशुचिस्मिते ॥५३
ममस्ताःपूज्यपक्षावैदेवाद्याममकुंडले ।
मनुष्योस्मिविशंकातेनकर्त्तव्याक्वकर्हिचित् ॥५४
ततःप्रहृष्टासाकन्यासखीवक्त्रमुत्तमम् ।
लज्जाजडवीक्षमाणाकिंचिन्नोवाचभामिनी ॥५५
तत्सखीपुनरप्येनांप्रहृष्टाप्रत्युवाचह ।
यथातत्कथितंतेनसुरभ्यावचनानुगम् ॥५६

तब वह अत्यन्त वेगसे दौड़ा और मैंनेभी अश्वारोहण पूर्वक उसका पीछा किया, फिर वह एक विशाल गर्त्त मे गिरा और मैं भी उसका पीछा करता हुआ अपने अश्व सहित उसमें गिर गया, परन्तु अपने अश्व पर चढ़ा हुआ चलता रहा और इस प्रकाशमय स्थान में आकर तुम्हें देखा ।५०।५१। तुमसे पूछने पर तुमने कोई उत्तर नहीं दिया, तब मैं तुम्हारे पीछे इस भवन मे चला आया ।५२। यह मैंने सत्य ही कहा है, मैं देव दानव, पन्नग, गन्धर्व अथवा किन्नर में से कोईभी नहीं हूँ ।५३। मैं मनुष्य हूँ देवता इत्यादि तो सभी मेरे पूज्य है । तुम मेरे मनुष्य होनें में किसी प्रकार का सदेह मत करो ।५४। पुत्रों ने कहा-हे पिता, तब वह कन्या मदालसा अत्यन्त हर्षित होकर लज्जा से मौन हुई सखी की ओर देखने लगी ।५५। तब सखी ने अत्यन्त प्रसन्न होकर मदालसा से कहा—हे सखि ! तू सुरभि के वचन में तत्पर है, इन्होने यथार्थ वृतान्त कहा है फिर वह राजकुमार से बोली ।५।

वीरसत्यमसंदिग्धंभवताभिहितवचः ।
नान्यत्रहृदयह्यस्याहृष्ट्वास्थैर्यंप्रयास्यति ॥५७
चंद्रमेवधिकाकांतिःसमुपैतिरविंप्रभा ।
भूतिर्धन्यंधृतिर्धीरक्षांतिरभ्येतिचोत्तमम् ॥५८
त्वयैवविद्धोसदिग्धसपापोदानवाधमः ।
सुरभिःसागवांमाताकथंमिथ्यावदिष्यति ॥५९
तद्धन्ययंसभाग्याचत्वत्सम्बधमवेत्यवै ।
कुरुष्ववीरयत्कार्यंविधिनैवसमाहितम् ॥६०
परवानहमित्याहराजपुत्रःसदापितुः ।
सचापितत्क्षणात्प्राप्तोनिगृहीतसमित्कुशः ।
मदालसायाःसंप्रीत्याकुंडलागौरवेणच ॥६२
प्रज्वल्यपावकंहुत्वामन्त्रवित्कृतमंगलाम् ।
वैवाहिकेविधौकन्यांप्रतिपादयथागतम् ॥६३

कुण्डला ने कहा—हे वीर ! आपने जो कुछ कहा है वह सत्य न होता तोयह आपके दर्शन मात्र से ही अपने हृदय में स्थिरता को क्यों प्राप्त होती ? ।५७। क्योंकि चन्द्रमा को ही अधिक कान्ति और सूर्य को ही अधिक प्रभा प्राप्त है । ऐश्वर्य पुरुषको धन्य करता है, धृति धीरको और शान्ति श्रेष्ठपुरुष को ही प्राप्त होती है ।५८। इसलिए आपने ही इस दानवधाम को विद्ध किया है, इसमें संदेह नहीं, गोमता सुरभि कभी मिथ्या नहीं बोल सकती ।५९। इसलिए आपके साथ सम्बन्ध प्राप्तकरके यह सखी सौभाग्यवती और धन्य हुई । अब आप विधिवत् कर्त्तव्य का अनुष्ठान करिये ।६०। पुत्रोंने कहा—हे पिता ! राजपुत्र उससे बोले—मैं पराधीन हूँ, पिताकी आज्ञाके बिना इस बालासे विवाह कैसे कर सकता हूँ ! इसपर कुण्डला ने कहा है, यह देवकन्या है,आप इसके साथ विवाह कीजिए,तब राजपुत्रने स्वीकृति दी और विवाहके लिए तत्पर हुए, उस समय मदालसा ने अपने कुल गुरु तुम्बर का स्मरण किया ।६१। तभी तुम्बर समिधऔर कुशलेकर वहाँआगए ।६२।औरघृताहुति देकरअग्निको प्रज्वलितकरकेविधिपूर्वक मदालसा और राजपुत्रका विवाह संपन्न कराया।

और फिर अपने स्थान को चले गए ।६३।

जगामतपसेधीमान्स्तमाश्रमपदंततः ।
साचाहतांसखीवालांकृतार्थास्मिवरानने ।
संयुक्तामनुनादृष्ट्वात्वामहंरूपशालिनीम् ।
तपस्तप्स्येहमतुलंनिर्व्यलीकेनचेतसा ।।६५
तीर्थांबुधौतपापाचभवित्रीनेदृशीयथा ।
तचाहराजापुत्रं साप्रश्रयोपनतंवचः ।।६६
गंतुकामानिजसखीस्नेहविक्लवभाषिणी ।
पुंभिरप्यमितप्रज्ञनोपदेशीभवद्विधे ।।६७
दातव्यःकिमुतस्त्रीभिरतोनोपदिशामिते ।
किं त्वस्यास्तनुमध्यायाःस्नेहाकृष्टचेतसा ।।६८
त्वयाविश्रंभिताचास्मिस्मारयाम्यरिसुदन ।
भर्त्तव्यारक्षितव्याचभार्याहिपतिनासदा ।।६९
धर्मार्थकामसंसिद्ध्यै भार्याभर्त्तुःसहायिनी ।
याचभार्याचभर्त्ताचपरस्परमनुव्रतौ ।।७०

वह अपने आश्रम मे तप करने के लिए जब चले गए तब कुण्डला ने मदालसा से कहा-कि अब मैं कृतार्थ हो गई ।६४। हे रूपवती ! तुझे इनके साथ मिली देखकर मुझे अत्यन्त प्रसन्नता हुई, अब मैं निर्विकार मन से तपस्या करूँगी ।६५। अब मुझे फिर इस प्रकार न रहना पड़े इसलिए तीर्थजल से स्नान कर पाप रहित होऊँगी, फिर उसने राजकुमार से नम्रतापूर्वक कहा ।६६। इच्छित स्थानमें जानेको तत्पर अपनी सखी के स्नेह से व्याकुल कुण्डला ने कहा—हे अत्यन्त बुद्धिमान् ! आपके समान पुरुष को ज्ञानी भी उपदेश देनेमें समर्थ नहीं है ।६७। मैं तो स्त्री हूँ, आपको उपदेश नहीं देती, फिर भी मेरा मन अपनी सखी के स्नेहमें आकर्षित है ।६८। हे शत्रुनाशक ! आप पर विश्वास करती हुई में आपको याद दिलाती हूँ कि पतिको पत्नी की सदैव रक्षा करनी चाहिए ।६९।पत्नी भी पति की सहायिका होती है और धर्म, अर्थ तथा काम, की सिद्धि के लिए दोनों ही परस्पर वशीभूत रहते हैं ।७०।

तदाधर्मार्थकामानांत्रयाणामपिसंगतम् ।
कथंभार्यामृतेधर्ममर्थवापुरुषः प्रभो ॥७१
प्राप्नोतिकाममर्थंवातस्यांत्रितयमाहितम् ।
तथैवभर्त्तारमृतेभार्याधर्मादिसाधने ॥७२
नसमर्थात्रिवर्गोयदांपत्यंसमुपाश्रिताः ।
देवतापितृभृत्यानामतिथीनांचपूजनम् ॥७३
नपुंभिःशक्यतेकर्त्तुंमृतेभार्यानपात्मज ।
प्राप्तोपिचार्थोमनुजैरानीतोपिनिजंगृहम् ॥७४
क्षयमेतिविनाभार्याकुभार्यासंग्रहेपिवा ।
कामस्तुतस्यनैवास्तिप्रत्यक्षेणोपलक्ष्यते ॥७५
दंपत्योःसहधर्मेणत्रयींधर्ममवाप्नुयात् ।
पुत्राणाँयोनिरन्यावैनान्यतोभार्ययाविना ।
पितृन्पुत्रैस्तथै वान्नसाधनैरतिथीनपि ॥७६
पूजाभिरमर स्तद्वत्साध्वीं भार्यानरोवति ।
स्त्रियाश्चापिविनाभर्त्राधर्मकामार्थसंततिः ॥७७

तभी धर्म, अर्थ और काम की सिद्धि संभव है, यह तीनो धर्मपत्नी मे समाहित होने से, जैसे पत्नीके बिना कभी धर्म अर्थ ।७१। प्राप्त करने में समर्थ नहीं होता वैसे ही धर्मादि के साधन में पति के बिना पत्नीभी ।७२। समर्थ नहीं होती, क्योंकि धर्म अर्थ और काम पति-पत्नी दोनों के ही आश्रित है । हे राजकुमार ! देवता, पितर भृत्य और अतिथियों का सत्कार ।७३। न हो तो धर्माचरण नही हो सकता तथा पुरुष द्वारा अनायास उपार्जित धन भी गृह में लाने पर ।७४। यदि पत्नी न हो अथवा कुभार्या हो तो सब नष्ट हो जाता है, पत्नी के बिना, न होने वाला यह कार्य तो प्रत्यक्ष ही है । ७५।यदि स्त्री-पुरुष दोनों ही समानधर्म को पालें तभी अर्थ काम में समर्थ होते हैं । साध्वी पत्नी को प्राप्त करके पुत्रोत्पादन द्वारा पितरों को तथा अन्नादि मे अतिथियों को ।७६। और पूजन द्वारा देवताओं को प्रसन्न करने में समर्थ होते हैं । स्वामीके बिना नारीके भी धर्म और कामका भले प्रकार विस्तार नहीं हो सकता।७७।

नैवतस्मात्त्रिवर्गोयंदपांपत्यमधिगच्छति ।
एतन्तयोक्तं युवयोर्गमिष्यामियथेप्सितम् ॥७८
वर्धस्त्वमनयासार्द्धं धनपुत्रसुखायुषा ।
इत्युक्त्वासंपरिष्वज्यस्वसखींतंनमस्यच ॥७६
जगामदिव्ययागत्यायथाभिप्रेतमात्मनः ।
सोपिशत्रुजितःपुत्रस्तामारोप्यतुरंगमम् ॥८०
निर्गंतुकामःपातालाद्विज्ञातोदनुसंभवंः ।
ततस्तःसहसोत्क्रुष्टं ह्रियतेत्विति ॥८१
कन्यारत्नं यदानीतंदिवः पातालकेतुना ।
ततःपरिघनिस्त्रिंशगदाशूलशरायुधम् ॥८२
दानवानांबलप्राप्तसहपातालकेतुना ।
तिष्ठतिष्ठेतिजल्पतस्तेतदादानवोत्तमाः ॥८३
शरवर्षैस्तथाशूलैर्ववर्षुर्नृपनदनम् ।
सतुशत्रुजितःपुत्रस्ततस्तान्प्रति वीयवान् ॥८४

यह त्रिवर्ग दोनों मे ही आश्रित है यही मेरा कहना है, अब मुझे आज्ञा दीजिये जिससे मैं अपने इच्छित स्थान मे चली जाऊँ ।७८। मेरा आशीर्वाद है कि आप इससे युक्त होकर धन पुत्र, आयु और सुख में वृद्धि को प्राप्त हों । नागपुत्रोने कहा-इस प्रकार कहतीहुई कुण्डलाअपनी सखी को आलिंगन और राजकुमार को नमस्कार करके ।७६। दिव्य-गति से अपने इच्छित स्थान को गई और ऋतुध्वजने मदालसाकी अश्व पर चढ़ कर ।८०। जैसे ही पाताल से निकलना चाहा, वैसे ही दानवों को उसका पता लग गया कि 'स्वर्ग से जिस कन्याको पातालकेतु लाया था उसे हरण किये ले जा रहा है, यह कहते हुए दानव चीत्कार करने लगे और पातालकेतु के साथ मिलकर दानव सेना परिध, खड्ग, गदा, शूल, बाण इत्यादि ।८१।८२। आयुधों को ग्रहण कर ठहरो, ठहरो, कहते हुए ।८३। राजकुमार पर शस्त्र-वर्षा करने लगे ।८४।

विच्छेदशरजालेप्रहसन्निवलीलया ।
क्षणेनपातालतलमसिशक्त्यृष्टिसायकैः ॥१५

छिन्नैः सछन्नमत्यर्थमृतध्वजशरीत्करैः ।
ततोस्त्रं त्वाष्ट्रमादायाचक्षेपप्रतिदानवान् ॥८६
तेनतेदानवा सर्वेसहपातालकेतुना ।
ज्वालामालातितीव्रेणस्फुटदस्थिचयास्तदा ॥८७
निर्दग्धा कापिलतेजःसमास र्वेवसागराः ।
ततःसराजपुत्रोश्वीनिहत्यासुरसत्तमान् ॥८८
स्त्रीरत्नेनसमंतेनसमागच्छत्पितुःपुरम ।
प्रणिपत्यचतत्सर्वंसतुपित्रेन्यवेदयत् ॥८९
पातालगमनंचैवकुंडलायाश्चदर्शकम् ।
तद्वन्मदालसाप्राप्तिदानवैश्चापिसगरम् ॥९०
वधश्चतेषामस्त्रेणपुनरागमनंतथा ।
इतिश्रुत्वापितातस्यचरितं चात्रचेतसः ॥९१
प्रीतिमानभवच्चैनंपरिष्वज्याहचात्मजम् ।
सत्पुत्रेणत्वयापुत्रतापियोहं महात्मना ॥९२

तब शत्रुजित के अत्यन्त बली पुत्र ने अपने वाणों से उनके सब शस्त्र बात की बात को काट डाले और उनके वाणोंसे कट-कटकर गिरे शास्त्रास्त्रोंमें पाताल तक भर गया ।८५। तब राजकुमारने बड़े-बड़े बाण चलाये और फिर त्वाष्ट्र अस्त्र लेकर दानवोंपर छोड़ा ।८६। उस ज्वाल-मालावाले भयंकर अस्त्र ने सभी दानवोंके सहित पातालकेतु की हड्डियाँ तोड़ डाली ।८७। और वह तुरन्त ही जैसे कपिल मुनि के तेज से सगर-पुत्र भस्म हुए थे, उसी प्रकार भस्म हो गए इस प्रकार दैत्यकुल का नाश करके वह राजकुमार स्त्री के सहित अश्व पर चढ़कर अपने नगर में आये और अपने पिता को प्रणाम पूर्वक सम्पूर्ण वार्त्ता सुनायी ।८८-८९। पाताल में जाना, कुण्डला का देखना, मदालसा का प्राप्त होना, दैत्यों के साथ युद्ध ।९०। अस्त्रसे उनका संहार और पुनः वापिस लौटना आदि सब वृत्तान्त कहा जिसे सुनकर चित्त वाले राजा ।९१। अत्यन्त प्रसन्न हुए और पुत्र को आलिंगन पूर्वक बोले कि हे सत्पुत्र ! तूने मुझे तार दिया ।९२।

भयेभ्योमुनयस्त्रातायेरसद्धर्मचारिणा ।
मत्पूर्वैःख्यातिमानीतंमयाविस्तारितंपुनः ॥६३
पराक्रमवतावीरत्वयातद्बहुलीकृतम् ।
यदुपात्तं यशःपित्राधनंवीर्यमथापिवा ॥६४
तन्नहापयतेयस्तुसनरोमध्यमःस्मृतः ।
तद्वीर्यादधिकंयस्तेपुनरन्यत्स्वशक्तितः ॥६५
निष्पादयतितंप्राज्ञावदतिनरमुत्तमम् ।
यःपित्रासमुपात्तानिधनवीर्ययशांसिवै ॥६६
न्यूनतांनयतिप्राज्ञास्तमाहुःपुरुषधमम् ।
तन्मयाब्रह्मणत्राणंकृतमासीद्यथात्वया ॥६७
पातालगमनंयच्चयासुरविनाशनम् ।
एतदभ्यधिकंवत्सतेनत्वपुरुषोत्तम् ॥६८

जिसके द्वारा मुनियों की रक्षा हुई उसी सत्पात्र द्वारा मैं भीतर गया, मेरे पूर्व पुरुष जिससे विख्यात हुए और मैंने भी जिसका विस्तार किया ।६३। वह यश तुम्हारे द्वारा औरभी वृद्धिको प्राप्त हुआ, जो यश बल अथवा धन पिता के द्वारा उपार्जित है ।६४। उसकी रक्षा करने वाला पुरुष मध्यम हैं परन्तु जो उसे अपनी शक्ति से बढ़ाता है ।६५। उसे पण्डितजन उत्तम पुरुष कहते हैं । तथा जो पिता द्वारा उपर्गजितयश बल धन को ।६६। नष्ट करता है, अधम कहा जाता है । पहिले मैंने तुम्हारे समान ब्राह्मणों का रक्षण मात्र किया ।६७। तुमने पाताल में जाकर असुरों का नाश और ब्राह्मणों की रक्षा की, इस प्रकार मुझसे अधिक कार्य किया है, इसलिये तुम उत्तम पुरुष हो ।६८।

तद्धन्योस्यथवानत्वमहमेगुणाधिकः ।
त्वांपुत्रमीदृशंप्राप्श्लाघ्यंपुण्यवतामपि ॥६६
नसत्पुत्रकृतांप्रीतितन्यःप्राप्नोतिमानवः ।
पुत्रेणनातिशय्यितोयःप्रज्ञादानविक्रमैः ॥१००
धिक्तस्यजन्मजःपित्रालोकेविज्ञायतेनरः ।
यत्पुत्रात्ख्यातिमभ्येतितस्यजन्मसुजन्मनः ॥१०१

आत्मज्ञानीयतोधन्योमध्य: पितृपितामहै: ।
मातृपक्षे मात्राचख्यातिर्यातिनराधम: ॥१०२
तत्पुत्र धनवीर्यैस्त्वंविवधस्वसुखेनच ।
गन्धर्वतनयाचेयंमावियुज्यतुवैत्वया ॥१०३
इतिपित्राबहुविधांप्रियमुक्त्वापुन: पुन: ।
परिष्वज्यस्वमावासंसभार्य:सविसर्जित: ॥१०४
सतयाभार्ययासार्धं रेमेतत्रपितु:परे ।
अन्येषुचतथोद्यानवनपर्वतसानुषु ॥१०५
श्वश्रू श्वशुरयो:पादौप्रणिपत्यचसाशुभा ।
प्रति प्रातस्तस्तेनप्राणिपस्यसुमध्यमा ॥१०६

हे पुत्र ! तुम धन्य हो, तुम्हारे जैसे अधिक गुणवाले पुत्र को पाकर मैं पुण्यवानों में अधिकाश्लाघा के योग्य हुआ हूँ ।६६। जो पुरुष पुत्र के द्वारा प्रज्ञा,दान अथवा पराक्रम में वृद्धि को प्राप्त नहीं होता, उसे पुत्र से उत्पन्न प्रीति का लाभ नहीं हो सकता ।१००। पिता के द्वारा जो ख्याति अर्जित करे, उसके जन्म को धिक्कार है परन्तु पुत्र के द्वारा ख्याति का अर्जन करने वाला पुरुष श्रेष्ठ जन्म वाला होता है ।१०१। अपने नाम से विख्यात होने वाला पुरुष धन्य है, मातृपक्ष से ख्याति पाने वाला पुरुष नराधम होता है ।१०२। हे पुत्र तुम धन, बल और सुख से सदा वृद्धि को प्राप्त होओ इस गन्धर्व कुमारीसे कभी तुम्हारा वियोग न हो।१०३।पिता के ऐसे वचन सुनकर राजकुमार अपनी पत्नी सहित अपने निवास स्थान को गए ।१०४। तथा मदालसा के साथ भवन, उद्यान, वन पर्वत आदिमें क्रीड़ा करने लगे ।११५। तथा वह शुभमयी मदालसा भी श्वसुर के चरणों की वन्दना करती हुई अपने पति के साथ रहने लगी ।१०६।

इति श्रीमार्कण्डेय पुराणे मदालसाख्याने एकोनविंशोऽध्याय: ।

२०—मदालसा उपाख्यान [२]

तत:कालेबहुतिथेगतेराजापुन:सुतम् ।
हिप्रगच्छाशुविप्राणात्राणायचरमेदिनीम् ॥१

अश्वमेतंसमारुह्यप्रातःप्रार्तदिनेदिने ।
आवाधाद्विजमुख्यानामन्वेष्टव्यासदेवहि ॥२
दुवृंत्ताःसंतिशतशोदानवाःपापबुद्धयः ।
तेध्योनस्याद्यथावाधामुनीनांत्वंतथाकुरु ॥३
सतथोक्तस्तदापित्रातथाचक्रेनृपात्मजः ।
परिक्रम्यमहींकृत्स्नाववंबेचरणौपितुः ॥४
अहृत्यनिसप्राप्तेपूर्वाह्णेनृपनन्दनः ।
ततश्चशेषंदिवसंतयारेमेसुमध्यया ॥५
एकादातुचरन्सोथददर्शयमुनातटे ।
पातालकेतोरनुजंतालकेतुंकृताश्रमम् ॥६
मायावीदानवःसोथमुनिरूपंसमाश्रितः ।
सप्राहराजपुत्रंतंपूर्ववैरमनुस्मरन् ॥७

नागपुत्रों ने कहा—कुछ काल व्यतीत होने पर राजा शत्रुजित ने अपने पुत्र ऋतुध्वज से कहा—हे पुत्र ! तुम ब्राह्मणों के रक्षणार्थ जाकर पृथिवी में विचरण करो ।१। प्रतिदिन प्रातःकाल इस घोड़े पर चढ़कर श्रेष्ठ विप्र के विघ्नों को दूर करो ।२। सैकड़ों पापात्मा एव दुष्कर्मी दानव मुनियोंके कार्यमें विघ्न उपस्थित न कर पाये,वही यत्न करो ।३। इस प्रकार राजा की आज्ञा प्राप्त कर वह नित्य प्रति पूर्वाह्नकाल में पृथिवी मे भ्रमण करके पिता के चरणों की वन्दना करते और शेष दिन म पत्नी मे सहित क्रीड़ा करते ।४।५। एक समय इसी प्रकार भ्रमण करने में उन्होंने पातालकेतु के छोटे भाई तालकेतु को यमुनातट स्थित आश्रम में अवस्थान करते देखा ।६। वह मुनि रूप धारण करके रहता था, पुरानी शत्रुता का स्मरण करके वह राजकुमार से बोला ।७।

राजपुत्रब्रवीमित्वांतत्कुरुष्वयदीच्छसि ।
नचतेप्राथनाभंगः कायःसत्यतिश्रव ॥८
यक्ष्येयज्ञेनधर्मायकर्त्तव्याश्चमयेष्टयः ।
चिंतयेतत्रकर्त्तव्यानास्तिमेदक्षिणायतः ॥९
ततःप्रयच्छमेवीर शिणार्थेस्वभूषणम् ।

यदेतत्कंठलग्नंतेरक्षचेमंममाश्रमम् ॥१०
यावदतर्जलेदेवंवरुणयादसांपतिम् ।
वैदिकैर्वारुणैर्मं:प्रजानांपुष्टिहेतुकैः ॥११
अभिष्टूयत्वरायुक्तःसमभ्येसीतिवादिनम् ।
तप्रणम्यतत:प्रादात्सतस्मैकटभूषणम् ॥१२
प्राहचैनभवान्यातुनिर्व्यलोकेनचेतपा ।
स्थास्यामितावदत्रैवतवाश्रमसमीपतः ॥१३
तवादेशान्महाभागयावदागमनंतव ।
नतेत्रकश्चिदाबाधाकरिष्यतिमयिस्थिते ॥१४
विश्रब्धस्त्वंमुनिश्रेष्ठकुरुष्वचभनोगतम् ।
एतदुक्तस्ततस्तेनसमज्जनदीजले ॥१५

हे राजकुमार ! यदि तुम चाहोतो मैं जो कहता हूँ, वह करो, क्यो कि आपने कभी किसीकी प्रार्थनाको अमान्य नहीं किया है ।८। हे राजकुमार ! मैं यज्ञ करूँगा तथा इष्टि और अग्निका चयन करूँगा, परन्तु मैं दक्षिणा देनेमे असमर्थ हूँ ।९। इसलिए, सुवर्ण दानके लिऐ अपना यह कठा मुझे दो और आश्रमकी रक्षा करो ।१०। मैं वैदिक वारुण मंत्रके द्वारा वरुणदेव का जल मे स्तवन करके जब तब यहाँ न लौट आऊँ तब तक तुम्हें इस आश्रमकी रक्षा करनी है ।११। मैं शीघ्र ही आऊँगा,ऐसा कहते हुए मुनि को प्रणाम करके राजकुमार ने अपना कंठा उतार कर उन्हें दे दिया ।१२। और बोला—हे महाभाग ! आप विश्वस्त होकर जाइये, आपके आने तक मैं इसी आश्रम के निकट रहूँगा ।१३। आप जब तक नहीं लौटते तब तक आपकी आज्ञानुसार मैं यहीं रहूँगा,मेरे रहते हुए आपके कार्यमें कोई विघ्न नहीं करेगा ।१४। हे मुनिवर ! आपशंकारहित मनसे जाकर इच्छित कर्म सम्पादन कीजिये, राजपुत्र के यह वचन सुनकर वह मायामुनि तालकेतु नदी के जल में मग्न हो गया ।१५।

अरक्षत्सोपितस्र्यंवमायाविहितमाश्रमम् ।
गत्वाजलाशयात्तस्मात्तालकेतुश्चतात्पुरम् ॥१६
मदालसायाःप्रत्यक्षमन्येषांचैतदुक्तवान् ।

वीर:कुवलाश्वोसौममाश्रमसमीपत: ॥१७
केनापिदुष्टदैत्येनकुर्वन्नक्षांतपस्विनाम् ।
युध्यमानोयथाशक्तिनिघ्नन्ब्रह्मद्विषोयुधि ॥१८
मायामाश्रित्यपापेनभिन्न:शूलेनवक्षसि ।
म्रियमाणेनतेनेदंदत्तंमेकंठभूषणम् ॥१९
प्रापितश्चाग्निसयोगंनरुवेशूद्रतापसै: ।
कृतार्तहेषाशब्दोवैस्त्रस्त:साश्रूविलोचन: ॥२०
नीत:सोश्चश्चतेनैवदानवेदुरात्मना ।
एमन्मयानृशंसेननृष्टंदुष्कृतकारिणा ॥२१

उसके माया निर्मित आश्रम की राजपुत्र रक्षा करने लगे, फिर जल से निकलकर तालकेतु राजा शत्रुजित् के नगर में जाकर ।१६। मदालसा आदिके समक्ष बोला कि वीर कुवलयाश्व मेरे आश्रमके निकट ।१७। तपस्वियोंकी रक्षा कर रहे थे, तभी उन्हें किसी दुष्ट दानव से युद्ध करना पड़ा और उन्होने ब्रह्मद्वेष्टा शक्तिका असुरपर प्रहार किया ।१८। परन्तु उस दानव के माया रूपी शूल से हृदय विदीर्ण होने के कारण मृत्यु को प्राप्त हो गए, उन्होंने यह कंठाभूषण मरते समय मुझे दिया है ।१९। तथा वनमें शूद्र तपस्वियों ने उनका अग्नि संस्कार किया है और अश्रुपूर्णदु:खिन ।२०। अश्व उसी दानव ने ले लिया, यह सम्पूर्ण घटना उस नृशंशके द्वारा होती हुई देखी है ।२१।

यदत्रानतरंकृत्यैकुरुष्वोत्तरकालिकम् ।
हृदयाश्वासनंचेतद्गृह्यताकण्ठभूषणम् ॥२२
नास्माकंहिसुवर्णेनकृत्यमस्तितपस्विनाम् ।
इत्युक्त्वोत्सृज्यतद्भूमौसजगामयथागतम् ॥२३
निपपातजन:सोथशोकार्त्तोमूर्च्छयातुर: ।
क्षणेनचेतनांप्राप्यसर्वास्तानृपयोषित: ॥२४
राजपत्न्यश्चराजाचविलेपुरतिदु:खिता: ।
मदालसानुतद्दृष्ट्वातदीयकंठभूषणम् ॥२५
तत्याजसुप्रियान्प्राणाञ्श्रुत्वात्रिनिर्हतप्रियम् ।

ततः पुरे महांक्रदः पौराणां भवनेष्वभूत् ॥२६
यथैव तस्य नृपते स्वगृहे समवर्तत ।
राजा च तां मृतां दृष्ट्वा विना मर्त्रा मदालसाम् ॥२७
प्रत्युवाच जन सर्वं विमृश्य स्वस्थमानसः ।
न रोदितव्यं पश्यामि भवतामात्मनस्तथा ॥२८

अब जो आपको करना हो,वह करियेऔरउनका यह कठाभीलीजिये मुझ तपस्वी को स्वर्णसे क्या प्रयोजन ? कहकर तालकेतु जहाँसे आया, वही चला गया ।२२।२३। इसके पश्चात् वहाँ सभी मूर्छित होकर गिर पड़े । फिर राजा रानी चैतन्यता लाभ करके ।२४। तथा अन्य राज-स्त्रियाँ भी अत्यन्त दुःखित होकर विलाप करने लगी । जब मदालसा ने उस कण्ठाभूषण को देखा ।२५। तो स्वामी की मृत्यु की बात सुनकर उसने दुःखसे कातरहोकर प्राण त्याग दिए । राजभवन में होने वाला कुन्दनप्रति ध्वनित होनेलगा । फिर राजा शत्रुजित अपनी पुत्रवधू को मरी हुई देख कर ।२६।२७। तथा सा .धान चित्त होकर सब कहने लगे कि हम सबको रोना नहीं चाहिए ।२८।

सर्वेषामेव संचित्य संबंधाननित्यताम् ।
किं नुशोचामि तनय किंनु शोचाम्यहं स्नुषाम् ॥२९
विमृश्य कृतकृत्यत्वान्मम्ये शोच्छावुभात्रपि ।
मच्छुश्रूषुर्मद्वचनाद्द्विजरक्षणतत्परः ॥३०
प्राप्तो मद्य सुतो मृत्यु कथ शोच्यः सधीमताम् ।
अवश्यं याति यद्देहं तद्द्विजानां कृते यदि ॥३१
मम पुत्रेण संत्यक्तं नन्वभ्युदयकारि तत् ।
इयं च सत्कुलोत्पन्ना भर्त्तु र्न्येवमनुव्रता ॥३२
कथं तु शोच्या नारीणां भर्तु र्न्तन्न दैवतम् ।
अस्माकं बांधवानां च तथान्येषां दयावताम् ॥ ३
शोच्या ह्येषा भवेदेवं यदि भर्त्रा वियोगिनी ।
यातुभर्तुर्वधं श्रुत्वा तत्क्षणादेव भामिनी ॥३४

भर्तारमनुयातेयं न शोच्यातो विपश्चिताम् ।
ता: शोच्या या वियोगिन्य: सह भर्त्रा कुलांगना: ।।३५

सभी प्राणियों का सम्बन्ध अनित्य है, मैं पुत्र या पुत्रबधु किसका शोक करूँ ? ।२९। दोनों ही कृतकृत्य थे, इससे शोक के योग्य नहीं हैं, क्योंकि जिसने मेरी आज्ञानुसार ही ब्राह्मणों की रक्षा से लगे रह कर ।३०। प्राण दिया है, उस पुत्र के लिए शोक करना उचित नहीं है । मेरे पुत्र ने अपने नाशवान् देह को ब्राह्मणोंके लिए ।३१। त्यागा है, तब वह अशोचनीय और कल्याणकारी है और जब सत्कुल मे उत्पन्न हुई इस नारी ने भी अपने पति का अनुगमन किया है ।३२। तो वह भी शोचनीय नहीं हो सकती । क्योंकि स्त्री के लिये पतिके अतिरिक्त अन्य कोई देवता नहीं हैं । यदि अपने पति की मृत्यु के अनन्तर जीवित रहती तो हम सब की शोचनीय दशा होती, इसने तो अपने पति का मरना सुनते ही प्राण छोड़ दिया है ।३३।३४। इसलिए पण्डितजनों के लिए शोचनीय नहीं है, स्वामी की मृत्यु होने पर भी जो नारी जीवन धारण करे, वह शोचनीय होती है ।३५।

कष्टभ्रांत्या न गच्छन्ति कष्टदा: स्यु: कुलात्मनो: ।
भर्तु वियोगस्त्वनया नानुभूत: कृतज्ञया ।।३६
दातार सर्व सोख्यानामिह चामुत्र चोभयो: ।
लोकयो: का हि भर्त्तारं नारी मन्येत मानुषम् ।।३७
न स शोच्यो न चैवेह नार्य तज्जननी नच ।
त्यजता ब्रह्मणार्थाय प्रांणान्सर्वैस्मतारिता: ।।३८
विप्राणां मम धर्मस्य गत: सपु महामति: ।
आनृण्यमर्द्ध मुक्तस्य त्यागाद्देहस्य मे सुत: ।।३९
मातु: सयीत्वं मद्वं शवैमल्यं शौर्यमात्मन: ।
संग्रामे सत्यजन्प्राणान्सोविद्दद्विजरक्षात् ।।४०
तत: कुवलयाश्वस्य माता भर्तु रनंतरम् ।
श्रूत्वा पुत्रवधंताद्दक्प्राह हृष्टार्तु त पतिम् ।।४१

न मे जनन्या स्वस्रा वा प्राप्ता प्रीतिर्नृपेदृशी ।
श्रुत्वा मुनिपरि त्राणे हतं पुत्रं यथा मया ॥४२

जो स्वामी के सहित जाती है, वह कभी शोचनीय नहीं है, जो गमन में कष्ट मानकर नहीं जाती, वह अपने कुल को कष्ट देने वाली है, कृतज्ञा होने के कारण इसने अपनी स्वामी के वियोग का अनुभव नहीं किया ।३६। इहलोक और परलोक दोनों में सुख देने वाले स्वामी को कौन स्त्री मनुष्य मानती है ? ।३७। हमारा पुत्र, पुत्रवधू, में अथवा उसकी माता हममें से कोई भी शोचनीय नहीं है, क्योंकि ब्राह्मणों की रक्षा में प्राण देने वाले पुत्र के कारण हम सभीका उद्धार हुआ है ।३८। मेरा पुत्र अपने अधर्म मुक्त शरीर को छोड़कर ब्राह्मण के प्रति, धर्म के प्रति और मेरे प्रति भी उऋण हो गया है ।३९। ब्राह्मणों की रक्षा के युद्ध में मरने से माता का सतीत्व, वंश की स्वच्छता और अपनी शूरता किसी का भी त्याग उसने नहीं किया ।४०। कुवलयास्व की माता पुत्र का मृत्यु समाचार सुनकर अपनी स्वामी को देख विषाद रहित चित्त से बोली ।४१। हे महाराज ! मुनियों की रक्षा करते-करते सन्तान का मरण सुनकर मैं सन्तुष्ट हुई, ऐसा सन्तोष मुझे माता-बहिन किसी के द्वारा नहीं मिल सकता ।४२।

शोचतां ब्राह्मणानां ये निःस्वनेनातिदुःखिताः ।
म्रियतेव्याधिना क्लिष्टाँस्तेषां माता वृथा प्रजा ॥४३
संग्रामे युग्यमाना ये भीता गोद्विजरक्षणे ।
क्षुण्णाः शस्त्रै विपद्यंतेत एव भुवि मानवाः ॥४४
अर्थिना मित्रवर्गस्य विद्विषांच पराङ्मुखः ।
योनि याति पिता तेन पुत्री माता चवोरसूः ॥४५
गभक्लेशः स्त्रियो मन्ये साफल्य भजते तदा ।
यदारिविजयो वास्यात्संग्रामे वाहतः सुतः ॥४६
तत सराजा संस्कारं पुत्रपत्नीमलंभयत् ।
निर्गम्यंचबहिः स्नातो ददौ पुत्रायचौदकम् ।४७

तालकेतुश्चनिर्गम्यं तथैवयमुनाजलात् ।
राजपुत्रमुवाचेदं प्रणबान्मधूरंवचः ॥४८
यच्छतं भूपाल पुत्रत्वं कृतार्थो कृतस्त्वया ।
वाछितं तुकृतंकार्यंत्वय्ययत्रा विचले स्थिते ॥४६
वारुणंयज्ञकार्यं च जलेशस्य महात्मनः ।
तन्मया साधितं सर्वं यन्ममासीद भीत्सतम् ॥५०
प्रणिपत्य सतप्रागाप्राजपुत्रः परंपितुः ।
समारुह्यततेवाश्वं सुपर्णनिल विक्रमम् ॥५१

जो बन्धुओं के लिए दुःख से श्वांस लेते हुए या रोगाक्रांत हुए प्राण त्याग करते हैं, उनकी माताओ का सतित-प्रजनन व्यर्थ ही है ।४३। जो गौ ब्राह्मण की रक्षा के निमित्त युद्धमें भय रहित चित्तसे शस्त्रसे मरता है, उसे ही मनुष्य कहते हैं ।४४। जिसके द्वारा याचकमित्र और शत्रुगण विमुख नहीं होते, उसी से पिता पुत्रवान् होता है ।४५। जब पुत्र युद्ध मे मर जाता या शत्रु पर विजय प्राप्त करके लौटते हैं तभी स्त्री का गर्भ प्रेलेश सफल होता है ।४६। नागपुत्र बोले-फिर राजा शत्रुजितने पुत्रबधू का सत्कार कर नगर के बाहर जाकर स्नान किया और पुत्र के निर्मित जलञ्जलि दी ।४७। उधर तालकेतु उसी प्रकार यमुनाजलसे निकलकर प्रणाम करता हुआ मीठे वचनों मे राजकुमार से बोला ।४८। हे राज-कुमार ! आपके द्वारा में कृतार्थ हुआ क्यों कि आपने यहाँ रहकर मेरा अभिलषित कार्य किया गयाहै ।४६। इसप्रकार जलपति वरुणका यज्ञमेरी माया से सिद्ध हो गया, हे राजपुत्र ! अब आप जाइये ।५०। यह सुनकर राजपुत्र ने मुनि को प्रणाम किया और उस वायु वेग वाले अश्व पर चढ़ कर पिता के नगर को गए ।५१।

२१—कुवलयाश्व पातालप्रवेश

सराजपुत्रः सम्प्राप्यवेगांदात्मपुरन्ततः ।
पित्रोर्ववं दिषुः पादौ दिद्दक्षुश्च मदालसाम् ॥१

सददर्शतदुद्विग्नमप्रहृष्टमुखै पुरम् ।
पुनश्चविस्माताकारं प्रहृष्टवदनं पुनः ॥२
अन्यमुत्फुल्लनयनं दिष्टयैतिवादिनम् ।
परिष्वजन्मन्योमतिकौतूहलान्वितम् ॥३
सराजपुत्रोमित्रंतुउत्फुल्लनयनं शुभम् ।
आलिंगतादाकालेसौहृदेनपरेणव ॥४
तः पौरास्तदालोक्यदिष्टयदिष्टयेतिवादिना ।
चिरंजीवोरुकल्याणहतास्तेपरिपंथिनः ॥५
पित्रोप्रल्हादयमनस्तथास्माकमकंटकः ।
इत्येतंवादिभिः पौरः पुनः पृष्ठेचसवृतः ॥६
तत्क्षणप्रभवानन्दः प्रविवेशपितुर्गृहम् ।
पिताचतंपरिष्वज्यमाताचान्येचवांधवाः ॥७
चिरञ्जीवोरुकल्याणददौचास्मैंतदाशिषः ।
प्राणिपत्यततः सोथकिमेतदिति विस्मितः ॥८

नागपुत्रों ने कहा—राजकुमार ने माता-पिता के चरणो में बन्दना करने और मदालसा को देखने की इच्छा करके अपने नगर मे जाकर देखा ।१। नगर निवासी अत्यन्त उद्विग्न हैं, परन्तु उन्हें देखकर प्रसन्न और विस्मित हो रहे हैं ।२। फिर प्रफुल्लित नेत्रो से भाग्य को सराहते परस्पर आलिंगन करने लगे ।३। उस राजपुत्र ने प्रफुल्लित नेत्र वाले अपने श्रेष्ठ मित्र को अत्यन्त प्रीति सहित हृदय से लगाया ।४। फिर नगरवासी उनके प्रति कहने लगेकि अत्यन्त भाग्य वाले दीर्घजीवि होंवे, तुम्हारे सभी शत्रु नाश को प्राप्त हों ।५। हमारे तथा माता-पिताके हृदय को प्रसन्न करो, ऐसा कहते हुए इनके आगे पीछे इकट्ठे हो गए ।६। राजकुमार ने उनसे घिरे हुए पिता के भवन में प्रवेश किया, तब पिता माता तथा अन्याय बांधवगण ।७। उन्हें आशीर्वाद देने लगे, तब राजकुमार ने उनको प्रणाम करके विस्मित चित्तसे पूछा—हे तात ! यह क्या है ? ॥८॥

प्रपच्छपितरंचाथसोस्मैसर्वंसदुक्तवान् ।
सभार्यांतांमृतांश्रुत्वाहृदयेष्टांमदालसाम् ॥९
पितरौचपुराद्दृष्ट्वालज्जाशोकविमध्यगः ।
चिंतयामासाबालामांश्रुत्वानिधनंगतम् ॥१०
तत्याजजीवितंसाध्वीधिङ्मानिष्ठुरमानसम् ।
नृशंसोहमानार्योहं विनातांमृगलोचनाम् ॥११
मत्कृतेनिधनंप्राप्तायज्जीवान्ततिनिर्घृणः ।
पुनःसंचितयामासपरिसंस्तभ्यमानसम् ॥१२
मोहोद्गममपास्यैर्बनिःश्वस्योच्छ्वस्यचातुरः ।
मृतेतिसामन्निमित्तंत्यजामियदिजीवितम् ॥१३
किंमयोपकृतंतस्याः श्लाघ्यमेतत्तुयोषिताम् ।
यदिरोदितमिवादीनंहाप्रियेतिवदन्मुहुः ॥१४
तथाप्यश्लाध्यमेतन्नोत्रयहिपुरुषाः किल ।
अथशोकजडोदीनोऽसृजाहीनोवलान्वितः ॥१५
विपक्षस्यभविष्यामिततः परिभवास्पदम् ।
मयारिशातनात्कार्यं राज्ञः शुश्रूषणांपितुः ॥१६

तब उन्होंने राजकुमार को सम्पूर्ण वृतान्त कह सुनाया राजकुमार मदालसा का मरण-समाचार सुनकर शोकसागर में डूबकर शोच करने लगे कि जब उस साध्वी ने मेरा मृत्यु वृत्तान्त सुनकर ।९।१०। प्राण छोड़ दिए तो मुझ निष्ठुर को धिक्कार है, मैं नृशस और अनार्य हूँ जो उसके बिना जीवित हूँ ।११। जिसने मेरे लिए प्राण त्याग दिये, उसके बिना जीवित रहूँ तो मैं अत्यन्त निर्दय सिद्ध हूँगा, यह सोचते हुए ।१२। अत्यन्त कातर होकर दीर्घ श्वांस लेते हुए सोचा कि उसने मेरे लिए प्राण त्यागे हैं तो मैं यदि उसके लिए प्राण का त्याग करदूँ ।१३। तो यह स्त्रियों के लिए ही उचित है । यदि मैं हा प्रिये कहता हुआ बार-म्बार विलाप करूं ।१४। तो वह भी निन्दा के योग्य होगा, यदि शोक

संताप में माल्यादि का त्याग कर दूँ।१५। तो शत्रु अपदान करेंगे, मेरा एक मात्र धर्म शत्रुओं का संहार और पिता की सेवा करना है।१६।

जीवितंतस्यचायत्तं सत्याज्यंतत्कथंमया।
किंत्वत्रमेन्यत्कर्त्तव्यंत्यागोभोगस्ययोषित: ॥१७
सचापिनोपकारायतन्वंग्या: किन्तुसर्वथा।
मयानृशंस्यंकर्तव्यं नापकार्युपकारिवा ॥१८
यामदर्थेत्यजत्प्राणांस्तदर्थंल्पांमदंमश्र।
इतिकृत्वामतिसोथनिष्पाद्यौदकदानिकम् ॥१९
क्रियाश्चानंतरंकृत्वाप्रत्युवाचऋतध्वज:।
यदिसाममतन्वगीनत्याद्भार्यामदालसा ॥२०
अस्मिञ्जन्मनिनान्यामेभवत्रींसहचारिणी।
तामृतेमृपशावाक्षींगधर्मतनयामहम् ॥२१

मेरे जीवन का अवलम्ब यही है, इसलिए प्राण त्याग कदापि उचित नहीं है, यदि मैं अन्य स्त्री के गमन का त्याग करूँगा।१७। तो भी उस का कोई उपकार न होगा, परन्तु उपकार हो या अपकार मुझे तो इसी नृशंस आचरण का पालन करना होगा।१८। जिसने मेरे लिए प्राण त्यागा है, उसके लिए यह कार्य सामान्थ है। ऐसा निर्णय कर राजकुमारने जलदानादि करके।१९। तथा सब सत्कार से निवृत होकर कहा कि जब मेरी पत्नी मदालसा ही नहीं है।२०। तब इस जन्म में कोई अन्य नारी मेरी सहधार्मिणी नहीं हो सकती, मैं सत्य कहता हूँ कि मैं उस गंधर्व की सुता के अतिरिक्त अन्य स्त्री से समागम नहीं करूँगा।२१।

नभोक्ष्येयोषितंकांचिदितिसत्यं मयोदितम्।
सधर्मचारिणींपत्नींतांमुक्त्वागजगामिनीम् ॥२२
कांचिन्नान्यांकरिष्यामितेनसत्यंमयोदितम्।
एवंसर्वान्परित्यज्यस्त्रीभोगांस्तालसर्वदा ॥२३
क्रीडन्नास्तेसमंतुल्यैर्वयस्य: शीलसंपदा।
एतत्तास्यपरंकार्यंतातत्केनसाध्यते ॥२४

कर्तुं मर्त्यं तदुःष्प्राप्यमश्वरैः किमुतेतरैः ।
इतिवाक्यं योः श्रुत्वाविमर्शं नगमत्पिता ॥२५
विमृश्यचाहृतोपुत्रोनागरट्प्रहृन्निव ।
यद्यशक्यमितिश्रुत्वानकरिष्यंतिमानवाः ॥२६
कर्मण्युद्यमनुद्योगहान्याहानिस्तः परम् ।
आरभेतनरः कर्मस्वपौरुषमहापयन् ॥२७
निष्पत्तिः कर्मणांदैवेपौरुषेचव्यवस्थिता ।
तस्मादहं तथायत्नं करिष्येपुत्रकार्यत्तः ॥२८

मैं उस सद्धर्म का आचरण करने वाली भार्या को छोड़कर किसी दूसरी नारी को स्वीकार नहीं करूँगा । नागपुत्रों ने कहा—हे तात ! मदालसा के अतिरिक्त वह सम्पूर्ण स्त्री-संग त्याग कर ।२२।२३। अपने स्वभावादि में सम्मान तथा समवयस्कों के साथ क्रीड़ा करते रहते हैं उनके हित में यही एक प्रमुख कार्य है, जिसमे किसी का वस नहीं चल सकता ।२४। क्योंकि यह ईश्वर के लिए भी दुष्प्राप्य हैं तो मनुष्य की तो बात ही क्या है ? उनकी बात सुनकर नागराज अश्वतर विचार-मग्न हो गए ।२२। और फिर हँसते हुए उन्होंने अपने दोनों पुत्रोंसे कहा—सामर्थ्य से परे होने के कारण जो मनुष्य उद्योग नहीं करते ।२६। उससे उनकी अत्यन्त हानि होती है अपने पौरुष को नष्ट करके ही मनुष्य कार्यारम्भ करते हैं ।२७। परन्तु दैव या पौरुष में ही कर्म की निष्पत्ति है, इसलिए हे पुत्रो । जिस प्रकार यह कार्य बन सके, मैं वह कार्य करूँगा ।२८।

तपश्चर्यांसमास्थाययथैतत्साध्यतेचिरात् ।
एवमुक्त्वासनागेंद्रः प्यक्षावतरणागिरेः ॥२९
तीर्थंहिमवतोगत्वातपस्तेपेसुदुश्चरम ।
तुष्टाववारिभरिष्टाभिस्तत्रदेवींसरस्वतीम् ॥३०
तन्मनानियताहारोभूत्वातिषवगणप्लुतः ।
जगद्धात्रीसहं देवोमारिराधायिषुः शुभाम् ॥३१

स्तोष्येप्रणम्यशिरसाब्रह्मयोनिसरस्वतीम् ।
सदसद्दवियत्किंचिन्मोक्षवधार्थवत्पदम् ॥३२
तत्सर्वंत्वम्यसंयोगंयोगवद्देविसंस्थितम् ।
स्वमक्षरं परदेवियत्रसर्वंप्रतिष्ठितम् ॥३३
अक्षरं परमंब्रह्मजगच्चैतत्क्षरात्तकम् ।
दारुण्यवस्थिततोवह्निर्भौमाश्चपरमाणवः ॥३४
तथात्वयिस्थितब्रह्मजच्चेदमशेषतः ।
ओंकारक्षरुसंस्थानंयत्त्देविस्थिरास्थिरम् ॥३५

मैं तपस्या के द्वारा इसे शीघ्र करने का यत्न करूँगा, ऐसा कह कर नागराज अश्वतर हिमालय के प्लक्षावतरणा नामक तीर्थ मे जाकर ।२६। दुष्कर तप करने लगे, परिमित भोजन तीनों समय स्नान और वाणी द्वारा सरस्वती का स्तवन करते हुए अश्वतर ने कहा—मैं जग-जननी भगवती की अराधनाकी इच्छासे ।३०।३१। ब्रह्म स्नान सरस्वती को प्रणाम पूर्वक स्तुति करता हूँ, हे देवी ! मोक्ष अथवा अर्थ संयुक्त सत् असत् रूप जो पद हैं ।३४। वह सभी आपमें संयुक्तन होकर संयुक्त के महान् ही अवस्थित रहते हैं । हे देवी ! आप परम अक्षर हैं आप में सब प्रतिष्ठित हैं ।३३। सभी अक्षर परमाणु के तुल्य आप में स्थित हैं । अक्षर रूप परब्रह्म और क्षरात्मक जगत् भी तुम मे प्रतिष्ठित हैं, जैसे अग्नि के सभी परमाणु काष्ठ मे रहते हैं वैसे ही ब्रह्म और विश्व मे तुम ही विद्यमान है ।३४ ।३५।

तत्रमात्रात्रयं सर्वमस्तियद्देविनास्तिच ।
त्रयो लोकास्त्रयोदेवास्त्रैविद्यं पावकत्रयम् ॥३६
त्रीणिज्योतींषिवर्गाश्चत्रयोधर्मादयस्तथा ।
त्रयोगुणास्त्रयः शब्दास्त्रयोदोषास्तथाश्रमाः ॥३७
त्रयः कालास्तथावस्था पितरौहर्निशादयः ।
एतन्मात्रात्रयदेवितवरूपं सरस्वति ॥३८
विभिन्नदर्शिनामाद्य ब्रह्मणोहिसनातना ।
सोमसंस्थाहविः संस्था पाद संस्थाश्चसप्तयाः ॥३६

तास्त्वदुच्चारणाद्देविक्रियतेब्रह्मवादिभिः ।
अदिर्देस्यंतथाचान्यदर्द्धमात्राश्रितंपरम् ॥४०
अविकार्यक्षयंदिव्यं परिणामविवर्जितम् ।
तवैवचपरंरूपंयन्नशक्यंभगेरितुम ॥४१
नचास्येननवाजिह्वातातात्वोष्ठादिभिरुच्यते ।
इन्द्रोपिवसवोब्रह्माचन्दार्कोज्योतिरेवच ॥४२

ओंकार, अक्षर संस्थान,स्थिर, अस्थिर अर्थात सत् असत् तुम्हीं में विद्यमान रहते हैं, तीनलोक, तीन वेद, तीन विद्या ।३६। तीन अग्नि तीन ज्योति तीन वर्ग, तीन धर्म, तीन गुण, तीन शब्द, तीन दोष, तीन आश्रम ।३७। तीन काल, तीन अवस्था, पितर तथा दिन रात्रि इत्यादि कितनी भी वस्तुएं तीन मात्रा स्वरूप हैं ।३८। तथा पृथक्-पृथक् सम्प्रदायक वाले पुरुषों को आद्य और सनातन सप्त विधि व्याहृति का वेद में निरूपण हुआ है ।३६। वह सब तुम्हारे ही कीर्तन में ब्रह्मवादी समाहित करते हैं । हे माता ! इसके अतिरिक्त आपका जो एक और परम रूप हैं, जिसे अर्द्धमात्रा कहते है ।४०। वहभी इसी प्रकार विकार रहित, क्षय रहित और शेष रहित है, हे माता ! मैं इतना शक्तियुक्त नहीं हूँ कि आपके इस परम रूप का निरूपण कर सकूँ ।४१। क्योंकि उसका मुख जिह्वा, तालु तथा ओष्ठादि से उच्चारण सम्भव नहीं, इन्द्र सूर्य अथवा अन्य ज्योतिर्मय पदार्थ उसी के रूप हैं । २।

विश्वावसविश्वरूपंविश्वेशपरमेश्वरम् ।
सांख्यावेदांतवेदोक्तंबहुशाखास्थिरीकृतम् ॥४३
अनादिमध्यनिधनंसदन्नः सदेवतु ।
एकत्वनेकमप्येकभववेदसमाश्रितम् ॥४४
अनाख्यंषडगुणख्यंचषट्काख्यंत्रिगुणाश्रम् ।
नानाशक्तिमतांमकंशक्तिवैभाविकंपरम् ॥४५
सुखासुखमहत्सौख्यं रूपंतवविभाव्यते ।
एवंदेवित्वयाव्याप्तंसकलंनिष्कलंजगत् ।

अद्वैतात्रस्थितंब्रह्मयच्चद्वैतेव्यवस्थितम् ।
येर्थानित्यायेविनश्य तिचान्येवात्थूलायेचसूक्ष्माच्चसुक्ष्माः ।
येवाभूमौयेन्तरिक्षेन्यतोवातेषांसत्य त्वत्तएवोपलब्धिः ।।४७
यच्चामूर्तयच्चमूर्तसमस्तन्यद्वाभूतेकमेकर्चाकिंचित् ।
यद्दिव्येस्तिक्ष्मातलेखेन्यतोवातत्सम्बधनयत्स्वरव्यंजनैश्च ।४८
एवस्तुतातदादेवीष्यार्जिह्वासस्ती ।
प्रत्युवाचमहात्मानंनागमश्वतरतत: ।।४६

वही विश्व स्थान,ईश्वर एवं परब्रह्म है, साँख्य वेदान्त और तर्क में जिसका वर्णनहुआ तथा वेदकी अनुक शाखाओं द्वारा जिसे स्थिर किया गया ।४३।तथा जिसका न आदि न मध्य अथवा अन्त भी नहीं है, जो सत् असत् रूप है तथा संसार भेद से अनेक रूप और विभिन्न प्रकार वाला है। ।४४। जिसकी आख्यागुण षटक् और कर्म है तथा जो त्रिगुणालम्बी और शक्तिमानों की शक्ति के परम वैभव से सम्पन्न है।४५।एवं सुख असुख और महासुखरूप है, हे माता ! तुममें वह सभी लक्षित होता है। इस प्रकार सम्पूर्ण कलायुक्त एवं कलातीत विश्व तुम्हारे द्वारा व्याप्त होरहा है।४६। तथा द्वैतावस्थित या अद्वैतावस्थित ब्रह्म भी तुम्हारे द्वारा ही व्याप्त है, जो नित्य, अनित्य, स्थूल या सूक्ष्म, पृथ्वी, अन्तरिक्ष अथवा अन्यत्र विद्यमान है तुमसे ही उसकी प्राप्ति होती है।४७। जो मूर्त्त या अमूर्त्त है, सब प्राणियो में विद्यमान है, स्वर्ग पृथ्वी, अन्तरिक्ष अथवा अन्य सभी स्थानोंमें जिसका निवास है, उन सब पदार्थों का ज्ञान तुम्हारे ही स्वर व्यंजन द्वारा होता है।४८।नागराजद्वारा इस प्रकार स्तुतहुईसरस्वती ने उनसे कहा।४६

वरन्तेकम्बलभ्रातः प्रयच्छाम्युरगाधिप ।
तदुच्यतांप्रदास्यामियत्तेमनसिवर्त्तते ।।५०
साहायंदेविहित्वंपूर्वंकम्बलमवच ।
समस्तस्वरसम्दद्धमुभयोः सम्प्रयच्छच ।।५१
सप्तस्वराग्रामरागाः सप्तपन्नगसत्तम ।
गीतकानिचसप्तैव तावतावत्यश्चापिमूर्च्छनाः ।।५२

तानाश्चैकोनपंचाशत्तथाग्रामत्रयं चयत् ।
एतत्सर्वंभवान्वेत्ताकम्बलश्चैवतेनध ॥५३
ज्ञानस्यतेमत्प्रसादेनभुजंगेन्द्रपरतथा ।
चतुर्विधं परं तालं त्रिः प्रकारं लयत्रयम् ॥५४
गतित्रयंतथातालंमयादत्तं चतुर्विधम् ।
एतद्भवान्मत्प्रसादात्पन्नगेंद्रापरं चयत् ॥५५
आस्यांनर्गतमयात्तं स्वरव्यंजनयोश्चयत् ।
तदशेषमयादत्तं भवतः कम्बलस्यच ॥५६

सरस्वती बोली—हे उरगाधिप ! मैं वर देने को उद्यत हूँ, इसलिए तुम्हारी जो इच्छा हो, मांग लो, वही दूँगी ।५०। अश्वतर ने कहा—हे माता ! मेरे पूर्व सहायक और कम्वल और मुझे दोनों ही को श्रुति-ग्राम और मूर्च्छनादि सब प्रदान कीजिए ।५१। सरस्वती देवी ने कहा हे पन्नग श्रेष्ठ ! तुम कम्बल दोनों ही मेरी कृपा से श्रेष्ठ गायक हो जाओगे तथा सप्तस्वर ग्राम के सप्त राग, गायन एवं मूर्च्छना ।४२।तथा उनचास तरह की ताल और तीन प्रकार का ग्राम है, तुम सभी प्रकार का गायन कर सकोगे ।५३। हे नागराज ! तुम चार प्रकार के अन्य पद तथा तीन ताल और तीन प्रकार की लय का ज्ञान भी प्राप्त करोगे ।५४। मैं तुम्हें तीन प्रकार की गति और चार प्रकार वाद्य ताल भी देती हूँ, यह तथा इनके अतिरिक्त और समस्त ज्ञान तुम्हें मेरे प्रसाद से हो जायगा ।५५। इनके अन्तर्गत स्वर, व्यञ्जनादि जो कुछ है, वह सब विषय तुम दोनों को दिया ।५६।

यथानान्यस्यभूलोकेपातालेवापिपन्नगः ।
प्रणेतारौभवंतोचसर्वस्याद्यभविष्यतः ॥५७
पातालेदेवलोकेचभूलोकेचैवपन्नगो ।
इत्युक्त्वासातदादेवीसर्वजिह्वासरस्वती ॥५८
जगामादर्शनंसद्योनागस्यकमलेक्षणा ।
तयोश्चतद्यथावृत्तं भात्रोः सर्वप्रजायत ॥ ६

द्विज्ञानमुभयोरग्र यपदतालस्वरादिकम् ।
ततः कैलासशैलेन्द्रशिखरस्थितमीश्वरम् ।।६०
गीतकैः सप्तभिर्नागौ तंत्रीलयसमन्वितैः ।
आरिराधयिषदेवमनंनांग हरंहरम् ।।६१
प्रचक्रतुः परं यत्नमुभौसंहतावाक्कलौ ।
प्रातर्निशायांमध्याह्नेसंध्यायोश्चपितत्परौ ।।६२
ततः कालेमहतास्तूयमानोवृषध्वजः ।
तुतोषगीतकैस्तौचप्राहसंगृतांवरः ।।६३

तुम स्वर्गलोक, पृथिवी और पाताल में समस्त विषय में अनुपम प्रणेता रहोगे ।५७। त्रैलोक्य में तुम्हारे समान अन्य नहीं होगा, जड़ बोला ऐसा कहकर भगवती सरस्वती ।५८। तत्काल अन्तर्धान हो गई और उनकी कृपा से यह दोनों भाई सभी विषयों के ज्ञाता हुए ।५९। पद, ताल तथा स्वरादि में उनको अनुपम सिद्ध हुई, तब उन्होंने कैलाश में स्थिर ईश्वर ।६०। अनंगहारी शिव की तन्त्रीलय युक्त सप्तस्वर से गायन पूर्वक आराधना प्रारम्भ की ।६१। वह वाणी और इन्द्रियों को संयम में करके प्रातः मध्याह्न एवं सायं त्रिकाल में शिव की उपासना में तत्पर हुए ।६१। तब देव-देव शंकर बहुत काल में प्रसन्न हुए और उन दोनों से बोले कि 'वर' माँग लो ।६३।

ततः प्रणम्याश्वतरः कम्बलेनसमंतदा ।
विज्ञापयन्महादेवं शितिकंठमुमापतिम् ।।६४
यदिनौभगवन्प्रीतोदेवदेवस्त्रिलोचन ।
ततोयथाभिलषित वरमेनं प्रयच्छनो ।।६५
मृताकबलयाश्वस्यापत्नीदेवमदालसा ।
तेनैववयंसासद्यादुहितृत्वप्रयातुमे ।।६६
जातिस्मरायथापूर्वंतद्वत्कांतिसमन्विता ।
योगिनीयोगमाताचजायतांवचनात्तव ।।६७
यथोक्तं पन्नगश्रेष्ठगर्वमेतद्भविष्यति ।
मत्प्रसादासंदिग्धं शृणचेदंभुजंगम् ।।६८

श्राद्धावसातेप्रश्नोथामध्यं पिण्डमात्मना ।
कामचेमामनुध्यायन्कुरुत्वंपितृपूजनम् ॥६६
तत्क्षणादेवसासुभ्रूर्भवतोमध्यामान्फणात् ।
समुत्पस्स्यतिकल्याणीतथारूपायथामृता ॥७०

तब कम्बल सहित अश्वतर ने प्रणाम कर पार्वती-पति भगवान शकर से निवेदन किया ।६४। हे प्रभो ! आप सर्वशक्ति सम्पन्न है, यदि आप प्रसन्न हुए हैं तो हमें यह इच्छित वर दीजिए कि ।६५। कुवलयाश्व की पत्नी मदालसा ने प्राण त्याग किया है, वह जिस अवस्था में मरण को प्राप्त हुई है, उसी अवस्था में मेरी कन्या के रूप में उत्पन्न हो ।६६। वह पूर्ववत् कान्तिमति तथा जातिस्भरा होकर मेरे गृह में जन्म धारण करे ।६७। शिवजी बोले-हे पन्नगोत्तम ! तुम्हारा कहा हुआ मेरी कृपा से अवश्य होगा, अब जो कहता हूँ उसे सुनो ।६८। श्राद्ध का समय उपस्थित होने पर पवित्र एवं सावधान मन से तुम स्वय मध्यम पिण्ड का भोजन करना तथा मेरा ध्यान करके पितरोका यजन करना ।६९। मध्यम पिण्ड का भक्षण करने से मदालसा ने जिस अवस्था में प्राण त्यागा है, उस अवस्था में तुम्हारे मध्य फण से उत्पन्न हो जायगी ।७०।

स्वयमेवोपभुंजस्वयतः सर्वंभविष्यति ।
उत्पत्स्यतेततः सातुसत्यंवैमध्यमात्फणात् ॥७१
एतच्छत्वाततस्तौतप्रणिपत्यमहेश्वरम् ।
रसानलमनुप्रप्तौपरितोषसमन्वितौ ॥७२
तथाचकृतवान्छ्रद्धं सनागः सम्बलानुजः ।
पिडंचमध्यर्मतद्वद्यथावदुपभुक्तवान् ॥७३
उपभुक्ते तत पिंडेतस्यसातनुमध्यमा ।
जज्ञे निःश्वसतः सद्यस्तद्रूपामध्यंमात्फणात् ॥७४
न चापिकथयामासकस्याचित्सभुजंगमः ।
अंतर्गृहेतांसुदतीस्त्रीभिर्गुप्तामधारयत् ॥७५

तौचानुदिनमागत्यपुत्रो नागपतेः सुखम् ।
ऋतुध्वजेनसहितौचिक्रीडातेमराविव ॥७६
एकदातुसतौप्राहसनागोश्वतरोमुदा ।
तन्मयांपूर्वमुक्तंतुक्रियतेकिनुतत्तथा ॥७७
सराजपुत्रोयुवयोरुपतारीममांतिकम् ।
किंनुनानीय वत्सावुपकारायमानदः ॥७८

तुम ऐसी कामना करके पितरों का तर्पण करो, जिससे वह जिस अवस्था में मृत हुई उसी अवस्था में श्वाँस त्यागके समय तुम्हारे मध्यम फण से निकलेगी ।७१। यह सुनकर दोनों भाई शिवजीको प्रणाम करके पाताल में गए ।७२। फिर अश्वतर ने उसी प्रकार पितर श्राद्ध करते हुए मध्यम पिण्ड का भोजन किया ।७३। अन्तमें अपने इच्छितका ध्यान करके श्वास छोड़ा तभी उनके मध्यम फण से मदालसा अपने उसी रूप में उत्पन्न हो गई ।७४। अश्वतर ने यह किसी को न वताई और मदालसा को स्त्रियों के साथ छिपा कर घरमें रखा ।७५। उधर उनके दोनों पुत्र देवकुमारों के सामने ऋतध्वज के पास आकर नित्य प्रति आनन्द पूर्वक खेलने लगे ।७७। एक दिन नागराज ने उन दोनों से कहा—पूर्व में मैंने तुमसे जो कुछ कहा था, तुम उसे क्यों नहीं करते ।७७।७८।

एवमुक्तौपुनस्तेनपुत्रौस्नेहवमातुतो ।
गात्वातस्यपुरं सख्यूरेमातेतेनधीमतः ॥७६
ततः कुवलयाश्वतकृत्वाकिंचित्कथांतरम् ।
अब्रूतांप्रणिपातेनस्वग्रहागमनंप्रति ।
तावाहनृपपुत्रोसोनन्त्रिदभवतोर्गृहम् ।
धनवाहनवस्त्रादियन्मदीयं तदेववाम् ॥८१
यस्यवांवांछितंदातुंधनरत्नमथापिवा ।
तद्दीयतांद्विजसुतौयदिवांप्रणयौमयि ॥८२
एतावताहंदैवेनवंचितोस्मिदुरात्मना ।
यद्भवद्मयांममत्वं नोमदीयेकियतांगृहे ॥८३

यदिवांमेप्रियं कार्यंयमुग्राह्योस्मिवयादि ।
तद्धनेमन गेहेचममत्वमनुकल्प्यताम् ॥८४

स्नेही पिता द्वारा ऐसा कहा जाने पर उनके दोनों पुत्र ऋतुध्वज के नगर में जाकर उनके साथ खेलने लगे ।७६। फिर उन्होने प्रीतिपूर्वक कुवलयाश्व को अपने गृह चलने का अनुरोध किया ।८०। राजकुमार बोला—मेरा गृह धन, वस्त्र, यान, आदि जो कुछ है, सब तुम्हारा ही है ।८१। यदि मेरे प्रति तुम्हारी अधिक प्रीति हुई है और मुझे जो धन, रत्न देना चाहते हो, वह दो ।८२। यदि तुम मेरे घर को अपना नहीं मानते हो तो मुझे देव बारा वंचित हुआ ही समझिये ।८३। जो मेरा प्रिय करने की इच्छा करते हो और मुझे अपना कृपापात्र मानते हो तो गृह और धन में अपनत्व रखो ।८४।

युवायोर्यन्मदीय तन्मामकंयुवयोः स्वयम् ।
एतत्सर्वंविजानीयसखाप्राणोबहिश्चरः ॥८५
पुनर्नैवंविभिन्नार्थंवक्तव्यं द्विजसत्तमौ ।
मत्प्रसादपरौप्रोत्याशापितौहृदयेनमे ॥८६
ततः स्नेहार्द्रवदनौतावुभोनागनन्दनौ ।
ऊचतुर्नृपतेः पुत्रकिंचित्प्रणयकोपितम् ॥८७
ऋतुध्वज नसदेहोयर्थवाहभवानिदम् ।
तथवचास्मन्मनसिनात्रचित्ये मतोन्यथा ॥८८
किंत्वावयोः समपित्राप्रोक्तमेतन्महात्मना ।
द्रष्टुं कुवलयाश्वततमिच्छामीतिपुनः पुनः ॥८९
ततः कुवलयाश्वोथसमुत्थायवरासनात् ।
यथाह तानेतिववदन्प्रणाममकरोद्भुवि ॥९०
धन्योहमति पुण्योहंकोन्योस्ति सदृशोमया ।
यत्ततोमामभिद्रष्टुं करोतिप्रवथमनः ॥९१
तदुत्तिष्ठतगच्छामताताज्ञांक्षणमप्यहम् ।
नातिकांतुमिहेच्छामिपदभयांतस्यशापास्यहम् ।

तुम्हारा है, वह मेरा और मेरा है वह तुम्हारा, मेरी इस बातको

यथार्थ समझो, क्योंकि तुम मेरे बाह्य प्राण स्वरूप हो ।८५। अतएव हे विप्रो ! ऐसी भेद स्थापित करने वाली बात न कहना, मैं तुम्हें शपथ देता हूँ कि तुम प्रीतिपूर्वक प्रसन्न होओ ।८६। तब दोनों नागपुत्रोंने स्नेह सिक्त मुखसे प्रीतिपूर्वक कुछ रोष व्यक्त करते हुए कहा ।८७। हे राज-कुमार ! जो तुमने कहा है, वही हम सोचते हैं, इसमें कुछ भेद मत समझो ।८८। परन्तु हमारे पिता ने तुम्हें देखने की बारम्बार इच्छा प्रकट की है ।८९। तब कुवलयाश्व श्रेष्ठ आसन से 'स्वयं' पिताजी ने इच्छा की है' यह कहते हुए उठकर प्रणाम किया ।९०। और कहा—अवश्य ही मैं धन्य एवम् पुण्यवान् हूँ' क्योंकि मुझे देखनेके लिए स्वयं पिताजी उत्सुक हुए हैं ।९१। इसलिए चलो क्षणमात्रको भी उनकी आज्ञाका उलंघनमैं नहीं कर सकता, मैं उनके चरण स्पर्श पूर्वक तथा शपथ से कहता हूँ ।९२।

एवमुक्त्वाययौसोथसहताभ्यांनृपात्मजः ।
प्राप्तश्चगौतमीपुण्यांनिगम्यनगराद्वहिः ।।९३
तन्मध्येनययुस्तेवनागेन्द्रनृपनंदनाः ।
मेनेचराजपुत्रोऽसौपारेतस्यास्तयोर्गृहम् ।।९४
ततश्चाकृष्यपातालंताभ्यांनीतोनृपात्मजः ।
पातालेददृशेचोभौसपन्नगकुमारकौ ।।९५
फणामणिकृतोद्दयोतौव्यक्तस्वस्तिकलक्षणौ ।
विलोक्यतौसुरूपाँगौविस्मयोत्फुलल्लोचनः ।।९६
विहस्यचाब्रवीत्प्रेम्णासाधुभोद्विजसत्तमौ ।
कथयामासतुस्तौतुपितरंपन्नगेश्वर ।।९७
शांतमश्वतरनागंमाननीयदिवौकसाम् ।
रमणीयंततोपश्यत्पातालंनृपात्मजः ।।९८

यह कहकर ऋतुध्वज उनके साथ चले और नगर के बाहर जलसे परिपूर्ण गोमती नदी पर पहुँचे ।९३।उसके मध्यसे तीनों चलने लगे,राज कुमार ने समझाकि गोमती के पारही उनकाघर है ।९४। परन्तु उन्होंने राजकुमार को खींचा और पातालमे ले गए, वहाँ पहुँचकर,राजकुमारने

देखा कि दोनों नागपुत्रों ने अपना यथार्थ रूप धारण कर लिया है ।६५। फणों में स्थित मणिके प्रकाशसे उनका हृदय और स्वस्तिक चिह्न प्रकाशित हो गया, राजकुमार ने उनके स्वरूपको देखकर विस्मयसे विस्फारित नेत्रों द्वारा ।६६। हँसते हुए साधुवाद दिया, फिर देवताओं द्वाराभी स्तुत पितृदेव अश्वतर से राजकुमार के आगमनका वृत्तान्त कहा गया। राजकुमारने देखा कि पातालका वह नगर अत्यन्त रमणीकहै ।६७।६८।

कुमारैस्तरुणंवृद्धैरुरगैरुपशोभितम् ।
तथैवनागकन्याभिःक्रीडतीभिरितस्ततः ॥६६
चारुकुंडलहाराभिस्ताराभिर्गगनंयथा ।
गीतशब्दस्तथान्यवीणावेणूस्वरानुगैः ॥१००
मृदंगपणवातोद्यहारिवेश्मशताकुलम् ।
वीक्षमाणःसपातालययौशत्रुजितःसुतः ॥१०१
सहताभ्यामभीष्टाभ्यांपन्नगाभ्यामरिंदमः ।
ततः प्रविश्यतेसर्वेनागराजनिवेशनम ॥१०२
ददृशुस्तंमहात्मानमुरंगाधिपतिंस्थितम ।
दिव्यमाल्यांवरधरमणिकुंडलभूषणम् ॥१०३
स्वच्छमुक्त फललताहारिहारोपशोभितम् ।
केयूरिणमहाभागमासनेसर्वकांचने ॥१०४
मणिविद्रुमवैडूर्यजालांतरीतरूपके ।
सताभ्यांदर्शितस्तस्यतातोस्माकमसाविति ॥१०५

बाल युवा, वृद्ध सब जाति के सर्प सुशोभित हैं और उनके चारों ओर नागकन्यायें क्रीड़ा करती घूम रहींहैं ।६६। उनकेहार और कुण्डल अत्यन्त सुन्दर हैं, उनके समीप्य से तारावलि से विभूषित आकाश के समान पाताल की नगरी सुशोभित हो रही हैं। कहीं संगीत की ध्वनि, कहीं बंशी और कही वीणायें बज रहीं हैं ।१००। मृदङ्ग, पणव एवं आतोद्य के शब्द से प्रतिध्वनित सैंकड़ों रमणीक घर सुशोभित हैं। उस नगरी को देखते हुए राजकुमार अपने समवयस्क मित्रों के साथ चलरहे थे, फिर उन्होंने नागराज के स्थान में प्रवेश करके ।१०१।१०२। उन्हें

वहाँ निवास करते देखा, उनका दिव्य विछौना, दिव्य माला तथा दिव्य मणिमय कुण्डल शोभायमान हैं ।१०३। स्वच्छ मनोरमहार से अत्यन्त सुशोभित, हाथों में केयूर धारण किये हुए वह स्वर्ण सिंहासन पर बैठे है ।१०४। मणिमूँगावैदूर्य आदि के कारण उनका प्राकृती स्वरूप ढक गया है, सखाओं ने राजकुमार से कहा कि हमारे पिता यही हैं ।१०५।

वीरःकुवलयाश्वोयंपित्रेचासौनिवेदितः ।
ततोननामचरणौनागेनद्रस्यऋतध्वजा ।।१०६
समुत्थाप्यबलाद्‌गाढ़ंमनागःपरिषस्वजे ।
मूर्ध्निचैवमुपाघ्रार्याचरंजीवेत्युवाचह ।।१०७
निहतामित्रवर्गश्चपित्रोःशुश्रूणकुरु ।
वत्सधन्यस्यकथ्यतेपरोक्षस्यापितेगुणाः ।।१०८
भवतोममपुत्राभ्यामाभ्यायेमेनिवेदिता ।
तदेतरेत्रवद्धे थामनोवाक्कायचेष्टितैः ।।१०९
जीवितंगुणिनःश्लाध्यजीवन्नपिमृतोऽगुणी ।
गुणवान्निभर्वृतिपित्रौःशत्रूणांहृदयेज्वरम् ।।११०
करोत्यात्महृतंकुर्वन्विश्वासैचमहाजने ।
देवताःपितरौविप्रामित्रार्थिवभवदयः ।।१११
बांधवाश्चतथेच्छतिजीवितगुणिनश्चिरम् ।
परवादनिवृतानांदुर्गतेषुदयावताम् ।।११२

फिर पिता से कहा कि यही वीर कुवलयाश्व है, तब ऋतध्वज ने नागराज के चरणों में प्रणाम किया ।१०६। नागराज ने राजकुमार का आलिंगन कर शिर सूँघते हुए कहा—चिरंजीवी होओ ।१०७। तथा शत्रु कुल का विनाश करते हुए माता-पिता की सेवा करो । तुम धन्य हो, मेरे पुत्र तुम्हारे पीछे भी तुम्हारे आलौकिक गुण ।१०८। गाया करते, इससे भी तुम्हारा मन, वाणी, शरीर और चेष्टा की सर्वांश मैं वृद्धि होगी ।१०९। गुणवान पुरुष ही प्राण धारण के योग्य हैं, जो गुणहीन हैं, वह जीवित रहकर भी मरे हुए के समान हैं । क्यों कि गुणवान् पुरुष माता-पिता को शान्ति देते और शत्रुकुल को संतत

करते हैं ।११०। महाजनों के विश्वास की प्राप्त करके अपना कल्याण साधन करते हैं, देव, पितर, ब्राह्मण, मित्र, प्रार्थी एवं विभव इत्यादि। ।१११। बंधुजन गुणवान् के ही दीर्घजीवी होने की कामना करते हैं, गुणवान् व्यक्ति बुरे कर्म करने वालों को निवृत्त करते और दुःखियों के प्रति दया प्रदर्शित करते हैं ।११२।

गुणिनांसफलंजन्मसश्रितानांविद्गतैः ।
एवमुक्त्वासतंवीरपुत्राविदमथाब्रवीत् ।।११३

पूजांकुवलयाश्वस्यकत्तु‚कामोभुजंगमः ।
स्नांनादिकक्रमंकृत्वासर्वमेवयथाक्रमम् ।।११४

मधुपानादिसभोगमाहारचथथेप्सितम् ।
ततःकुवलयाश्वेनहृदयोत्सवभूतया ।।११५

कथयास्वल्पककालस्थास्यामोहृष्टचेतस ।
अनुमेनेचतंमौनीवचःशत्रु‚जित सूतः ।।११६
तथाचकारचपतिःपन्नगानामुदारधीः ।।११७

समेत्यतैरात्मजभूपनदनैर्महोरद्वाणामधिपःससत्यवाक् ।
मुदायुतौन्नानिमधूनिचात्मवान्यथोपजीषंवुभुजेसभोगभाक् ।११८

दुःखियों के आश्रयदात होने से भी उनका जन्म सफल है, ऐसा कह कर राजकुमार का पूजन करने लगे तथा अपने दोनों पुत्रों से बोले कि हम सब एकत्र होकर स्नानादिसे निवृत्त होकर।११३। इच्छानुसारमधु-पान एवं आहार भक्षण कर कुवलयाश्व सहित उत्सुक पूर्वक ।११४। प्रसन्न मन से रहेंगे, इस पर कुवलयाश्व ने मौन रहकर ही उनकीबात का अनुमोदन किया ।११६। फिर उदारचेता नागराज ने उसके अनुरूप कार्यारम्भ किया ।११७। सत्यभाषी नागराज अश्वतरके दोनों पुत्र राज-कुमार के साथ प्रसन्नचित्त से अन्नमधु का सेवन करने लगे ।११८।

२२—कुवलयाश्व को पुनः मदालसा प्राप्त

कृताहारंमहात्मानमधिपंपवनाशिनाम् ।
उपासांचक्रिरेपुत्रौभूपालतनयस्तथा ॥१
कथाभिरनुरूपाभिःप्रहृष्टात्माभुजंगमः ।
प्रीतिसंजनयामासपुत्रसख्युरुवाचह ॥२
तवभद्रसुखंब्रू हिगेहमभ्यागतम्ययत् ।
कर्तव्यमुत्सृजाशंकापितरीवसुतेमयि ॥३
हिरण्यवासुवर्णंवावस्त्रं वाहनमासनम ।
यद्वाभिमतमत्यर्थंदुर्लभंतद्व्रणुष्वमाम् ॥४
भवत्प्रसादद्भगवन्सुवर्णादिगृहेमम ।
पितुरस्तिममाद्यापिनकिंचित्कायमीदृशैः ॥५
तातेवर्षसहस्राायुःशासतीमांवसुन्धराम् ।
तथैवत्वयिपातालनमे याञ्जोन्मुखमनः ॥६
तेसुभाग्यासुपण्याश्चयेषांपितरिजींवति ।
तृणकोटिसमैवित्तं तारुण्यंवित्तकोटिषु ॥७

जड़ बोला—फिर नागराज अश्वतर के भोजन कर लेने पर उनके दोनों पुत्र और राजकुमार उनकी उपासना में लगे ।१। तब नागपति अश्वतर ने अनुरूप वचनों से राजकुमार को प्रसन्न करते हुए कहा हे भद्र ! ।२। तुममेरे गृह आये हो । जैसे शङ्कारहित होकर पुत्र अपने पिता से बातें करता है वैसे ही तुम भी करो, मुझे बताओ कि मैं तुम्हारा कौन-सा प्रिय कार्य करूँ ।३। इन बातों को स्वच्छन्द होकर कहो,स्वर्ण रजत, वस्त्र वाहन अथवा जो कुछ इच्छित हो, वह यदि दुर्लभ भी हो तो मुझसे माँग लो ।४। कुवलयाश्व बोला—हे भगवन् ! आपकी कृपा स मेरे पिता के गृहमे स्वर्णादि सब वस्तुयें हैं,मुझे अभीतक ऐसे किसी वस्तु की आवश्यकता प्रतीत नहीं हुई ।५। मेरे पिता सहस्र वर्ष हुए, जब इस पृथ्वी पर शासन करते थे और आप भी पाताल मे निवास करते थे, तब कभी भी मेरा मन प्रार्थना मे प्रवृत्त नहीं हुआ ।६। जिनके पिता

जीवित हैं, वह पुरुष धन्य है इसलिए युवावस्था में करोड़ संख्या धनको भी जो तिनके के समान मानते हैं, वह परम पुण्यवान् महापुरुष हैं ।७।

मित्राणितुल्यशिष्टानितद्वद्देहमनामयम् ।
जनेत्राधितेवित्तंयौवनकिंतुनास्तिमे ॥८
असत्पथैनृणांयाञ्चाप्रवणंजायतेमनः ।
सत्यशेषेकथंयाञ्चांममजिह्वाकरिष्यति ॥६
यैनेचित्यंधनंकिंचिन्ममगेहेस्तिनास्तिवा ।
पितृबाहुतरुच्छ यांसश्रिताःसुखिनोहिते ॥१०
येतुबाल्यात्प्रभृत्येवविनापुत्राकुटुंबिनः ।
तेसुखास्वादविभ्रंशान्मन्येधात्रैववंचिताः ॥११
तद्वयंतत्प्रसादेनधनरत्नादिसंचयम् ।
पितृभक्ताःप्रयच्छामःकामतोनित्यमर्थिनाम् ॥१२
तत्सर्वमिहसंप्राप्तयदंध्रियुगलंतव ।
मच्चूड़ामणि नाघृष्ठंयच्चांगस्पर्शमाप्तवान् ॥१३
इत्येवंप्रश्रितंवाक्यमुक्तपन्नगसत्तमः ।
प्राहराजसुतंप्रीत्यापुत्रयोरुपकारिणम् ॥१४

मेरे मित्र उचित शिष्टाचार से युक्त हैं, मेरा देह युवा एवं रोग रहित है, तो मेरे पास क्यों नहीं है ।८। मेरा पिता विलक्षण धन से संपन्न हैं, जिनके पास धन नहीं, वही याचना में प्रवृत्त होते हैं मेरे यहाँ प्रचुर धन होने से मेरी जिह्वा याचना क्यों करें ? ।६। घर में धन हो या न हो, जो पिता रूपी वृक्ष की भुजलताओं के आश्रित है, उन्हें कोई चिन्ता नहीं होती, क्योंकि यथार्थ रूप सुखी वही है ।१०। परन्तु बाल्य काल से ही पितृहीन होकर परिवार कल्याण के भरण पोषण में व्यस्त होते हैं उन्हें विधाता ने सुख से वंचित कर दिया है ।११। आपकी कृपा मैं अपने पिता के द्वारा प्रदत्त असंख्य धन-रत्नादिकों याचकों को देता ।१२। फिर जब अपनी चूड़ामणि के द्वारा आपके चरणारविन्दों का स्पर्श किया है और आपका संग लाभ हुआ तो मुझे निःसंदेह सम्पूर्ण

लाभ हो गए हैं ।१३। ऐसे वचन सुनकर नागराज अपने पुत्रों के हितमें तत्पर उस राजकुमार से बोले ।१४।

यदिरत्नसुवर्णादिमत्तोवाप्तुं नतेमनः ।
यदन्यन्मनसःप्रीत्यैब्रूहितत्तं ददाम्यहम् ॥१५
भगवंस्त्वेत्प्रसादेनप्रार्थितस्यगृहेमम ।
सर्वमस्तिविशेषेणसंप्राप्तं तवदर्शनात् ॥१६
कृतकृत्योस्मिचंतेनसफलजीवितंमम ।
यगदंसंश्लेषमितस्तदेवस्यमानुषः ॥१७
ममोत्तमांगेत्वत्पादरजसार्यादहास्पदम् ।
कृततेनंवनप्राप्तंकिंमयापन्नगेश्वर ॥१८
यदित्ववश्यंदातव्योवरामेमनसेप्सितः ।
तत्पुण्यकर्मसंस्कारोहृदयान्माव्यपैतुमे ॥१९
सुवर्णमणिरत्नादिवाहनंगृहमासनम् ।
स्त्रियान्नपानं पुत्राश्चचारुमाल्यानुलेपनम् ॥२०
एतेचविविधाभोगागींतवाद्यादिकचयत् ।
सर्वमेतन्ममतंफलंपुण्यवनस्पतेः ॥२१
तस्मान्नरेणतन्मूलसेकेयत्नःकृतात्मना ।
कर्त्तव्यःपुण्यसक्तानांनकिंचिद्भुव दुर्लभम् ॥२२

स्वर्ण रत्नादि की कामना न होते हुए भी जिससे तुम्हारे अन्तर की प्रीति का संचार हो सके, वह विषय मुझसे कहो, उसे मैं प्रदान करूँगा ।५। कुवलयाश्व बोले—भगवन् ! मेरे गृह में आपकी कृपा से सम्पूर्ण प्रार्थनीय वस्तुएँ विद्यमान हैं, तथा आपका दर्शन लाभ करने से समस्त वस्तुएँ ही मुझे मिल गयीं हैं ।१६। आप देवता के अंग संग का लाभ करके मैं अपने को धन्य मानता हूँ इससे मेरा जीवन धारण करना भी सफल हुआ है ।७। हे नागेश्वरी ! आपके चरणरज ने मेरे मस्तक पर निवास किया है, इसमे मुझे क्या प्राप्त नहीं हुआ ? ।८। तो भी यदि आप मुझे इच्छित वर देना चाहते हैं तो यही दीजिए कि मेरे हृदय से कभी पुण्यकर्म के संस्कार न निकले ।१९। स्वर्ण,

मणि, रत्न, वाहन, घर, आसन, स्त्री, पुत्र,अन्न, रस, माला, अनुलेपन ।२०। तथा गायन-वादन आदि सब वस्तुयें पुण्य का ही फल हैं ।२१। इसलिये कृतचित्त होकर उसी की जड़ सींचनी चाहिए, पुण्य में आसक्त मनुष्यों के लिए पृथ्वी मे कोई वस्तु दुर्लभ नहीं है ।२२।

एवंभविष्यतिप्राज्ञतवधर्माश्रितामतिः ।
सत्यंचैतत्फलंसर्वधर्मस्योक्तंयथात्वया ।।२३
तथाप्यवश्यंमद्गेहमानतेनत्वयाधुना ।
ग्राह्यंयन्मानुषेलोकेदुष्प्रापंभवतोमतम् ।।२४
नस्यतद्वचनंश्रुत्वा सतदानृपनन्दनः ।
मुखावलोकनंचक्रेपन्नगेश्वरपुत्रयोः ।।२५
ततस्तौप्रणिपत्योभौराजपुत्रस्ययन्मतम् ।
नत्पितुःसकलंवीरौकथयामासतुःस्फुटम् ।।२६
तालास्यपत्नीदयिताश्रुत्वेमंविनिपातितम् ।
अत्यजद्दयिताप्राणान्विप्रलब्धादुरात्मना ।।२७
केनापिकृतवैरेणदानवेनकुबुद्धिना ।
गंधर्वराजस्यसुतानाम्नाख्यातामदालसा ।।२८

अश्वतर बोले—ऐसा ही होगा,तुम्हारा मन सदा पुण्य कार्योंमें रहेगा तुम्हारा सब कथन सत्य है,धर्म का एकमात्र फल यही है ।२३। फिर भी जब तुम मेरे गृहपर आयेही तो मृत्युलोकमेंजो तुम्हें दुष्प्राप्यहो वह अवश्य लेना चाहिए ।२४। जड़ बोला—नागराज का वचन सुनकर राजकुमार ने उनके पुत्रोंके मुख की ओर देखा ।२५। तब उन दोनों ने अपने पिता को प्रणाम करके राजकुमार की कामना को स्पष्ट रूप से कहा ।२६। दोनोंपुत्र बोले-इनकी प्रियतमाने किसीदुरात्मा दानवद्वारा छलपूर्वक इनकी मृत्युका समाचार पाकर प्राण त्याग किया है ।२७। उस दानवने शत्रुतावसही ऐसा किया था, इनकी पत्नीका नाम मदालसाथा, वह गंधर्वराजकी पुत्रीथी२८

कृतज्ञोयंततस्तातप्रतिज्ञांकृतवानिमाम् ।
नान्याभार्याभवित्रीमेवर्जयित्वामदालसाम् ।।२९

द्रष्टुनांचारुसर्वांगीमयंवीरोऋतध्वजः ।
तातवांछतियद्येतत्क्रियतेतत्कृतभवेत् ॥३०
भूतैर्वियोगिनोयोगस्ताप्रेशैरेवताद्दशः ।
कथमेतद्विनास्वप्नमायांवाशंवरोदिताम् ॥३१
प्राणपयत्यःभुजगेशपुत्रशत्रुजितस्ततः ।
प्रत्युवाचमहात्मानंप्रेमलज्जासमन्वितः ॥३२
मायामयोमप्यघुनाममतातोमदालसाम् ।
यदिदर्शयतेमन्येपरंकृतमनुग्रहम् ॥३३
तस्मात्पश्येहदत्वमायांचेद्द्रष्टुमिच्छसि ।
अनुग्राह्योभवान्गेहेबालोप्यभ्यागततोगुरु ॥३४
आनयामासनागेन्द्रोगृहेगुप्तांमदालसाम् ।
दर्शयामासचतदाराजपुत्रायतांशुभाम् ॥३५

मदालसा के मरने पर, उसके प्रति कृतज्ञता प्रकाश करने के लिए इन्होंने प्रतिज्ञा की है कि उसके अतिरिक्त अन्य किसी नारी को पत्नी नही बनाऊँगा ।२९। यह उस सर्वांग सुन्दरीके दर्शन को अत्यंत लालायित हैं यदि ऐसा हो सके तो इनका यथार्थ उपकार हो सकता है ।३०। अस्वतर बोले पंचभूतात्मः देह का वियोग होने पर पूर्ववत् संयोग आसुरी माया के अतिरिक्त अन्य प्रकार से संभव नहीं ।३१। यह सुनकर ऋतुध्वजने नागराज को प्रणाम किया और लज्जा सहित कहा ।३२। हे तात ! यदि आप उस मदालसा को मायापूर्वक ही मुझे दिखा सकें तो मैं उसे परम अनुग्रह ही समझूँगा ।३३। अश्वतर ने कहा—हे वत्स ! यदि तुम माया देखना चाहते तो अनुग्रह के पात्र होने के कारण देखो, यद्यपि तुम बालक होकर यहाँ आये हो फिर भी अतिथि होने के कारण गुरुके समान सन्मान के योग्य हो ।३४। नागराज ने यह कहकर घर में छिपी हुई मदालसा को वहाँ बुलाकर राजकुमार को दिखाया ।३५।

तेषांसमोहनार्थायजजल्पचततःस्फुटम् ।
सेयनवेतितेभार्याराजपुत्रमदालसा ॥२६

सहृष्ट्वातातदातन्वींतत्क्षणाद्विगतत्रप ।
प्रियेतितामभिमुखययौवाचमुदीरयन् ।।३७
निवारयामासचतंनागःसोश्वतरस्त्वरन् ।
मायेय पुत्रमास्प्रक्षीःप्रागेवकथितैतव ।।३८
अंतर्द्धानमुपैत्याशुमायासंस्पर्शनादिभिः ।
ततःपपातमेदिन्यांसतुमूर्च्छापरिप्लुतः ।।३९
हाप्रियेतिवदन्मोर्थचितयामासभामिनीम् ।
माहाममयंनोवेतिनालंप्रत्ययवानहम् ।।४०
अहोममेत्यहच्चेतिबलप्रत्ययोमंहत् ।
येनाहपातनारीणांविनाशस्त्रंनिपातितः ।।४१
ममेतिदर्शितानेनमिथ्यामायेतिविस्फुटम् ।
वाय्वंबुतेजसांभूमेराशाशस्यचचेष्टया ।।४२

तथा सबको मोहित करने के लिए मंत्रोच्चारण पूर्वक मदालसाको दिखाते हुए राजकुमार से कहा—हे वत्स ! तुम्हारी भार्या मदालसा यही है इसे तुम देखो ।३६। उसे देखते ही राजकुमार लज्जा त्यागकर 'प्रिये' कहते हुए तत्काल उसके सामने पहुँचे ।३७। अश्वतर ने उन्हें निषेध करते हुए कहा-हे वत्स ! यह माया है, इसे स्पर्श मत करना, यह मैं पहिले ही कह चुका हूँ ।३८। स्पर्शादि से माया तत्काल नष्ट हो जाती है, ऐसा सुनकर ऋतध्वज मूर्छित होकर पृथ्वी में गिर पड़े ।३९। फिर हा, प्रिये ! कहते हुए बोले-क्या मुझे मोह हो गया है अथवा कुछ और बात हैं, यह बात समझ में नही आती है ।४०। परन्तु मुझे बल पूर्वक निश्चय हैं कि यह मेरी ही है जिसने मुझे बिना शास्त्र मारा है ।४१। वह मिथ्यामाया ही मुझे दिखाई है, अथवा यह वायु, जल, तेज या आकाश की कोई चेष्टा है ? ।४२।

ततःकुवलयाश्वंसमाश्वास्यभुजंगम ।
कथयामासतत्सर्वंमृतसंजीवनादिकम् ।।४३
ततःप्रहृष्टप्रतिलभ्यकांतांप्रणम्यनागंनिजमाजगाम ।
सस्तूयमानःस्वपुर तमश्वमारुह्यसंचिंतितमभ्युपेतम ।।४४

श्रृणुयाद्भक्तिपूर्वयोनैरंतर्यैणामानवः ।
वेदघोषफलतेनप्राप्तंवैभुविदुर्लभम् ॥४५
संप्राप्नोतिसुखनित्यंसर्वकामसमन्वितः ।
लोकेवदुर्लभंतस्यनास्तिकिंचिन्नतीत्रहि ॥४६

जड़ बोले—फिर नागराज अश्वतर ने कुवलयास्व को समझा बुझा कर जिसप्रकार मदालसाको प्राप्त किया था वह सम्पूर्ण वृत्तान्त सुनाया ।४३। तव कुवलयाश्व को अपनी भार्या की प्राप्तिसे अत्यन्त आनन्दहुआ और उन्होंने अपने अश्व को स्मरण किया याद करतेही वह अश्व वहाँ आ गया और राजकुमार ने नागराज को प्रणाम कर भार्या सहित घोड़े पर बैठकर अपने नगर को प्रस्थान किया ।४४। जो मनुष्य इस कथा को भक्तिभाव पूर्वक सुनते हैं, वे वेद पाठ के फल को प्राप्त होते हैं, यह उपाख्यान पृथ्वी में अत्यन्त दुर्लभ है, इसमे संदेह नहीं है ।४५। सब कामनाओं की प्राप्ति एवं नित्य सुख की प्राप्ति होती है लोक में उसके लिए कुछ भी दुर्लभ नहीं होता ।४६।

२३—मदालसा का पुत्र उल्लापन

आगम्यस्वपुरंसोथपित्रोःसर्वमशेषतः ।
कथयामासतन्वंगीयथाप्राप्तापुनर्मृता ॥१
ननामसापिचरणोश्वश्रूश्वशुरयोशुभा ।
स्वजनचयथापूर्ववंदनाश्लेषणादिभिः ॥२
पूजयामासतन्वगीयथान्यायथावयः ।
ततोमहोत्सवोजज्ञेपौराणांतत्रवैपुरे ॥३
ऋतध्वजश्चसुचिरंतयारेमेसुमध्यया ।
निर्झरेषुचशैलानांनिम्नगापुलिनेषुच ॥४
काननेषुचरम्येषुवनेषूपवनेषुच ।
पुण्यक्षयंकंछमानासो पिकामोपभोगतः ॥५

सहतेनातिकांतासूरेमेरम्यासुभुमिषु ।
ततःकालेनमहताशत्रुजित्सनराधिपः ॥६
सम्यक्प्रशास्यवसुधांकालधर्ममुपेयिवान् ।
ततःपौरामहात्मानंपुत्रतस्यऋतध्वजम् ॥७
अभ्यषिचैतराजानमुदाराचारचेष्टितम् ।
सम्यक्पालयतम्तःप्रजापुत्रानिवौरसान् ॥८

पुत्र बोला—अपने नगर में पहुँचकर ऋतुध्वज ने मृतक मदालसाको जिस प्रकार पुनः प्राप्त किया वह सब वृत्तान्त अपने माता-पिता से कहा ।१। कल्याणी मदालसा ने भी अपने सास-श्वसुर के चरणों में प्रणाम पूर्वक ।२। सभी स्वजनों की यथा योग्य वंदना पूजन आदि किया और फिर नगरी में पुरवासियों ने महोत्सव मनाया ।३। तथा राजकुमार ऋतध्वज ते मदालसा के साथ पर्वत झरने नदी पुलिन ।४। वन, उपवन आदिमें बहुत समय बिहार किया मदालसाभी कामोपभोग द्वारा वासना महित ।५। सुन्दर कान्ति युक्त ऋतध्वजके साथ विविध मनोहर स्थानों में बिहार करने लगी । इस प्रकार बहुत काल व्यतीत होगया तब राजा शत्रुजित ।६। काल धर्म के वशीभूत हो गए और नगरवासियों ने उनके पुत्र ।७। उदार आचरण वाले ऋतुध्वज को राज्य पर बैठाया और वे भी भले प्रकार से प्रजा पालन में तत्पर हुए ।८।

मदालसायाःसंजज्ञपुत्रप्रथमजस्ततः ।
तस्यचक्रेपितानामविक्रांतइतिधीमतः ॥९
तुतुपुस्तेनवैभृत्याजहासचमदालसा ।
सावैमदालसापुत्रबालमुत्तानशायिनम् ॥१०
उल्लापनच्छलेनाहरुदमानमविस्वरम् ।
शुद्धोसिरेतातनतेस्तिनातकृंतते कल्पनयाधुनैव ॥११
पचात्मकंदेहमिस्तेस्तिनैवास्यत्वंरोदिषिकस्यहेतोः ।
नवाभावान्नोदितिवैस्वजन्म शुद्धोयमासद्यमहोसमूहम् ॥१२
विकल्प्यमानौविविधगुंणश्चंभौताःसवलेन्द्रियेषु ।
भूनानिभूतैःपरिदुर्बलानिवृद्धिसमायांतियथेहपुंसः ॥१३

अन्नांबुपानादिभिरेवकस्यनतेस्तिवृद्धिर्नचतेस्तिहानिः।
त्वकंचुकेशीर्यमाणेनिजेस्मिस्तस्मिन्स्वदेहेमूढतांमाव्रजेथाः।१४

इसके पश्चात् मदालसा ने प्रथम पुत्र को जन्म दिया, जिसका नाम 'विक्रान्त' रखा गया।६। पुत्र होने के कारण भृत्यगण अत्यन्त प्रसन्न हुए मदालसा हँसने लगी। उस पुत्र के पाँव पसार कर सोने पर।१०। अथवा अस्फुट स्वर से रोने पर मदालसा उससे कहती है हे पुत्र! तुम नाम विहीन का नाम करण कल्पना से ही हुआ है।११।तुम इस शरीर को पंचभूतात्मक समझो क्योंकि जैसे यह शरीर तुम्हारा नहीं है, वैसे ही तुम भी इसके नहीं हो, फिर क्यों रोते हो? यह शब्द भी स्वयं ही प्रकट होता है।१२। विभिन्न भौतिक गुण अथवा अगुण तुम्हारी इन्द्रियों में है, जैसे अत्यन्त दुर्लभ भूनगण भूत की सहायता से ही अन्न जलादि के दान से बढ़ते हैं।१३। उसके समान तुम्हारी वृद्धि अथवा क्षय नहीं है यह शरीर तो केवल अच्छादत हैं, तो क्षीण हो जायगा, इसलिए तुम तुम इसके मोह में मत पड़ना।१४।

शुभाशुभैःकर्मनिर्देहमेतन्मदादिमूढ़ोःकचुकस्तेपिनद्धः।
तातेतिकिंचित्तनयेतिकिंचिदबेतिकिंचिद्दयितेतिकिंचित।१५
मामेतिकिंचिन्नमभेतिकिंचिद्भौतसघवहुधामालपेथाः।
दुःखानिदुःखोपगमायभोगान्सुखातजानातिविमूढ़चेताः ॥१६
तान्येवदुःखानिपुनःसुखानिजानातिविद्वानविमूढचेताः।
हासोस्थिसंदर्शनमक्षियुग्ममत्युज्वलंयत्कलुषंवसायाः ॥१७
कुचादिपीनंपिशितंघनंतस्मानंरते किंनरकोनयोषित्।
यानं क्षितौयानगतश्चदेहेपिचान्यःपुरुषोनिविष्टः ॥१८
ममत्वमुर्व्यांनतथायथास्वेदेहेतिमात्रंधविमूढतैषां ॥१९
त्यजधर्ममधर्मचउभेसत्यानृतेत्यज।
उभेसत्यानृतेत्यक्त्वायेनत्यजसितत्त्यज ॥२०

शुभाशुभ कर्मसेही इसका अच्छादन हुआ समझो, पिता, पुत्र, माता, स्त्री अथवा अन्य आत्मीयजन आदि अपना कुछ नहीं है इनका अविकमानन करना मूढ़चेता पुरुष ही दुःखको दुःखनाशक तथा भोगोंको सुखकाकारण

मानते हैं ।१५।१६। अविद्या से ही अन्धेहो मोहमें पड़े हैं,वह दुःखकोसुख ही मानते हैं, स्त्री हँसनी हैंतो हड्डी दिखाई पड़ती हैं और उसके नेत्रों में बसा की कलुषना प्रतीत होती है ।१७। उसके स्तनादि भी माँसपिण्ड मात्र है, उसका गुह्य स्थान भी वैसाही है, नब क्या स्त्री साक्षात् नरक का ही स्वरूप नहीं है ? पृथ्वी में यान, यान में शरीर और शरीर में अन्य पुरुष का निवास हैं ।१८। जैसी ममता शरीर के प्रति है, वैसी पृथ्वी के प्रति भी नही है, यही मूर्खता है, क्योंकि शरीर पृथ्वी का ही सूक्ष्म अंश है ।१९। 'धर्म' अधर्म, सत्य असत्यका त्याग करो इसे त्यागने के पश्चात् जिससे त्याग किया जाय, उसे भी त्याग दो ।२०।

वर्द्धमानंपुत्रसातुराजपत्नीदिनेदिने ।
तमुल्लापादिनोबोधमनयन्निर्ममजात्मकक ॥२१
यथायथाबललेभेयथालेभेमतिंपितः ।
तथातथात्मबोधंचसोवापन्मातृभाषितैः ॥२२
इत्थतयासतनयोजन्मप्रभृतिबोधित: ।
चकारनमतिंप्राज्ञोगार्हस्थ्यप्रतिनिर्ममः ॥२३
द्वितीयोस्या:सुतोजज्ञेतस्यनामाकरोत्पिता ।
सुवाहुरवमित्युक्तेसाजहासमदालसा ॥२४
तमप्येवंयथ:पूर्ववालमुल्लादवादिनी ।
प्राहबाल्यात्सचप्रापतथाबोधमहामतिः ॥२५
तृतीयन्तनयञ्जान्तन्तराजाशत्रुमर्दनम् ।
यदाहन्तेनसासुभ्रूजहासातिचिरंपुनः ॥२६
तथैवसोपितन्वग्याबालत्वादेवबोधितः ।
क्रियाश्चकारनिष्कामानकिंचित्भलकारणम् ॥२७
चतुर्थस्यवतस्याथचिकीर्षुर्नामभूपतिः ।
ददर्शतांशुभाचारामीषद्धासांमदालसाम् ॥२८

जड़ बोला—इस प्रकार यह राजपुत्र दिनोंदिन बढ़ने लगा, रानी मदालसा भी पुत्रको खिलानेके मिस उस स्वच्छ आत्मा वालेपुत्रको ज्ञान

देने में लगी क्रम-क्रम करके पुत्र जैसे पिता के द्वारा बल वृद्धि को पाने लगा वैसेही माताके उपदेश द्वारा आत्मज्ञानभी प्राप्त करने लगा।२१-२२ जन्मसे ही माता से आत्मज्ञान विषयक उपदेश को पाकर ममता दूरहो गई और गृहस्थ धर्मके प्रति राजकुमार निस्पृह हो गये। २३।कुछ कालोपरान्त मदालसा के दूसरा पुत्र उत्पन्न हुआ, उसका नाम पिता ने सुबाहु रखा, मदालसा उस समय भी हँसी ।२४। वह उसे भी उसी प्रकार आत्मबोध देने लगी, इससे उसका मन भी ज्ञान प्राप्त करके विरक्त हो गया ।२५। फिर तीसरा पुत्र उत्पन्न हुआ तो राजाने उसका नाम शत्रूमर्दन रखा, उसे सुनकर मदालसा बहुत देर तक हँसती रही ।२६। वह इसे भी पहिले की तरह आत्मज्ञान देने लगी, जिससे यह भी कामरहित हो गया ।२७। फिर चौथा पुत्र उत्पन्न हुआ तब उसका नामकरण करने के लिए राजा ने मदालसा की ओर देखा तो वह हँस पड़ी ।२८

तामाहराजहसतोर्किंचित्कौतूहलान्वितः ।
क्रियमाणेऽसकृन्नाम्निशथ्यताहास्यकारणम् ॥२९
विक्रांतश्चसुबाहुश्चयथान्यःशत्रुमर्दनः ।
शोभनानींतिनामानितातिमन्यकृतानिवै ॥३०
योग्यानिक्षत्रबंधूनांशौर्यादर्पयुतांनिच ।
असत्येतानिवैभद्रे्यादतेमनसिस्थितम् ॥३१
तदस्यक्रियतांनामचतुर्थस्यसुत स्यमे ।
मयाज्ञाभवतःकार्यामहाराजयथात्थमाम् ॥३२
तथ नामककरिष्याभिचतुर्थस्यसुतस्यते ।
अलर्कइतिधर्मज्ञःख्यातिंलोकेगयिष्यति ॥३३
करीयानेषतेपुत्रोपतिमांश्चविष्यति ।
तच्छ्रुत्वानामपुत्रस्यकृतमात्रामहीपतिः ॥३४
अलर्कइत्यसम्बद्धं प्रहस्येदमथाब्रवीत् ।
भ गत्यायदिदंनाममत्पुत्रस्यकृतंशुभे ॥३५

किमीदृशमसम्वद्धमर्थकोस्यमदाखसे ।
कल्पनेयंमहाराजकुताव्यावहारिकी ।३६

यह देखकर राजा ने पूछा—मैं जब-जब पुत्र होने के पश्चात् नाम करणके लिए उद्यत हुआ, तब-तब ही तुम हँस पड़ती हो, इसका क्या कारण है ? ।६। मैंने इन पुत्रों के नाम विक्रान्त सुबाहु और शत्रुमर्दन रखे, यह मेरे विचार से युक्ति सङ्गत ही है ।३०। क्योंकि क्षत्रियों का नास शौर्य और दर्पसे युक्त होना ही ठीक है, फिर भी तुम्हारे विचारमे वह तीनों नाम अयुक्त हों तो ।३१। इस चौथे पुत्रका नाम तुमही रखो। मदालसा ने कहा—हे महाराज ! आपकी आज्ञा का पालन करना मेरा कर्तव्य है ।३२। इसलिए मैं आपकी आज्ञानुसार नामकरण करती हूँ, यह पुत्र भूमण्डल में 'अलर्क' नाम से प्रसिद्ध होगा ।३३। आपका यह सबसे छोटा पुत्र अत्यन्त बुद्धिमान होगा। परन्तु इस असम्बद्ध नाम को सुनकर ।३४। राजा ने हँसते हुए कहा—तुमने जो पुत्र का नाम रखा है ।३५। वह असम्बद्ध है, इस नामका क्या अर्थ है ? मदालसा ने कहा—हे राजन् ! नामुकरण तो केवल लोकाचार और नितान्त कल्पना है ।३६।

त्वत्कृतानांतथानाम्नांश्रृणुभूपनिरर्थताम् ।
वदन्तिपुरुषा प्राज्ञाव्यापिनंपुरुषंसतः ।।३७
क्रांतिश्चयतिरुद्दिदष्टादेशाद्देशांतरन्तुया ।
सर्वगोनप्रयातीहव्यापीदेहेश्वरोयतः ।।३८
ततोविक्रांतसंज्ञेयमतामनिरर्थिका ।
सुबाहुरितियासंज्ञाकृतातस्यसुतस्यते ।३६
निरर्थासाप्यमूर्त्तस्यपुरुषस्यमहीपते ।
पुत्रस्यकृतनामतृतीयस्यरिमर्दनः ।।४०
मन्येतच्चाप्यसम्बद्धश्रृणुवाप्यत्रकारणम् ।
एकएवशरीरेषुसर्वेषुपुरुषोयदा ।।४१
तदास्यराजन्कःशत्रुःकोवामित्रीमहेष्यते ।
भूतैर्भूतानिमर्द्यन्तेअमूर्त्तोमद्यते कथम् ।।४२

नाम रखना है, ऐसा समझ कर एक नाम रख लिया वैसे अपने भी जिन नामों को रखा है उनका भी कोई अर्थ नही क्यों कि पंडित जन आत्मा को सर्वव्याप्त कहते हैं।३७। एक देशके अन्य देश में जाने को क्रान्ति कहते हैं, आत्मा सर्वगत एवं सर्वव्यापी होने से शरीर का ईश्वर है, उसकी गति सम्भव नहीं।३८। इसलिये मैं विक्रान्त नाम का कोई अर्थ नहीं समझती। हे राजन्! आत्मा तो स्वरूप रहित है, फिर दूसरे पुत्र के सुबाहु नाम का भी।३९। कोई अर्थ नही है और तृतीया पुत्र का अरिमर्दन नाम भी।४०। मैं निरर्थक ही समझती हूँ क्यों कि एक आत्मा ही सब शरीरोंमें विद्यमान रहता है।४१। उसका शत्रु मित्र कोई नही हो सकता, भूतके द्वाराही भूतका मर्दन होता है,परन्तु आकार हीन का मर्दन कैसे हो सकता है?।४२।

क्रोधादी नांपृथरभग्भावात्कल्पेनेयनिरर्थिका।
यदिसंव्यवहारार्थमन्नामप्रकल्प्यते ।।४३
नानिकस्मादलर्काख्येनैरर्थ्यंभवती·त्तम्।
एवमुक्तास्तयासाधुमहिष्यासम्महीपतिः ।।४४
तथेत्याहमहाबुद्धिर्दयितांतथ्यवादिनीम्।
तंचापिसासुतसुभ्रूर्यथापूर्वसुतांस्तथा ।। ५
प्राहावबोधजननतामुवाचसपार्थिवः।
करोषिकिमिदिमूढेममाभावायसन्ततेः ।।४६
दुष्टावबोधदा नयथापूर्वसुतेषुमे।
यदितेमतिप्रियंकार्यंसनुग्राह्यंवचोमम ।।४७
तदेनन्तनयंमार्गेप्रवत्त सन्नियोजय।
कर्ममार्गःसमुच्छेदनैवदेविगमिष्यति ।।४८
पितृपिंडनिगत्तिश्चनैवसाध्विभविष्यति।
पितरोदेवलोकस्थास्तथातिर्यक्त्वमागताः ।४९
तद्वन्ममनुष्यतांयाताभूतवर्गेषुयेस्थि..ताः।
सपुण्यानसपुण्यांश्चक्षुत्क्षामांस्तृट्परिप्लुतान् ।।५०

क्रोध इत्यादि भावभीआत्मासे पृथक् हीहै, सबप्रकार निर्दोष आत्मा शत्रु का मर्दन नहीं कर सकता, यदि लोकाचार वश ही निरर्थक नाम की कल्पना की जाती है ।४३। तो मेरे द्वारा रखा गया अलर्क नाम किस प्रकार अर्वहीन हैं ? रानी ऐसे वचन कहने पर महा बुद्धिमान् राजा ने ।४४। उस सत्यभाषिणी से कहा-तुम्हारा कथन सत्य है, तब मदालसा ने चौथे पुत्र को भी उन तीनों पुत्रों के समान ही ।४५। आत्म ज्ञानदेने लगी । इस प्रकार राजाने कहा—तुम यह क्या कर रही हो क्या मेरी सन्तान को भावहीन करना चाहती हो ? ।४६। जैसे आत्मज्ञान देकरउन तीनों पुत्रोंका अमङ्गल कियाहै, क्या वैसाही इसका करोगी ! यदि तुम मेरा प्रिय करना कर्त्तव्य मानतीहो और मेरे वचन का पालन करना उचित समझती हो ।४७। तो इस पुत्र को प्रवृत्ति मार्ग में प्रेरित करो, क्योंकि कर्म में प्रवृत्त करने से कर्म मार्ग का नाश नहीं हो सकता ।४८। ऐसा करने से पिण्ड के लुप्त होने की अशंका नहीं रहेगी, क्योंकि शुभाशुभ कर्म से स्वर्ग प्राप्तिया तिर्यग् योनि को प्राप्त पितरगण ।४९। नरत्व प्राप्त अथवा अन्य योनियों में सङ्क्रमण करते हुए क्षुब्धा पिपासा से अत्यन्त व्याकुल क्षीण होते हैं ।५०।

पिंडोदकप्रदानेननर:कर्मण्यवस्थित: ।
सदाप्यायतेसुभ्रूस्तद्वद्देवातिथीनपि ।।५१
देवेर्मनुष्य:पितृभि:प्रेतेर्भूतं सगुह्यकः ।
यवोभि क्रमिभि:कीटैर्नरएवोपजीव्यते ।।५२
तस्मात्तन्वगिमेपुत्रंयत्कार्यंक्षत्रयोनिभिः ।
ऐहिकामुष्मिकायालत्तत्कर्मप्रतिपादय ।।५३
तेनैवमुक्तासासाध्वीवरनारीमदालसा ।
अलर्कनामतनयंप्रोवाचोल्लापवादिनी ।।५४
पुत्रवर्द्धस्वमेभर्त्तुर्मनोबन्दयकर्मभि: :
ऐहिकामुष्मिकफलन्तत्सम्यक्परिपालय ।
मित्राणामुपकारायदुर्हृदांनामाशनायच ।५५

धन्योसिरेयोवसुधातशत्रु रेकश्चिरंपालयितासिपुत्र ।
तत्पालनादिद्रसमाग्भोग्यधर्म्मफलप्राप्स्यसिचामरत्वम् ।५६

उस समय कर्म मार्ग के अवलम्बन से पिण्डोदक द्वारा उनका और उन्हीं के समान देवताओं और अतिथियों का पूजन करते है ।५१। क्यों कि देवता मनुष्य पितर, प्रेत भूत, गुह्यक, पक्षी, कृमि, कीटादि सभी मनुष्यो के आश्रममें जीवन निर्वाह करते हैं ।५२। इसलिये हे तन्वङ्गी ! क्षत्रियोचित कर्तव्य और इहलोक परलोक के फल लाभ के लिये जो उचित, वही शिक्षा इसे दो ।५२। पतिकी बात सुन कर मदालसा ने उस पुत्र को खिलाने के लिये कहा ।५४। हे पुत्र ! तुम वृद्धि को प्राप्त होओ, मित्रो के उपकारऔर शत्रुओं के संहार कर्म द्वारा मेरे स्वामी के हृदय को आनन्दित करो ।५५। हे 'पुत्र ! तुम धन्य 'हो' क्योंकि तुम शत्रु रहित होकर दीर्घ काल तक वसुन्धरा का पालन करोगे, जिससे सभी लोकों में सुख का संच्चार हो । और इस प्रकार परम धर्म संचय करके अमरत्व को प्राप्त होंगे ।५६।

धरामरान्पवसुतर्पयेथाःप्रमीहितम्बन्धुषुपूरयेयाः ।
हितपरस्मैहृदिचिंतयेथामनःपरस्त्रीषुनिवर्तयेथा ।।५७
सदामुरारिंहृदिचिंतयेथास्तद्धय नतोतःषडरीञ्जयेथाः ।
मायांप्रवोधेननिवारयेथाह्यनित्यतामेवविचिंतयेथाः ।।५८
अर्थागमायक्षितिपाञ्जयेथायशोर्ज्जनायार्थमपिव्ययेथा ।
परापवादश्रवणाद्विभीथाविपत्समुद्राज्जनमुद्धरेथाः ।।५९
यज्ञैरनेकैर्विबुधानजस्रमन्नैर्द्विजान्प्रीणयसंश्रितांश्च ।
स्त्रियश्चकामैरतुभैश्चिरायययुद्धैश्चारीस्तोषयितासिवीरा ।।६०
बालोमनोनन्दयवान्धवानागुरोस्तथाज्ञाकरणैःकुमारः ।
स्त्रीणांयुवासत्कुलभूषणानांवृद्धोवनेवत्सवनेचरणाम् ।।६१
राज्यंकुवसुमृदोनन्दयेथा साधून्नक्ष स्तातयज्ञैर्यजेशाः ।
दुष्टान्निघ्नन्वैरिणश्च जिमध्येगोविप्रार्थवत्समृत्युभजेयाः ।।६२

तुम प्रत्येक पर्व दिनमें ब्राह्मणकी तृप्ति करो, बन्धुजनों को इच्छित करो और परहित साधन की इच्छा करतेहुए परनारीमें मनमत लगाओ

।५७। सदा भगवान् का ध्यान करते हुए कामादि छै शत्रुओं को वश में करो,ज्ञान के द्वारा मायाको दूर करो और विश्वकी अनित्यता का सदा ध्यान रखो ।५८। अर्थ प्राप्त करते हुए पाँच वस्तुओंको जीतोऔर जीवी के लिये व्यय करो, पर निन्दासे डरो,लोगों को विपत्ति सागरसे उबारो ।५९। विभिन्न यज्ञानुष्ठानों से देवताओं को, निरन्तर दान से विप्रों को और आश्रितोंको प्रसन्नकरो, विभिन्नभोगो सेस्त्रियोंको औरयुद्ध शत्रुओ को सन्तुष्ट करो ।६०। बाल्यकाल में बांधवों का, कौमारावस्था में आज्ञा पालन द्वारा माता-पिता का, युवावस्थामे स्त्री का और वृद्धावस्थामें वन वास पूर्वक वनचरों का उपकार करो ।६१। हे वत्स ! तुम राज्य में प्रतिष्ठित होकर सुहृदोंको आनन्दित करोगे, यज्ञानुष्ठान, गौ, ब्राह्मण और साधुजन की रक्षा के लिये युद्ध में शत्रुओं को जीतकर परलोक गमन करोगे । ६२।

२० राजधर्म कथन

एवमुल्लाप्यमानस्तुसतुमात्रादिनेदिने ।
ववृधेवयसाबालोवुद्धयाचालर्कसंज्ञितः ।।१
सकौमारकमासाद्यऋतुध्वजसुतस्तदा ।
कृतोपनयनःप्राज्ञः प्रणिपत्याहमातरम् ।।२
मयायदम्बकर्त्तव्यमैहिकामुष्मिकायवै ।
सुखायवदतत्सर्वंप्रश्रयावनतस्यमे ।। ३
ममार्थेचैवधर्मार्थंप्रजानांचैवयद्धितम् ।
श्रेयसेयच्चतत्सर्वप्रजारञ्जनमादितः ।।४
वत्सराज्यभिषिक्तेनप्रजारञ्जनमादितः ।
कर्त्तव्यमविरोधेनस्वधर्मश्चसहीभृताम् ।।५
व्यसनानिपरित्यज्यसत्यमूलहराणिवै ।
आत्मारिपुभ्यःसंरक्ष्योबहिर्मन्त्रविनिर्गमात् ।।६

दुष्टादुष्टाश्चजानीयादमात्यान्रिदोषतः ।
अष्टधानाशमाप्नोतिस्वचक्रात्स्यन्दनाद्यथा ॥७
तथाराजाप्यसन्दिग्धबहिर्मन्त्रविनिर्गमात् ।
चरैश्चरास्तथाशत्रोरन्वेष्यण्याःप्रयत्नतः । ८

पुत्र बोला —माता मदलसा इस प्रकार पुत्र को नित्य प्रति उपदेश देने लगी और वह बालक बुद्धि तथा अवस्था में वृद्धको प्राप्त होने लगा ।१। कौमारावस्था प्राप्त होने पर अलर्क का यज्ञोपवीत हुआ तब उसने प्रणाम पूर्वक अपने माता से कहा ।२। हे माता ! इहलोक और परलोक के सुख के लिये मुझे जिस प्रकार का कर्म करना चाहिए उसे विस्तार पूर्वक कहिये ।३। धर्म, अर्थ प्रजाहित प्रजापालन से मोक्ष की प्राप्ति आदिका यथा योग्य वर्णन करो मदालसाने कहा-हे पुत्र ! राज्याभिषेक होनेपर धर्मानुसार प्रजाको सुखी करना ही राजाका प्रथमकर्त्तव्यहै ।४-५। सत्य सहित, व्यसनों का त्याग करके, अपना मन्त्र बाहर न जाय इस प्रकार शत्रुओं का तिरस्कार करने के कार्य में प्रवृत्त रह कर शत्रुओ से अपनी रक्षा करो ।६। शत्रुओं के मिलने मे अमात्यगण की दुष्टाया स्वामिभक्तिको जाने तथा श्रेष्ठ पहियेवाले रथसे गिरनेसे जैसे आठ प्रकार का आघात होता है ।७। वैसे ही मन्त्रणा के फूटने पर राजा को प्राप्तहोता है राजाको इसका ज्ञान अवश्य करना चाहियेकि शत्रुओं ने किसी प्रकार अमात्यवर्ग को अपनी ओर तो नही मिला रखा है ।८।

विश्वासोनतुकर्तव्योराज्ञामित्राप्तबन्धुषु ।
स्थानवृद्धिक्षयज्ञेनषाड्गुण्यविदितात्मना ।
भवितव्यंनरेन्द्रेणतकामवशप्रवर्तिना ॥१०
प्रागात्म न्त्रिणश्चैवततोभृत्यामहीभृता ।
ज्ञयाश्चानंयरंपौराविरुध्येतततोरिभिः ॥११
यस्त्वेतानविजित्यैबवेरिणोविविजीषते ।
सोजितात्माजितामात्यःशत्रुवर्गेणवाध्यते ॥१२

तस्मात्कामादयःपूर्वंजेयाःपुत्रमहीभृता ।
तज्जयेहिजयोराज्ञोराजानश्यतितैर्जितः ॥१३
कामःक्रोधश्चलोभश्चमदीमानस्तथैवच ।
हर्षश्चशत्रवोह्येतेनाशायकुमहीभृताम् ॥१४

मित्र, आप्त या बन्धु किसी काभी विश्वास करना राजाको उचित नहीं, किन्तु समायन्तर देखकरशत्रु काभी विश्वास कियाजा सकताहै।९। राजाकामके वशीभूत न हो स्थानवृद्धि औरक्षयको,सदा जानेतथा संधि, विग्रह आदिछः गुणोंमें बुद्धिसे कामले ।१०। प्रथमस्वयं कोफिर अमात्यों को भृत्योंको और प्रजाओंको वशमें करले तब शत्रुओंसे विग्रहकरे ।११। जोपहिले आत्मापर विजय प्राप्त किये बिनाही शत्रुको जीतने कीइच्छा करे वहराजा अमात्यगणों द्वारा वशमें कर लिया जाताहै और शत्रुओंसे पराजित होता है।१२। हे वत्स ! इसीलिये सर्व प्रथम कामादि शत्रुओं परविजय प्राप्तकरे, उन्हें जीवनेसे सभी पर विजय मिलती है, जो राजा कामादि के वशीभूत होता है, वह नष्ट हो जाता है।१३। काम, क्रोध लोभ, मद, मान और हर्ष यही शत्रु राजा के नाश के कारण हैं।१४।

कामप्रसक्तमात्मानस्मृत्वापांडु निपातितम् ।
निवर्त्तयेत्तथाक्रोधादनुह्लादहतात्मजम् ॥१५
हतमैलंतथालोभान्मदाद्वेनं द्विजैर्हतम् । ।
मानादनायुषः पुत्रं हतंहर्षात्पुरंजयम् ॥१६
एभिर्जितंसर्वंमरुत्तेनमहात्मना ।
स्मृत्वाविर्जयेदेतान्षड्दोषांश्चमहीपतिः ॥१७
काककोकिलभृगाणांबकव्यालशिखंडिनाम् ।
हंसकुक्कुटलोहानांशिक्षेतचरितनृपः ॥१८
कौशिकस्याक्रियांकुर्यांद्विपक्षेमनुजेश्वरः ।
चेयांपिपीलिकानांचकालेभूपः प्रदर्शयेत् ॥१९
ज्ञेयाग्निविस्फुलिंगाबीजचेष्टाचशाल्मलेः ।
चन्द्रसूर्यस्वरूपंचनीत्यर्थंपृथिवीक्षिता ॥२०

बधकीपद्मशरभशूलिकागुर्विणोस्तनात् ।
एवंसाम्नाचभेदे नप्रदानेनचपार्थिव ।।२१

काम के वशीभूत होकरही राजा पाण्डु नाश को प्राप्तहुए । क्रोधके वश में होने से अनुह्लाद को पुत्र से वंचित रह जाना पड़ा ।१५। लोभके वशीभूतहुए ऐल राजा नष्ट होगए । मद,के वशमें पड़करवेन ब्राह्मणोंद्वारा नष्टहुए अभिमानके कारण अनायुका पुत्रहत हुआ और हर्ष के कारणपुरञ्जयका मरण हुआ।१६।परन्तु राजा मरुतने इनसभी शत्रुओंको जीतकर अखिल विश्वको वशमें करलिया, इनसब बातोके स्मरणपूर्वक सभीदोषों कापरित्यागकरना चाहिये।१७।काक, कोकिल, भौरा,मृग व्याल-मोर,हस कुक्कुटऔर लौहसे शिक्षालेनी चाहिए।१८। शत्रु के प्रतिउलूक जैसाकोई आडम्बर न करके शत्रुओं को नष्टकरे, क्योकि शत्रुओंके प्रतिभी उचित व्यवहारकरना चाहिये,पिपीलिकाके समान थासमय संचयकरे।१९।राजा को अग्निकी दिगा ीऔर शाल्मबीजके समान व्यापक होने वाला होना चाहिए । वह सूर्यऔर चन्द्रमाके समान राजनीति प्रयोग पूर्वक पृथ्वीको देखने वाला हो ।२०। व्यभिचारिणी, कमल शरभ,शूलिका गूर्विणीस्तन तथा गोपाङ्गना इन सबसे राजा शिक्षा ग्रहण करे ।२१।

दण्डेनचप्रकुर्वीयनीत्यथे पृथिवीक्षिता ।
प्रज्ञानपेणवादेयानथाचाडालयोषितः ।।२२
शक्रार्कयमसोमानांतद्वद्वायोर्महीपतिः ।
रूपाणिपचकुर्वीतमहीपालनकर्मणि ।।२३
यथेंद्रश्चतुरोमासान्वार्योधैर्णबभूतलम् ।
आप्याययेत्तथालोकान्परिचारैर्महीपतिः ।।२४
मासानष्टौयथासूर्यस्तोयंहरतिरश्मिभिः ।
सूक्ष्मेणैवाभ्युपायेनतथाशुल्कादिनानृपः ।।२५
यथायमः प्रियद्वेष्यौप्राप्तेकालेनियच्छति ।
तथा प्रियाप्रियेराजादुष्टादुष्टेसमोभवेत् ।।२६

पूर्णेदुमालोक्ययथाप्रीतिमाञ्जायतेनरः ।
एवंयत्रप्रजाःसर्वानिर्वृतास्तच्छशिव्रतम् ॥२७
मारुतःसर्वभूतेषुनिगूढश्चरतेयथा ।
एवंचरेन्नृपश्चरिःपौरामात्यारिबधुषु ॥२८

नीति पूर्वक दण्ड से पृथ्वी का पालन करे, चाण्डाल स्त्री से बुद्धि प्राप्तकरे, क्योंकि वह किसी प्रकारके व्यवहारसे विमुख नहीं होती ।२२। इन्द्र, सूर्य यम, चन्द्रमा और वायु के अनुरूप आचरण करके पृथ्वी का पालन करे।६३। जैसे इन्द्र चार मास वृष्टि करके पृथ्वी के प्राणियों को तृप्त करते हैं वैसे हो राजा दानादि के द्वारा सबको प्रसन्न करे ।२४। जैसे किरणों के द्वारा सूर्य आठ मास जल का शोषण करते हैं हैः वैसे ही सूक्ष्म रीति से राजा कर आदि ले ।२४। जिस प्रकार यम काज आने पर प्रिय अथवा द्वेषी सभी को समान रूप से ग्रहण करते हैं वैसे ही राजा भी समदर्शी हो ।२६। पूर्ण चन्द्रमा को देखकर जैसे सब जीव प्रसन्न होते हैं, वैसे ही राजा के आचरण से प्रजा प्रसन्न रहे ऐसा प्रयत्न करे । जिस प्रकार वायुभूतों में गुप्त रहकर विचरण करता है, वैसे ही गुप्त रीतिसे राजा भी अमात्य,बाँधव और प्रजाजनके चरित्रादि पर दृष्टि रखे ।२८।

नलोभार्थेनकामार्थैर्नार्थेर्यस्यामानसम् ।
पदार्थैःकृष्यतेधर्मात्सराजास्वर्गमृच्छति ॥२९
उत्पथग्राहिणोमूढान्स्वधर्माच्चलितान्नाम् ।
यः करोतिनिजेधर्मेसराजास्वर्गमृच्छति ॥३०
वर्णधर्मानसीदतियस्यराष्ट्रेतथाश्रमाः ।
राज्ञस्तस्यसुखंतातंपरत्रेहचशाश्वतम् ॥३१
एतद्राज्ञःपरकृत्यतथैतद्वृद्धिकारणम् ।
स्वधर्मेस्थापनंनृणांचाल्यतेनकुबुद्धिभिः ॥३२
पालनेनैवभूतानांकृतकृत्योमहीपतिः ।
सम्यकपालयिताभागधर्मस्याप्नोतिवैयतः ॥३३

एवमाचरतेराजाचातुर्वर्ण्यस्यरक्षणम् ।
ससुखीविहरत्येषशक्रस्येतिसलोकताम् ॥

जिस राजा का मन लोभ, अर्थ, का अथवा अन्य किसी भी कारण से आकृष्ट नहीं होता उसी को स्वर्ग की प्राप्ति होती हैं।२६। मूढ़, कुमार्गी, धर्म, सेविचलित व्यक्तियोंको स्वधर्मपर लाने वाला राजा अवश्य ही स्वर्ग को प्राप्त होता है।३०। हे पुत्र ! जिनके राज्य में वर्णाश्रमधर्म नाशको प्राप्त नहीं होते, वह राजा इहलोक-परलोक दोनों में निरन्तर सुख भोगता है।३१। राजा का कर्त्तव्य है कि वह बुद्धि-मानों के परामर्श से सदा कार्य करे और सभी को अपने-अपने धर्म में लगाये रखे, इसी से राजा की सिद्धि होती है।३२। जिस प्रकार प्रजा के भले प्रकार पालन करने से राजा कृतकृत्य होता है, वैसे ही उसको धर्मांश की भी प्राप्ति होती है।३३। इस प्रकार जो राजा चारों वर्णों की रक्षा में नियम पूर्वक लगा रहता है, वह इहलोक में अत्यन्त सुख पूर्वक विहार करता हुआ अन्त रुद्र के सालोक्य को प्राप्त होता है।३४।

२५ वर्णाश्रम धर्म कीर्त्तन

तन्मातुर्वचनंश्रुत्वासोलर्कोमातरंपुनः ।
पप्रच्छवर्णधर्मांश्चधर्मान्येचाश्रमेषुच ॥१
कथितोयैमहाभागेराज्यतंत्रश्रितस्त्वया ।
ममधर्मोहमिच्छामिश्रोतुंवर्णाश्रमात्मकम् ॥२
दानमध्ययनयज्ञोब्रह्मस्यत्रिधोदितः ।
धर्मोनान्यश्चतुर्थोस्विधर्मस्तस्पापदंविना ॥३
याजनाध्यापनेशुद्धस्तथापुत्रप्रतिग्रहः ।
एतत्सम्यक्समाख्यातंत्रितयचास्यजीविका ॥४
दानमध्ययनंयज्ञाःक्षत्रियस्याप्ययंत्रिधा ।
धर्मप्रोक्तः क्षितेरक्षाशस्त्राजीवश्चजीविका ॥५

दानमध्ययन यज्ञोवैश्यस्यापित्रिधैवसः ।
वाणिज्यंपाशुपाल्यचकृषिश्चैवास्यजीविका ॥६
दानंयज्ञोयशुश्रूषाद्विजाभीनांत्रिधामया ।
व्याख्यातः शूद्रधर्मोपिजीविकाकारुकर्णजा ॥७
तद्वद्द्विजातिशुश्रूषापोषणक्रयविक्रयैः ।
वर्णधर्मास्त्विमेप्रोक्ताःश्रूयतामाश्रमाश्रयाः ॥८

पुत्र ने कहा—अलर्क जननीके इस प्रकार वचन सुनकर फिर वर्णधर्म और आश्रम धर्मका विषय पूँछने लगा ।१। अलर्कने कहा—हेमहाभागे? तुमने राजधर्म कातो वर्णनकिया किन्तु अवमैं वर्ण-धर्म और आश्रम-धर्म सुनने की इच्छा करताहूँ।२।मदालसा बोली,हे वत्स ! दान अध्ययन और यज्ञयह तीन ब्राह्मणके धर्म है, इनके अतिरिक्त चौथाधर्मऔर कुछ नहींहै अन्य धर्म उसके पक्षमें आपत्ति मेंहैं।३। शुद्धतापूर्वक यज्ञ करना,अध्यापन और पवित्र भावसे प्रतिग्रह यह तीन कर्मही ब्राह्मणोंको जीविका साधन हैं ।४। दान यज्ञ और अध्ययन तीन कर्म क्षत्रियोंके कर्त्तव्य रूपहैं तथा पृथ्वी पालनऔर शस्त्राभ्यास उनकी जीविकाके साधनहैं।५। दानअध्ययन और यज्ञयह तीनधर्म वैश्योंके हैं तथा पशु-पालन वाणिज्य और खेतीयह उसकी जीविका के साधन हैं ।६। शूद्रके कर्म दान यज्ञ और जातिकी सेवा करना यह तीन हैं तथा कारु कर्म । ब्राह्मण-सेवा पशुपालन और क्रय-विक्रय उनकी जीविकाके साधन हैं, यह वर्णो का धर्म मैंने कहा है, अब आश्रम धर्म श्रवण करो ।८।

स्ववर्णधर्मात्सिमिद्धिनरःप्राप्नोतिनच्युतः ।
प्रयातिनरकप्रेत्यप्रतिषिद्धनिषेवणात् ॥९
यावत्तुनोपनयनक्रियतेवैद्विजन्मनः ।
कामचेष्टोक्तिभक्षस्तुतावद्भवतिपुत्रक ॥१०
कृतोपनयनासम्यग्ब्रह्मचारीगुरोर्गृहे ।
वमततत्रधर्मोस्यकथ्यते तन्निबोधमे ॥११

स्वध्यायोथाग्निमुश्रूसास्मानंभिक्षाटन तथा ।
गुरोर्निवेद्यतच्चाद्यमनुचातेनसर्वदा ।।१२
ग_रो.कर्मणिसोद्योग: सम्यक्प्रोत्युपपादकः ।
तेनाहूत: पठच्चैवतत्परोनान्यमानमः ।।१३
एकंद्वोसकलान्वापिवेदान्प्राप्यग_रोर्मुखात् ।
अनुज्ञातोवरांदत्वादक्षिणांगुरवेनतः ।।१४

अपने-अपने धर्मका पालन करने सेही सब सिद्धियों की प्राप्तिसंभव है दूसरी जातिवालेके धर्मपर चलनेसे स्वधर्मकी हानि होतीहै और नरक की प्राप्तिहोती है।६।है वत्स! द्विजातियोंका जबतक उपनयन संस्कार न हो तभी तक वे स्वेच्छा व्यवहार, आहार और आलापादि में प्रवृत्त हो सकते हैं ।१०।उपनयन संस्कारके सम्पन्न होने के पश्चात् ब्रह्मचर्य पालन पूर्वक गुरुके पास,उस समय जिस धर्म का आचरण करना चाहिए उसे सुनो।११।स्वाध्याय, अग्नि सुश्रूषा स्नान, भिक्षाटन करके पहिले गुरुको भोजन करावे फिर उनकी आज्ञासे स्वयं भोजन करे ।१२। गुरुके कार्यमें सदवतत्पर रहनातथा उनकेसंतोषऔर आदेशके अनुसारकार्य करनातथा अनन्य चित्त से अध्ययन करना ब्रह्मचारी का परम कर्त्तव्य है।१३।गुरुके मुख से एक दो अथवा चारों वेदों को पढकर उनकी चरण-वन्दना करे और आज्ञा लेकर दक्षिणा दे ।१४।

गार्हस्थ्याश्रमकामस्तुगृहस्थाश्रममावसेत् ।
वानप्रस्थाश्रमवापिचतुर्थवेच्छयात्मनः ।।१५
तथैववाग_रार्गेहेद्विजोनिष्ठामवाप्नुयात् ।
ग_रोरभावेतत्पुत्रे तच्छिष्येतत्सुतविना ।।१६
शुश्रूषुर्निरभीमानोब्रह्मचर्याश्रमवसेत् ।
तपावृत्तस्ततस्तस्माद्गृहस्थाश्रनकामम्यया ।।१७
ततोऽसमानर्षिकुलांतुल्यांभार्यामरोगिणीम् ।
उद्वहेन्न्यायतोऽव्यंगांगृहस्थाश्रमकारणात् ।।१८

स्वकर्मणाधनं लब्ध्वापितृदेवातिथींस्तथा ।
सम्यक्सप्रीणयेद्भक्तयापोषयेच्चाश्रितांस्तथा ।।१९
भृत्यात्मजान्जामयोयद्दोनार्थिपतितानपि ।
यथाशक्तयान्नदानेनयासिपशवस्तथा ।।२०
एषधर्मोगृहस्थस्यऋतावनिगमस्तथा ।
पंचयज्ञविधानेतुयथाशक्तिनहापयेत् ।।२१

इसके पश्चात् गृहस्थाश्रम में प्रविष्टहोना चाहेतो विवाह आदिकार्य करे अन्यथा अपनी इच्छा के अनुसार वानप्रस्थ या चतुर्थाश्रम में प्रवेश करे ।१०। अथवा नैष्ठिक ब्रह्मचारी होकर गुरु के घर पर हो रहे गुरु न हों तो उनके पुत्र अथवा शिष्य के पास निवास करे ।१३। सदा सेवा-परायण रहे तथा अभिमान को पालन आने दे, इस प्रकार ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करे, अथवा गरु के घर से निकल कर गृहस्थाश्रम की इच्छा करे तो ।१४। अपने अनुरूप कन्या देखकर उसका पाणिग्रह करे, वह कन्या समान गोत्र की, रोगी और विकलांगी न हो ।१८। अपने विहित कर्म द्वारा न्याय पूर्वक धन का उपार्जन करे और भक्ति पूर्वक पितर, देवता और अतिथि को तृप्त करने का प्रयत्न करे तथा आश्रितोंका भले प्रकार पालन करे ।१९। भृत्य पुत्र, दीन अन्धा, पतित आदि को अपनी शक्तिके अनुसार अनादि देकर उनका सदा पोषण करना चाहिये ।२०। स्त्री सहगमन केवल ऋतुकाल मेंही करे, शक्तिके अनुसार पंचयज्ञ करें, यह गृहस्थ का धर्म है ।२१।

पितृदेवा तिथिज्ञातिमुक्तशेषंस्वय नरः ।
भुंजीतचसमभृत्यैर्यथाविभवमात्मनः।।२२
एषतद्देशतः प्रोक्तोगृहस्थस्याश्रमोमया ।
वानप्रस्थस्वधर्मंतेकणयाभ्यधार्यताम् ।।२३
अपत्यसंततिदृष्ट्वाप्राज्ञोदेहस्यचानतिम् ।
वानप्रास्थाश्रमगच्छेदात्मनःशुद्धिकारणात् ।।२४
तत्रारण्योपभोगश्चतपोभिश्चात्मकर्षथम् ।
भूमौ ग ाान्न ब्र ह्मचर्यं पितृदेवातिथिक्रिया ।।२५

होमस्त्रिषवणस्नानजटावल्कलधारणम् ।
मौनादिकरणचैवमन्यस्नेहनिषेवणम् । २६
इत्येष पापशुद्धयर्थमात्मनश्चोपकारकः ।
वानप्रस्थाश्रमस्तस्माभिक्षोस्तुचरमोपरः ॥२७
चतुर्थस्यस्वरूपं तुश्रूयात्ताश्रमस्यमत् ।
यश्चधर्मोस्येधर्मज्ञैः प्रोक्तस्तात महात्मभि ॥२८

यथा सामर्थ्य पितरो, देवताओ, अतिथियों, और जाति वालो को भोजन कराने के पश्चात् भृत्यो के सहित स्वयं उस बचे हुए अन्न का भोजन करे ।२२। यह गृहस्थाश्रम धर्म सक्षिप्त रूप से मैंने कहा है, अब वानप्रस्थाश्रम को कहतो हूँ उसे सावधान चित्त से श्रवण करो ।२३। बुद्धिमान पुरुष का कर्तव्य है, कि वह धन सन्तानादि की सम्पन्नताऔर अपने शरीर की अवनति को देखकर आत्म शुद्धि के लिए वानप्रस्थाश्रम ग्रहण करे ।२४। वहाँ फल, मूलादि का आहार करे और तपस्या का आचरण करके आत्मोत्कर्ष का सम्पादन करे, पृथ्वी मे शयन, ब्रह्मचर्य-पालन तथा पितर, देवता और अथिति की सेवा ।२५। हवन त्रिकाल संध्याकाल मे स्नान, जटा-वल्कलका धारण, मौन, योगाभ्यास तथास्नेह सेवन पूवक रहे ।२६। इस प्रकार पाप के शोधन और आत्मा के उत्कर्ष के लिये वानप्रस्थाश्रम का अवलम्बन करे, इस आश्रम से पश्चात् भिक्षु नाम का एक अन्य चरम आश्रम है ।२७। हे पुत्र ! इस चतुर्थाश्रम का जो स्वरूप धर्मज्ञाता महात्मा पुरुषों द्वारा निरूपित किया है, उसे कहता हूँ, श्रवण करो ।२८।

सर्वसङ्गपरित्यागोब्रह्मचर्यवकोपता ।
जितेन्द्रियत्वमावासेनैकस्मिन्वसतिश्चिरम् ॥२९
अनारंभस्तथाहारेभिक्षान्नं चैककालिकम् ।
आत्मज्ञानावबोधश्चतथा चात्मावलोकनम् ॥३०
चतुर्थेत्वाश्रमेधर्मोमयायंतेनिवेदितः ।
सामान्यमन्यवर्णानामाश्रमाणांचमेश्रृणु ।३१
सत्यंशौचमहिंसाचअनसूयातथाक्षमा ।
आनृशंस्यमकार्पण्यंसंतोषश्चाष्टमोगुणः ॥

एकेसंक्षेपतप्रोक्ताधर्मावर्णाश्रमेष च ।
एवषुनित्यधर्मेषु नित्यं तिष्ठेत्समैतत: ।।३३
सयातिब्रह्मलोकह्यिावद्रिप्राश्चतुर्दश ।
यश्चोल्लंध्य स्वकं धर्मम्ववर्णाअमसज्ञितम् । ३४
नरोन्यथाप्रयत्तं तसदंडयोभभृतोभवेत् ।
येचम्वधर्मसत्यागात्पापकुर्वन्तिमानवा: ।।३५
उपेक्षतस्तांन्तन्नृपतेरिकातूर्तंपयात्यध: ।
तस्माद्राज्ञाप्रयत्नेनसर्वोंवर्णास्वधर्मत: ।।३६
प्रबर्त्यन्तेन्यथादडया:स्थाप्याश्चैवस्वकर्मसु ।। ७

सर्व संग का त्याग करे, क्रोध-रहित इन्द्रिय संयम ब्रह्मचर्य आदिके पालन पूर्वक भ्रमणशील रहे । बहुत दिनों तक एक स्थान में न रहे ।२९। कर्म का विसजन, भिक्षा से प्राप्त अन्न का केवल एकवार भोजन, आत्मज्ञान की कामना और आत्म दर्शन यह सब चतुर्थाश्रमीको करना चाहिए ।३०। चतुर्थाश्रम मे जो धर्मानुष्ट कर्त्तव्य है, वह तुमसे कह दिया, अब अन्यान्य वर्णाश्रमो के साधारण धर्म को तुमसे कहती हूँ, उसे सुनो ।३१। सत्य, शौच अहिंसा, अनसूया, क्षमा, आनृशस्य, अकृपणता और सन्तोष यह आठ गुण सभी वर्णाश्रमो का साधारण धर्म नाम गया है ।३२। इस प्रकार सम्पूण वर्णाश्रम धर्म का मैंने तुमसे संक्षिप्त वर्णन किया है, सभी को अपने-अपने वर्णाश्रम धर्म का पालन करता कर्त्तव्य है ।३३। अपने धर्म मे दृढ़ रहन वाला मनुष्य तब तक ब्रह्मलोक मे निवास करता है, जब तक कि चौदह द्वन्द्वो का पतन नही हो जाता और जो अपने वर्णाश्रम धर्म का उल्लघन करके ।३४। अन्य के धर्म को ग्रहण करता है, वह राजदण्ड का भागी होता है अथवा जो मनुष्य अपने धर्म को त्याग कर पाप-कर्म करता है ।३५। उसे यदि राजा दण्ड नही देता तो वह अपने इष्टापूर्त को नष्ट करता है, इसलिए राजा का कर्त्तव्य है कि वह सभी वर्णो को अपने-अपने धर्म मे स्थित कर ।३६। और जो इसके विरुद्ध आचरण करे उसे दन्ड देकर अपने कर्मो मे लगावे ।३७।

२६—गार्हस्थ्य धर्म निरूपण

यत्कार्यं पुरुषेणेहगार्हस्थ्यमनुवर्त्तता ।
बन्धश्चचस्यादकरणेय क्रियायांस्योच्चिति ॥१
उपकारायन्नृणांच्चवर्ज्यंगृहेसताम् ।
यथाचक्रियतेतन्मेयथायत्पृच्छतोवद ॥२
वत्सगार्हस्थ्यमास्थायनरः सर्वमिदंजगत् ।
पुण्यतितेनलोकांश्चतजयत्यमिवांछितान् ॥३
पितरोमुनयोदेवाभूतानिमनुजास्तथा ।
क्रमिकीटपतङ्गाश्चवयांसिपशवोऽसुरः ॥४
गृहस्थमुपजीवतिततस्तृप्तिप्रयांतिच ।
मुखचास्यानिरीक्षतेअपिनोदास्यतावै ॥५
सर्वस्याधारबूतेय वत्सधेनुस्त्रयीमयी ।
यस्याप्रतिष्ठिताविश्वंविश्वहेतश्चयामता ॥६

अलर्क ने कहा— गृहस्थाश्रम मे रहने वाले पुरुष अपने जिस कर्त्तव्य को न करके वन्धन और कर्त्तव्यको करके मोक्षको प्राप्तहोताहै ।१। और जो मनुष्यो के उपकार का कारण तथा वर्जनके योग्य कर्त्तव्य है, वह सभी जानने को मैं उत्काण्ठित हूँ मुझे विस्तार सहित वह सब विषय बताओ ।२। मदालसा ने कहा हे पुत्र ! गृहस्थाश्रम में स्थित मनुष्य सभी प्राणियों का पालन करता है और उसी पुण्यके बल से उसे इच्छित लोकों की प्राप्ति होती है ।३। पितर ऋषि, देवता भूत मनुष्य कृति, कीट, पतङ्ग पक्षी, पशु असुर यह सभी गृहस्थाश्रम से ही अपना जीवन-निर्वाह करते हैं, इसी आश्रम से उनकी तृप्ति होती है क्योंकि वे सब अन्न के लिए गृहस्थ के सुख को ताकते रहते है ।४५। हे पुत्र ! वेदमयी धेनु के रूप में गृहस्थ ही सबका आश्रय स्थान है, सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड इसी धेनु में प्रतिष्ठित है क्योंकि यही धेनु ब्रह्माण्ड की कारण रूपी है ।६।

ऋकपृष्ठासौय जुर्मध्यासावक्त्रशिरोधरा ।
इष्टापूर्तविषाणाचसाधुसूक्ततनूरुपा ॥७
शांतिपुष्टिशकृन्मूत्रा दर्णपादप्रतिष्ठिता ।
आजीव्यमानाजगतांसाऽक्षयानापचीयते ॥८
स्वाहाकारःस्वधाकारोवषट्कारश्चपुत्रक ।
हतकारस्तथैवान्यस्तया स्तनचतुष्टयम् ॥९
स्वाहाकारंस्तन देवाःपितरश्चस्वधामयम् ।
मुनयश्चवषट्कारंदेवभूतसुरेतरा। ॥१०
हतकारं मनुष्याश्चपिवतिसततस्तनम् ।
एवमाप्याययत्येषादेवादीनखिलांस्त्रयी ॥११
एतद्वृत्सचतुष्कं तुनरस्तनचतुष्टये ।
ननियुज्याद्यथाल तेनस्युस्तेबिमानिताः ॥१२
देवादीनाखिलान्येषुसन्तर्पयतिमानव. ।
तेषामुच्छेदकर्त्तायः तुरुषोत्यंतपापकृत् ॥१३

इस धेनु की पीठ ऋग्वेद, मध्य यजुर्वेद, मुख सामवेद और ग्रीवा इष्ठापूर्त है, साधुसूक्त रोम।७।शान्ति और पुष्टि कर्म उसका मलमूत्रतथा वर्णाश्रमही प्रतिष्ठाहै। यहधेनुकभी क्षीणनहीहोती, सम्पूर्णविश्वकोआश्रय रूप होकरजीवन धारणकरती हुईभी यहधेनु कभीक्षयको प्राप्तनहींहोती।८। इस धेनुके स्वाहाकार, स्वधाकार, वषट्कार, और हतकार यहचार स्तन है ।९। इन चार स्तनों में देवता स्वाहाकार,पितर स्वधाकार,मुनि वषट्कार और इनसे इतर ।१०। मनुष्यगण हतकार रूप स्तनको पीतेहैं। इस प्रकार हे वत्स ! यह धेनुही सबकी तृप्तिको सम्पादित करनवालीहै।११। इन चार स्तनोको यहचार योनि वाले पानकरतेहैं जो यथा समय नियुक्त न होतो इस धेनुकी अवमानना होतीहै ।१२। जिसके द्वारा मनुष्यगण सब देवता इत्यादि की तृप्ति करने में समर्थ होते हैं, उसके नष्ट करने में प्रयत्नशील व्यक्ति महापापी है ।१३।

संतमस्यंधतामिस्रे तमिन्नेचनिमज्जति ।
यस्त्वेमानानबोधेनुंस्वैर्वत्सैरमरादिभिः ॥१४
प्रापयत्युचितेकालेसम्वर्गायोपपद्यते ।
तस्मात्पुत्रमनुष्येण देवर्षिपितृमानवाः ॥१५
भूतानिचानुदिवसपोष्याणिस्वतनुर्यथा ।
तस्मात्स्नानःशुचिर्भूत्वादेवर्षिपितृतर्पणाम् ॥१६
प्रजापतेस्तथैव दृभिःकालेकुर्वात्साहितः ।
सुमनोगन्धधूपेश्चदेवानभ्यर्च्यमानवः ॥१७
ततोग्नेस्तर्पणंकुर्याद्द्याच्चबलिमित्यथ ।
ब्रह्मणेगृहमध्येतुविश्वेदेवेभ्यएवच ॥१८
धन्वंतरिसमुद्दिश्यप्रागुदीच्यांबलिंणिपेत् ।
प्राच्याशक्राययांम्यायांयमायबलिमाहरेत् ॥१९
तिच्यांवरुणोयाश्चसामायोत्तरतोबलिम् ।
दद्याद्धात्रविधत्रे चबलिंद्वारे गृहस्यच ॥२०
अर्यम्णेणवहिर्दद्यादगृहेम्यश्चसमं तः ।
नक्त चरेभ्योभूतेभ्योबलिं प्रकाशतोहरेत् ॥२०

तथा उने अन्धतामिस्र और तामिस्र नामक नरकों की प्राप्त होती है, इस धेनु के वत्सों को जो मनुष्य यथा समय ।१४। उपर्युक्त प्रकार से स्तन पान करता है, वह देवलोक को जाता है, इसलिये अपनी यथा, शक्ति देवता, ऋषि, पितर और मनुष्य ।१५। तथा भूतों का पोषण करना चाहिए, इसलिए स्नान से पवित्र होकर सावधान चित्त न देवता, पितर, ऋषि ।१६। और प्रजापति का उदकदान पूर्वक तर्पण करे यथा चन्दन, गंध और धूपादि के द्वारा देवार्चन करे ।१७। फिर अग्नि तर्पण करके बलि प्रदान, करे, घर में ब्रह्म और बिश्वेदेवा को ।१८ तथा धन्वन्तरि की पूर्व और उत्तर दिशा, में वलि दे, इन्द्र को पूर्व में, यमको दक्षिण में ।१९। वरुण को पश्चिम में और सोम को उत्तर में बलि देवी चाहिए तथा गृहद्वार में धाता और विधाता को बलि दे ।२०। अर्यमा

को घर की बाहरी भाग में सब ओर से बलि दे तथा निशाचर और भूतों के लिये आकाश मार्ग में बलि दे ।२१।

पितृणांनिर्वनिर्वपेच्चैवदक्षिणांभिमुखः स्थितः ।
गृहस्थस्तरेभुत्वासुसमाहितमानसः ।२२
ततस्तोयमुपादायतेषामाभाचमनाएवं ।
स्थानेषुनिक्षिपेत्प्राज्ञस्तास्ताउद्दिश्यदेवताः ।२३
एवगृहबलिकृत्वागृहेहपति शुचिः ।
आप्ययनायभूतानाकुर्यादुत्सगमादरात् ।२४।
श्वभ्यश्चश्वपचेभ्यश्चवयोभ्यश्चावपेद्भुवि ।
वैश्वदेवहिनामैतत्सायंप्रातरुदाहृतम् ।२५
आचम्यचततःकुर्यात्प्राज्ञोद्वारावलोकनम् ।
मुहूर्तस्याष्ठमंभागंमुदीस्यीह्यातिथिर्भवेत ।२६
अतिथितत्रसंप्राप्तमन्नाद्यै नोदकेनच, ।
सपूजयेद्यथाशक्तिगन्धपृष्पादिभिस्तथा ।२७

पितरों के निमित्त वलि प्रदान करने के लिये गृहस्थको दक्षिण की ओर मुख करके बैठना चाहिए फिर सावधानीसे एकाग्रचित्त होकर।२२। आचमनकेलिए जललेकर उस-उस स्थानमें उस-उस देवताके निमित्तजल दो।२३।गृहस्वामी इसप्रकार सेबलि देऔर पवित्र भावसे भूतोंकी तृप्तिके लिये आदरपूर्वक उत्सर्ग कार्यकी सम्पन्नकरे.२४।श्वान श्वपच औरपक्षी केलिए भूमिमें वलिदे, यहीवैश्वदेव बलिकही गई है। यह बलि प्रात:काल और सायङ्काल देनेकाविधान हैं।२५।इसप्रकार गृहस्थ वैश्वदेववलिःदकर आचमनकरे औरफिर द्वारको देनेतथा मुहूर्तके आठवें भागतक अतिथिकी प्रतीक्षा करे ।२६। अथिति के आगमन पर यथाशक्ति अन्न, जल, गन्ध पुष्पादि से उसका सत्कार करे। ।२७।

नमित्रमतिथिंकुर्यान्नैकग्राममनिवासिनम् ।
अज्ञातिकुलनामानंतत्कालसमुपस्थितम् ।२८

बुभुक्ष मागतश्रान्तेयाचमानमकिंचनम्
ब्राह्मणत्राहुरतिथिसंपूज्यःशक्तितो बुधैः ।२९
नपृच्छेद्गोचरणंस्वाध्यायंचापिपीडतः ।
शोभनाशोभनाकारंतमन्येतप्रजापतिम् ।३०
अनित्यंहिस्थितोयस्मात्तस्मादतिरुच्यते ।
तस्मिस्तृप्तयज्ञोत्थादृणान्मुच्येद्गृहाश्रमी ।३१
तस्यादात्वातुयोभुक्तेस्वयंकिल्बिषभुङ्नरः ।
सपापकेवलभुक्तपुरीषंचान्धजन्मनि ।३२
अतिथिर्यस्यभग्नाशोगृहात्प्रतिनिवर्तते ।
सदत्वादुष्कृतंतस्मैपुण्यमादायगच्छति ।।३३
अप्यं बुशाकदानेनयच्चाप्यश्नातिसस्वयम् ।
पूजयेतनरःशक्त्यातेनैवातिथिमादरात् ।।३४
कुर्याच्चाहरहःश्राद्धमन्नाद्येनोदकेनच ।
पितृनुद्दिश्यविप्राश्चभोजयेद्विप्रमेवबा ।।३५

अपने मित्र अथवा ग्राममें रहने वाले को अतिथि न माने, जो पुरुष उसी समय आया हुआ हो और जिसका कुल, गोत्र, नाम इत्यादि ज्ञात न हो ।२८। और यथार्थ रूप से भोजन की इच्छा से आया, हो जिसके पास कुछ भी न हो, श्रम से थका हुआ हो, ऐसा ही ब्राह्मण अतिथि कहा गया है, ऐसे ही अतिथि का यथाशक्ति पूजन करे ।२९। बुद्धिमान् गृहस्थ उस अतिथि के गोत्र वेद, स्वाध्याय आदि किसी भी विषय का प्रश्न न करे, वह सुन्दर या कुरूप जैसा भी हो उसे साक्षात् प्रजापति स्वरूप ही समझे ।३०। नित्य न रहने वाले को अतिथि की तृप्ति न करने पर गृहस्थ नृयज्ञ के ऋण से नहीं छूटता ।३१। इसलिए जो गृहस्थ अतिथि का भोजन कराये बिना, स्वयं ही भोजनकर लेता है वहपापका भोगने वाला होता है, अन्य जन्ममें भोजन के निमित्त विष्ठा की प्राप्ति होती है ।३२। जिस गृहस्थ के घर से जो अतिथि विमुख लौटता है, वह उस गृहस्थके पुण्य को लेकर अपने पापको उसे दे जाता है ।३३।अतिथि को जल शाकादिजो स्वयं भोजनकरे वह समर्पित करकेउसकाआदरसहित

पूजन करे ।३४। नित्य प्रति अन्न जल आदि के द्वारा पितरों के निमित्त श्राद्ध करे और एक अथवा अनेक विद्वान् ब्राह्मणों को भोजन करावे ।३५।

अन्नस्यग्रं तदुद्धृत्यब्राह्मणायोपपादयेत् ।
भिक्षाचयाचितांदद्यात्परिब्राट्ब्रह्माचारिणाम् ।।३६
ग्रासप्रमाणाभिक्षास्यादग्रं ग्रासचतुष्टयम् ।
अग्रं चतुर्गुणांप्राहुर्हंतकारद्विजोतमाः ।।३७
भोजनं हंतकारं वाअग्रं भिक्षामथापिचा ।
अदत्वातुनभोक्तव्ययथाविभावमात्मनः ।।३८
पूजयित्वातिथिनिष्ठाञ्ज्ञातीन्बंधूंस्तथार्थिनः ।
विकलान्वालवृद्धांश्चभोजयेच्चातुरांस्तथा ।।३९
वांछतेक्षुत्परीतात्मायच्चान्योन्नमकिंचनः ।
कुटुंबिनाभोजनीय.स्वसनंविभवेसति ।।४०
श्रीमंतंज्ञातिमासाद्ययोज्ञातिरवसीदति ।
सीदतायत्कृततेनतत्पापससमश्नुते ।।४१
सायचैषविधिःकार्यःपूर्वोक्तं तत्रचातिथिम् ।
पूजयेच्चयथाशक्तिशयनासनुभोजनैः ।।४२

अन्न का अग्रभाग तोड़कर ब्राह्मण को दे तथा परिव्राजक और ब्रह्मचारी के याचक होने पर उन्हें भीख दे ।३६। एक ग्रास को भिक्षा कहते हैं, चार ग्रास को अग्र और चार चतुष्टय अर्थात् सोलह ग्रास को हन्तकार कहा गया है ।३७। यथा वैभव हन्तकार अथवा अग्र और यह भी न बने तो भिक्षा अवश्य दे, इसके विना कभी भोजन न करे ।३८। अतिथिका सत्कार करनेके पश्चात् जाति बन्धु, याचक, विकल, बालक वृद्ध और आतुर इनको भोजन करावे ।३९। अन्य कोई अकिंचन व्यक्ति भूखा हो तो उसके द्वारा याचना करने पर उसे भी भोजन दे अथवा जो कुछ बन पड़े, वही प्रदान करे ।४०। धनवान् होते हुये भी जिसकी जाति दुःखित हो तो उस जाति का मनुष्य विवश होकर जो पाप करता है, उसका पापाश उस धनवान् को प्राप्त होता है ।५१। सँध्या समय में भी

इसी बिधि को करे और सायंकाल में आने वाले अतिथि को यथाशक्ति आसन शय्या और भोजनादि द्वारा संतुष्ट करे ।४२।

एवमुद्वहतस्तातगार्हस्थ्यभारमास्थितम् ।
स्कन्धेविधातादेवाश्चपितरश्चमहर्षयः ।।४३
श्रेयोभिवर्षिणःसर्वेभवंत्यतिथिवांधवाः ।
पशुपक्षिमृगास्तातायेचान्येसूक्ष्मकीटकाः ।।४४
गाथाश्चात्रमहाभागस्वयमत्रिरगायतः ।
ताःशृणुष्वमहाभागगृहस्थाश्रममथीश्चतस्थिता ।।४५
देबान्वितृश्चातिथीश्चतद्वत्सपूज्यवांधवान् ।
जामयश्चगुरुश्चैवगगृहस्थोविभवेसति ।।४६
श्वभ्यश्चश्वपचेभ्यश्चवयोभ्यश्चावपेद्भुवि ।
वैश्वदेवंहिनामैतत्कुर्यात्सायतथादिने ।।४७

हे पुत्र ! इस प्रकार गृहस्थ अपने कन्धे पर रखे हुए गार्हपत्य रूपी भार को वहन करके विधाता, देवता, पितर, महर्षि ।४३। अतिथि, बाँधव, पशु, पक्षी कीटादि सभी को प्रसन्न करके अपना कल्याण-साधन करते हैं ।४४। हे महाभाग उस विषय में महर्षि अत्रि ने जो कथा गायी है उस गृहस्थाश्रम वाली कथा को सुनो ।४५। यदि धन हो तो देवता पितर, अतिथि, बंधु, जाति और गुरु का पूजन करके श्वास,श्वपच और पक्षियों के लिए पृथिवी में अन्न प्रदान करे, इस बैश्वदेव नामक बलि कर्म को पूर्वाह्न और सायंकाय में करे ।४६-४७।

२७—सदाचार वर्णन

एवंपुत्रगृहस्थेनदेवता.पितरस्थता ।
संपूज्यहव्यकव्याभ्यामन्नेनातिथिवांधवाः ।।१
भूतानिभृयाविकलाःपशुपक्षिपिपीलिकाः ।
भिक्षावोयचमानास्तुयेचान्येवमतागृहे ।।२

सदाचारवतातसाधुनागृहमेधिनः ।
पापभुक्तेसप्रल्लंघ्यनित्यनैमित्तिकीः क्रियाः ॥३
सदाचारमहंश्रोतुमिच्छामिकुलनंदिनि ।४
यकुर्वन्सुखमाप्नोतिपरत्रेहचमानवः ।
डेहस्थेनसदा कार्यमाचारपरिपालनम् ।
नह्याचारविहीनस्यसुखमत्रपरत्रवा ।६
यज्ञदानतपासीहपुरुषस्यनभूतये ।
वन्तियःसदाचारसमुल्लंध्यप्रवर्त्तते ॥७

मदालसा ने कहा—हे पुत्र ? गृहस्थको सदाचार परायण होकर हव्य कव्य और अन्नदान करते हुए पितर,देवताअतिथि और बाँधवोंका पूजन करने वाला होना चाहिए ।१। इनके अतिरिक्त भूत, भृत्य, पशु, पक्षी, पिपोलिका,भिक्षुक, याचक,या पर,अगरजो कोईभी जैसी प्रार्थनाकरे।२। उन-उन का वैसेही सत्कार करे, गृहस्थी यदि नित्य नैमित्तिक क्रियाका उल्लंघन करेतो उसे पाप-भागी होना पड़ता है।३।अलर्क बोला-हे माता! तुमने मुझसे नित्य नैमित्तिक आदिपुरुषोचित्त कर्म-विषयका यथा प्रकार वर्णन किया ।४। जिसके अनुष्ठानसे मनुष्य इहलोक और परलोक दोनों में सुखी होता है, उसी सदाचार को सुनने की मेरी इच्छा हुई है ।५। मदालसा ने कहा—गृहस्थ को सदैव ही सदाचार का पालन करना चाहिये, आचारहीन पुरुष को लोक में कभी भी सुख नहीं मिल सकता, जो पुरुष सदाचार को छोड़कर संसार मार्ग में प्रवृत्त होता है, उसके द्वारा किये हुए यज्ञ, दान और तपस्या आदि सभी अमङ्गलजनक होते हैं ।६-७।

दुराचारोहिपुरुषोनेहायुर्विदतेमहत् ।
कार्योयत्नःसदाचारोआचारोहंत्यलक्षणम् ।८
तस्यस्वरूपंवक्ष्यामिसदाचारस्यपुत्रक ।
समाहितमनाःश्रुत्वातथैवपारपालय ॥९
त्रिवर्गसाधनेयत्नःकर्त्तव्योगृहमेधिनः ।
तत्संसिद्धौगृहस्थस्यसिद्धिरत्रपरत्रच ॥२०

पादेनार्थस्यपारत्र्योकुर्यात्सचयमात्मवान् ।
अर्धेनचात्मभरणनित्यनैमित्तिकान्वितम् ।।११
पादंचात्मार्थमायस्यमूलभूतंविवर्द्धयेत् ।
एवमाचरत:पुत्रअर्थ:साफल्यमृच्छति ।१२
तद्वत्पापनिषेधार्थधर्म:कार्योविपश्चिता ।
परत्राथतथाचान्य.कास्योत्रैवफलप्रद: ।।१३

दुराचार से प्रवृत्त मनुष्य दीर्घजीवी कदापि नहीं हो सकता, इस लिये सदाचार में ही प्रवृत होवे, सदाचार से बुरे लक्षण नष्ट हो जाते हैं ।८। अब मै उस सदाचार के स्वरूप को कहती हूँ तुम उसे एकाग्र चित्त से सुनो और तदनुरूप कार्य करो ।९। गृहस्थ को त्रिवर्ण साधनमें प्रवृत्त होना चाहिए । त्रिवर्णके सिद्ध होनेपर उसे इहलोक और परलोक दोनों की सिद्धि होती है ।१०। गृहस्थ को उपार्जन किये हुए धन का चतुर्थ भाग धर्म के लिये संचित करना चाहिए आधे भाग से अपना पोषण और नित्य नैमित्तिक कार्य करे ।११। और शेष भाग को मूल धन के रूप में वृद्धि करे, इस प्रकार के आचरण से ही सफलता है ।१२। धन के उपार्जन में जैसा आचरण करे, वैसा पाप को नष्ट करनेके लिये धन संचय करने में करे, धर्म काम्य और निष्काम भाव से दो प्रकार का है—काम इहलोक में फल-प्रकाश करता है और निष्काम परलोक मे फल देता है ।१३।

प्रत्यवायभयात्कामस्तयान्यश्चान्यश्चनिवेरोधवान् ।
द्विधाकामोनिगदितस्त्रिवर्गोस्यविरोधन: ।।१४
परस्परानुबधाश्चसर्वानेतान्विचिंतयेत् ।
विपरीतानुबधांश्चधर्मादीस्ताञ्छृणुष्वमे ।१५
धर्मोधर्मानुबंधार्थोधर्मोनात्मार्थबधिक: ।
उभाभ्यांचद्विधाकामस्तेनतौचद्विधापुन: ।१६
ब्राह्मेमुहूर्त्तेबुध्येतधर्मार्थौचानुचिंतयेत् ।
कायक्लेशांश्चतन्मूलान्वेदतत्त्वार्थमेवतम् ।१७

उत्थायावश्यकं कृत्वाकृतशौचासमहितः ।
सप्रष्थायतथाचम्नुप्राङ्मुखोनियतःशुचिः ॥१८
पूर्वासंध्यासनक्षत्रांपश्चिमांसदिवाकराम् ।
उपासीतयथान्ययनैनांजह्यादनापदि ॥१९
असत्प्रलापमनृतंवाक्पारुष्यंचवर्जयेत् ।
असच्छास्त्रामसद्वादमसत्सेवांचपुत्रक ॥२०
सायंप्रातस्तथाहोमंकुर्वीतनियतात्मवान् ।
नोदयास्तमयेबिंवमुदीक्षेतविवस्वतः ॥२१

विघ्न तथा भय होने के काम्य और निष्काम दोनों धर्मोंको करे, त्रिवर्ग भेद से काम्य भी दो प्रकार का है । ।१४। धर्म, अर्थ काम यह त्रिवर्ग परस्पर बँधेहुये हैं,वैसे हीउन्हें परस्पर बंधद-रहितभो समझे,अब मैं इनके अनुवन्धादि का बर्णन करती हूँ ।१५। धर्म तथा धर्मके अनुबंधके लिए वह धर्म आत्मा को बाधा नहीं पहुँचाता, जैसे काम दोप्रकार काहै वैसे ही काम के द्वारा धर्म और अर्थ की भी दो भागों में विरक्त समझो ।१६। ब्राह्ममुहूर्त में उठकर गृहस्थ को धर्म अर्थ, कात्यक्लेश और वेद-तत्त्वार्थ का चिंतन करना चाहिए ।१७। फिर शय्या से उठ कर आचमन करे और नियत तथा पवित्र भाव से पूर्वाभिमुख बैठे ।१८। और नक्षत्रो के स्थित रहते हुएही संध्या करे, इसी प्रकार सायंकालीन संध्या भी सूर्य के स्थित रहते में ही करे, आपत्तिकाल को छोड़ कर नित्य संध्योपासक विधि सहित करना चाहिए ।१९। असत्मिथ्या और कठोर वचनों का त्याग करे तथा असत् शास्त्र, असत् वाद और असत् सेवाका भी परित्याग कर दे ।२०। नियतात्मा होकर प्रातः सांय हवन करे, सूर्य के उदय और अस्तकाल मे सूर्य विम्ब को न देखे ।२१।

केशप्रसाधनादर्शन दंतधावनम् ।
पूर्वाह्णएवकुर्वीतदेवतानांचतर्पणम् ॥२२
ग्रामावसथतीर्थानांक्षेत्राणांचैववर्त्मनि ।
नमूत्रमनुतिष्ठेतनकृष्टेनचगोव्रजे ॥२३

नग्नांपरस्त्रियंनेक्षेन्नपश्येदात्मनःशकृत् ।
उदक्यादर्शनन स्पर्शोवर्ज्यंसम्भाषणतथा ॥२४
नाप्सूमूत्र पुरिषंवानिष्ठीवंनसमाचरेत् ।
नाधितिष्ठेच्छन्कमूत्र केशभस्मकपालिकाः ।२५
तुषांगा ास्थिचूर्णानिरजीत्रस्त्राणिकानिचित् ।
नाधातिष्ठेत्तयाप्राज्ञाःपथिपत्राणिवाभुवि ॥२६
पितृदेवमनुष्याणांभूतानाँचतथार्चनम ।
कृत्वाविभवता.पश्चाद्गृहस्थोभोक्तुमर्हति ॥२७
उदङ्मुऊप्राङ्मुखोबास्वाचांतोवाग्मतशुचि ।
भूञ्जतान्नंचतच्चित्तोह्यन्तर्जानुःमदानरः ॥२८

केशविन्यास, दन्तधावन दर्पण में सम्मुख दर्शन और देव तर्पण कार्य पूर्वाह्न में करे ।२२। ग्राम, निवास, तीर्थ क्षेत्र, मार्ग, जुता खेत गौओं के स्थान में मल, मूत्र का त्याग न करे ।२३। पर नारी को नङ्गी न देखे, अपने मल को न देखे, ऋतुमती स्त्री को देखना, स्पर्श करना या उससे वार्तालाप करना अनुचित है ।२४।जल में मल-मूत्र का त्याग और मैथुन कर्म न करे । मल-मूत्रवाल,भस्मकपालतुष, अंगार, अस्थि, रजो वस्त्रादि मार्ग की मिट्टी के ऊपर कभी न बैठे ।२५-२६। अपने वित्तनुसार सर्व प्रथम पितर देवता, मनुष्य, भूत आदि का पूजन कर फिर स्वयं भोजन करे ।२७। आचमन के अन्त में वाणी संयम पवित्रता और अन्तर्जानु से पूर्वाभिमुख या उत्तराभिमुख बैठकर एकाग्र चित्त से भोजन करे ।२८।

उपघातमृतेषनात्रस्योदीरयेद्बुधः ।
प्रत्यक्ष लवणंवर्जमन्नांमत्युष्णमेवच ॥२९
नगच्छन्नैवतिष्ठन्वैविण्मूत्रोत्सगमाचरेत् ।
कुर्वीतनैवचाचामेन्नंकिंचिदपिक्षयेत् ।३०
उच्छिष्टोनालपेत्किंचित्स्वाध्यायंचविर्जयत् ।
गांब्राह्मणंतथाचाग्निस्वमूर्धान्नंचनस्तुशेत् ॥३१

नचपश्येद्रविनेन्दुननक्षत्राणिकामतः ।
भिन्नासनतशाशय्याभाजनंचविवर्जयेत् ।३२
गुरुणामासनंदेयमभ्युत्थानादिसत्कृतम् ।
अनुकूलंतथालाःमाभिवादनपूर्वकम् ।३३
तथानुगनंकुर्यात्प्रतिकूलेनसेलपेत् ।
नेकवस्त्रश्चभुञ्जोनकर्याद्देवतार्चनम् ।३४
नागह्येद्विजान्नाग्नौमेहकुर्वीनबुद्धिमान् ।
नस्नायीमनरोनग्नोनशयीतकदाचन ।।३५

किसी प्रकारका अनिष्ट या उत्तेजन करने वाले व्यक्तिके दोषोंको न खोले, अधिक नमक या अत्यन्त गरम अन्न का भोजन न करे ।२६। चलते हुए या बैठेहुए मल-मूत्रका त्यागन करे,आचमन करके फिरकिंचित भीअन्न न खाये।३०।उच्छिष्ट देहसे किसीसे बात न करे तथाइस अवस्था में वेदाध्ययन न करे तथा गो,ब्राह्मणअग्नि और अपने मस्तकका स्पर्श न करे। २। उच्छिष्ट देह से सूर्य चन्द्रमा और नक्षत्र का दर्शनभी स्वेच्छासे न करे । टूठे आसन,टूटी शय्या औरटुटे पात्रको त्यागदे ।३२।गुरुकी देख कर उठकर खड़े होने इत्यादिसे सत्कारपूर्वक आसनदे और प्रणाम करके अनुकूल वार्तालाप करे।३८।उनके गमन समय उनके पीछे चले, प्रतिकूल वचन न कहे,एकही वस्त्र से भोजन और देवपूजन न करे।३४।द्विजाति की निन्दा न करे, अग्नि में मूत्रादि न छोड़े, नग्न होकर स्नान अथवा शयन न करे ।३५।

नपाणिभ्यामुभाभ्यांचकण्डूयेतशिरस्तथा ।
नचाभीक्ष्णशिरःस्नानं कार्यनिष्कारणैनरैः ।३६
शिरःस्नातश्चतैलेननाङ्गङ्किञ्चिदपिस्पृशेत् ।
अनध्यायेषूसर्वेषस्वाध्यापंचविवर्जयेत् ।३७
ब्राह्मणानलगोसूर्यान्निमेहेतकदाचन ।
उदङ् मुखोदिवारात्रावृसर्गदक्षिणामुखः ।३८

आबाधासुयकथाकामंकुर्यान्मूपुरीषयोः ।
दुष्कृतंनगुरोब्रूयात्क्रुद्धंचौन प्रसादयेत् ।३९
परीवादनश्रणुयादन्येषामपिकुर्वताम् ।
पन्थादेयोब्राह्मणानांराज्ञोदुःखातुरस्यच ।४०
विद्याधिकस्यगुर्विण्याभारार्त्तेस्यवीयसः ।
मूकान्धबधिराणांचमत्तस्योन्मत्तकस्यच ।४१
पुंश्चल्याकृतवैरस्यबालस्यपतितस्यच ।
देवालयचैत्यतरुतथैवचचतुष्पथम् ।४२
विद्याधिकंगुरुंचौवबुधःकुर्यात्प्रदक्षिणम् ।
उपानद्वस्त्रमाल्यादिधृतमन्यैर्नधारयेत् ।४२

दोनों हाथों से मस्तक न खुजावे, अकारण स्नान तथा सदैव शिर से स्नान न करे ।३६। शिर से करने के अन्त में किसी अङ्ग में तेल न लगावे, अनध्याय के दिनों में वेदाध्ययन को न करे ।३७। गौ ब्राह्मण, सूर्य और अग्नि के सामने मल मूत्र का त्याग न करे, दिनमें उत्तर की ओर मुख करके तथा रात्रि में दक्षिण की ओर मुख करके ।२८। निर्विघ्न स्थान मल मूत्र का त्याग करे, गुरु के दुष्कर्म को किसी प्रकार प्रकट न करे तथा उनके कुपित होने पर उन्हें प्रसन्न करे ।३६। यदि कोई अन्य उनकी मिथ्या निन्दा करे तो उसे न सुने, ब्राह्मण, राजा दुःख से आतुर ।४०। अपने से विद्वान्, गर्भिणी नारी, भयातुर, युवक, गूंगा, अन्धा, बहरा, मत्त, उन्मत्त ।४१। पुंश्छली, बैरी बालक और पतित इनको मार्ग देवालय. चैत्य, चौराहा ।४२। अपने से अधिक विद्या वाला, गुरु, देवता तथा बुद्धिमान की परिक्रमा करे, किसी के पहिने हुए जूता, वस्त्र और माला आदि को धारण न करे ।४३।

उपवीतपलङ्कारङ्करचेवंवर्जयेत् ।
प्रशस्तानिचकर्माणिकुर्वाणादीर्घजीविनः ।४४
चतुर्दश्यातथाष्टम्यापञ्चदश्याचपर्वसु ।
तैलाभ्यङ्गंतथाभोगंयोषितश्चविवर्जयेत् ।।४५

नक्षिप्तपादजङ्घश्चप्राज्ञास्तिष्ठेत्कदाचन ।
नवापिविक्षिपेत्पादौपादेननाक्रमेत् ॥४६
मर्माभिघातमाक्रोशपैशुन्यंचविवर्जयेत् ।
दम्भाभिमानतैक्ष्ण्यानिनकुर्वीतविचक्षणः ॥४७
मूर्खोन्मत्तव्यसतिनोविरूपान्मायिनस्तथा ।
न्यूनाङ्गाश्चाधिकाङ्गाश्चनोपहासे नदूषयेत् ।
परस्यदण्डनोद्यच्छेच्छिक्षार्थंपुत्रशिष्ययोः ॥४८
तद्वन्नोपविशेत्प्राज्ञपादेनाक्रम्यचासनम् ॥४९

दूसरे का पहिना हुआ जनेऊ विभूषण और कमण्डलु ग्रहण न करे, जो प्रशस्त कर्म करता है । वही दीर्घजीवी होता है ।४४। चौदश, पंद्रस, अष्टमी और पर्व दिवस में तल न मले वथा स्त्री सङ्ग भी न करे ।४५। पर या जाँघ फैल कर न बैठे, पैर पर पैर मारना और लात मारना भी अनुचित है ।४६। किसीके मर्म को व्यथित न करे, किसी को न कोसे चुगली न करे दंभ अभिमान और तीखे व्यवहार को छोड़ दे ।४९। मूर्ख उन्मत्त दुःखी आपद्ग्रस्त, विरूप, मायावी, अङ्गहीन अथवा आधिकाँग को हँसी उडाकर न छेड़े, दूसरे के प्रति दन्डका प्रयोग न करे, परन्तु पुत्र या शिष्य को उपदेश देने के लिये आवश्यक हो तो दण्ड का प्रयोग करे ।४८। पाँवों से आक्रमण करता हुआ आसन पर न बैठे, केवल उदर पूर्ति के लिए भोजन करे ।४९।

सायंप्रातश्चभोक्तव्यंकृत्वाचातिथिपूजनम् ।
उदङ्मुखःप्राङ्मुखोवावाग्यतोदन्तधावनम् ॥५०
कुर्वीतसततवत्सवर्जयेद्वर्ज्यवीरुधः ।
नोदक्छिराःस्वपेज्जातुनचप्रत्यक्छिरानरः । ५१
शिरस्यगस्त्यमास्थायशयीताथपुरन्दरम् ।
नतुगन्धर्वतोष्वन्प्सुस्नायीतनतथानिशि ॥५२
उपरागेपरस्नानमृतेदिनमुदाहृतम् ।
अपमृज्यान्नचास्नातोगात्राण्यम्बरपाणिभीः ॥५३

नचापिधूनयेत्केशन्वाससीनचधूनयेत् ।
नानुलेपनामादद्यादस्नातः कर्हिचिद्बुधः ॥५४
नचापिरक्तवासाःस्याच्चित्रासितधरोऽपिवा ।
नचकुर्याद्विपर्याद्विपर्यासवाससोर्नाहिभूषणे ॥५५

प्रात-सायँ अतिथि का पूजन करके स्वयं भोजन करे तथा वाणी को रोककर पूर्वाभिमुख या उत्तराभिमुख बैठ कर दाँतुन करे ।१०। वर्जित काष्टादि का दाँतुन में प्रयोग न करे, उत्तर अथवा पश्चिम को शिर करके के न सोवे ।५१। दक्षिण या पूर्व की ओर शिर करके सोवे' दुर्गन्धित जल अथवा रात्रि के समय स्नान न करे ।५२। रात्रि स्नान ग्रहण काल में हा करे, स्नान के पश्चात् वस्त्र या हाथ से शरीर का मार्जन न करे ।५३। गीले केश वा गीले वस्त्र को न फटकारे, विना स्नान किये चन्दनादि धारण न करे ।४४। लाल, काले या चित्रित वस्त्र न पहिने, उत्तरीय वस्त्र या भूषण आदि को विपरीत ढङ्ग से न पहिने ।५५।

वर्ज्यंचविदशंवस्त्रमत्यन्तोपहतंचयत् ।
केशकीटावपरन्नंचक्ष ण्णश्चभिरवेक्षितम् ॥५८
अवलीढ़ावन्नं चसारोद्धारणदूषितम् ॥५७
नभक्षयीतसततप्रत्यक्षालवणानिज ।
वर्ज्यंचिरोषितंतुत्रभुक्तं पर्येषितंचयत् ॥५८
पिष्टशाकेक्षुपयसाँविकरान्नृपनन्दन । .६
ददयास्तमनेभानोःशयनचविवजयेत् ।
नास्नातोनैवसिष्टोनचैवान्यमनानरः ॥६०
नचैकशयनेनोर्व्यांसुपविष्टोशब्दवत् ।
नचैकवस्त्रोनवदन्प्रेक्षतामप्रदायच ॥६१
भुंजीतपुरुषस्नातःसायंप्रातर्यथाविधि ।
परदारानगन्तव्य पुरुषेणाविपश्चिता ॥६२
इष्टापूर्त्तायुषांहन्त्रीपरदारगतिर्नृणाम् ।
नहीदृशमनायुष्यंलोकेकिंचनविद्यते ॥६२

याद्दश पुरुषस्येहपरदाराभिमर्शनम् ।
देवा-ंनाग्निकार्याणितथागुर्वभिवादनम् ।।६४

दशान्न्य जीर्ण एवं छिन्न वस्त्रों का सर्वथा त्याग करें, वाल या कीड़े से युक्त, श्वान द्वारा देखा हुआ ।५६। अथवा चाटा हुआ या सार निकाला हुआ अन्न ।५७। तथा प्रत्यक्ष रूप से नमक कभी न खाय बहुत दिनों का रखा हुआ अथवा बासी अन्न का भोजन न करें ।५८। हे पुत्र ! पिट्टी, शाक, ईख, और दूध के विकार को त्याग दे ।५८। सूर्योदय या सूर्यास्त के समय न सोवे अथवा दूसरी ओर मन लगा कर भो शयन न करे ।६०। शय्या में या मृतिका में 'हा' कहकरन बैठे उत्तरीय उतार कर एक वस्त्र से भोजन न करे , बात करते हुए भी भोजत न करे, जो सामने बैठाहो उसे खिलाये विना स्वयंत खाय।६१। प्रातःसाय विधि सहित स्नान करकेही भोजन करे, परनारी गमन कभी न करे, ।६२। क्योंकि परनारी गमन से इष्टापूर्त नष्ट होता है और दीर्घायु का ह्रास होता है, इस लोकमें इस पापके समान कोई पाप नहीं है । देव-पूजन अग्निकार्य औरगुरुजनोंके प्रणामसदा कर्त्तव्य है।६३-६४।

कुर्वीतसम्यगाचम्याद्धदन्नभुजिक्रियाम् ।
अफेनाभिरगन्धाभिरद्भिरच्छाभिरादरात् ।६५
आचामेत्पुत्रपुण्याभिःप्राङ्मुखावाप्युदङ्मुखः ।६६
कृतशौचावशिष्टाश्ववर्जयेत्प चवैमृदः ।
प्रक्षाल्यहस्तौपादोचसमभ्युक्ष्यसमाहितः ।६७
अन्तर्जानुस्तथाचामेत्रिश्चतुर्वापिवेदपः ।
परिमृज्यद्विरास्यान्तखानिमुर्धानमेवच ।६८
सम्यगाचम्यातोयेनक्रियाकुर्वीतमैशुचिः ।
देवतानामृषीणांचपितृणांचपितृणांचैव्यत्नत ।६९
समाहितमनाभूत्वाकुर्वीतसततनरः ।
क्षुत्वांनिष्ठीव्यवासश्चपरिधायाचमेद्बुधः ।७०

भले प्रकार आचमन करके अन्न भोजन कार्यको सम्पूर्ण करे । फेन

रहित, गन्ध-रहित स्वच्छ और पवित्र जल लेकर ।६५। पूर्वाभिमुख या उत्तराभिमुख होकर आचमन करे, जल के भीतर की, निवास गृह की, बाँबी की चूहे की बिल की ।६६। तथाशौच क्रियासे बची हुई मिट्टीको न ले, एकाग्र मन से हाथ पाँव धोकर शौच करे ।६७। दोनों जानु समेट कर बैठे तीनचार बार जलपान रहित आचमन करे दो बार मुख के इधर-उधर तथा मुख में दो बार मस्तक और इन्द्रिया द्वार को माँजते हुए ।६८।भलेप्रकार आचमन करके क्रियाका अनुष्ठान करके तथा सदैव एकाग्र मन से देव, ऋषि और पितरों का ।६९। कार्य, हिचकीयाँ खखारके पश्चात् आचमन करनाचाहिए और वस्त्र पहिननेके पश्चात्भी आचमान करना उचित है ।७०।

क्षुतेऽवलीढे वान्तेचतथानिष्ठीबनादिषु ।
कुर्यादाचमनस्पर्शंगोपृष्टस्यार्कदर्शनम् ।७१
कुर्वीतालम्बनंचापिदक्षिणश्रवणस्ववै ।
यथाकिंभवनोह्यनस्पूर्वाभावेततःपरम् ।७२
अविद्यमानेपूर्वोक्ते उत्तरप्राप्तिरिष्यते ।
नकुर्याद्दन्तसंघर्षनात्मनोदेहताडनम् ।७३
स्वप्नाध्ययनभोज्यानिस्वाध्यायंचविवर्जयेत् ।
सन्ध्यायांमैथुनंचापितथाप्रस्थानमेवच ।७४
पूर्वाह्णेवातदेवानांमनुष्याणांचमध्यमे ।
भक्त्यातथापरोह्णेचकुर्वीतपितृपूजनम् ।७५
शिरःस्नातश्चकुर्वीतदैवंपित्र्यमथापिवा ।
प्रङ्मुखोदङ्मुखोवापिश्मश्रुकर्मचकारयेत् ।७६
व्यङ्गांविवर्जयेत्कन्यासकुलांचापिरोगिणीम् ।
विकृतांपिंगलांचैववाचालांसर्वदूषिताम् ।७७

छींक,वमन, निष्ठीन अथवाकिसी वस्तुके चाटनेपरभीआचमन करे, गोपृष्ठकका अवलोकन या सूर्यका दर्शन ।७१। कथवा दक्षिण श्रोत्र का स्पर्श करे। उनमें क्रमशः पहिलेके अभावमें दूसरे को करे।७२।क्योंकि पहिलेका अभाव होनेपर दूसरेकाग्रहणही श्रेष्ठ कहाहै।दाँतसे दाँतको न

घिसे तथा अपने शरीर का ताड़न न करे ।७३। प्रातः संध्या या साँय संध्या के समय शयन अध्ययन और भोजन न करे सध्याकाल में मैथुन अथवा प्रस्थान का निषेध है ।७४। पूर्वाह्न में देवताओं का मध्याह्न में मनुष्यों का एवं अपराह्न में पितरों का पूजन करे ।७५। शिर से स्नान करके पितरों या देवताओं के अनुष्ठानमें प्रवृत्त हो, पूर्वाभिमुख या उत्तराभिमुख होकर और कर्म न करावे ।७६। रोगिणी, विकलांगी, पिंगल वर्ण वाली, वाचाल अथवा दूषित कन्या चाहे सद्वंश में ही उत्पन्न क्यों न हुई हो, उसे ग्रहण न करे ।७७।

अध्यगांगीसौम्यनाम्नीसर्वलक्षणलक्षिताम् ।
तादृशीमुद्वहेत्कन्यांश्रेयःकामोनरःसदा: ॥७८
उद्वहेत्पितृमातृश्चसप्तमोपंचमीतथा ।
रक्षो द्दारान्त्यजेयेदीर्षादिवाचस्वप्नमैथुने ।७९
परोपतापककर्मेजन्तुपीडांचवर्जयेत् ।
उदक्याःसववर्णानांवर्ज्यारात्रिचतुष्टयम् ॥८०
स्त्रीजन्मपरिहारार्थपंचमीमपिवर्जयेत् ।
ततःषष्ठ्यांव्रजेद्रात्र्यांश्रेष्ठायुगं सुपुत्रक ॥८१
पर्वाणिद्वयेन्नित्यसृतुकालेपियोषितः ।
तस्मान्नित्यंन्नरोगच्छेषयुग्मासुपुत्रक ॥८२
युग्मासुपुत्राजायन्तेस्त्रियोऽयुग्मासुरात्रिषु ।
तस्माद्युग्मासुपुत्रार्थीसैविशेतसदानरः ॥८३

कल्याण के इच्छुक पुरुष को सर्वागपूर्ण, सुधार नासिका एवं सब सुलक्षणों से युक्त कन्या से विवाह करना चाहिये।७८।पिता या माताकी सात अथवापाँच पीढ़ी छोड़करहो परस्पर विवाहकरे पुरुषकाकर्त्तव्यहैकि स्त्री की रक्षा करे और ईर्ष्याका त्यागकरे दिनमें शयन या मैथुन न करे ।७९।दूसरों को संताप देनेवाले या प्राणियोंको क्लेशप्रद कार्योंको न करे सभी वर्णोंको ऋतुमयी स्त्रीका चारदिन सङ्गत्याग करना चाहिये ।८०। जोपुरुष कन्याका जन्मनहीं चाहतावह पाँचवीरात छोडकर छठवींरातमें स्त्री संग करे,क्योंकि इसकेलिए युग्म रात्रिही श्रेष्ठ मानी गयीहै।।८१।

ऋतुकाल के दिन चौदस, अमावश, अथवा अष्टमी सक्रांति काल में नारी समागम न करे ।८२। युग्म रात्रि के सयम से पुत्र और अयुग्म रात्रि के समागमसे कन्या की उत्पत्ति होती है, इसलिये पुत्रेच्छुकों को युग्म रात्रि में सङ्ग करना चाहिए ।८३।

विर्मिणोऽन्हिपूर्वाख्येसन्ध्याकालेचषन्डका: ।
क्षुरकर्मणिबान्तेचस्त्रीसंभोगेचपुत्रक ।८४
स्नायीतचैलवान्प्राज्ञ: कटभूमिमुपेत्मचा ।
देववेदद्विजातीनांसाधुसभ्यमहात्मनाम् ।
गुरी: पतिव्रतानांचतया जिवपस्विनाम् ।
परीवादंनकुर्वीतपरिहासवपुत्रक ।८६
कुर्वतामविनीतानां नश्रोतव्य कथंचन ।
देवपित्र्यातिथेयाश्चक्रिया कुर्वीतवैबुध: ।८७
स्वाध्यायंवापिकुर्वीतयथाशकरत्याह्मतन्द्रित: ।
नोत्कृष्टशय्यासनयान्नांपकृष्टस्तचारुहेत् ।८८
नचामङ्गल्यवेष: स्यान्नचामङ्गल्यवाग्भवेत् ।
धवलाम्बरसर्वीता: सितपुष्पविभूषित: ।८९
नोद्धतोन्मत्तमूढैश्चनाविनीतैश्चपण्डित. ।
गच्छेन्मैत्रीनचाशोलर्नचचौर्यादिदूषितै: ।९०
नवातिव्ययशीललैश्चनलुब्धैर्नापिवैरिभि ।
नानृतकैस्तथाक्रूरै' सहासीतकदाचन ।
नबन्धकीभिर्न न्यूनैर्बन्धीपतिभिस्तथा ।९१
सार्द्धनुवलिभि: कुथन्निचन्यूनैर्निन्दितै: ।
नसर्वशङ्किभिर्नित्यंजचदैवपरैर्न ।९२

पूर्वाह्न में नारी सङ्ग से विधर्मी और सायंकाल में सङ्ग करने में नपुंसक पुत्र की उत्पत्ति होती है। क्षौर कर्म, वमन और स्त्री सङ्ग के पश्चात् ।८४। तथा श्मशान भूमि में जाने पर वस्त्र सहित स्नान करे। देवता वेद ब्राह्मण सत्य निष्ठ-महात्मा ।८५। गुरुजन, पतिव्रता, यज्ञऔर

तप परायण पुरुष इनकी हँसी न उड़ावे ।८६। यदि कोई अविनय बाल पुरुषइनकी निन्दाकरेतो उधर ध्यान न दे, देवता, पितरऔर अतिथिका पूजन सदा करे ।८७। सावधान चित्त से वेदाध्ययन करे, अपनेसे श्रेष्ठ या निम्न मनुष्य की शय्या अथवा आसन पर न बैठे ।८८। अमङ्गल वेश न धरे, अमङ्गल वचन न कहे, श्वेत वस्त्रऔर सित पुष्प धारण करे ।८९। उद्धत, उन्मत, मूर्ख, विनय-रहित, चौर-कर्म से दूषित ।९०। अपरिमित व्यय करने वाला, लुब्ध, शशु, व्यभिचारिणी का पति ।९१। नीचाशय निन्दित सदा शका युक्त, इनके साथ कभी मित्रता न करे ।९२।

कुर्वोंनसाधुभिर्मैत्रीसदाचारावलम्बिभिः ।
प्राज्ञै रपिशुनैः शक्तैः कर्मण्युद्योगभागिभिः ९३
वेदविद्याव्रतस्नातैः सहासीतससदाबुधः ।
सुहृद्दीक्षितभूपालस्नातकश्वशुरै' सह ।
ऋत्विगादीन्षेडर्घादर्चयेच्चगृहागतान् ।।९४
यथाविभवतः पुत्रद्विजान्सवत्सरोषितान् ।
अर्चयेन्मधुपर्केणयथाकालमतन्द्रितः ।९५
तिष्टेच्चत्रशासनेतेषांश्रेयस्कामोद्विजोत्तमः ।
नचतान्विवदेद्धीमानाक्रुष्टश्चापितैः सदा ।९६
सम्यग्गृहार्चनं कृत्वायथास्थानमनुक्रमात् ।
सपूजयतेश्भृतोवन्हिदद्याच्चैवाहुतीः क्रमात् ।९७

सदाचारी साधु मनुष्यों के साथ ही मित्रता करे, बुद्धिमान् उद्योगी कोमित्र बनावे।९३।वेदज्ञानसे युक्त, विद्वान्,व्रत परायण और स्नातकका संग करे। सुहृद,दीक्षित,राजा स्नातक श्वशुरतथा ऋत्विक्, यहछैओंअर्घ्य देने के लिए उपयु क्त पात्र हैं । जब यह घर पर आवेतो इसका पूजनकरे ।९४।हे पुत्र ! उपर्यु क्त छः जनोंके आगमनपर यदिवे संवत्सरके व्यतीत होने पर आवें तो मधुपर्क से उनका पूजन करे ।९५। यदिकल्याण चाहे तो उनकी, आज्ञाका पालन करे और 'उनके द्वारा क्रोध व्यक्त करनेपर

भी उनसे विवाद न करे ।९६। भलेप्रकार गृह पूजन करके अग्निकापूजन करे और आहुत दे ।९७।

प्रथमांब्रह्मणंदद्यात्प्रजानांपतयेततः ।
तृतीयांचैवगुह्येभ्यः कश्यपायतथापराम् ।९८
ततोऽनुमतयेदत्वादद्याद्गृहवलिततः ।
पूर्वंख्यातोमय यस्तेनित्यकर्मक्रियाविधिः ।९९
वैश्वदेव तत. कुर्याद्वययस्तत्रमेश्रृणु ।
यथास्थानविभागतुदेवानुद्दश्यवैपथक् ।१००
पर्जन्यादभयोधरित्र्यैचद्याच्चमणिकेत्रयम् ।
तयोधातुर्विधातुश्चदद्याद्द्वारेगहस्यम्तु ।
वायवेचप्रतिदिशंदिग्भ्यःप्राच्यादितःक्रमात् ।१०१
ब्रह्मणेचान्तरितिक्षायसूर्यायचयथाक्रमम् ।
विश्वेभ्यचैवदेवेभ्योविश्वभूतेभ्य एवच ।१०२
उषसेभूनयेदद्याच्चोत्तरतस्ततः ।
स्वधानमस्तीत्युक्त्वापितृभ्यश्चापिदक्षिणे ।१०३
कृत्वानसव्यवायव्या यक्ष्मैतत्तेतिभाजनात् ।
अन्नावशेषमिच्छन्वैतोयंद्याद्यथाविधि ।१०४
ततोन्नाग्रंसमुद्धृत्यहन्तकारोकल्पनम् ।
यथ विधि यथान्याय ब्राह्मणोपपादयेत् ।१०५

प्रथम आहुति ब्रह्माजी के निमित्त, दूसरी आहुति प्रजापतिकोतीसरी गुह्यकगण को और चौथी आहुति कश्यप को ।९८। फिर पाँचवी आहुति अनुमति के उद्देश्य से दे और फिर जिस नित्य कर्मका वर्णन किया जा चुकाहै,उसीकेअनुसार गृहबलिप्रदान करे।९९।फिर वैश्वदेवको बलिप्रदान करे उसके नियमयह हैकिस्थानविभाग केअनुसार देवताओंके लिये प्रथक् पृथक्बलि प्रदानकरे ।१००।फिरपर्जन्य अन्नऔर पृथिवीकोतीनवलितथा वायु को भी बलि दे तथा पूर्वादि के क्रमसे प्रत्येक दिशामें वलिदे।१०१। फिरउत्तरदिक्षामें ब्रह्माआन्तरिक्षमें सूर्य,विश्वेदेवा व विश्वभूतगण।१०

उषा और भूतपति के निमित्त बलि देकर स्वधा नम- उच्चारण करके दक्षिणा में पितरों के लिए बलि दे ।१०३। फिर अन्नावशेष की कामना करे और अपसव्य होकर मैं 'यक्ष्मैतत्ता' इत्यादि मन्त्र पढ़कर जलाधर से जल लेकर विधिवत् जल दे ।१०४। फिर अन्न के अग्र भाग को तोड़े और हस्तकार की कल्पना कर ब्राह्मण को दे ।१०५।

कुर्यात्कर्माणितीर्थेनस्वेनेऽबनयथाविधि ।
देवादीनांतथाकुर्यात्ब्राह्मेणाचमनक्रियाम् ।१०६
अंगुष्ठोत्तरतोरेखापाणेयदक्षिणस्यतु ।
एतद्ब्राह्ममितिच्यातंतीर्थमाचाम ायवै ।१०७
तजन्यङ्गुष्टयोरन्तः तंत्र तीर्थनुदाहृतम् ।
पित्रणांतेनेतोयादिदद्यान्नान्दीमुखाहृते ।१०८
अंगुल्यग्रे तथादैवतेनदिव्यक्रियाविधिः ।
तीर्थकनिष्ठकामूलेकायंत्तेनप्रजापतेः ।१०९
एवमेभिः सदातीर्थेर्देवानांपितृभिः सह ।
सदाकार्याणिकुर्वीतनान्यत्तीर्थेनकर्हिचित् ।११०
ब्राह्मेणाचमनं शस्तंपित्र्यं पैत्रेणसर्वदा ।
देवतीर्थेनदेवानांप्राजापत्य निजेनच ।१११
नान्मीमुखानांकुर्वीतप्राज्ञः पिन्डोदकक्रियाम् ।
तुाजापत्येनतीर्थे नयच्चांकिञ्चित्प्रजापते। ।११२

फिर स्वीय तीर्थ योग में विधान के अनुसार कर्मकरे और देवतादि के निमित्त ब्रह्मतीर्थ द्वारा आचमन करे ।१०६। दक्षिण हाथके अंगुष्ठ की उत्तर दिशा में जो रेखा है, वही ब्राह्मतीर्थ है, इसी तीर्थ के द्वारा आचमनका विधान है ।१०७। तर्जनी और अगूंठा मध्य स्थल पित्रतीर्थ है, नान्दीमुख के अतिरिक्त अन्याय सब क्रियाओं में पितरों के निमित्त इसी पितृतीर्थ से जलादि से ।१०८। अंगुली के अग्र भाग में देवतीर्थ है, उसी के द्वारा देवक्रिया की विधि का समापन करे कनिष्ठा के मूल में काय नामक तीर्थ है उसके द्वारा प्रजापति का कार्य करना चाहिए ।१०९। इस प्रकार इस सब तीर्थों द्वारा

सदैव देवता और पितरोंकी क्रिया करे, अन्य तीर्थके द्वार कभी न करे ।११०। ब्रह्मतीर्थ द्वारा ही आचमन करनेका विधान है, पितृ तीर्थ द्वारा पितृकार्य, देवतीर्थद्वारा देवकार्य और कार्यतीर्थ द्वारा प्रजापति का कार्य करना चाहिए ।१११। जिस प्रकार कार्यतीर्थ अर्थात् प्राजापत्य जीव द्वारा प्रजापति का कार्य करनेका विधान है, उसी प्रकार कार्यतीर्थ द्वारा ही नान्दीमुख पिण्डीदक कर्म करना चाहिए ।११२।

युनपज्जलमग्निचबिभृयान्नविचक्षण ।
गुरुदेवान्प्रतितथानचापादौप्रसारयेत् ।११३
नाचक्षीतधयन्तीगाजलंनाञ्जलिनापिबेत् ।
शौचकालेषुसर्वेषुगुरुत्वल्पेषुत्रापुनः ।११४
नविलम्बेशौचार्थनमुखेनानलंधमेत् ।
तत्रपुत्रवत्तव्य यत्रनास्तिचतुष्टयम् ।११५
ऋणप्रदाता वैद्यश्चश्रोत्रियः सजलानदी ।
जितामित्रोनृपोयत्रवलवान्धर्म तत्परः ।११६
तत्रनित्यंवसेत्प्रायः कुतः कुननृपतः सुखम् ।
यत्राप्रधृष्योनृपनिर्यत्रसस्यवतामही ।११७
पौराः सुसयतावत्रसततन्यायवर्त्तिनः ।
यत्रामत्सरिणोलोकास्तत्रवासः सुखोदयः ।११८
यस्मिन्कृषोवलाराष्ट्रे प्रायशोनातिभोगिनः ।
यत्रोषधान्यशेषाणिवसेत्तन्नविचक्षणः ।११९
तत्रपुत्रनवस्तीययत्रै तत्त्रितयंसदा ।
जिगोषुपूर्ववैरश्चजनश्चसततोत्सवः ।१२०
वसेन्नित्यं सुशीलेषसहवासिषुपण्डितः ।
इत्येतत्कथितंपुत्रमयातेहितकाम्यया ।१२१

एक साथ ही जल अग्नि का धारण करना अनुचित है, गुरु वर देवता के सामने पैर फैलानाभी निषिद्ध है ।११३। बछड़ेको दूध पिलाने लगी हुई गौको न बुलावेऔर अञ्जलिसे जल न पीवे अधिकअथावान्यून

सब प्रकार की शौच क्रिया शीघ्रता से करे तथा मुख की फूंक से अग्नि को प्रज्वलित न करे तथा जहाँ यह चार वस्तु न हों, वहां न रहे ।११५।ऋण देने वाला, वैद्य, श्रोत्रिय तथा जल वाली नदी ।जिसस्थान पर शत्रु विजेता बली एवं धर्मज्ञ राजा रहता हो ।११६। उस स्थान में सदा रहे, क्योंकि कुराजा के राज्य में सुख नहीं हो सकता । जिस देश का राजा दुर्धर्ष है तथा जहाँ की भूमि धान्य से परिपूर्ण है ।११७।जहाँ के पुरवासी नियमों का पालनकरते और न्याय मार्ग पर चलते है, जहाँ के मनुष्यों में तात्सर्य नहीं हैं, वहाँ निवास करने से सुख का उदय होता है ।११८। जहाँ के किसान अति भोग वाले नहीं है, और जहाँ असख्या-संख्य औषधियाँ प्राप्त होती हैं उसी स्थान मे निवास करना चाहिए । ।११६। जहाँ जिगीषा युक्त, पूर्व शत्रु और उत्सवोन्मत्त मनुष्य रहते हों वहां कभी न रहे ।१ ०। सुशील मनुष्यों का निवास हो वहां रहना चाहिये, यह सब मैंने तुम्हारे हित के लिये ही कहा है ।१२ ।

२८. अलक को शासन युक्त अंगूठी की प्राप्ति

मएवमुनिशिष्टः सन्मात्रासम्प्राप्ययोवनम् ।
ऋतध्वजसुतश्चक्रे सम्यग्दारपरिग्रहम् ।१
नुत्रांश्चोत्पादयामातयज्ञै श्चाप्ययजद्विभुः ।
पितुश्चसर्वकालेषुचकाराज्ञानुपालनम् ।२
ततःकालेमहतं सम्प्राप्यचरमंवयः ।
चक्रेऽभिषेकं पुत्रस्यतस्यराज्येऋतध्वजः ।३
भार्ययासहधर्मात्मायियायुस्तपसेवनम् ।
अबतीर्णोमपीरक्षीमहाभागीमहीपतिः ।४
मदालसावतनयाप्राहेदं पश्चिमं वचः ।
कामोपभोगसंसर्ग प्राहाणाथसुतस्यवै ।५

यदादु:खमसह्यन्तेप्रियबन्धुवियोगजम् ।
शत्रु बाधोद्भवंचापिवित्तनाशात्मसम्भवम् ।६
भवेतत्कुर्वनोराज्यगृहधर्माविलम्बिन: ।
दु:खायतनभूतोहिममत्वालम्बनोगृही ।७
तदास्मात्पुत्रयिष्कृप्यमद्दत्तादगुलीवकात् ।
वाच्यंतेशासनंपट्टेसूक्ष्माक्षरनिवेशितम् ।८
इत्युक्त्वाप्रददौस्मैसौवर्णमांनुलीयकम् ।
आशिषश्चापियायोग्या: पुरुषस्यगृहेसत: :९
तत: कुवलयाश्वोऽसौसाचदेवीमदालसा ।
पुत्रायदत्वातद्राज्यंतपसेकाननङ्गतौ ।

जड़ ने कहा—माता के इस प्रकार उपदेश देने पर ऋतध्वज के पुत्र ने युवावस्था प्राप्त होने पर विधिपूर्वक विवाह किया और पुत्रोत्पादन और विविध यज्ञों का अनुष्ठान करते हुए पिता की आज्ञा के अनुवर्ती हुए ।१-२। फिर बहुत काल व्यतीत होने पर धर्मात्मा राजा ऋतध्वज ने पत्नी सहित बन में जाने की इच्छा से पुत्र को राज्यपद में अभिषिक्त किया ।३-४। तब पुत्र को भोगादि से निवृत्त करनेके विचार से मदालसा ने इस प्रकार कहा—जब तुम्हारे समक्ष किसी प्रिय अथवा बन्धु का वियोग शत्रु बाधा या धननाश का दु.ख उपस्थित हो ।५-६। क्योंकि गृहस्थ सदा ममता परायण है अत: स्वाभाविक रूप सेहो आपद् काल आवे तो मेरे द्वारा प्रदत्त इस अंगुलीय से पत्र बाहर निकाल कर मध्यस्थ सूक्ष्म अक्षरों में लिखे शासन का पाठ करना ।७-८। जड़ बोला—इस प्रकार कहती हुई मदालसा ने अपनी स्वर्ग की अंगूठी देते हुए अपने पुत्र को गृहस्थोचित्त आशीर्वाद दिया ।९। अपने पुत्र के राज्य देकर कुवलयाश्व तप करने के लिए मदालसा के सहित वन में गये ।१०।

२६–अलर्क को आत्म विवेक

सोऽप्यलर्कोंयथान्य पुत्रवन्मुदिताः प्रजाः ।
पालयामासधर्मात्मास्वेकर्मण्यवस्थिताः १
दुष्टेषदंडंशिष्टेषुसम्यक्चपरिपालनम् ।
कुर्वन्परामुदंलेभेइयाजचमहामकैः ।२
अजायन्नसुश्चास्यमहाबलपराक्रमाः ।
ध त्मिानोमहात्मानोविभार्गपरिपन्थिनः ।३
चकारसोऽर्थधर्मेणधर्ममर्थेनवापुनः ।
तयोश्चैवाविरोधेनबुभुजेविषयानपि ।४
एवंबहूनिबर्षाणितस्यपालयतोमहीम् ।
धर्मार्थकामसक्तस्यजग्मुरेकमहर्यथा ।५
वैराग्य नास्यसजज्ञे भुञ्जतोविषयान्प्रियान् ।
नचाप्यलमभूत्तस्तधर्मार्थोपार्जनंप्रति ।६
ततथाभोगससर्ग प्रमत्तमजितेन्द्रियम् ।
सुवाहुनामिशुश्रावभ्रातातस्यवनेचरः ।७

जड वोला–धर्मात्मा अलर्क ने न्याय पूर्वक प्रजा का पुत्र के समान पालनकिया। इसप्रकार आनन्दकोप्राप्त होतेहुएवेअपने नियतकार्यानुष्ठान में लगे ।१। उन्होंने दुष्टोंको दण्डऔर शिष्टपुरुषोंकी रक्षा करतेहुएअत्यन्त आनन्द पूर्वक अनेक यज्ञ किये ।३। समयानुसार उनके पुत्र हुए वे सब बली, पराक्रमी धर्मज्ञ,महात्माऔर कुमार्ग के नाशकथे ।२।आत्मबल हुए अलर्क धर्मसे अर्थ और अर्थसे धर्मकी रक्षा तथा धर्मऔरअ र्थके द्वारा विषयों का उपयोग करने लगे।४। इस प्रकार धर्म अर्थ,काम रूप त्रिवर्ग में प्रवृत्त होकर पृथिवीका पालन करतेहुए बहुत वर्ष,एकदिनकेसमानहो व्यतीत होगये।५।प्रिय विषयोंकाभोग करकेभी उनके चित्तमें वैराग्यऔर धर्म,अर्थके उपार्जनमें उदासीनता उत्पन्नन हुई।६।अलर्कका एकभाईसुबाहु

पहिले से ही बनवास करता था, उसने अलर्क के विषय भोग में लगे रहने की वार्ता सुनी ।७।

तम्बुबोधायिषुः सोऽथचिरंध्यात्वामहामतिः ।
तद्वैरिसश्रयन्तस्यश्रेयोऽपन्यतभूपतेः ।८
त .:सकाशिभूपालमुदीणबलवाहनम् ।
स्वराज्यमाप्तमागच्छद्बहुश· शरणंकृती ।९
सोऽपिचक्रेवलोद्योगमलर्कंप्रतिपार्थिवः ।
दूतंचप्रेषयामासराज्यमस्मैप्रदीयताम् ।१०
सोऽपिनैच्छत्तदादातुमाज्ञापूर्वंस्वधमवित् ।
प्रत्युवाचचदूतमलर्कः काशिभूभृतः ।११
मामेवाभ्येत्यहार्देनयाचतांराज्यमग्रजः ।
नाक्रांत्यासंप्रदास्यामिभयेनाल्पामपिक्षितिम् ।११
सुबाहुरनियोश्चांचकारममिमांस्तदा ।
नधमक्षत्रितस्येतियाश्चवीयधनोहिसः ।१३
ततः समस्तसैन्येनकाशीशः परिवारितः ।
आक्रान्तुमभ्यगाद्राष्ट्रमयर्कस्यमहीपतेः ।१४

अपने भ ई को तत्वज्ञान हो सके इसके लिये उस महापति ने बहुत समय तक विचार किया और अन्तमें शत्रु के आश्रयमें जाना ही उचित समझा ।८। फिर चतुर सुबाहु राज्य लाभ की इच्छा करके काशी नरेश की शरण में अनेक बार गया ।९। काशी नरेश ने भी अलर्क की प्रतिकूलता के लिए उनके पास दूत संदेश भेजा कि सुबाहु को राज्य दे दो ।१०। क्षात्रधर्मज्ञाता अलर्क ने इसे इसे स्वीकार न करके दूत को उत्तर दिया ।११। मेरे वड़े भाई मेरे पास आकर कहें, आक्रमण से डर कर तो मैं एक भाव पृथिवी भी नहीं दे सकता ।१२। महापति सुबाहु ने उनसे बिनती नहींकी क्योंकि क्षत्रियोंका एक मात्र धर्मबलही है ।१३। तब काशी नरेश ने सेना से सुजज्जित होकर राजा अलर्क के राज्य पर काक्रमण किया ।१४।

यनन्तरैश्चसःलेषमभ्येत्यतदनन्तरम् ।
तेषामन्यतमैभृत्यै: समाक्रम्यानयद्वशम् ।१५
अपीडयश्चसामतांस्तस्यराष्ट्रोपरोधनैः ।
तथादुर्गातपालांश्चचक्रेचाटविकान्वमे ।१६
कांश्चिच्चोपप्रदानेनकाश्चिभेदेनपार्थिवान् ।
साम्नैवान्यान्वशनिन्देनिभृतारतस्ययेऽभन् ।१७
ततःसोऽल्पबलोराजापरचक्रावपीडितः ।
कोशक्षयमवापोच्चैपुरंचारुध्यातारिणा ।१८
इत्थं सपीडयमानस्तुक्षीणकोशोदिनेदिने ।
विषादमागात्परमंव्याकुलत्वंचचेतसः ।१९
आर्तिसपरमांप्राप्यतत्सस्मारांगुलीयवम् ।
यद्‌बुद्धिदपुराप्राहमातातस्यमदालहा ।२०
ततःस्नाताशुचिर्भूत्वावाचयित्वाद्विजोत्तमान् ।
निष्क्रम्यशासनंतस्याद्‌ददृशेप्रस्फुटाक्षरम् ।२१

अपने सामन्त राजाओं से युक्त होकर आक्रमण के पश्चात् उन्होने अलर्क को वश में कर लिया ।१५। उन्होने अलर्क के सामन्तों को पीडित किया और दुर्ग रक्षक तथा वनवासियों को वशीभूत किया।१६। किसी को धन से, किसी को भेद तथा किसी को दन्ड से अधीन कर लिया ।१७। इस प्रकार परचक्र से पीड़ित हुए अलर्क का कोष खालीहो गया और नगर भी शत्रु द्वारा घेर लिया गया ।१८। इससे अलर्क अत्यन्त विषाद को प्राप्त हुआ और उसका चित्त भी व्याकुल हो उठा । ।१९। फिर अत्यन्त आर्त्त हो गये, तब उन्हें अपनी माता मदालसा के वचन और वह अंगूठी याद आई ।२०। तब उन्होने स्नान करके स्वस्ति बाचन कराके बँधे हुए शासन को बाहर निकाल कर देखा तो वह स्पष्ट अक्षरों में लिखा हुआ था ।२१।

तत्रैवलिखितंमात्रावाचयामासपार्थिवः ।
प्रकाशपुलकांगोऽसौप्रहृर्षोत्फुल्ललोचनः ।२२

संगःसर्वात्मनात्याज्यः मचेत्मक्तुं नशक्‍ते ।
ससद्भिः महकर्त्तव्यः सतांमङ्गोहिभेषजम् ।२३
कामः सर्वात्माहेयोहातुं चेच्छाक्यतेनसः ।
मुमुक्षांप्रतितत्कार्यं सैवतस्यापिभेषजम् ।२४
वाचयित्वातुवहुशोनृणांश्रेयः कथत्विति ।
मुमुक्षयेतिनिश्चित्यसाचत्तत्सङ्गीतोयतः ।२५
ततः ससाधुसम्पर्कंचिन्तयन्पृथिवीपतिः ।
दत्तात्रेयं महाभागामच्छत्परमार्तिमान् ।२६
तंसमेत्यमहात्मानमलकमषमसङ्गिनम् ।
प्रणिपत्याभिभम्पूज्ययथाण्यायमभाषत ।२७

माता द्वारा लिखे उस शासन के पढते ही उनका देह पुलकित हो गया और दोनो नेत्र आनन्द से फूल गये।२२।शासन में लिखा था 'काम को सर्वान्तःकरण से त्याग दें' यदि सङ्ग का त्याग न कर सके तो साधु सङ्ग करे, क्योंकि साधु-सङ्गही विश्व का औषधि स्वरूप है।२३।कामका सर्वान्त.करण से त्याग करने में समर्थ न हो तो मोक्ष की कामनाके लिए ही करे, क्योंकि मोक्ष का यही महान् उपाय है।२४। इस प्रकार माता प्रदत्त शासन का पाठ करके, मनुष्य का कल्याण कैसे हो, मोक्ष की कामना ही उसका उपाय है और सत्सग ही उसका साधन है।२४।ऐसा सोचकर अलर्क साधु सङ्ग के लाभ का विचार करने लगे, अत्यन्त भाव में आतुर होकर अन्त में वह दत्तात्रेयजी की शरणमें गयेऔर उन को प्रणाम करके पूजन किया और न्यायानुसार निवेदन किया।२६-२७।

ब्रह्मन्कुरुप्रसादमेशरण्यः शरणार्थिनाम् ।
दुःखापहारकुरुमेदुःखार्त्तस्यातिकामिनः ।२८
दुःखापहारमद्यैवकरोमितवपार्थिव ।
सत्य व्रूहिकिंमर्थदेदुःखतत्पृथिवीपते ।२९
कस्यत्वंकस्यवादुःखं तत्वमेवंविचार्यताम् ।
अङ्गान्यगीन्निरङ्गचससर्वांगानिविचिन्तय ।३०

इत्युक्तश्चिन्तयामासराजातेनधीमता ।
त्रिविधस्यापिदुःखस्यस्थानमात्मानमेवच ।
सविमृश्यचिरंराजापुनः पुनरुदारधी ।
आत्मानमात्मानाधीरः प्रहस्येपमथाब्रवीत् ।३२
नाहमुर्वीनं सलिलंनज्योतरनिलोनच ।
नाकाशंकितुशारीरंसमेत्यसुखमिष्ययो ।३३
न्यूनातिरिक्ततांयातिपञ्चकेऽस्मिन्सुखासुखम् ।
यदिस्यान्ममकिनस्यादन्यस्थेऽतिहितंमयि ।३४

हे ब्रह्मन ! प्रसन्न हो, शर अपने बालोके लिए आपही आश्रल-स्वरूप हैं, मैं विषय भोगों में लिप्त होकर दुःखसे अभिभूत हो गया।हूँ,उससे आप मुझे छुड़ाइये ।२८। दत्तात्रेयजी ने कहा—हे राजन् ? मैं तुम्हारे दुःखको अवश्य दूर करूंगा, तुम मुझे बताओ कि तुम्हें किस प्रकार से दुःख प्राप्त हुआ है । ।२६। प्रथम यह विचार क्योंकि तुम किसके हो ! दुःख किस का है ? अङ्ग अङ्गी भाव और निरङ्ग इन सबका विचार करो ।७०। जड़ ने कहा—दत्तात्रयजी के इस प्रश्न से राजा तीन प्रकार के दुःख का स्थान एवं आत्मा इन दो विषयोंका चिन्तन करने लगे।३१। राजा ने बारम्बार आत्मा द्वारा आत्म विचार करते हुए हँसकर कहा । ।३२। मैं पृथिवी, जल, ज्योति, वायु आकाश आदि में से कुछ भी नहींहूँ किन्तु देह का आश्रय करता हुआ सुख चाहता हूँ ।३३। इसपाँच भौतिक देह में सुख-दुःख उत्पन्न होकर न्यूनाधिक्य की प्राप्ति होती है ।२४।

नित्यप्रभूतसद्भावेन्यूनाधिक्यान्नतोन्नते ।
तथाचममतात्यक्तोविशेषेणोपलभ्यते ।३५
तन्मात्रावस्थितेसूक्ष्ममेतृतीयांशेचपश्यतः ।
तथैवभूतसद्भावशारीरंकिसुखासुखम् ।३६
मनस्यवस्थितंदुःखसुखंवामानसंचयत् ।
यतस्ततोनमेदुःखंसुखंवानह्यहंमनः ।३७
नाहङ्कारोनचमनोबुद्धिर्नाहंयतस्ततः ।
अन्तःकरणजदुःखंपारक्यंममतत्कथम् ।३७

नाहंशरीरंनमनायतोऽहंपृथक्छशरीरान्मनसस्तथाहम् ।
तन्सन्तुचेतस्यथवापिदेहेसुखानिदु:खानिचकिंममात्र ।३९
राज्यस्यवांछींकुरुतेऽग्रजोस्थदेहस्यचेत्पञ्चमयोहिराशि: ।
गुणप्रवृत्यामममकिंनुत्रतत्स्थ:सचाह चशरीरतोऽन्य: ।४०
नयस्यहस्तादिकष्यशेषभांसनचास्थोनिशिराविभाग: ।
कस्तस्यनागाश्वरथादिकोशै स्वल्पोपसम्वन्धइहास्तिपुंस:।४१
तस्मान्नमेऽरिर्न चमेऽस्तिदुखनमेसुखंनापिपुरंनकोशम् ।
नचाश्वनागादिबलं नतस्यनान्यस्यवांकस्वचिद्वाममास्ति ।४२
यथाघटीकुम्भकमाडलुस्थमाकाशमेकवहु.धाहिदृष्टम् ।
तथाम्वाहु:सचाकाशिपोऽहमन्येचादेहेषुशरीरभेदं: ।। ·३

इसप्रकार होने परभी मेरी क्याहानि है ? क्योंकि वह देह नहीं है। स्वतन्त्र भावसे देहमें अवस्थान करताहै,मेरे घटने-बढ़नेकी सम्भावनानही है मुझे नित्य प्रभुतसद्भावकी प्राप्ति हैान्यूनाधिक्य के कारणनीचाऊचा भी होताहूँ इसलिएसमताको छोड़करज्ञान प्राप्तकरनाचाहिए । मैंतन्मात्रा मेंतथा सूक्ष्न तृतीयायाँशमें अवस्थित हूँ।मेरा देहकाभूतसद्भावयुक्तहैअत: सुख दु ख की सम्भावना कदादि नहीं है ? ।३५-३६। सुख-दु:ख मन का धर्म होने से मनमें हीरहते हैं, जब मैं वह मनभी नहींहूँ तो मुझेसुखदु:ख भी नहीं है ।३७। जब मैं अहङ्कारमन,बुद्धिआदि मेसे भी कुछ नहीं हूँती मुझमें अ.तकरण से उत्पन्न पारक्य ही कैसे सम्भव है ?।३८।मैं शरीर नहीं,मननही तथा इन दोनोंसे ही पृथक् हूँ इसलिए सुख मनमें गाशरीर में कहीं भी रहे, उसमें मेरा क्या?उसमें मेरी हानि या लाभ नहींहै।३९। इसी शरीर केबड़ेभाईराज्यचाहतेहैंऔर यदियह शरीरपाँचव भौतिकहैतो उसकी गुण-प्रवृत्तिमें मेरा क्याहोगा ? बड़ा भाई अथवा मैं, दोनोंहीदेहसे वृथक् वस्तुहै ।४०।जिसकेहस्तादि अग,माँस, अस्थि और शिरा आदिकुछ नहीं उसकी अश्व गज, रथ, कोष आदि मैंक्या आवश्यकता ? आत्माका इससे कोई सम्बन्ध प्रतीत नहीं होता ।४१।जिस प्रकार मेराकुछनहीं है, वैसे ही मेरे अग्रज अथबा अन्यायपुरुष या शत्रुकाको सूख दुख नगरकोष

सौन्यादि नहीं है ।४२। जैसे घटी, कुम्भ और कमण्लु के भेद से एक आकाँश ही अनेक दिखाई देता है, वैसेही आत्मा एक होकर भी काशीराज, सुबाहु तथा मेरे इस प्रकार के भेद से अनेक दिखाई देना है ।४३।

३. दत्तात्रेय से अलर्क की योग जिज्ञासा

दत्तात्रेयन्ततोविप्रं प्रणिपत्यसपार्थिवः ।
प्रत्युवाचमहात्मनं प्रश्रयावनतोवचः ।१
सम्यक्प्रपश्यतोब्रह्मन्ममदुःखनकिंचन ।
असम्यग्दर्शिनोमग्नाः सर्वदेवासुखार्णवे ।२
यस्मिन्यस्मिन्ममत्वेनवृद्धिपुंसः प्रजायते ।
ततस्तःसमादायदुःखान्येवप्रयच्छति ।३
मार्जारभक्षितेतुःख यादृशंगृहकुक्कुटे ।
नतादृङ्ममताधून्येकलविंकऽथमूषिके ।४
सोऽहंनदुःखीनसुखीयतोऽहप्रकृतेःपर ।
योभूताभिभवीभूतै सुखदुःखात्मकोहिसः ।५
एवमेवन्नरव्याघ्रयथैतद्वयाहृतं त्वया ।
ममेतिमूलदुःखरयनममेचिनिर्वृतिः ।६
तत्प्रश्नादेवतेज्ञानमुत्पन्नमिदमुत्तमम् ।
ममेतिप्रत्ययोयेनक्षिप्ता शाल्मलितलवत् ।७

जड़ बोला-इसके पश्चात् राजाने विनय पूर्वक महर्षि दत्तात्रेयजीसे प्रणाम पूर्वक कहा।१।हे ब्रह्मन!मुझेभलेप्रकार दृष्टि प्राप्त होनेसे अब कुछ भी दुःख नहीं रहा है, क्योंकि असम्यक् दृष्टि वाले पुरुष ही दुःखसागरमे डूबते हैं ।२। मनुष्यकी बुद्धि जिस-जिस विषयमे आसक्त होती है,उस-उस से ही दुख की उत्पत्तिहोती है।३।घरमें पाले हुए कुक्कुट के बिल्ली द्वारा भक्षित होने पर जो दुःख उदय होता है,वह दुःख,ममता न होने कार

चहे के भक्षित होने पर नहीं होता।४। मैं न सुखी हूँ न दु:खी हूँ क्योंकि प्रकृति के परे हूँ क्योंकि संसार में आसक्ति वाले कोही सुख-दु:ख होताहै ।५। दत्तात्रेयजी ने कहा—हे राजन् ! तुम्हारा कथन सत्य है ममता ही दु:ख कारण और ममताका त्यागउसे निवृत्ति करने वाली है।६।मेरे प्रश्न करते ही तुम्हारे हृदय में सर्वोत्कृष्ट ज्ञान उदित हुआ है और उसज्ञान के बल से ही तुम्हारी ममता जैसे रूई उड़ जाती है वैसे ही उड गई है ।७।

अहमित्यंकुरोत्पन्नोममेतिस्कन्धवान्महान् ।
गृहक्षेत्रोच्चशाखश्चपुत्रदारादिपल्लवः ।
धनधान्यमहापत्रोनैककालप्रवर्धितः ।
पुण्यापुण्याग्रपुष्पश्चसुखदुःखमहाफलः ।६
अपवर्गपथव्यापीमूढसम्पर्कसेचनः ।
विधित्साभृङ्गवालाढ्योऽकृत्यंज्ञानमहातरुः ।१०
संसाराध्वजपरिश्रान्तायेतच्छायांसमाश्रिताः
भ्रांतिज्ञानसुखाधीनास्तेषामात्यन्तिकंकुतः ।११
येस्तुसत्संगपाषाणशितेनममतातरुः ।
छिन्नोविद्याकुठारेणतेगतास्तेनवर्त्मना ।१२
प्राप्यब्रह्मवनंशीतनीरजस्कमकन्टकम्
प्राप्नुवन्तिपराप्राज्ञानिर्वृतिर्वृत्तिवर्जिता
भूतेन्द्रियमयस्थूलं नत्वराजन्नचाप्यहम्
नतन्मात्रमयाचयंनैवान्तःकरणात्मकौ ।१

अहङ्कारी रूप अंकुर ने ही अज्ञान रूपी महावृक्ष को उत्पन्न कर दिया घर और खेत उसकी ऊँची शाखाएं तथा स्त्री-पुत्रादि उसकी पत्तियाँ हैं ।८। धन धान्य उसके बड़े पत्ते, पुण्यापुण्य उसके पुष्प और दु:ख उसके महाफल हैं ।९। मोह से अभिभूत समान सम्बन्ध इसका थावला है यह वृक्ष दिनोंदिन वृद्धि को प्राप्त है तथा मोक्ष मार्ग को ढक कर खड़ा है ।१०। भ्रान्ति से जो सुख मानकर इस वृक्ष का आश्रय लेते हैं उन्हें किस प्रकार मोक्ष की प्राप्ति होगी ? ।११। जो पुरुष विद्या रूपी कुठार की सत्सङ्ग रूपी पत्थर से तीक्ष्ण

करके, उसके द्वारा ममता रूपी इस महा वृक्ष को काटने में समर्थ होते ।१२। वही उस मार्ग में ब्रह्म रूपी बन को प्राप्त हो सकते हैं, वह बन अत्यन्त शीतल, धूलि रहित तथा निष्कंटक है, इसमें पहुँचने से निवृत्ति युक्त परमबुद्धि का लाभ होता है ।१३। हे राजन् ! तुम भी भूतेन्द्रिय युक्त या स्थूल नहीं हो, मैं भी नहीं हैं, हम दोनोंमें कोई भी तन्मात्रिक या अन्ताकणात्मक नहीं है ।१४।

कवापश्यामिराजेन्द्रप्रधानमिदमावयोः ।
यतः परोहक्षेत्रज्ञसंधातोहिगुणात्मकः ।१५
मशकौदुम्बरेषीकामुञ्जमत्स्याम्भसायथा ।
एकत्वेऽपिपृथग्भावस्ताक्षेत्राःमनोनृप । १६
भगवंस्त्वत्प्रसादेनममाविर्भूतमुत्तमम् ।
ज्ञानं प्रधानचिच्छक्तिविवेककरमीदृशम् ।१७
किन्त्वत्राविषयाक्रान्तेस्थैर्य्यं वत्वैनचेतसि ।
नचापिवेद्मिमुच्येस्यकथ प्रकृतिवन्धनात् ।१८
कथनभूयांभूयश्चकथंनिर्गुणतामियाम् ।
कथं चब्रह्मणैकत्व ब्रजयेयशाश्वतेनवै ।१९
तन्मेयोगतथाब्रह्मन्प्रशतायाभियाचते ।
सम्तग्ब्रूहिमहाप्राज्ञसत्सङ्गोह्युपकृन्नृणाम् ।२०

हम मैं से किसी कोभी तुम प्रधानसे युक्त देखते हो ? क्योंकिक्षेत्रज्ञ पुरुषप्रकतिके परे तथा पंचभौतिक पदार्थगुणात्मकओर प्रधानात्मकहै।१५ हे राजन् ! मच्छर गूलर में, सीक मूंजमें और मछली जलमें एकीभावसे रहकर भी पृथक-पृथक् है,इसीप्रकार क्षेत्रऔर आत्माकोभी पृथक्-पृथक् समझो ।१६। अलर्क बोला-हे प्रभो ! मुझे आपके प्रसादसे विवेक उत्पन्न करन वाले ज्ञानको प्राप्तहुईहै ।१७।परन्तु मेरा चित्तविषयोंमें आकर्षित है इसलिये वह स्थिर नहीं हो सकसा,अतः प्रकृतिके बन्धन सेकैसेमुक्तहो सकूंगा, यह नहीं जानता ।१८। पुनर्जन्मसेकिस प्रकार बचा जाय ! क्या करनेसे शाश्वत ब्रह्मसे एकी भावकी प्राप्ति हो।१९।ऐसे योग का उपदेश

मेरे प्रति कीजिये । मैं प्रार्थी होकर समीप प्रार्थना करता हूँ । सत्संग से ही मनुष्यका उपकार सिद्ध हो सकता है ।२०।

३१ योगाध्याय

ज्ञानपूर्वोवियोगोयोऽज्ञानेनसह्योगिनः ।
सामुक्तिर्ब्रह्मचैक्यमन्ननैक्यप्राकृतैर्गुणैः ।।१
योगेचशक्तिर्विदुषांयेनश्रेयःपरंभवेत् ।
मुक्तिर्योगःत्तथायोगःसम्यज्ञानान्महीपते ।
संगदोषोद्भवदुःकममत्वासक्तचेतसाम् ।।२
तस्मात्सङ्गंप्रयत्नेनमुमुक्षुःसंत्ययेन्नरः ।
सङ्गाभावेममेत्यस्याःख्यातेर्हानिः प्रजायते ।।४
निर्ममत्वंमुखायैववैराग्याद्दर्शनम् ।
ज्ञानादेवचवैराग्यंज्ञानंवैराग्यपूर्वकम् ।।४
तद्गृहंयत्रवसतिस्तद्भोज्यंयेनजीवित ।
यन्मुक्तयेतदेवोक्तंज्ञानमज्ञानमन्यथा ।।५
सपभोगेनपुण्यानामपुण्यानांचपार्थिव ।
कर्त्तव्यमितिनित्यानामकामकरणत्तथा ।।६
असंचयादपूर्वस्यक्षाय्यात्वपूर्वार्चितस्यच ।
कर्मणोबन्धमाप्नोतिशरीरंचपुनः पुनः ।।७
कर्मणामोक्षमाप्नोतिवैपरीत्येनतस्यस्तु ।
एतत्तेकथितंज्ञानयोगचेमनिबोधमे ।
यंप्राप्यब्रह्मणोयोगीशाश्वतान्नान्यतांव्रजेत् ।।८

दत्तात्रेय बोले-योगमें आरूढ़ पुरुषोंकाज्ञान प्राप्तिके पश्चात्अज्ञान से जो वियोगहोता है वहीमोक्ष कहाजाता है तथा प्राकृतिक गुणोंसे पृथकता ही ब्रह्मकी एकता कही गई ।१। हे राजन् ! ममता में आसक्त

चित्तासे दु:ख, दुखसे सम्यकज्ञान् ज्ञानसेयोग और योगसे मोक्षकी प्राप्ति होती है ।२। इसलिए मुमुक्षु को सग का त्याग करना चाहिये, विषयों से आसक्ति दूर होते ही यह मेरा है, ऐसा ज्ञान नहीं रहता ।३। ममता के त्याग में ही सुख है, वैराग्य होने पर ही ससार के सब दोष स्पष्ट हृदयगम होते है, जैसे ज्ञान से वैराग्य होताहै वैसे ही वैराग्यसे ज्ञानकी उत्पत्ति होती है ।४। जहाँ रहें वहीं घर, जिससे जीवन धारण हो वहीं भोज्य, जिससे मोक्ष मिले वही ज्ञान है, तथा इसके विपरीत को अज्ञान कहते है ।५। पुण्यापुण्य के उपभोग से कामना-रहित नित्य कर्म करने पर ।६। पूर्वोपार्जित कर्मों के क्षीण होने पर और नवीन कर्मों का सचय न होने पर देह के बन्धनको प्राप्त नहीं होता, हे राजन्! तुमसे जो कहा है, वही योग है, इसे पाकर योगीजन शाश्वत ब्रह्म के अतिरिक्त अन्य किसी का अश्रय नहीं लेते ।७-८।

[illegible]वात्मात्मनाजेयोगिनासहिदुर्जयः ।
कुव[illegible]तज्ज्येयत्नंतस्योपायंश्रृणुष्वमे ॥९
प्राणायामैर्दहेद्दोषान्धारणाभिश्चकिल्दिषम् ।
प्रत्याहारेणविषतान्ध्यानेनानीश्वरान्गुणान् ॥१०
यथापर्वतधातूनांध्मातानांदह्यतेमलम् ।
तथेन्द्रियकृतादोषादह्यन्तेप्राणनिग्रहात् ॥११
प्रथमंसाधनंकुर्यात्प्राणायामस्ययोगवित् ।
प्राणापाननिरोधस्तुप्राणायामउदाहृतः ॥१२
लघुमध्योत्तरीयाख्यःप्राणायामस्त्रिधोदितः ।
तस्यप्रमाणंबक्ष्यामितदलर्कश्रृणुष्वमे ॥१३
लघुर्द्वादशमात्रस्तुद्विगुणःसंतुमध्यमः ।
त्रिगुणाभिस्तुमात्राभिरुत्तमःपरिकीर्त्तितः ॥१४

सर्व प्रथम आत्मा से आत्मा को जीते क्योंकि आत्मा ही योगियों के लिए कठिनता से जीता जाने वाला है, आत्मा को किस प्रकार जीतना चाहिए, वह भी कहता हूँ ।९। प्राणायाम से दोषों को, धारणा से पापों को, प्रत्याहार से विषयों को और ध्यान से अनीश्वर गुणों को भस्म करे, ।१०। जैसे अग्नि में पड़ कर सब धातु दोष-रहित होती है,

वैसे ही प्राणवायु के निग्रह से इन्द्रिय के इस दोष नष्ट होते हैं ।११। योगज्ञाता प्रथम प्राणायाम का साधन करे, प्राणायाम के निरोध को प्राणायाम कहते है ।१२। प्राणायाम के तीन प्रकार हैं—लघु, मध्यम और उत्तरीय । अब इनकाप्रमाण कहता हूं ।१३। लघु प्राणायाम द्वादश मात्रा वाला, मध्यम प्राणायाम उससे दुगुना और उत्तरीय उससेतिगुनी मात्रा में कहा गया है ।१४।

निमेषोन्मेषणेमात्राकालोलघ्वक्षरस्तथा ।
प्रथमेनजयेत्स्वेदमध्यमेनचदेपथुम् ।
विषादंहितृतीयेनजयेद्दोषाननुक्रमात् ।।१६
मृदुत्वसेव्यमानास्तुसिहशार्दूलकञ्जराः ।।१७
वश्यमत्तंयथेच्छातोनागनयतिहस्तिपः ।
तथैवयोगीछन्देनप्राणंनयतिसाधितम् ।।१८
यथाहिसाधित सिहामृगान्हंतिनमानवान् ।
तन्निषिद्धपवन.किल्विषनंनृणांतनुम् ।।१६
तस्माद्युक्तःसदायोगीप्राणायामपरोभवेत् ।
श्रूयतांमुक्तिफलदंतस्यावस्थाचतुष्टयम् ।।२०
ध्वस्निःप्राप्तिस्तथासंवित्प्रसादश्चमहीपते ।।
स्वरूपश्रृणुचैतेषाकथ्यमानमनुक्रमात् ।।२१

निमेष और उन्मेष का समय ही मात्रा है ऐसी बारह मात्रा होने पर लघु प्राणायाम होता है ।१५। पहले प्राणायाम से स्वेद, दूर से कम्प और तीसरे ने विषयादि दोषों को जीते ।१६। जैसे सेवा के द्वारा सिंह, व्याघ्र और हाथी भी कोमल स्वभाव हो जाते हैं, वैसे ही प्राणायाम द्वारा योगियों को प्राण को वश करने की सामर्थ्य प्राप्त होती है ।१७। जैसे हाथी का स्वामी मत्त हाथी को वश करके इच्छानुसार चलता है, वैसे ही योगीजन प्राण के द्वारा ही इच्छानुसार कार्य करने में समर्थ होते हैं ।१८। जैसे पाला हुआ सिंह मृगों को मारता है, मनुष्यादि की हिंसा नहीं करता, वैसे साधित प्राणवायु के द्वारा पाप नष्ट होते हैं, देह नष्ट नहीं होता ।१६।

इसलिये योगियो को प्राणायाम परायण होना चाहिये । प्राणायाम की अवस्था चार प्रकारकी है जिससे मोक्षफलकी प्राप्ति होती है । अब इसका वर्णन करता हूँ ।२०। हे राजन् ! प्राणायाम के ध्वस्ति प्राप्ति संवित् और प्रसाद यह चार भेद हैं । अब इनके स्वरूप को क्रमशः बताता हूँ ।२१।

कर्म्मणामिष्टदुष्टानांजायतेफलसंक्षयः ।
चेतसोऽपकषायत्वंयत्रसाध्वस्तिरुच्यते ।।२२
ऐहिकामुष्मिकान्कामांल्लोभोहात्मकान्स्वयम् ।
निरुध्यास्तेसदयोगीप्राप्तिःसासार्वकालिकी ।।२३
अतीतानागतानर्थान्विप्रकृष्टतिरोहितान् ।
विजानातीन्दुसूर्य्यर्क्षग्रहाणांज्ञानसम्पदा ।।२४
तुल्यप्रभावस्तुयदायोगीप्राप्तनोतिसंविदम् ।
तदासम्बिदितिख्याताप्राणायामस्यासास्थितिः ।।२५
शान्तिप्रसादयेनास्यमनःपञ्चवायवः ।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थाश्चसप्रसादइतिस्मृतः ।।२६
शृणुःबचमहीपालप्राणायामस्यलक्षणम् ।
युञ्जतश्चसदायोगंसार्द्धंविहितमासनम् ।।२७
पद्ममर्द्धासनचेपितथास्वस्तिकमासनम् ।
आस्थाययोगयुञ्जीतकृत्वाचप्रणवंहृदि ।।२८

ध्वस्ति उसे कहते हैं जिससे दूषित अदूषित कर्मो का फल क्षीण हो और चित्त की तलीनता नष्ट हो ।२२। प्राप्ति वह अवस्था कही गयी है जिसमें योगीजन लोभ मोहात्मक समस्त कामको स्वयं ही निरुद्धकरते हैं ।२३।जिस अवस्थामें चन्द्रमा सूर्य ग्रह और नक्षत्र के समान ज्ञान शक्तिको प्राप्त हुएयोगीजन ।२४। अतीत अनागत और तिरोहित इनसब विषयो को जान लेते हैं वह अवस्था सँवित् कही गई है ।२५। जिस अवस्था द्वारा पञ्चवायु इन्द्रिय और उसके विषयों से योगीका चित्त शुद्ध होजाता है वह अवस्था ही प्रसाद कही जाती है ।२६। हे राजन् ! अब प्राणायाम के लक्षण और योगारम्भ में जिस आसन का अनुष्ठानउचित है उसे सुनो ।२७। पद्मासन, अर्द्धासन, स्वास्तिकासन इत्यादि का

अवलम्बन करके हृदय में प्रणव का जप करता हुआ योगानुष्ठान में लगे । २८

मुखः संयतास्यो ऽसुखासीनस्सह्यचरणावुभौ ।
संवृ नास्यस्तथै वोरू सम्यग्विष्टभ्यचाग्रतः ॥२९
पार्ष्णिभ्यां लिङ्गवृषणावस्पृशन्प्रयतः स्थितः ।
किञ्चिदुन्नामितशिरा दन्तैर्दन्तान्नसंस्पृशेत् ॥३०
सपश्यन्नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयन् ।
रजसा तमसो वृत्तिं सत्वेन रजसस्तथा ॥३१
संछाद्य निर्मले सत्वे स्थितो युञ्जीत योगवित् ।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यः प्राणादीन्मन एव च ॥३२
निगृह्य समवायेन प्रत्याहारमुपक्रमेत् ।
यस्तु प्रत्याहरेत्कामान्सर्वाङ्गानीव कच्छपः ॥३३
सदात्मरतिरेकस्थः पश्यत्यात्मानमात्मनि ।
सबाह्याभ्यन्तरं शौचं निष्पाद्याकण्ठनाभितः ॥३४
पूरयित्वा बुधो देहं प्रत्याहारमुपक्रमेत् ।
प्राणायामा दश द्वौ च धारणाभिधीयते ॥३५

सरल चित्तसे सब आसन में बैठे दोनों पावोंको सकोड़ कर मुखबंद करे तथा अग्र भाग में दोनों उरु स्तब्ध करे ।२९।तथासंयुक्त मन से इस प्रकार बैठे जिससे उपस्थ और अण्ड कोष का हाथ से स्पर्श नहीं। शिरकुछ ऊपर की ओर उठवे तथा दांत से दांतका स्पर्श न होने दे । ३०। अपनी नासिकाके अग्रभागमे दृष्टि रखे दूसरी ओर न देखे । इसी अवस्थामें रजो-गुणसे तमोगुण और सत्वगुण से रजोगुण को । नष्ट करके केवल निर्मल तत्वमें अवस्थान करता हुआ योगाभ्यास करे इन्द्रियके विषयसेमनप्राणादि को।३२।निवृत्ति करके जैसे कछुआ अपने अंगों को समेट लेता वैसे ही प्रत्याहारमें प्रवृत्त हो ।३३।इस प्रकार आत्मामें आशक्त रहनेसे आत्मा के द्वाराही आत्माका प्रदर्शन होताहै।कण्ठसे नाभि तक बाह्याभ्यन्तर शुद्ध

करता हुआ ।३४। देहको परिपूर्ण कर प्रत्याहारका साधन करे । प्राणायाम के दश प्रकार और धारणा के दो प्रकार कहे गये हैं ।३५।

द्वे धारणेस्मृते योगेयोगिभिस्तत्वदृष्टिभिः ।
तथावैयोगयुक्तस्ययोगिनोनियतात्मनः ॥३६
सर्वेदोषाःप्रणश्यन्तिक्वस्थश्चेवोपजायते ।
वीक्षतेचपरंब्रह्माप्राकृतांश्चगुणान्पृथक् ॥३७
व्योमादिपरमाणूंश्चतथात्मानमकल्मषम् ।
इत्थयोगीयथाहारःप्राणायामपरायणः ॥३८
जितांजितांशनैभूमिमारोहेतयथागृहम् ।
दोषव्याधींस्तथामोहमाक्रान्ताभूरिनिर्जिता ॥३९
ग्विवर्धयतिनारोहेत्तस्माद्भूमिमनिर्जिताम् ।
प्राणानामुपसंरोधात्प्राणायामइतिस्मृतः ॥४०

तत्वदर्शी योगोजनों ने दो प्रकार ही धारणा बतायी हैं, नियतात्मा होकर साधन करने पर ।३६। योगी के सभी दोषों का शमन होता है, और शन्ति मिलती है तथा सभी प्राकृत गुण और परब्रह्म का पृथक् रूप से दर्शन प्राप्त होता है ।२७। तथा आकाशादि परमाणु एवं विशुद्ध आत्मा से साक्षात्कार होता है, इस प्रकार नियताहार करता हुआ योगी प्राणायाम-परायण हो । ।३८। धीरे-धीरे योगभूमि को जीत कर घर के समान उसी में आरूढ़ रहे । यदि भूमि न जीती जाय तो उसने कामादि व्याधियों की ।३९। और मोह को वृद्धि होती है, इसलिए बिना जीती हुई भूमि पर आरूढ़ न हो, जिससे पञ्चप्राण संयत हों, वही प्राणायाम है । ४०।

धारणेत्युच्यतेकेयंधार्य्यतेथन्मनोयया ।
शब्दादिभ्यःप्रवृत्तानियदक्षाणियतात्मिभिः ॥४१
प्रत्याह्रियन्तेयोगेनप्रत्याहारस्ततःस्तृन ।
उपायश्चत्रकथितोयोगिभि.परमर्षिभिः ॥४२
येनव्याध्यादयोदोषानजायन्तेहियोगिनः ।
यथातोयाथिनस्तोययन्त्रनालादिभि शनै ॥४३

आपिवेयुस्तथावायु पिवेद्योगोगीजितश्रमः ।
प्राङ्नाभ्यांहृदयेचाथतृतीयेचतथोरसि ।।४४
कण्ठमुखेनासिकाग्रे नेत्रभ्रूमध्यमूर्द्धसु ।
किञ्चतस्मात्परस्मिंश्चधारणापरमास्मृता ।।४५
दशैताधारणाःप्राप्यप्राप्नोत्यक्षरसाम्यताम् ।
नाध्मातः क्षुधितःश्रान्तोनचव्याकुलचेतनः ।।४६
युञ्जीतयोगराजेन्द्रयोगीसिद्ध्यर्थमादृतः ।
नातिशीतेनचोष्णेवैमद्वन्देनानिलात्मके ।।४७
कालेष्वेतेषुयुञ्जीतनयोगध्यानतत्परः ।
सशब्दाग्निजलाभ्याशेजीर्णगोष्ठेचतुष्पथे ।।४८
शुष्कपर्णचयेनद्याश्मशानेमरीसुपे ।
सभयेकूपतीरेवाचैत्यवल्मीकसंचये ।।४९
देशेष्वतेषुनत्वज्ञोयोभ्यासंविवर्जयेत् ।
सत्वस्यानुपपत्तौचदेशालविवर्जयेत् ।।।५०

जिससे मन का धारण हो, वह धारणा है तथा जिस अवस्था में इन्द्रियों को अपने-अपने विषय से नियतात्मा पुरुष ।४१। प्रत्याहरण करते हैं, वही प्रत्याहार है, योग सिद्ध ऋषियों ने इस विषय में जो उपाय कहा है ।४२। उससे योगी के देह में व्याधियों का आक्रमण नहीं हो सकता । पिपासु जैसे पात्रादि से धीरे-धीरे जल पीते हैं ।४२। वैसे ही श्रम को जीत कर योगीजन धीरे-धीरे वायु का पान करते हैं, पहिले नाभि में, फिर हृदय में, फिर वक्ष स्थल में ।४४। फिर कण्ठ वदन, नासाग्र, नेत्र, भौं, ऊर्ध्व प्रदेश और अन्त में परब्रह्म में धारणा करनी उचित है ।४५। इस दश प्रकार से धारणा का निर्देश हुआ है, इसकी सिद्धिसे ब्रह्म सारूप्य की प्राप्ति होती है । योगीजन सिद्धि प्राप्त करने के लिए अति भाषण, क्षुधा, श्रम एवं चित्तकी चंचलताको ।४६। हटाकर प्रयत्न पूर्वक योगाभ्यास करते हैं, अति शीत, अति ग्रीष्म या अत्यन्त वायु चलता हो उस समय ।४७। ध्यान में तत्पर होकर योगाध्याय करने का निषेध हैं । शब्द युक्त स्थान, अग्नि और जल के समीप, प्राचीन गोशाला या

चौराहा ।४८। शुष्क पत्रोंसे युक्त स्थान नदी तट, श्मशान, सर्वादि वाले स्थान, कुएं के किनारे अथवा जहाँ सात्विक पदार्थ उपलब्ध न हों, उन सब स्थानों का परित्याग करे ।४६-५०।

नासतोदशर्नं तोगेतस्मात्तपरिवर्जयेत् ।
दोषानेताननाहृत्यमूढत्वाद्योयूनक्तिवै ।।५१
पिघ्नायतस्यवैदोषाजायन्तेतन्निबोधमे ।
वाधर्य्यंजडतालोप:स्मृते-ूकावामन्धता ।।५२
ज्वरश्चजायतेसद्यस्तत्तादज्ञानयोगिन: ।
प्रमादाद्योगिनोदोषायद्यतेस्युश्चिकिति तम् । ५३
तेषांनाशायकर्त्तव्यं योगिनांतन्निबोधमे ।
स्निग्धांयवागूमत्युष्णांभुक्त्वात्रत्रं वधारयेम् ।।५४
वातगुल्मप्रशान्त्यथमुदावर्त्तोतथोदरे ।
यावागं वापिपवनंवायुग्रन्थिप्रयिक्षिपेत् ।५५
यद्वत्कपेमहाशैलस्थिरमनसिधारयेत् ।
विघ्नतेवचमोवाचवाधिर्य्येक्षवणेन्द्रियम् ।।५६
यथैवाम्रफलंध्यायेत्त ष्णार्तोरसनेन्द्रियम् ।
यस्मिन्यस्मिन्नुजाद्देहेयस्मिंस्तदुपकारिणीम् ।।५७

असत् बातों को न देखे, जो मूर्खतासे इन सब बातोंका विचार न करके योगाभ्यास करता है ।५१। उसके कार्यमें सब दोष उत्पन्न होकर विघ्न रूप हो जाते हैं, उस बधिरता, जड़ता, मूकता, अन्धता, स्मृति लोप ।५२। या ज्वार की उत्पत्ति होती है, यदि प्रमाद बस यह दोष उत्पन्न हो जाँय तो उनकी शान्ति के लिए जो चिकित्सा करनी चाहिए ।५३। उसे भी सुनो । भले प्रकार पकायी हुई खिचड़ी स्निग्ध करके भोजन करे ।५०। बात गुल्म, अफरा अथवा उदर रोगों के शमनार्थ खिचड़ी अवश्य खाय, इनसे वायु रोग तथा वायु ग्रंथि रोग भी दूर हो जाता है ।५५। कम्प के उत्पन्न होने पर मन में अत्यन्त भारी पर्वत का धारण करें, वाणी के विलुप्त होने पर बाक्य धारण करे और श्रवण शक्ति,नष्ट होजायतो ।५६। जैसे प्यासा मनुष्य जिह्वा से ही लाम चिंतन

करता है, वैसे ही श्रवणेन्द्रिय की धारणा करनी चाहिए। इसी प्रकार जिस-जिस अंग में व्याधि हो जाय उस-उस अङ्ग का उपकार करने वाली क्रिया को करे ।५७।

धारयेद्धारणामुष्णेशीताशीतेचदाहिनीम् ।
कीलंशिरसिसंस्थाप्यकाष्ठंकाष्ठेनताडयेम् ।।५८
लुप्तस्मृतेस्मृतिःसद्योयोगिनस्तेनजायते ।
द्यावापृथिव्यौवाव्यग्नीव्यांपिनात्रपिधारयेत् ।।५९
अमानुषात्सत्वजाद्वाबाधास्त्वतिचिकित्सितम् ।
अमानुषंसत्वमन्तर्योगिनंप्रशेविद्यदि ।।६०
वायव्वग्निधारणेनैनदेहसंस्थंविनिर्दहेत् ।
एवंसर्वात्मनारक्षाकार्यायोगविज्ञानृगः ।।६१
धर्मार्थकाममोक्षाणांशरीरंसाधनंयतः ।
प्रबृत्तिलक्षणाख्यानंद्गोगिनोविस्मयात्तया ।
विज्ञानविलयंयातियस्माद्गोप्याःप्रबृत्तयः ।।६२
अलौल्य मारोग्यमनिष्ठुरत्वंगन्धशुभोमूत्रपुरीषमल्पम् ।
कान्तिःप्रसादाःस्वरसौम्यताचयोगप्रवृत्तेःप्रथमंहिचिन्हम् ।६३
अनुरागंजनोयंतिपरोक्षेगुणकीर्त्तनम् ।
नविभ्यतिचसत्वानिसिद्धेर्लक्षणमुत्तमम् ।।६४
शीतोष्णादिभिरत्युग्रैर्यस्यबाधामविद्यते ।
नभीतिमेतिचान्येभ्यस्तस्यसिद्धिरूपस्थिता ।।६५

उष्ण में शीतल और शीतलमें उष्ण धारणा करे। शिरमें सूक्ष्मकाल को स्थितकर काष्ठसे उसे ठोकेतो उससे ।५८। रोगीकी लुप्तस्मृति तुरन्त उदित हो जातीहै अथवास्मृति नष्टहोनेपर आकाश,पृथिवी,वायुऔरअग्नि को धारणा करनीचाहिए। ।५९।अमानुष तत्वसेउत्पन्न विघ्नोंमेंइसप्रकार उपचारकरे योगियोंकेहृदयमें अमानुष सत्वके प्रवेशकरके पर वहां ।६०। उसे वायु और अग्निकी धारणासेजलावे इसप्रकार सर्वातःकरण से अपने देह की रक्षा करना योगज्ञानियों का कर्तव्यहै।६१।क्योंकिधर्म,अर्थ,काम

मोक्ष की प्राप्ति का मूल देह है। प्रवृत्ति रूप वर्णन और विस्मय से ही योगी के विज्ञान का नाश होता है, इसलिये प्रवृत्ति को गुप्त ही रखे ।२२। चञ्चलता, आरोग्य, अनिष्ठुरता, देह में सुगन्धि का संचार मूत्र-पुरीष की न्यूनता, कान्ति, प्रसाद और स्वर माधुर्य यह सब योग प्रवृत्ति के प्राथमिक नक्षत्र हैं ।६३। जिस अवस्था के प्रोत होने पर मनुष्य पीछे मे उसका गुणवान् करें और सब जीव जिससे निर्भय रहें, वही सिद्धि का श्रेष्ठ लक्षण है ।६४। जिसके लिए अत्युग्र शीत उष्णता आदि बाधक न हों सकें और जिस किसी अन्य को भय न हो, उसी को सिद्धि प्राप्त हुई समझो ।६५।

३२. योगसिद्धि

उपसर्गाःप्रवर्तन्तेदृष्टेह्यात्मनियोगिनः ।
येतांस्तेसंप्रवक्ष्यामिसमासेननिबोधमे ॥१
काम्याःक्रियास्तथाकान्मानुषानभिवाञ्छति ।
स्त्रियोदानफलंविद्यांमयांकृप्यंधनंदिवम् ।।२
देवत्वममरेशत्वंरसायनवय क्रियाम् ।
मरुत्प्रपननयज्ञं जलाग्यावेशनतथा ॥३
श्राद्धानांसर्वदानानांफलानिनियमांस्तथा ।
तथोपवासान्पूर्त्ताच्चदेवताभ्यर्चनादपि ॥४
तेभ्यस्तेभ्यश्चकर्मभ्यउपसृष्टोऽभिवाञ्छति ।
चित्तमित्णवर्तप्रानयत्नाद्योगीनिवर्तयेत् ॥५
ब्रह्मसङ्गिमनःकुर्वन्नुपसर्गात्प्रमुच्यते ।
उसर्गैर्जितैरेभिरुपसर्गास्ततःपुनः ॥६

दत्तात्रेय बोले आत्म दर्शन होने पर जो उपसर्ग योगियों को उत्पन्न हो जाते हैं, उन्हें संक्षिप्त रूप से कहता हूँ।१। उस समय विभिन्न प्रकार की काम्य किया और अनेक प्रकार के भोगों के उपभोग की इच्छा होती है, स्त्री, दान, फल, विद्या, माया, कुए का जल, धन, स्वर्ग ।२। देवत्व, अमरत्व रसा-

यन, वायु यक्त स्थान मे कूदना, यज्ञ, जलतथा अग्निमें प्रविष्ट होना।३। सब श्राद्धो और दानों का फल एवं नियम इत्यादि में योगी की इच्छा का उदय होता है, उस समय उपवास, पूर्तादि, देव-पूजन ।४। आदि उस-उस कर्मसे जब-जब युक्त होनेकी इच्छाहो, तव-तब उस-उस विषय से यत्न पूर्वक निवृत्ति प्राप्त करे।५। इस प्रकार विषयों से निवृत्ति लाभ करके ही ब्रह्म साक्षी करते हुए उपसर्ग से बचा जा सकता है।६।

योगिनः संप्रवर्तन्तेसात्वराजसनामसाः ।
प्रातिभःश्रावणोदैवोभ्रमावर्त्तौतथापरौ ।।७
पञ्चैतेयोगिमांयोगविघ्नायकटुकोदयाः ।
वेदार्था.काव्यशास्त्रार्थाविद्याशिल्पान्यशेषतः ।।८
प्रतिभान्नियदस्येतिप्रातिभःसंतुयौगिनः ।
शव्दार्थानखिलान्वेत्तिशब्दंगृह्णातिचैवयत् ।।९
योजनानांसमस्त्रेभ्यःश्रावणःसोऽभिधीयते ।
समन्ताद्वीक्षतेचाष्टौसयदादेवयोनयः ।।१०
उपसर्गं तमप्याहुर्दैवमुन्मत्तवद्बुधाः ।
भ्राम्यतेयन्निरालम्बनोदोषेणयोगिनः ।।११
समस्ताचारविभ्रंशाद्भ्रमःसपरिकीर्तितः ।
आवर्तइवतोयस्यज्ञानावर्त्तोयदाकुलः ।।१२
नाशयेच्चित्तमावर्तउपसर्गासउच्यते ।
एतैर्नाशितयोगास्तुसकलादेवयोनवः ।।१३
उपसर्गैर्महाघोरैरावर्तन्तेपुनःपुनः ।
प्रावत्यकम्बलशुक्लयोगीतस्मान्मनोमयम् ।।१४

इन सब उपसर्गो पर विजय कर लेने पर योगी के समक्ष सात्विक, राजसिक और तामसिक भेद से अपरापर विघ्न आक्रमण करते है। उनमें प्रातिभ, श्रावण, दैत्य, आवर्त ।७। यह उपसर्ग भयङ्कर रूप से योग में विघ्न उपस्थित करने के लिए प्रस्तुत होते हैं, जिससे वेदार्थ, काव्य, शास्त्रार्थ, विद्या और शिल्प

का ।८। योगीके मनमें प्रतिभास हो वही प्रातिमा कहा है, जिसने सम्पूर्ण शब्द का अर्थ ज्ञात हो जाय ।९। हजार-हजार योजन दूर का शब्द भी सुनाई पड़े वही श्रावणी है जिसके द्वारा देवता के समान हुआ योगी उन्मत्त के समान आठों दिशाओं को देखना है ।१०। उसे पण्डितोंनेदैव उपसर्ग कहा है जिससे योगीका चित्त आचार भ्रष्टता और मनके दूषित होने से निराश्रम रूप से भ्रमण करता है ।११।वही 'भ्रम' कहा जाता है जिसके प्रभाव से ज्ञानावर्त के समान आकुल होकर ।१२। चित्त को विनिष्ट करता है वही आवर्त उपसर्ग कहा गया है। इन सब उपसर्गों के प्रभाव से योगी सम्पूर्ण देवयोनि ।१३। तथा योग से भ्रष्ट होकर ससार चक्रबारम्बार घूमतेहैंइसलिए मनके निर्मित्तश्वेतकम्बलसे आवृत्तहों।१४।

शरीरमंडलेदृष्ट्वागुरुज्ञानंततोहियत् ।
ज्ञानपूर्वोपियोयोगोज्ञातव्योवैविपश्चिता ॥१५
चिन्तयेत्परमंब्रह्मकृत्वा:तत्प्रवणंमनः ।
योगयुक्तःसदायोगोलब्ध्वाहारोजितेन्द्रियः ॥१६
सूक्ष्मास्तुधारणाः पतभूराद्यामूर्ध्निधारयेत् ।
धरित्रीधारद्योगीतत्सौक्ष्मंप्रयिन्द्यते ॥१७
आत्मानंमन्यतेचौर्वीतद्गन्धन्चजहातिसः ।
थैवाप्सुरसंसूक्ष्मंतद्वद्रूपंचतेजसि ॥१८
स्पर्शंवायौतथाद्वद्विरूतस्यधारणम् ।
व्योम्नःसूक्ष्मांवृत्तिंचशब्दंतद्वज्जहातिसः ॥१९
मनसासर्वभूतानांमनस्याविशतेयदा ।
मानही धारशांविभ्रन्मनःसूक्ष्मंचजायते ॥२०
तद्वद्बुद्धिमशेषाणांसत्वानामेत्ययोगवित् ।
परित्यजतिजम्प्राप्यबुद्धिसौक्ष्म्यमनुसत्तमम् ॥२१

शरीर मंडल में गुरु ज्ञान का दर्शन करे क्योंकि ज्ञानसे योग करना सीखना चाहित ।१५। मनमें परब्रह्म का चिंतन और उन्हींका ध्यानकरे निरन्तर जितेन्द्रिय अल्प भी तो तथायोग युक्तहोकर।मस्तकमेंभूरादि

सात प्रकारकी सूक्ष्म धारणा धारण करनेसे उसे उसका सूक्ष्म ज्ञ नहोगा ।१७। इस प्रकार आत्म चिंतन करने से पृथिजो के बन्धन को काटने में समर्थ होगा । इसीप्रकार जल मे सूक्ष्म रस तेजमें रूप ।१८। वायुहै स्पष्ट और आकाशमें सक्ष्मा प्रवृत्ति तथा शब्द धारणपूर्वक परित्यागकरे ।१६। बनके द्वारा समस्त भूतके मनमे प्रवेशकरके मानसी धारणा करने से ही सूक्ष्म मन उत्पन्न होताहै ।२०। इस प्रकार योगी समस्त भूतको बुद्धिमें प्रवेश करके, अनुत्तमा सूक्ष्म बुद्धिरूपका लाभ करके उसे छोड़ताहै ।२१।

परित्यजतिसूक्ष्माणिसप्तत्वेतानियोगवित् ।
सम्यग्विज्ञाययोऽलर्कतस्य:वृत्तिर्नविद्यते ।।२२
एतासांधारणानातुसप्तानांसौक्ष्म्यमात्सवान् ।
दृष्ट्वादृष्ट्वाततःसिद्धित्यक्त्वात्यक्त्वापरांव्रजत् ।।२३
यस्मिन्यक्षिमश्चकुरुतेभूतेराग महोपते ।
तस्मिस्तस्मिन्समासक्तिसंप्राप्यसविनश्यति। ।२४
तस्माद्विदित्वासूक्ष्माणितंसक्तानिपरस्परम् ।
परित्यजतियोदेहीसपरप्राप्नुयात्पदम् ।।२५
एतान्येवतुसंधायसप्तसूक्ष्माणिपार्थिव ।
भूतादीनांविनाशोऽत्रसद्भावज्ञस्यमुक्तये ।।२६
गन्धादिषुसमासक्तिसम्प्राप्यसविनश्यति ।
पुनरावर्त्तेभूपसब्रह्मापरमानुषम् ।।२७
सप्तैताधारणायोगासमतीत्ययदिच्छति ।
तस्मिस्तस्मिंल्लयंसूक्ष्मेभूतेयातिनेश्वर ।।२८
देवानामसुराणांवागन्धर्वोरगरक्षसाम् ।
देहेषुलयमायातिसंगंनाप्नोतिचक्वचित् ।।२९

जो योगी सात प्रकार के इन सूक्ष्म भावों को जानकर छोड़ता उसे पुनर्जन्म नहीं लेना होताहै।२२।आत्मवान् योगी सातप्रकारकी धारणाओं के सूक्ष्मत्वको बारम्बारदेखकर बारम्बार सिद्धिका विसर्जन करता हुआ परमगति पाकर।२३।जिसजिसभूतमें अनुरागीहोताहै उसी-उसीमेंआसक्ति

को प्राप्त होता हुआ विनष्ट हो जाता है ।२४। इसलिए परस्पर सशक्त भूतोंको जानकर जो उनका परित्याग कर देता है उसी को परमपद प्राप्त होती है ,२५। यह सात प्रकार के सूक्ष्म संध न पूर्वक भूतादि राग छोडकर ही सद्भाव को जानकर मोक्ष करता है ।२६। हे भूपते ! गन्धादि में आसक्ति ही नाश का कारण है उसीसे उसका संहार चक्रमें पुनरावर्त्तन होता है ।२७। योगी इन सात प्रकारको धारणाओं का अतिक्रमण करके उस-उस भूतमें लीनहो जाताहै औरदेव, दानव,गधर्वा,नाग राक्षस आदिके देहमें लीनहोकरभी किसीमें आसक्त नही होता।२८-२९।

अणिमालघिमाचैवमहिमाप्राप्तिरेवच ।
प्राकाम्यचतथेशित्वं वशित्वंचतथापरम् ।।३०
यत्रकामवसायित्वगुण नेतांस्तथैश्वरान् ।
प्राप्नोत्यष्टौनरव्याघ्रपरनिर्वाणसूचकान् ।।३१
सूक्ष्मात्सूक्ष्मतमोऽणोयाञ्छीघ्रत्वलघिमागुणः ।
महिमामेषपूज्यत्वात्प्राप्तिर्नाप्राप्यमस्यत् ।।३२
प्राकाम्यमस्यव्यापित्वादीशित्वचेश्वरोयतः ।
वशित्वाद्वशिमानामयोगिनःसप्तमोगुणः ।।३३
यत्रेच्छास्थामप्युक्त यत्रकामावसायिता ।
मेश्वर्यंकारणरेभिर्योगिन प्रोक्तमष्टधा ।।३४
मुक्तिसूचकंभपपरं निर्वाणमात्मनः ।
ततोनजायतेनेवद्ध तेनविनश्यति ।।३५

वह अणिमा, लघिमा महिमा, प्राप्ति, काकाम्य, ईशित्व,वशित्व और काम वसायित्व इन आठ प्रकार के निर्वाण प्रदायक ऐश्वर्यात्मक गुणोंको प्राप्त करता है ३०-३१।जिसके द्वारा सूक्ष्मसेभी सूक्ष्म होसकेवह अणिमा है, जिसकेद्वारा सब कार्योंमे शीघ्रता उत्पन्नहो सके वह लघिमा है,जिसके द्वारासबका पूजनीय होसकेवह महिमाहै, जिसके द्वारा समस्त इच्छितकी प्राप्ति होसके वह प्राप्तिहै।३२।जिसके द्वारा व्यापक शक्ति उत्पन्नहोसके वह प्राकाम्यहै,जिसकेद्वारा ईश्वरकी प्राप्तिहो वह ईशित्वहै, जिसकेद्वारा

सब वशीभूत हो सके, वह शशित्व है यह वशित्वही योगियों का सातवां गुण है ।३३। जिसके द्वारा स्वेच्छानुसार गमन कर सके और स्वेच्छानुसार कार्य सिद्ध हो सके वह वह कामावसायित्वहै। आठ प्रकारके गुणोंसे ईश्वरके सब कार्य करने में समर्थ हो जाता है।३४। यह सब गुण मोक्षके सूचक है इनके मिलने पर मुक्तिकाल उपस्थित समझे। फिर इसे जन्म ग्रहण वृद्धि और मरण के चक्रमें नहीं पड़ना होगा ।३५।

नापिक्षयसवाप्नोतिपरिणामंनगच्छति ।
छेदंक्लेदतथादाहशोभूरादितोनच ॥३६
भूनवर्गादवाप्नोतिशब्दाद्यैर्ह्रियतेनच ।
नचास्यसन्तिशब्दाद्यास्तद्भोक्तातैनंयुज्यते ॥३७
यथाहिकानखण्डपद्रव्यवदग्निना ।
दग्धदाषं द्वतीयेंनखण्डेनैक्यं व्रजैन्नृप ॥३८
नविशेषमवाप्नोतित द्वद्योगाग्निनायतिः ।
निर्दग्धदोषस्तेनैक्यप्रयातिब्रह्मणासह ॥३९
यथाग्निरग्नौभ क्षिप्तःसमानत्वमनुव्रजेत् ।
तदाख्यस्तन्मयोभूतोनगृह्यतेविशेषतः ॥४०
परेणब्रह्मणातद्वत्प्राप्यैक्यंदग्धकिल्विषः ।
योगीयतिपृथग्भावंनकदाचिन्महीपते ॥४१
यथाजलंजलेनैक्यंनिक्षिप्तमुपगच्छति ।
तथात्मासाम्यवभ्येतियोगिनः परमात्मनि ।४२

उसको क्षय की प्राप्ति कभी नहीं होगी, उसे कभी भूतादि भूतो से छिन्न-भिन्न, क्लिन्न दग्ध अथवा शुष्क नहीं करनापड़ेगा ।३६। शब्दादि उसे अपहृत न कर सकेंगे, विषय केसाथ उसका कोई सम्बन्ध न रहेगा, वह भोक्ता भी न होगा तथा उनसे उसका स्पर्श भी न हो सकेगा ।३७। हे राजन् ! जैसे स्वर्ण के टुकड़े को अपद्रव्य के समान अग्नि में तपाकर दोष रहित करने पर एक निर्मल स्वर्ण खण्ड का संयोग होता है ।३८। किसी प्रकार का पृभेद उसमें नहीं दीखता, वैसे ही योगाग्नि में रागद्वेषादि दोषों को तपाने से योगी भी ब्रह्म के

साथ संयोग प्राप्त करता है।३९। जैसे अग्निमें अग्नि डालेंतो वह अभेद होती है तथा तदात्म हो जाती है।४०। वैसे ही दोनों के जल जाने पर योगी भी ब्रह्म से तदात्म रूपको प्राप्त होता है उसका पृथक् भाव नहीं रहता।४१। जिस प्रकार जलमें गिराहुआ जल समभाव होता है वैसे ही योगियों का आत्मा भी ब्रह्म में समभाव हो जाता है।४२।

३३–योगचर्या

भगवन्योगिनश्चर्य्यांश्रोतुमिच्छामितत्वतः ।
ब्रह्मवर्त्मन्यनुसरन्यथायोगीनसीदति ॥१
मानापमानौयावेत्तौप्रत्युदवेगकरौनृणाम् ।
तावेविपरीतार्थौ योगिनःसिद्धिकारकौ ॥२
मानापमानौयावेतौतावेयाहुर्विषामृते ।
अपमानोऽमृततत्रमानस्तुविषमंविषम् ॥३
चक्षुःपूतन्यसेत्पादवस्त्रपूतंजलंपिवेत्
सत्यपूतावदेद्वाणीबुद्धिपूतछचिन्तयेत् । ४
आतिथ्यंश्राद्धयज्ञेपुदेवयात्रोत्सवेषुच ।
महाजनेषुसिद्ध्यर्थनगच्छेद्योगवित्क्वचित् ।।५
व्यस्तेविधूमेव्यङ्गारेसर्वस्मिन्भुक्तवज्जने ।
अटेतयोगविद्भक्ष्यंनतुतेष्वेवनित्यशः ॥६
यथेवमवमन्यतेजनाःपरिभवन्तिच ।
तथायुक्तश्चदेद्योगीसतांवर्त्मनदूषयन् ॥७

अलर्क बोले– हे भगवन्! योगियों के जिस आचरण से ब्रह्मपथके अनुगामी होकर नाशको प्राप्त नही होना होता है उसे मैं यथार्थ रूप से सुनना चाहता हूँ।१।दत्तात्रैयजी बोले-मान अपमान ही प्रीत औरउद्वेग केकारण हैं,यदियोगी इनदोनोंकोविपरीतार्थक अर्थात्मानको अपमानऔर

अपमान को मान समझे तो यह सिद्धि देने वाले होते हैं।२। मान अपमान ही अमृत और विष हैं मान को विष और अपमान को अमृत माने।३। नेत्र से देखकर पैर रखे, जल को वस्त्र से छानकर पीवे, सत्य से पवित्र हुए वचन ही बोले तथा बुद्धि पूर्वक विचार कर ही चिन्तन करे।४। आतिथ्य, श्राद्ध, यज्ञ, यात्राऔर महोत्सव मे न जाय तथासिद्धि के लिए महाजनों के पास भी गमन न करे।५।जब गृहस्थके गृह की भी अग्नि शान्त हो जाय, सब मनुष्य भोजन करके निश्चन्त हो लें उसी समय योगी को भिक्षाके लिए जाना चाहिए।६। जिससे मनुष्य अपमान करें ऐसी चेष्टा करता हुआ, साधुत्व को कभी दूषित न करता हुआ ही विचरण करे।७।

भैक्ष्यचरेद्गृहस्थेषुयायावरगृहेषुच।
श्रेष्ठातुप्रथमाचेतिवृत्तिरस्यपदिश्यते ॥८
अथनित्यगृहस्थेषुशालीनेषुचरेद्यतिः।
श्रद्दधानेषुदान्तेषुश्रोत्रियेषुमहात्मसु ॥९
अतऊर्ध्वंपुनश्चापिअदुष्टापतितेषुच।
भैक्ष्यचर्याविवर्णेषुजघन्यावात्तिरिष्यते ॥१०
फलंमूलंप्रियंगुंवाकणपिण्याकसक्तवः ॥११
इत्येतेचशुभाहारयोगिनांसिद्धिकारकाः।
नत्प्रयुज्यान्मुनिर्भक्तयापरमेणससमाधिना ॥१२
अपःपूर्वंसकृप्राश्यतूष्णींभूत्वासमाहितः।
प्राणायितितस्तस्यप्रथमाह्यहुतिःस्मृताः ॥१३
अपानायद्वितीयातुसमानायेतिचापरा।
उदानायचतुर्थीस्याद्व्यानायेतिचपचमी ॥१४

गृहस्थों अथवा यायावर पुरुषों के घर से ही भिक्षा ले, उसमें प्रथम वृत्ति ही प्रधान मानी गयी है।८। जो गृहस्थ लज्जावान्, श्रद्धावान्, चतुर, श्रोत्रिय, महात्मा,निर्दोष तथा अपतित है, उसीकेघर भिक्षा माँगे विवण पुरुषों के यहाँ से भिक्षा लेनेको जघन्य वृत्ति कहा गया है।९-१०। यवागू,मट्ठा,दूध,थावक कुलथी,फल,मूल,प्रियगु,कण,पिण्याक,सत्तु इनकी

भिक्षाने ।११। यह वस्तुएं कल्याण करन और सिद्धि देनेवाले आहार के रूपमें निर्दिष्ट है, इसलिए सावधानी पूर्वक यह वस्तु उपभोग करे ।१२। भोजन के पहिले मौन रहकर एकबार जलपीकर प्राणाय स्वाहा कहता हुआ आहार करे, योगियोंकी यही प्रथम आहुति मानी गयी है ।१२। फिर 'अपानाय' कहकर दूसरी, 'समानाय' कहकर, तीसरी, 'उदानाय' कहकर चौथी और 'व्यानाय' कहकर आहुति दे ।१४।

प्राणायामै पृथक्कृत्वाशेषंभञ्जीतकामतः ।
अपःपुनःसकृत्प्राश्यआचम्यहृदयस्पृशेत् ॥१५
अस्तेयंब्रह्मचर्यंचत्यागाऽलोभस्तथवच ।
व्रतानिपंचभिक्षूणामहिंसापरमाणिवै ॥१६
अक्रोधोगुरुशुश्रूषाशौचमाहारलाघवम् ।
नित्यस्वाध्यायइत्येतेनियमाः परिकीर्तितः ॥१७
सारभूतमुपासीतज्ञानंयत्कार्यसाधकम् ।
ज्ञानानांवहुतायेयोगविघ्नककोहिसा ॥१८
इदंयमिदंज्ञेयमितियस्तृषितश्चरेत् ।
अपिकल्पसहस्रेषुनैवज्ञेयमवाप्नुयात् ॥१९
त्यक्तसङ्गोजितक्रोधोलघ्वाहारीजितेन्द्रियः ।
बिधायबुद्धयाद्वाराणिमनोध्यानेनिवेशयेत् ॥२०
शून्येष्वेवावकाशेगुहासुनेषुच ।
नित्ययुक्तःसद योगाध्यानंसम्यगुपक्रमेत् ॥२१

फिर प्राणायाम द्वारा पृथक् करतेहुएस्वेच्छानुसार शेष भोजन करे, फिर एकबार जलपीकर आचमन करे और हृदयकोस्पर्श करे।१५।अस्तेय ब्रह्मचर्य,त्याग,अलोभ,अहिंसा यह पाँच परम व्रत भिक्षुकके लिएकहे गये हैं।१६।तथा अक्रोध गुरु सेवा,शौच'लघु आहार और नित्य स्वाध्याय यह पाँचनियम बतायेहैं।१७।कार्य सिद्धिवाले साररूपी ज्ञानकी ही आलोचना करे क्योंकि अनेक प्रकारकी ज्ञान विषयक चर्चा से योगमे विघ्न पड़ताहै ।१८। जो योगी ज्ञेय पदार्थकी जिज्ञासा करतेहुए तृषित चित्तसे भ्रमतेहैं

उनके हजार कल्पमें भी ज्ञेय पदार्थकी उपलब्धि नहीं हो सकती।१६। संग का परित्याग करताहुआ अक्रोधी, लघुभोजी और जितेन्द्रिय होकर बुद्धियोग से विधान करके चित्तको ध्यान मग्न करे।२०। निर्जन स्थान, गुफा तथा वन में जाकर सदा सम्यक विधानपूर्वक ध्यान रत हो।२१।

वाग्दण्ड:कर्मदण्डश्चमनोमण्डश्चतेत्रय: ।
यस्यैतेनियतादन्डा.स.त्रदण्डोमहायति: ।।२२
सर्वमात्ममययस्यसदसज्जगदीदृशम् ।
गुणागुणमयंतस्यक:प्रिय:कोनृपाप्रिय: ।।२३
विशुद्धबुद्धि.समलोष्ठकाञ्चन:०मस्तभूतेषसम.समाहित: ।
स्थानपरंशाश्वतमव्ययंचयतिर्हिगत्वानपुन: प्रजायते ।।२४
वेदाच्छ्रेष्ठा:सर्वयज्ञक्रियाश्चयज्ञाज्जाप्यज्ञानमार्गश्चजप्यात् ।
ज्ञानाद्धयानंसंगरागव्यपेततस्मिन्प्राप्तेशाश्वनस्योपलब्धि:।२५
समाहितोब्रह्मपरोऽप्रतादीशुचिस्तथैकान्तरतिर्यतेन्द्रिय: ।
समाप्नुयाद्योगमिमंमहात्माविमुक्तिताप्नीतिततःस्वयोगत:२६

वाग्दंड कर्मदंड और मनोदन्ड को वश में रखने वाला त्रिदण्डीही महायती कहा जाता है।२२।इस सत्-असत्, गुण,अगुणा युक्तदिखाईपड़ने वाले विश्वकोजो योगी आत्ममय मानतेहैं, उनकेलिए कौनप्रिय औरकौन अप्रिय हैं ? ।२३। जो विशुद्ध बुद्धिसे लोहा और सुवर्ण को समान मानते तथा समस्त भूतमें समाहितहोकर सर्वाधार, शाश्वत एवं अव्यय ब्रह्मको सर्वत्रविद्यमान देखतेहैं- उन्हें पुनर्जन्मनहीं धारणकरना होता।२४।निखिल वेद और सब प्रकारकीयज्ञ क्रिया उत्कृष्ट है, उस यज्ञसे जपश्रेष्ठहै,जपसे ज्ञानमार्ग और ज्ञानमार्गसे नि:संगओर रागहीनध्यान श्रेष्ठहैं, क्योंकिइस ध्यान योग के द्वारा ही शाश्वत ब्रह्मकी प्राप्ति है।२५। जो सावधानी सेब्रह्मपरायण,प्रमादरहित, एकान्तवासीऔर जितेन्द्रिय होकर योगसाधन करते हैं, वे आत्मामें आत्माके संयोगको पाकर मोक्षलाभ करते हैं।२६।

३४. ओंकार स्वरूप कथन

एवयोवर्त्तेयोगीसम्यग्योगव्यवस्थितः ।
नसव्यावर्तितुंशक्योजन्मान्तरशतैरपि ॥१
दृष्ट्वाचपरमात्मानप्रत्यक्षविश्वरूपिणम् ।
विश्वपादशिरोग्रीवंविश्वेशंविश्वभावनम् ।.२
तत्प्राप्तयेमहत्पुण्यमोमित्यकाक्षरंजपेत् ।
तदेवाध्ययनंतस्यस्वरूपश्रृण्वतःपरम् ॥३
अकारश्चतथोकारामकारश्चाक्षरत्रयम् ।
एतास्तिस्रास्मृतामात्राःसात्वराजसतामसाः ॥४
निर्गुणायोगिगम्याग्याचाधर्ममात्रोर्ध्वसंस्थिता ।
गान्धारीतिचविज्ञयागान्धारस्वरसंश्रया ॥५
पिपीलिकागतिस्पर्शाप्रयुक्तामूर्ध्नि लक्ष्यते ।
यथाप्रयुक्तओङ्कार.प्रतिनिर्य्यातिमूर्द्धनि ॥६
तथोङ्कारमयोयोगीत्वक्षएत्वक्षरोभवेत् ।
प्राणोधनुःशरोह्यात्माब्राह्मवेध्यमनुत्तमम् ॥७

दत्तात्रेयजीबोले—जो योगी इसप्रकार सम्यक् विधानपूर्वकयोगयुक्त होतेहैं,वह सौ-सौ जन्मान्तर मे भी अपने पद से निवृत नही होते ।१।जो विश्वस्वरूप, विश्वेश्वरऔर विश्वभावनहैतथा विश्वही जिनके पाद,ग्रीवा और मस्तक हैं उन्हीं परब्रह्म की प्रत्यक्ष करेगी योगी ।२। उनको पानेको निमित्त'ॐ'इस एकाक्षर मन्त्रका जप करे, यही उनका स्वाध्यायहै,इसी ॐकार स्वरूपका श्रवणकरना चाहिए।३।अकार,उकार और मकार यही तीनअक्षर ॐकार स्वरूप है,इन्हें तीनमात्रा समझो । यही मात्र के क्रमसे सात्विक,राजसिकऔर तामसिक होतेहैं।४।तथा ओंकारमे एक अर्द्धमात्रा और है, वह तीनों गुणोंसे परे है । ऊर्ध्व मेअवस्थित योगियों को गम्यहैं, इसमें गांधार स्वरका आश्रय होनेसे यह गाँधारी नामसे प्रसिद्धहै ।५।यह मात्रा चींटीके समान गतिऔर स्पर्श वालीहै, शिरोभागमें दिखाई देती

है, तथा जिस प्रकार ओंकार प्रमुक्त यह शिरोभाग में जाती है ।६। वैसे हो योगी अक्षर-अक्षर में ओंकार युक्त होता है, प्राण को धनुष रूप, आत्मा को बाण रूप और ब्रह्म को लक्ष्य रूप जाने ।७।

अप्रमत्तेनवेद्धव्यंशरवत्तन्मयोभवेत् ।
ओमित्येतत्त्रयोवेदास्त्रयोलोकास्त्रयोऽग्नयः ॥८
विष्णुर्ब्रह्माहरश्चैवऋक्सामानियजूंषिच ।
मात्रा.सार्द्धाश्चतिस्रश्चविज्ञेयाःपरमार्थतः ॥६
तत्रयुक्तस्तुयोयोगीसतल्लयमवाप्नुयात् ।
अकारस्त्वथभूर्लोकउकारश्चोच्यतेभुवः ॥१०
सव्यञ्जनोमकारश्चस्वर्लोकःपरिकल्प्यते ।
व्यक्तातुप्रथमामात्राद्वितीयाव्यक्तसंज्ञिता ॥११
मात्रातृतीयाचिच्छक्तिरर्धमात्रापरंपदम् ।
अनेनैवक्रमेणैताविज्ञेयायोगभूमयः ॥१२

प्रमाद रहित होकर बाण के समान ब्रह्म को सिद्ध करने में तन्मय हो सकता है । ओंकार ही त्रिवेद त्रैलोक्य और तीनों अग्नि ।८। ब्रह्मा, विष्णु शिव तथा ऋक्,यजु.' साम स्वरूप हैं, परम अर्थ से ओंकार की साढ़ेतीन मात्रा है ।६। इस ओंकार में मिलकर योगी उसमें लीन होतेहैं, अकार भूलोक उकार भुवर्लोक।१०। तथा व्यञ्जन युक्त मकार स्वर्लोक कहा गया है, उसके प्रथम मात्रा व्यक्ता, द्वितीय अव्यक्ता ।११। तृतीय चिच्छक्ति और चतुर्थ परमपद है, इस प्रकार क्रम पूर्वक इसे योग भूमि समझो ।१२।

ओमित्युच्चारणात्सर्वंगृहीतंसदसद्भवेत् ।
ह्रस्वातुप्रथमामात्राद्वितीयादैर्घ्यसंयुता ॥१३
तृतीयाचप्लुतार्धाख्यावचसःसानगोचरा ।
इत्येतदक्षरंब्रह्मापरमोंकारसंज्ञितम् ॥१४
यस्तुवेदनरःसम्यक्तथाध्यायतिवापुनः ।
संसारचक्रमुत्सृज्यत्यक्तत्रिविधबन्धनः ॥१५

प्राप्नोतिब्रह्मणिलयंपरमेपरमात्मनि ।
आक्षीणकर्मबन्धश्चज्ञात्वामृत्युमरिष्टतः ॥१६
उत्क्रान्तिकालेसंस्मृत्यपुनर्योगित्वमृच्छति ।
तस्मादसिद्धयोगेनसिद्धःयोगेनवापुनः ।
ज्ञेयान्यारिष्टानिसदायेनोत्क्रांतौनसीदति ॥१७

केवल ॐ का उच्चारण करतेही सदैव सत्-असत्का ग्रहण होजाता है। प्रथम मात्रा और द्वितीय मात्रा दीर्घ है ।१३। तृतीया मात्रा प्लुत स्वरूप है और अर्द्ध मात्रा का तो स्वरूप वर्णन ही नहीं किया जा सकता। इस प्रकार जो योगी ओंकार स्वरूप अक्षर परब्रह्म को ।१४। जानकर उनका ध्यान करते हैं वह ससार चक्र का अतिक्रमण करते हुए तीनों बंधनों को छोड़ कर ।१५। उस परब्रह्म में ही लीन हो जाते है, यदि उनके कर्म-बंधन क्षीण न हों तो वह अरिष्ट द्वारा मृत्यु काल को जानकर ।१६। उस समय स्मृति लाभ पूर्वक योगित्वको पुनः प्राप्त होते है, इसलिए सिद्ध या असिद्ध कैसाभी योगी हो, अरिष्ट का ज्ञान होना ही चाहिये, क्योंकि अरिष्ट के ज्ञान से मरणकाल में दुःख की प्राप्ति नहीं होगी ।१७।

३५ अरिष्ट कथन

अरिष्टानिमहाराजश्रृणुबक्ष्यामितानिते ।
येषामालोकनान्मृत्युंजिजानातियोगवित् ॥१
देवमार्गंध्रुवंशुक्रंसोमच्छयामरुन्धतीम् ।
यीनपश्येन्नजीयेत्सनरःसंवत्सात्परम् ॥२
अरश्मिबिम्वंसूर्य्यस्यवह्निचैवांशुमालिनम् ।
दृष्टवैकादशमासेभ्योनरोनोर्ध्वंतुजीवति ॥३
वान्तेमूत्रपुरीषेचयःस्वर्णंरजतंतथा ।
प्रत्यक्षकुरुतेस्वप्नेजीवेत्सदशमासिकम् ॥४

दृष्ट्वाप्रेतशाचादीन्गधर्वनगराणिच ।
सुवर्णवर्णान्वृक्षाश्चनबमासान्सजीवति ॥५
स्थूल:कृश कृश:स्थूलोयोऽकस्मांदेवजायते ।
प्रकृतेश्चनिवर्ततस्यायुश्चाष्टमासिकम् ॥६
खन्ड यस्यपदपार्ष्ण्यापादस्याग्रेचवाभवेत् ।
पांशुकदमयोर्मध्येसप्त ासान्सजीवति ॥ ७

दत्तात्रेयजी बोले —हे राजन् ! अब तुम्हारे प्रति समस्त अरिष्टका वर्णन करता हूँ, श्रवणकरो, इन्हें देखकर योगी अपना मृत्युकाल समझने ।१। देवमार्ग, ध्रुव, शुक्र, चन्द्र,स्वच्छया और अरुन्धतीइनकोजो नहींदेख सकता वह सम्वत्सर के पश्चात् ही मृत्यु को प्राप्त होता है ।२। सूर्यका बिम्ब रश्मियों से रहित तथा अग्नि की किरणों युक्त जोदेखे,वह ग्यारह मास से अधिक जीवित नहीं रहता ।३। स्वप्नावस्थामें मूत्र परीय और वमनमें जिसे स्वर्ण अथवा चाँदी दिखाई दे, वह दश महीनेसे अधिकनहीं जीता ।४। जो प्रेत,पिशाच,गंधर्वनगरअथवा स्वर्णिम वृक्षको देखताहै वह नौ मास ही जीवितरहता है ।५। जो सहसा स्थूल होकर कृश होताऔर पुनः कृश से स्थूल होजाय वह आठ महीने ही प्राण धारण करता है ।६। रेत अथवा कीचड़ में पाँव जमाने पर जिसकी एड़ी या पाँवके अगलेभाग काचिह्न खंडित दिखाई पड़े उसकी परमायु सात महीने ही समझो ।७।

गृध्रकपोत:काकोलोवायसोवापिमूर्द्धनि ।
क्रव्यादोवाखगोलीन:षण्मासायु:प्रदर्शक: ॥८
हन्यतेकाकपंक्तीभि:पांशुवर्षेणवानर: ।
स्वांच्छायामन्यथादृष्ट्वाचतुपंचसजीवति ॥९
अनभ्रेविद्युतंदृष्ट्वादक्षिणांदिशमाश्रिताम् ।
रात्राबिन्द्रधनुश्चापिजीवतंहित्रिमासिकम् ॥१०
घृतेतैलेतथादर्शतोयेवानात्मनस्तनुम् ।
य:पश्येदशिरस्कांवामासादूर्ध्वनजीवति ॥११

यस्यत्रस्तसभोगन्धोगात्रे शवसमोऽपिवा ।
तत्याद्धं मासिकंज्ञेयोगिनोनृपजीवितम् ॥१२
यस्यवैस्नातमात्रस्यहृत्पादमवशुष्यते ।
पिवतश्चजलंशोषोदशाहंसोऽपिजीववि ॥१६
संभिन्नोमारुतोयस्यमर्मस्थानानिकृन्तति ।
हृष्यतेनाम्बुसंस्पर्शान्चस्यमृत्युरुपस्थितः ॥१४

गृद्ध, उलूक, काक अथवा क्रव्याद या अन्य कोई नीलवर्णका हिंसक पक्षी उड़कर सिर पर आ बैठे तो छः मास ही जीवन रहता है ।८। जो काक पंक्तिसे अथवा धूलिकी बर्षासे आहतहो जाय तथाजो अपने देहकी छायाको विपरीतदेखे यह चार या पांच मानसे अधिक जीवितनहींरहता ।६। बिना मेघके दक्षिण दिशामें जिसे विजली चमकती हुई दिखाईपड़े अथवा रात्रिके समय इन्द्रधनुष दिखाई दे वह दो तीन मास तक ही जीवनधारण करता है ।१०। जिसे घृत, तेल, दर्पण और जलमें अपना स्वरूप दिखाई न पड़े अथवा अपने शरीरको मस्तकरहित देखे, वह एक मास से अधिक जीवित नही रहता ।११।जिसके शरीर से मृतक शरीर जैसी गन्ध निकलती हो वह एक पक्ष ही जीवित रहता है ।१२। जिसका हृदय और पाँव स्नान करते ही सूखजाय अथवा जल पीतेही पुन: प्यास स्थानको वायुछिन्न-भिन्न करदे तथा जल के स्पर्श से जिसे रोमाँचनहों, उसका मृत्यु काल ही उपस्थित समझें ।१४।

ऋक्षवानरयानस्थोगायन्योदक्षिणांदिशम् ।
स्वप्नयथातितस्यापिनमृत्यूकालमिच्छति ॥१५
रक्तकृष्णाम्बरधरागायन्तीहसतीचयम् ।
दक्षिणाशांनयेन्नारीस्वप्नेसापिनजीवित ॥१६
नग्नंक्षपणकंस्वप्नेहसमानं महाबलम् ।
एवंसंवीक्ष्यवल्गन्तविद्यान्मृत्यूमुपस्थितम् ॥१७
आमस्तकतलाकुस्तुनिमग्नपङ्कसागरे ।
स्वप्नेपश्यत्वथात्मनंससद्याम्रियतेनरः ॥१८

केशाङ्गार स्तथाभस्मभुजङ्गान्निर्जलांनदीम् ।
दृष्ट्वास्वप्नेदशाहात्तु मृत्युरेकादशेदिने ॥१९
करालैर्विकटैःकृष्णैःपुरुषरुद्यतायुधैः ।
पाषाणैस्ताडितःस्वानेसद्योमृत्युं लभेन्नरः ॥२०
सूर्योदयेयस्यशिवाक्रोशन्तीयातिसंमुखम् ।
विपरीतंपरीतंवासस़द्योमृत्युमृच्छति ॥२१

जो स्वप्नावस्था में रीछ या बन्दर के यान में चढ़ कर गाता हुआ दक्षिण दिशा की तरफ जाय उसका मृत्युकाल आया समझें ।१५। जिसे लाल काले वस्त्र पहिने हुए हास्य मुख से गाती हुई स्त्री स्वप्न में दक्षिणदिशा में ले जाय उसकी भी मृत्यु शीघ्र होती है ।१६। स्वप्न में महाबल, नग्न, क्षपणक सन्यासी को एकाकी हंसता हुआ जाता देखे तो मृत्युकाल समीप जानें ।१७। तथा जिसे स्वप्नमें अपना शरीर मस्तकतक कीचड़ में घुसा हुआ दिखाई, दे उसका मरणकाल भी निकट समझें ।१८। स्वप्न में केश, अहङ्कार भस्म, सर्पः शुष्क नदी दिख ईतो ग्याहवें दिन उसकी मृत्यु होती है ।१९। स्वप्न में जिसे कराल तथा विकट आकार वाले कृष्णवर्ण पुरुष सशस्त्र आकर पत्थर में मारें उसकी मृत्यु शीघ्र होने वाली समझो ।२०। जिसके सामने, पीछे अथवा चारों ओर सूर्योदय काल में गीदड़ी आ जाय वह शीघ्र ही मरता है ।२१।

यस्यवैभुक्तमात्रस्यहृदयंवाध्यतेक्षुधा ।
जायतेदन्तघर्षश्चसगतायुर्नसंशयः ॥२२
दीपगन्धनयोवेत्ति त्रस्यत्यह्नितथानिशि ।
नात्मानंपरनेत्रस्थंवीक्षटेनसीवति ॥२३
शक्रायुधंचार्द्धरात्रे दिवाग्रहतारास्तथा ।
दृष्ट्वामन्येतसंक्षीणमात्मजीवितमात्मवित् ॥२४
नासिकावक्रतामेतिकर्णयोर्मनोन्नती ।
नेत्रचव मंस्रवतियस्यतस्यायुरुद्गतम् ॥२५

आरक्ततामेतिमुखंजिह्वावाश्यामतांयदा ।
तदाप्राज्ञोविजानीयान्मृत्पुमासन्नमात्मनः ॥२६
उष्ट्रासभयानेनयःस्वप्नेदक्षिणांदिशम् ।
प्रयातितंचजानीयात्सद्योमृत्युं नरेश्वर ॥२७
पिधायकर्णौनिर्घोषं नश्रृणोत्यात्मसम्भवम् ।
नश्ययेच्चचक्षुषोर्ज्योतिर्यस्यसोऽपिनजीविति ॥२८

भोजन करके उठते ही जो तुरन्त भूख से व्याकुल होजाय तथादंत घर्षण होने लगे, उसकी आयु समाप्त ही समझो ।२२। जिसको नासिका को दीप गन्ध का ज्ञान न हो, जो दिन या रात्रि भयको प्राप्त हो तथा जो अपने प्रतिविम्ब को दूसरेके नेत्रमें न देखसके उसकी भी आयुसमाप्त हुई समझो ।२३। यदि आधी रातमें इन्द्रधनुष और दिनमें तारे दिखाई दे तो उसकी भी आयु को निःशेष हुआ समझो।२४। जिसकी नाक टेढ़ी होजाय, दोनों कान ऊँचे नीचे प्रतीतहों अथवा बाँये नेत्रसे आँसू गिरते हों, उसकी आयुभी सम्पूर्ण हुई समझिये ।२५। मुख लाल, जिह्वा श्याम हो जाय तो अपना काल समीप समझो।२६। स्वप्नमें ऊँट या गधेके यान में चढ़कर दक्षिणको ओर जाय तो शीघ्र ही मृत्युको प्राप्त होताहै ।२७ दोनों कान ढक लेने पर अपना शब्द सुनाई न पड़े अथवा जिसके नेत्रों से कुछ दिखाई न पड़े वह शीघ्र ही मरता है।

पततोयस्यवैगर्तेस्वप्नेद्वारं पिधीयते ।
नचोत्तिष्ठतियःश्वभ्रात्तदन्तंतस्यजीवितम् । २९
ऊर्ध्वाचदृष्टिर्न संप्रतिष्ठारक्तापुनःसपरिवतमाना ।
मुखस्यचोष्माशिशिराचनाभिःशंसंतिपुंसामपरं शरीरम् ॥३०
स्वप्नेऽग्निप्रविद्यस्तुनचनिष्क्रमतेपुनः ।
जलप्रवेशादपिवातदन्तंतस्यजीवितम् ॥३१
यश्चाभिहन्यतेदुष्टैर्भूतैरात्रावथोदिवः ।
समृत्युसप्तरात्रान्तेनरेःप्राप्नोयसंशयम् ॥३२

स्ववधस्त्रममलंशुक्लंरक्तं पश्यत्यथोसितम् ।
य.पुमान्मृत्युमासन्नंतस-ापिहिविनिर्दिशेत् ।।३३
स्वभाववपरीत्यंतुप्रकृतेश्चविपर्ययः ।
कथयन्तिमनुष्याथांसमासन्नौयमान्तकौ ।।३४

स्वप्न में जो गढ़े में गिरकर उससे निकलने का मार्ग न पा सके या गिरकर उठनेमें असमर्थ हो तो भी उसकी आयु निःशेष समझो।२९। जिसकी दृष्टि ऊर्ध्व भागमें नहीं जमती, लाल रङ्गको होकर बारम्बार घूर्णित या चंचल हो जाय, तथा जिसकामुख उष्णतासे युक्त औरनाभि विस्तृत हो जाय वह शरीर त्यागकर अन्य देह धारण करता है।३०। स्वप्नमें जो अग्नि या जाल में घुसकर फिर बाहर न निकले उसका जीवन समाप्त समझो ।३१। जो दिन अथवा रात्रिमें दुष्ट भूतोंसे ताडित हो वह सात दिनमें मर जाताहैं।३२।जो अपने पहिने हुए श्वेत वस्त्रों को लाल या काले रङ्ग के देखताहै, उसका मरण काल समीप समझो । स्वभाव के विपरीत होने तथा प्रकृति का विषपर्यय होने से यम और अन्तक उस पुरुष के समीप होते हैं ।३४।

येषांविनीतःसततंयेऽस्यपूज्यमामताः ।
तानेवचावजानातिता वचविनिन्दति ।।३५
देवान्नाचयतेवृद्धान्गुरून्विप्रांश्चकिन्दति ।
मातापित्रोर्नसत्कारंजामतृणांकरोतिच ।।३६
योगिनांज्ञानविदुषामन्येषांचमहात्मनाम् ।
प्राप्तेतुकाले पुरुषस्‍ द्विज्ञेयविचक्षणैः ।।३७
योगिनांसततंयत्नादरिष्टान्यवनीपते
संवत्सरान्तेतज्ज्ञेयंफलदनिशिवासरम् ।।३८
विलोक्याविशदाचैषांफलपंक्ति सुभीषणा ।
विज्ञायकार्योमनुसि चकालोनरेश्वर ।।३९
ज्ञात्वाकालंचतंम्यनभःस्थानंसमाश्रितः ।
युञ्जीतयोगीकालोऽसौयथानास्यांफलोभवेत् ।।४०

दृष्ट्वारिष्टतथायोगीत्यक्त्वामरणजभयम् ।
तत्स्वभावंतदालोक्यकालोयावद्विपाकदः ॥४१
तस्यभागेतथैवाह्लोयोगयुञ्जीतयोगवित ।
पर्वाह्ले चापराह्ले चमध्याह्ले चापितद्दिने ॥४२
यत्रवारजनीभागेतदरिष्टं निरीक्षितम् ।
वत्रैतावद्युञ्जीतयावत्प्राप्तहितद्दिनम् ॥४३

कालके प्राप्तहोने परही मनुष्यपूजनीय पुरुषोका निरादरतथानिन्दा करताहै ।१५। देव पूजनसे विमुख होता, बृद्धोंऔर विप्रोंकी निन्दाकरता तथा माता पिता और श्री माता का सत्कार ।१६। करता और योगी ज्ञानी तथा अन्य साधु-सन्तों के सत्कार से विमुख होता है, उसकी भी आयु निःशेष समझें।२७। हे राजन् ! योगियोंको यहज्ञान रखना चाहिए कि यह सभी अरिष्ट संवत्सर के अन्तमें रात्रिहों या दिन फल देतेहै।३८। इन सभी भीषण फलों पर दृष्टि रखे, इनका ज्ञान सहज मेंही होजाताहै इन्हें भले प्रकार जानकर उनके उपस्थित-कालका ध्यान रखे ।३९।उसके उपस्थित कालको जानकर भय रहित स्थान का आश्रय लेकर योग में निमग्न हो, जिससे कालका वशन चल सके।४०।अरिष्टको देखकर उससे होनेवाले मृत्यु भय को त्यागकर अरिष्टके स्वभावपर विचारकरेऔरजब वहसमय उपस्थित हो ।४१। दिन के उसी भागमें योगी योग निमग्नहो, रात के पूर्वाह्न अथवा अपराह्नमें ।४२। अथवा रात्रि में, जिससमय भी अरिष्ट दिखाई पड़े, उसी समय योग मग्न होना चाहिए जब तक वह मृत्यु का दिन न आवे, तबतक इसी प्रकार योग क्रियामें लगा रहे।४३।

ततस्त्यक्त्वाभयसर्वंजित्वातंकालमात्मवान् ।
तत्रैववसथेस्थित्वायत्रवास्थैर्यमात्मनः ॥४४
युञ्जीतयःगनिजित्यत्रीन्गुणान्परमात्मनि ।
तन्मयश्चात्मनाभूत्वाचिद्वृत्तिमपिसंत्यजेत् ॥४५
ततःपरमनिर्वाणमतीन्द्रियमगोचरम् ।
यद्बुद्धेर्यन्नचाख्यातुं शक्यतेतत्समश्नुते ॥४६

एतत्सर्वंसमाख्यातंत्बालर्कयथार्थवत् ।
प्राप्स्यसेयेनबद्ब्रह्मसक्षेपात्तन्निबोधमे ॥४७
शशाङ्करश्मिसंयोगाच्चन्द्रकान्तमक्षि:पय: ।
समुत्पजतिनायुक्त.सोऽमायोगिनस्मृता ॥४८
यथार्कंकश्मिस योग दर्ककान्तोहुताशनम् ।
आविष्कारोतिनै.सन्नुपमासादियोगिन: ॥४९

वह आत्मावन् होकर संपूर्ण भय को छोड़कर और उस समय को जीतकर उसी गृहमें या जहाँभी मन स्थिर रहसके ।४४। निवास करता हुआ तीनों गुणों पर विजय प्राप्तकरके, एकाँतिक चित्तसे योगयुक्त होकर परब्रह्ममें अभिनिविष्ट हो तथा आत्माकी तन्मयता पूर्वक चित्त वृत्ति का सर्वथा त्याग करे ।४५। ऐसा करकेही वह इन्द्रियातीत, वृद्धि द्वारा अगम्य और वाणीद्वारा अकथनीय परम निर्वाण को प्राप्त कर सकते हैं ।४६। यह सब यथार्थ रूपसे मैने तुम्हें बताया है, अब जिसप्रकार ब्रह्म पदार्थ की उपलब्धि हो सकती है, उसे संक्षिप्त रूप से कहता हूँ, श्रवण करो ।४७। चन्द्रमा की किरणों के सयोग से ही चन्द्रकान्त मणिसे जल निकलता है । योनियों की योग सिद्धि का उपाय भी यहींहै अर्थात् योग में मन न लगाने से आनन्द का सञ्चार कभी नहीं हो सकता ।४८। सूर्य रश्मियों के संयोग से चन्द्रकान्तमणि से जैसे अग्नि निकलती है, वैसे ही योग युक्त न होने से ब्रह्मका साक्षात्कार सम्भव नहीं ।४९।

पिपीलिकाखुनकुलगृहगोधाकपिंजला: ।
वसन्तिस्वामिवद्गेहेध्वस्तेयान्तितोऽन्यत: ॥५०
दुखतुस्वामिनोध्वसेतस्यतेषानकिंचन ।
येश्सनोवत्रराजेन्द्रसोपमायोगसिद्धये ॥५१
मुद्रेहिकालदेहापिमुखाग्रेणाप्यणीयसा ।
करोतिमृद्धारचयमुपदेश: सयोगिन: ॥५२
पशुपक्षिमनुण्याद्यै:पत्रपुष्पफलान्वितम् ।
वृक्षाद्विलुप्यमानंतुदृष्ट्वासिध्यन्तियोगिन: ॥५३

रुरुशावबिषाणाग्रमालक्ष्यतिलकाकृतिम् ।
सहतेनविवर्द्धन्तंयोगीसिद्धिमवाप्नुयात् ॥५४
द्रवपूर्णमुपादायपात्रमारोहतोभुवः ।
तुङ्गंतिलोक्योच्चैर्विज्ञातंकियोगिना ॥५५
सर्वस्वेजीवनायालंनिखाते पुरुषस्यया ।
चेष्टांतांतत्वतोज्ञात्वायोगिनःकृतकृत्यता ॥५६

चींटी, मूषक, नकुल, गोधा, पपिञ्जल और कपोत यह सब गृहस्वामी के समान ही वहाँ रहते हैं और घर के नष्ट होने पर ही अन्यत्र जाते है ।५०। गृहस्वामी के न रहने से उन्हें कुछ प्रयोजन नहीं है इसी प्रकार स्वभाव से ही देह के पीछे देह का आविर्भाव और तिरोभाव होता है, इसलिए उसके प्रति ममता के वश में नहीं पड़ना चाहिए, ऐसा जानकर सब छोड़कर योग-साधन में ही चित्त लगावे ।५१। सूक्ष्म शरीर वाली चींटी अपने अत्यन्त सूक्ष्म मुख से ही सञ्चय करती है, योगियों के लिये यह भी एक दृष्टान्त है कि ब्रह्म साधन जैसा कठिनकार्य योगरूप साधारण उपाय से वश मे कर लिया जाता है ।५२। पशु, पक्षी, मनुष्यादि फल, पुष्प, पत्र से युक्त वृक्ष को नष्ट कर देते हैं, उसी प्रकार काल के हाथ से सबको नष्ट होना पड़ता है, यह जानकर योग-साधन पूर्वक मोक्ष लाभ करे ।५३। रुरु मृग के बालक के सींग का अग्र भाग तिलक के आकार का होकर भी उसी के साथ बढ़ता है, इसी प्रकार योगी की कठिन योगचर्या भी अभ्याससे सुलभ होजातीहै ।५४। जब मनुष्य द्रव से भरा हुआ पात्र हाथ में लेकर ऊँचे स्थान में चढ़ता है, उस समय उसके अङ्गों पर दृष्टि डालने से योगी को कोई बात अज्ञात नहीं रहती ।५५। मनुष्य जीवन के लिए जो अपने सर्वस्व को त्याग करनेमें लगाहै, उसे भले प्रकार जानकर योगी कृतकृत्य हो जाता हैं ।५६।

तद्गृहंयत्रवसतितद्भोज्यंयेनजीवति ।
येनसम्पद्यतचार्थस्तत्सुकंममतात्रका ॥५७
अभ्यर्थितोऽपितैःकार्यंकरोतिकरणैर्यथा ।
तथाबुद्धयादिभिर्योगीपारक्यंःसाधयेत्परम् ॥५८

ततः प्रणम्यात्रिपुत्रमलर्कःसमहीपतिः ।
प्रश्नयांव तोवाक्यमुवाचातिमुदान्वितः ॥५६
दिष्टयदेवेरिदंब्रह्मन्पराभिभवसम्भवम् ।
उपपादिनमत्यगं प्राणमंदेहदंभयम् ॥६०
दिष्टयाशाशिपतेर्भूरिनलसम्पत्पराक्रमः ।
यदुच्छेदादिहायातःमयष्मत्सङ्गदोमम ।।६१
दिष्ट्यामंदबलश्चाहुदिष्ट्याभृत्याश्चनेहताः ।
दिष्ट्याकोषःक्षयंतातोदिष्ट्यावंभीतिमागततः ॥६२
दिष्ट्यात्वत्पादयुगुलंममस्मृतिपथैगतम् ।
दिष्ट्यात्वदुक्तयःसवाममचेतसिस्थिताः ॥६३

जहाँ निवास करे वहीं गृह, जिससे प्राण धारणा हो वह भोज्यऔर जिससे विषयकी निष्पत्ति हो वही सुखहै, इसलिए, इस विषय से ममता क्यों करे ? ।५७। जिस प्रकार कारणसे कार्यसिद्धि होताहै, उसी प्रकार योगी पारलौकिक बुद्धि आदि कारण रूप से ब्रह्मकी सिद्धि लाभ करतेहै ।५८।जड़ बोला—इसके पश्चात् राजा अलर्क विनयपूर्वक झुककर दत्ता-त्रेयजी को प्रणाम करते हुए आनन्द सहित बोले ।५६। हे ब्रह्मन् ! मुझे सौभाग्य से अत्युग्र प्राणों को संशयप्रद एव भयदायक तिरस्कार शत्रु से मिला है ।६०। सौभाग्यसे ही काशीराज इतने समृद्धशील हुए जिसके कारण मैं आपके सत्संग का लाभ कर सका ।६१। सौभाग्यसे ही मेरा बल क्षीण होगया, सौभाग्य से ही मेरे भृत्य मारे गये हैं और सौभाग्यसे ही मेरा कोष नष्ट होगया और सबका संचार हुआ ।६२। सौभाग्य से ही आपके दोनों चरण मेरे स्मृति मार्ग में उदय हुए हैं तथा आपकेवचन मेरे हृदय में निवास प्राप्त कर सके हैं ।६३।

दिष्टयज्ञानंममोत्पन्नभवतश्चममागमात् ।
भवताचैवकारुण्यय दिष्ट्यात्राह्मन्कृतंमयि ।।६४
अनर्थोऽप्यर्थतांयातिपुरुषस्यशुभोदये ।
यथेदमुपकारायव्यसनंसगमात्तव ॥६५

सुबाहुरुपकारीमेसचकाशिपति:प्रभो ।
तयाःकृतेऽहंसंप्राप्तोयोगीशभवतोऽन्तिकम् ।।६६
सोऽहत्वप्रसादाग्निर्दग्धाज्ञानकिल्बिषः ।
तथायतिष्येयेनेदृङ्नभूयोदु:खभाजनम् ।।६७
परित्यजिष्येगार्हस्थ्यमार्तिपादपकावनम् ।
त्वत्तोऽनुज्ञांसमासाद्यज्ञानदातुर्महात्मनः ।।६८
गच्छराजेन्द्रभद्रन्तेयथातेकथितंमया ।
निर्ममोनिरहंकारस्तथाचरविमुक्तये ।।६९

सौभाग्य से ही आपका समागम पाकर ज्ञानका मुझमें उदय हुआहै और सौभाग्यसे ही आपने मुझपर दयाकी है।६४। शुभोदय हो तो अनर्थ भी अर्थ होजाताहै,इस भीषण विपत्तिने आपसे मिलाकरमेरा उपकारहै। कियाहै ।६५।हे प्रभो ! मैं जिनके लियेयहाँ आयाहूँ वह सुबाहुऔर काशी नरेश दोनों ही मेरे लिए परोपकारी सिद्धहुए हैं ।६६। आपकी कृपा रूप अग्निने मेरे अज्ञान रूपी पापोंको भस्मकर दियाहै, जिससे ऐसे दु:खोंकी प्राप्त पुनः न हो सके, अब मैं उसीके अनुष्ठानमें लगूँगा ।६७।आपज्ञान दाता महात्माहैं,आपकी अनुमति पाकरही मेंगृहस्थआश्रमकोछोड़ूँगा,क्यों-कि यह आश्रय दु:ख रूपी मन ही ।६८। दत्तात्रेयजीने कहा हे राजन् ! तुम जाओ तुम्हारा कल्याण हो, मैंनेतुम्हें जो आदेश दियाहै,ममता और अहङ्कार छोड़कर मोक्ष लाभार्थ उसी पर चलो ।६९।

एवमुक्त प्रणम्यैनमाजगामत्वरान्वितः ।
यत्रकाशिपतिर्भ्रातासुबाहुश्चास्यसोऽग्रजः ।।७०
समुत्पत्यमहाबाहुंसोलर्क:काशिभूपतिम् ।
सुबाहोरग्रतोवीरमुवाचप्रहसन्निव ।।७१
राज्यकामुककाशीशभुज्यतांराज्यमूर्जितम् ।
यथाचरोचतेतद्वत्सुबाहो:संप्रयच्छवा ।।७२
किमलर्कपरित्यक्तंराज्यंतेसंयुगंविना ।
क्षत्रियस्यनधर्मोऽयंभवांश्चक्षात्रधर्मवित् ।।७३

निर्जितामात्यवर्गस्तुत्यक्त्वामरणजंभयम् ।
संदधीतशरंजलाक्ष्यमुद्दिश्यवैरिणम् ॥७४
तज्जित्वानृपंतर्भोगान्यथाभिलषितान्वरान् ।
भुञ्जीतपरमसिद्ध्यैयजेतचमहामखः ॥७५
एवमीदृशकवीरममाप्यासीन्मनःपुरा ।
साम्प्रतविपरीतार्थंश्रृणुचाप्यत्रकारणम् ॥७६

जड़ ने कहा-दत्तात्रेयजी की यह आज्ञा सुनकर अलर्क ने उन्हें प्रणाम किया और शीघ्रता से अपने भाई सुबाहु और काशी नरेशके पास पहुँचे ।७०। उन्होंने काशी नरेश के समीप जाकर सुबाहु के सामने हंसते हुए कहा ।७१। हे काशिराज ! तुमने राज्य की अभिलाषा की है, इसलिए इस समृद्धशाली राज्य का उपभोग करो या सुबाहु कोदे दो, जो चाहें, वही करो।७२। काशिराज बोले—हे अलर्क ! तुम युद्धके बिना राज्यको क्यों छोड़ते हो, तुम तो क्षात्रधर्म-विशारद हो, यह क्षत्रियों का धर्म नहीं है ।७३। आत्माओ को वशमें रखकर राजा मृत्यु के भय को छोड़कर शत्रु को लक्ष्य बनाकर बाण संधान करे ।७४। तथा शत्रु को जीत कर सिद्धि के लिए इच्छित भोगों का उपभोग करते हुए श्रेष्ठ यज्ञ का अनुष्ठान करे ।७५। अलर्क बोले हे वीर ! मैं भी पहिले यही सोचता था, किन्तु अब इसके विपरीत सोचता हूँ, उसका कारण सुनो ।७६।

यथार्यंभौतिकःसंघस्तथान्तःकरणंनृणाम् ।
गुणास्तुसकलास्तद्वदशेषेष्वेवजन्तुषु ॥ ७७
चिच्छक्तिरेकएवायंयदानान्योऽस्तिकश्चन ।
तदाकान्नृपतेज्ञानामित्रारिप्रभुभृत्यता ॥७८
तन्मयादुःखमासाद्यत्वद्भयोद्भवमुत्तमम् ।
दत्तात्रेय प्रसादेनज्ञानप्राप्तंनरेश्वर ॥७९
निर्जितेन्द्रियवर्गस्तुत्यक्त्वासंगमशेषतः ।
मनोब्रह्माणिसंधास्येतज्जयेपरभोजयः ॥८०

संसाध्यमन्यत्तत्सिद्धयैयत:किचिन्नव।द्यते ।
इन्द्रियाणिचसयम्यतत:सिद्धिनियच्छति ॥८१
सोहनतेऽरिर्नममासिशत्रु सुवाहुरेषोनममापकारी ।
दृष्टं मयामर्वमिदंयथात्माअन्विष्ततांभूपरिपुस्त्वयान्य: ॥८२
इत्थंसतेनाभिहितोनरेन्द्रोहृष्ट.समुत्थायतत सुब्राहु ।
दिष्टयेतितंभ्रातरमाभिनन्द्यकाशीश्वर वाक्यमिदवभाषे ॥८३

जैसे मनुष्य मात्र का सङ्ग भौतिक है, उसी प्रकार उनका अन्त-करण और गुणागण भी भूत की समष्टि है ।७८। हे राजन् ! केवल चिच्छिक्ति रूप व्रह्म ही सत्य है, अन्यसव असत्य है ऐसा ज्ञान मुझे मिला है, तब शत्रु, मित्र, प्रभुशा भृत्य की कल्पना ही कैसी ? ।७८। हे नरेश्वर ! तुम्हारे भय से अत्यन्त दु:खित होकर दत्तात्रेयजी की कृपासेयह ज्ञान प्राप्त कर सका हूँ ।७६। अव जितेन्द्रिय होकर समस्त संगका त्याग करके केवल परब्रह्म में मन को लगाऊँगा ब्रह्म के जीतते ही सब कुछ जीत लिया समझो ।८०। एकमात्र वही विद्यमान है उसके लिए अन्य साधना उचित नहीं है, जितेन्द्रिय हुए बिना सिद्धि लाभ नहीं हो सकता।८१। हे राजन् । न मैं तुम्हारा शत्रु हूँ, न तुममेरे शत्रु हो,सुबाहु ने भी मेरा कोई अपकार नहीं किया इसलिए अव दूसरे शत्रु की खोज करो ।८२। अलर्क के इन वचनों से काशिराज अत्यन्त सन्तुष्ट हुए और सुबाहु भी हर्ष से परम सौभाग्य कहते हुए उठकर भाई को अभिनन्दन करते हुए काशिराज से बोले ।८३।

३६. अलर्क की योगसिद्धि

यदर्थंनृपशार्दूलत्वामहशरणंगत: ।
तन्मयासकलप्राप्तंयास्यामित्वसुखीभव ॥१
किंनिमित्तंभवान्प्राप्तोनिष्पन्नऽथश्चकस्तव ।
सुबाहोतन्ममाचक्ष्वरपरंकौतूहलहिमे ॥२

समाक्रान्तमलर्केणपितृपैतामहंमहत् ।
राज्यंदेहीतिनिर्जित्यत्वयाहमभिचोदितः ॥२
ततोमयासमाक्रम्यराज्यमस्यानुजस्यते ।
एतत्तेबलमानीततद्भुङ्क्षस्वकुलोचितम् ॥३
काशिराजनिबोधावयदथममयमुद्यमः ।
कृतोमयाभवांश्चवकारितोऽत्यन्तमुद्यमम् ।५
भ्रातामभायग्राम्येषुतत्त्वचित् ? भोगतत्परः ।
वि ढौभ्रौधवन्तौचभ्रातरावग्रजौमम ।६
ययोममचयन्मात्राबाल्येस्तन्ययथामुखे ।
तथाववोधोविन्यस्तःकर्णयोरवनीपते ।७
तयोमर्मचविज्ञयाःपदार्थायेमतानृभिः ।
प्रकाश्यंमनसोनीतास्तेमात्रानास्यपार्थिव ।८

सुबाहु ने कहा—हे नृपशार्दूल ! जिस लिए मैं आपकी शरणमे गया था, वह सब मुझे मिल गया,अब मैं जाताहूँ, आपभी सुखी रहें।१।काशी-नरेशने कहा हे सुवाहो!आप मेरी शरणमे किसलिए आयेथे और आपका कौनसा कार्य संपादित होगया,यह बताओ,इसके प्रतिमुझे अत्यंतकुतुहूल हुआ है।२।अलर्क अपने परंपरागत राज्यको भोगता था, आपनेउस राज्य को जीतने के लिए मुझे उत्तेजित किया था ।४।सुबाहु बोला-हे काशि-राज ! मैंने उद्यम पूर्वक आपको इस कार्य में क्यों प्रवृत्त किया, उसे सुनो ।५। मेरे यह छोटे भ्राता तत्वज्ञानी होकर भी भोगों में आसक्त थे तथा मेरे दो अग्रज विमूढ़ होते हुए भी तत्वज्ञानी हुए हैं ।६। हे राजन् ! मेरी माता ने शिशुकाल में जैसे हमको दूध पिलाया था, वैसे ही हमारे कानों में तत्वज्ञान का उपदेश किया था ।७। मनुष्यों के लिए जो-जो विषय ज्ञातव्य हैं, वह सभी हमारी माता ने हम सब भाइयों के हृदय-गत कर दिये थे, किन्तु अलर्क उन्हें भूल गया ।८।

यथैकमर्थेयातानामेकस्मिन्नवसीदति ।
दुखंभवतिसाधुनांतथास्माकंमहीपते ।६

गार्हस्थ्यमोहमामपन्नेसीदत्यस्मिन्नरेश्वर ।
सम्बन्धिढास्यदेहस्य विभ्रातिभ्रातृकल्पनाम् । १०
ततोमयाविनिश्चित्यदुःखाद्वैराग्यभावना ।
भविष्यतीत्यस्यभवानिनित्युद्योगायसंश्रितः ॥११
तदस्यदुःखाद्वैराग्यसंबोधादवनीपते ।
समुद्भूतकृतंकार्यंभद्रंतेस्तुब्रजाम्यहम् ॥१२
उष्ट्वामदालसागर्भेपीत्वातस्यास्तथास्तनम् ।
नान्यनारीसुतैर्यातंवर्त्मयात्त्वितिवार्थिव ॥१३
विचार्य्यतन्मयासर्वंयुष्मत्संश्रयपूर्वकम् ।
कृतंतच्चापिनिष्पन्नंप्रयास्येसिद्धयेपुनः ॥१४

हेराजन् ! जैसेएक साथजाने वालोमें एक मनुष्य के दुःखित होनेसे सभी साथी दुःखित होते हैं, वैसे ही मेरी अवस्थाथी ।९।क्योंकि अलर्कसे मेरा सम्बन्ध बन्धुत्व का है और यह गृहस्थी के मोह में पड़ कर दुःखित रहे थे ।१०। इसलिए दुःख होने पर ही विरक्त होगी, ऐसा बिचार करके ही मैंने आपकी शरण ग्रहण की थी ।११ हे राजन् ! उनसे वह दुःखी हुआ और उसी दुःख से उनमें तत्वज्ञान की उत्पत्ति हुई और विरक्ति का उदय हुआ इसलिए अब मैं अपने कार्य मे सफल हो गयाहूँ, आपका मङ्गल हो, मैं जाता हूँ ।१२। यह अलर्क मदालसा के गर्भ से उत्पन्न है उसी का इसने दूध पियाहै. इसलिए अन्य नारीसे उत्पन्न पुत्र जिस मार्ग से नहीं जा पाते, यह उस श्रेष्ठ मार्ग पर चले ।१३। यही विचार कर मैंने आपका आश्रय लिया और तदनुरूप कार्य किया मेरा कार्य पूरा हो गया अब पुनः सिद्धि की प्राप्ति के लिए जा रहा हूँ ।१४।

उपेक्ष्यतेसीदमानःस्वजनोबान्धवःसुहृत् ।
यनरेन्द्रनतान्मन्येसेन्द्रियात्रिफलाहिते ।१५
सुहृदिस्वजनेबन्धोसमर्थेयोऽवसीदति ।
धर्मार्थकाममोक्षेभ्योवाच्यास्तेतत्रनत्वसौ ।१६

एतवत्सङ्गमाद्भूपमयाकार्यमहत्कृतम् ।
स्वस्तितेऽस्तुगमिष्यामिज्ञानभाग्भवत्तम ॥१७
उपकारस्त्वयासाधोरलर्कस्यकृतोमहान् ।
ममोपकारायकथनं करोषिस्वमानसम् ।१८
फलदायीसतांसद्भिसंगमोनाफलोयतः ।
तस्मात्त्वसंश्रयाद्भूकामथाप्राप्ताःसमुन्नतिः ।१९
धर्मार्थकाममोक्षाख्यपुरुषार्थचतुष्टयम् ।
तत्रधर्मार्थकामास्तेसकलोहीयतेऽपरः ॥२०
तत्ते संक्षेपतोवक्ष्येतदिहैकमनाःशृणु ।
श्रुत्वाचसम्यगालोच्यतेथाःश्रेयसेनृप ।२१

हे राजन् ! स्वजन, सुहृदुजन बाँधवो के दु.खित होने पर, उनके प्रति उपेक्षाकरनेवाला मनुष्यमेरे चिवारमेंविकलेन्द्रियहे ।१५।तथास्वजन सुहृद्जन और बाँधवजन के समर्थ होते हुए भी जो दुःख पाता है, उससे स्वजनादि निन्दनीय एवं धर्म, अर्थ. मोक्ष से वचित होते हैं ।१६। आपके संग-लाभसे मैंने इस महान् कार्यको सम्पन्न किया है, आपका कल्याणहो औरज्ञान मार्ग पर चलनेवाले हो, मैं हों,मैं अब गमनकरताहूँ ।१७। काशिराज वोले – आवने अलर्कका अत्यन्त उपकार कियाहै,पपन्तु मेराउपकारकरनेसे विमुख क्योंहैं?।१८। साधु-संग या संग-मिलन फलदेने वाला होताहै, इसलिये आपका सत्संग होने में मेरी भी उन्नतिही होगी ।१९।सुबाहु बोले-धर्म, अर्थ,काम, मोक्ष वह चार पदार्थ पुरुषार्थ कहे गये हैं इनमें धर्म, अर्थ काम सिद्धि तो आपकी हो चुकी है, केवल मोक्षका ही अभाव है ।२०। [illegible] आपमेंजो चाहता हूँ उसे एकाग्र मन से श्रवण करो [illegible] आपने कल्याणार्थ प्रयत्नशील होओ ।२१।

मोक्ष [illegible] यथा [illegible] [illegible]स्तथा ।
सम्यगालोच्य [illegible] निराश्रयः ।[illegible]
नैवाहमिति [illegible] [illegible] चयत्[illegible]
[illegible]

अव्यक्तादिविशेषान्तमविकारमचेतनम् ।
व्यक्ताव्यक्तं त्वयाज्ञे यंज्ञाताश्चाहमित्युत ।२४
एतस्मिन्नेत्रविज्ञातेविज्ञातमखिलंत्वया ।
अनात्मन्यात्मविज्ञानमस्वेस्वमिति मूढता ।२५
सोऽहंसर्वंगतेभूपलोकसब्यवहारतः ।
मयेदमुच्यतेसर्वंत्वयापृटोब्रजाम्यहम् ।२६
एवमुक्त्वाययौधीमान्सुबाहुःकाशिभुमिपम् ।
काशिराजोऽपिसंपूज्यसौऽलर्कंस्वपुरययौ ।२७
अलर्कोपिसुतंज्येष्ठमभिषिच्यनराधिप ।
वनंजगामसन्त्यक्तसर्वसङ्गस्वर्ि द्धये ।२८

हे राजन् ! यह मेरा है, यह मैं हूँ इत्यादि ममता और अहंकारपूर्ण विचार के वश में न पड़ना और भले प्रकार धर्म की आलोचना करना क्योंकि धर्म नही तो आश्रय भी नहीं मिलता ।२१। विचार करने परही 'मैं किसका हूँ' इसका ज्ञान होता है, रात्रि के शेष भाग में इसपर भले प्रकार विचार करो ।२३। अव्यक्त से प्रकृति तक विकार रहित, चेतना-रहित, और व्यक्त जो कुछ है उसे जानते हुए, ज्ञाता ज्ञेय और अपने विषय में भी जाने ।२४। इसके जान लेने पर ही आप सब कुछ जान लेंगे । शरीरादि आत्मा से पृथक् वस्तुमें आत्मबोध तथा पराये को अपना माननाही मूर्खता है ।२५। हे राजन् ! 'वही मैं साँसारिक ज्ञान में सम्पन्न हूँ, जो आपने प्रश्न किया, उसका समाधान कर चुका, अबमैं गमन करता हूँ ।२६।मेधावो सुबाहु ऐसा कहकर चलेगये गये तब काशि-राज ने अलर्क का भले प्रकार पूजन किया और अपने नगर को गये ।२७। अलर्क ने अपने ज्येष्ठ पुत्र को राज्य देकर समस्त सग परित्याग करके आत्म सिद्धि के लिए वनवास किया ।२८।

ततःकालेनमहतानिर्द्वन्द्वो निष्परिग्रहः ।
प्राप्ययोगर्द्धिमतुलांपरं निर्वाणमाप्तवान् ।२९
पश्यञ्चगदिदसर्वंसदेवासुरमानुषम् ।
पाशैर्गुणमयैर्बद्धं वध्यमनचनिन्यशः ।३०

पुत्रादिभ्रातृपुत्रादिस्वपारक्यादिभवान्वितैः ।
आकृष्यमाणंकरणैर्दुःखार्त्ताभिन्नदर्शनम् ।३१
अज्ञानपंकगर्भस्थमनुद्धारंमहामतिः ।
आत्मानंचसमुत्तीर्णगाथामेतामगायत ।३२
अहोकष्टंयदस्माभिःपूर्वराज्यमनुष्ठितम् ।
इतिपश्चान्मयाज्ञातयोगन्नास्तिपरंसुखम् ।३३
तातैनत्वंसमातिष्ठ मुक्तयेयोगमुत्तमम् ।
प्राप्स्यसेयेनतद्ब्रह्मयत्रगत्वानशोचसि ।३४
ततोऽहमपियास्यामि किंयज्ञैःकिंसपेनमे ।
कृतकृत्यस्यकरणंब्रह्मभावायकल्पते ।३५
ततोऽनुज्ञामवाप्याहंनिर्द्वन्द्वोनिष्परिग्रहः ।
प्रयंतिष्येतथामुक्तौयथायस्यनिनिर्वृतिम् ।३६

फिर बहुत समय व्यतीत होने पर उन्होंने अतुलित योग ऐस्वर्य को प्राप्त कर परम मोक्ष का लाभ किया ।२९। सुर, असुर, मनुष्यादि से परिपूर्ण यह विश्व गुणमय पाश से बद्ध होकर नित्य ही बध्यमान रहता है ।३०। यह पाश पुत्र आदि, भ्रातृ-पुत्रादि अपने पराये के मोह में बनी हुई है, भिन्न दिखाई पडने वाला विश्व उसी पाशमें आकृष्ट होकर दु:ख में डूब रहा है ।३१। इस पर भी अज्ञान रूपी पंक में फँसने पर मुक्ति का उपाय नहीं है, बुद्धिमान् अलर्क ने इन पर विचार करके मेरा उद्धार हो गया' इस प्रकार गाथा का गान किया ।३२। 'अहो कैसा कष्ट है ? पहिले में राज्य भोगता था, परन्तु अन्त में ज्ञान हो गया कि योग की अपेक्षा अन्य कोई परम सुख नहीं है ।३८। पुत्र ने कहा-हे तात ! मोक्ष लाभ के लिए आप उस श्रेष्ठ योग का आचरण करें तो ब्रह्म को प्राप्त हो सकेंगे क्योंकि ब्रह्म को प्राप्त होकर पुन: शोकमे नहीं पड़ना होगा, जब मैं भीजाऊँगा ।३४। मुझे यज्ञया जप की आवश्यकता नहीं है, कृतकृत्य मनुष्य का कार्य तो ब्रह्म प्राप्ति के लिए ही है ।३५। इसलिए आपकी आज्ञा पाकर मैं द्वन्द्व और परिग्रह का तथा कर मोक्ष लाभ के लिए सम्यक प्रयत्न करूँगा । ६।

एवमुक्त्वास पितरं प्राप्य नुज्ञाततश्वसः ।
ब्रह्मान्जगामेधावीद्दरित्यक्तपरिग्रहः ।३७
सोऽपितस्यपितातद्वत्क्रमेणसुमहामतिः ।
वानप्रस्थंसमास्थायचतुर्थाश्रममभ्यगात् ।३८
तत्रात्मजंसमासाद्यहित्वाबन्धगुणादिकम् ।
प्रापसिद्धिपरांप्राज्ञस्तत्कालोपात्तसन्मतिः ॥३९
एतत्ते कथितंब्रह्मन्यत्पृष्टाभवतावयम् ।
सुविस्तंयथावच्चकिमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ।४०
यश्चैतच्छृणुयाद्विप्रपठेद्वासुसमाहितः ।४१
यदश्वमेधावभृथस्तात:प्राप्नोतिवैंफलम् ।
सकलंतदवाप्नोतिश्रु त्वैतन्मुनिसत्तम ।४२
एतत्संसारभ्रमणपरित्राणमनुत्तमम् ।
अलर्कात्रेयसंवादमशुभान्मुच्यतेनरः ।४३

पक्षियो ने कहा-हे ब्रह्मन् ! वह महामतिजड़ अपने पितासे ऐसाकह कर और उनकी आज्ञा लेकर परिग्रह रहित होकर चला गया ।३७। उसके पिता ने भी वानप्रस्थ आश्रय का आश्रय लेते हुए चतुर्थ आश्रम में प्रवेश किया ।३८। वह पुत्र की संगति से गुणादि बन्धन को त्याग कर तत्काल उत्पन्न हुई बुद्धि के बल से परम सिद्धि को प्राप्त हुए ।३६। हे विप्र ! आपका पृछा हुआ सभी विस्तार पूर्वक कह दिया अब और क्या सुनना चाहते हो,सो बताओ ।४०।हे ब्रह्मन् ! इस वार्ताको जोसावधानी से पढ़ता अथवा श्रवण करता है ।४१। वह अश्वमेध के अवभृय स्नान के फलको पाता है । हें मुनीश्वर ! इसके श्रवण सेही सब कुछ प्राप्त होता है ।४२। संसार में विचरण करने वालों की श्रेष्ठ रक्षा यही है । उस अलर्क-दत्तत्रेय संवाद को श्रवण करके मनुष्य अशुभ से मुक्त हो जाता है ।४३।

३७. ब्रह्माण्ड और ब्रह्मोत्पत्ति

सम्यगेतन्ममाख्यातंभवद्भिर्द्विजसत्तमाः ।
प्रवृत्तंचनिवृतंचद्विविधंकर्मवैदिकम् ।१
अहोपितृप्रसादेनभवताज्ञानमीदृशम् ।
येनतिर्यक्त्वमप्येतत्प्राप्यमोहस्तिरस्कृतः ।२
धत्यभवन्त.संसिद्धयैप्रागवस्थास्स्थितयतः ।
भवतांविषयोद्भुतैर्नमोहैश्चाल्यतेमनः ।३
दिष्ट्याभगवतातेनमार्कण्डेयनधीमता ।
भवन्तोवैसमाख्यातातःसर्वसन्देहहृतताः ।४
संसारेऽस्मिन्मनुष्याणांभ्रमतामतिसंकटे ।
भवद्भिर्धःममंसङ्गोजायतेनातपस्विनाम् ।५
यत्तहसंकमासाद्यभवाद्भिज्ञानदृष्टिभिः ।
नस्याकृतार्थैस्तन्नूनंमेऽन्यत्रकृतार्थता ।६
प्रबृत्तोचनिवृत्तेचभवताज्ञानकर्मणि ।
मतिमस्तमलामन्येयथानान्यस्यकस्यचित् ।७

जैमिनी बोले—हे श्रेष्ठ द्विजों ! वैदिक कर्म प्रवृत्ति और निवृत्ति भेद से दो प्रकार का है आपने वह सब मेरे प्रति भले प्रकार कहा है ।१। आपने पिता के अनुग्रह से ऐसा ज्ञान पाया है, उसी ज्ञान के प्रभाव से तिर्यक, योनि को पाकर भी आपका मोह नष्ट हो चुका है ।२। आपका मन सिद्धि लाभ के लिये प्रागवस्था में स्थित रहताहै,अतः आप धन्य हैं, आपके मन को विषयों से उत्पन्न मोह चलायमान नहीं कर सकता ।३। महामति मार्कण्डयजी ने सौभाग्य से ही आपका बृतान्त कहा था, आप सब सन्देहों को दूर करने वाले हैं ।४। इस सङ्कटमय विश्व में जो भ्रमते हैं, उनके भाग्य में आप जैसी तपस्वियों से मिलना दुर्लभ ही है ।५। आप ज्ञानदृष्टा हैं, यदि आपके सङ्ग लाभ से भी मेरा मनोरथ पूर्ण न हुआ तो अन्यत्र कहीं भी हो सकता ।६। आपको प्रवृत्ति और निवृत्ति के ज्ञान और कर्म में जो परम बुद्धि प्राप्त हुई है, वह मेरे विचार में अन्य किसी को नहीं हो सकती ।७।

यदित्वनुग्रहवतीमयिबुद्धिर्द्विजोत्तमाः ।
भवतांतत्समाख्यातुमर्हतेदमशेषतः ।८
कथमेतत्समुद्भूतंजगत्स्थावरजङ्गमम् ।
कथंचप्रलयंकालेपुनर्यास्यतिसत्तमाः ।६
कथंचवंशादेवर्षिपितृभूतादिसम्भवाः ।
मन्वन्तराणिचकथंवंशानुचारितंचयत् ।१०
यावत्यःसृष्टयश्चैवयावन्तःप्रलयास्तथा ।
यथाकल्पविभागश्चयाचमन्वन्तरस्थितिः ।११
यथाचक्षितिसंस्थानंयत्प्रमाणंचवै भुवः ।
यथास्थितिसमुद्राद्रिनिम्नगाःकाननानिच ।
भूर्लोकादिश्चलोकानांगणःपातालसंश्रयः ।
गतिस्तथार्कसोमादिग्रहर्क्षज्योतिषामपि ।१६
श्रोतुमिच्छाम्हंसर्वमेतदाभूतसंप्लवम् ।
उपसंहृतेचयच्छेषंजगत्यस्मिन्भविष्यति ।१४

हे श्रेष्ठ द्विजो ! यदि आपकी गति मेरे प्रति अधिक अनुग्रह वाली हुई है, तो मेरे प्रश्न का विस्तार सहित समाधान करिये । ८ । इस स्थावर जङ्गम युक्त विश्व की सृष्टि किस प्रकारहुई और यह प्रलयकाल में किस प्रकार लीन होगी ? ।६। देव, ऋषि, पितर, भूतादिकी उत्पत्ति किस प्रकार होती है, और मन्वन्तरों का प्राकट्य कैसे होता है ? ।१०। सम्पूर्ण सृष्टि, समस्त प्रलय, कल्पका विभाग, मन्वन्तरों की स्थिति।११। पृथिवी का संस्थान और परिमाण पर्वत, शैल, सरिता और वनों का विवरण ।१२। मर्त्यलोक, स्वर्ग और पाताल का विवरण तथा सूर्य,चन्द्र ग्रह, नक्षत्र इत्यादि की गति ।१३। इन सबका प्रलय पर्यन्त वर्णन सुनने की अभिलाषा है तथा प्रलयकाल में उपसंहृति होने पर जो जगत् अवशिष्ट रहता है, वह सुनना चाहता हूँ ।१४।

प्रश्नभारोऽयमतुलोयस्त्वयामुनिसत्तम् ।
पृष्टस्तंतेप्रवक्ष्यामस्तच्छृणुष्वेहजैमि ।१५

मार्कण्डेयेनकथितंपुराक्रौष्टुकयेयथा ।
द्विजपुत्रायशान्तायव्रतस्नातन्यधीमते ।१६
मार्कण्डेयतहात्मानमुपासीनद्विजोत्तमैः ।
क्रोष्टुकिःपरिपप्रच्छयदेतत्पृष्टवान्प्रभो ।१७
तस्यचाकथयत्प्रीत्यायम्मुनिभृगुनन्दनः ।
तत्तोप्रकथयिष्यामःशृणुत्वद्विजसत्तमा ।१८
प्रणिपत्यजगन्नाथपद्ममयान्तिपितामहम् ।
जगद्योनिस्थितंसृष्टोस्थितौबिष्णुस्वरूपिणम् ।
प्रलयेचान्तकर्त्तारंरौद्रं रुद्रस्वरूपिणम् ।१९
उत्पन्नामात्रस्यपुराब्रह्मणोऽव्यक्तजन्मनः ।
पुराणमेतद्वेदाश्चमुखेभ्योऽनुविनिः सता ।२०
पुराणसंहिताश्चक्रुर्बहुलाःपरमर्षतः ।
वेदानांप्रविभागश्चक्रतस्तस्तसहस्रशः ।२१

पक्षियों ने कहा - हे जैमिने ! आपनेयह अत्यन्त प्रश्न-भार हमपर डाला है, फिर भी हम उसका वर्णन करते हैं, सुनो ।२८। मार्कण्डेयजीने जिस प्रकार क्रौष्टुकी के प्रति कहा था, उसे ही कहते हैं ।२६। आपने जो प्रश्न किया, वही क्रोष्टुकी ने मार्कण्डेयजी से किया था ।१७। हे द्विजवर ! भृगुपुत्र ने प्रसन्न चित्त से जो कुछ कहा था, वहीसब चाहते हैं सुनो ।१८। जगत् के कारण कमलयोनि पितामह स्वरूप से जो इस संसार को उत्पन्न करते हैं, विष्णु रूपसे स्थित करने और रौद्र रूपसे प्रलय काल में संहार करते हैं, उन्हीं जगन्नाथको प्रणाम पूर्वक हम सब कहते हैं ।१९। मार्कण्डेयजी ने कहा पुराकाल में ब्रह्माजी के उत्पन्न होने पर उनके चार मुखों से वेद-पुराण प्रकट हुए ।२०। उस पुराण संहिता ऋषियों ने अनेक अंशों में विभाजित किया तथा वेद के भी हजार विभाग किये ।२१।

धर्मज्ञ नंचवैराग्यमैश्वर्य्यंचमहात्मनः ।
तस्मोपदेशेनविनानहिसिद्धंचतुष्टयम् ।२२

वेदान्सप्तर्षयस्तस्माज्जगृहुस्तस्यमानसाः ।
पुराणंजगृहुश्चाद्यामुनयस्तस्यमानसाः ।२३
भृगोःसकाशाच्चयवनस्तेनोक्तंचद्विजन्मनाम् ।
ऋषिभिश्चापिदक्षाय प्रोक्तमेतन्महात्मनिः ।२४
दक्षेणचापिकथितमिदतासीत्तदामम ।
तत्तुभ्यंकथयाम्यद्यकलिकल्मषनाशनम् ।२५
सर्वमेतन्महाभागश्रूयतांमेसमाधिना ।
यशाश्रुतंमयापूर्वं दक्षस्यगदतोमुने । ६
प्राणिपत्यजगद्योनिमजमव्ययमाश्रयम् ।
चराचरस्यजगतोधातारंपरमपदम् ।।२७
ब्रह्माणमादिपुरुषमुत्पत्तिस्थितिसंयमे ।
यत्कारणमनौपम्यंयत्रसर्वंप्रतिष्ठितम् ।।२८

उनके उपदेश बिना धर्म ज्ञान, वैराग्य और ईश्वरीय भाव सिद्ध हो सकते।२२।उनके मनसे सप्तर्षियों की उत्पत्ति हुई जिनसे समस्त वेद पुराण उनके मानसीत्पन्न अन्य ऋषियों ने ग्रहण किए।३। भृगुसेउस पुराण को लेकर च्यवन ऋषि ने अन्य ऋषियोंपर प्रकट किया औरउन ऋषियों ने उसे दक्ष के प्रति कहा। ४।दक्ष ने ही उसे हमें प्रदान किया है, तभीसे यह हमारे पास है,इसके प्रभाव से कलियुगमें पापनष्टहोजाते हैं, उसीको तुमसे कहते हैं।२५।हे मुने ! हमने दक्षसे जो सुना, वहीदत्त-चित्त होकर हमसे सुनो.२६।जो जगत् कारण, अजन्मा, अव्यय,चराचर विश्व के एक मात्र आश्रय,धाताएवं परमपद रूपहैं।२७। जो सृष्टिस्थिति और प्रलय के कारण,आदि पुरुष, अनुपम हैं यथा सब कुछउन्हींमें प्रति-ष्ठित रहता है ।२८।

तस्मैहिरण्यगर्भायलोकतन्त्रायधीमते ।
प्रणम्यसम्यग्वक्ष्यामिभूतवर्गमनुत्तमम् ।२९
महादाद्यंविशेषान्तमवैरूप्यंसलक्षणम् ।
प्रमाणैपंचभिगंम्यस्रोतोभिःषड्भिरन्वितम् ।।३०

पुरुषाधिष्ठितंनित्यमनित्यमिवचस्थितम् ।
तच्छ्रूयतांमहाभागपरमेणसमाधिना ।३१
प्रधानकारणंयत्तदव्यक्ताख्यमहर्षयः ।
यद हु प्रकृतिसूक्ष्मांनित्यासदसदात्मिकाम् ।३२
ध्रुवमक्षय्यसजरममेयंनान्यसंश्रयम् ।
गन्धरूपरसैर्हीनंशब्दस्पर्शविवर्जितम् ।३३
अनाद्यंतजगद्योनिंत्रिगुणप्रभवाप्ययम् ।
असाम्प्रतमविज्ञार्यब्रह्माग्रेसमवर्त्तत ।३४
गुणसाम्यात्ततस्तस्मात्क्षेत्रज्ञात्ठितान्मुने ।३५

उन्हीं हिरण्य गर्भ को प्रणाम करके अनुपम प्रपंचको कहते हैं ।२४। महत् से विशेष पर्यन्त जो भी भौतिक सृष्टि के विकार और लक्षण है उन सभीको पाँच प्रकार के प्रमाण और षट्स्रोत सहित कहेंगे ।३०। पुरुष से अधिष्ठित होनेके कारण यह भूत सृष्टि नित्य होकर भी अनित्य के समान अवस्थान करती है, उसे भी कहते हैं, सावधान चित्त से सुनो ।३१। सत्-असत् वाली अव्यक्त कही जाने वालीको महर्षियों ने नित्य सूक्ष्मा प्रकृति कहा है ।३२। जो नित्य अक्षय, अजर, अपरिमेय, अनाश्रित, निर्गन्ध तथा रूप, रस शब्द और स्पर्श से परे हैं।३३। जो अनादि अनन्त एवं विश्व के उत्पत्ति स्थान हैं, जिनसे तीनो गुणों की उत्पत्ति हुई है, जो अविनाशी, अविज्ञेय, सदा विद्यमान और सर्वकारण है, वही प्रधान स्वरूप ब्रह्म सबके समक्ष विराजमान रहकर ।३४। प्रलय के पश्चात् अखिल विश्व को प्राप्त करके स्थित रहते हैं, उन्ही में परस्पर अनुकूल और अव्याहत रूपसे तीनों गुण विद्यमान रहते हैं ।३५।

गुणभावात्सृज्यमानात्सर्गकालेततःपुनः ।
प्रधानतत्त्वमुद्भूतंमहान्तंतत्समावृणोत् ।३६।
यथाबीजत्वचातद्वदव्यक्तेनावृतोमहान् ।
सात्विकोराजसश्चैवतामसश्चत्रिधोदितः ।३७

ततस्तस्मादहंकारस्त्रिविधोवैध्यजायत ।
वैकारिकस्तैजश्चभूत दिश्चसतामसः ।३८
महताचाबृत.सोऽपियथाव्यक्तेनवैमहान् ।
भूतादिस्तुविकुर्वाणःशब्दतन्मात्रकततः ।३६
ससर्जशब्द न्मात्रादाकाशंशब्दलक्षणम् ।
आकाशंशब्दमात्रन्तुभूतादिश्चाबृणोत्ततः ।४०
स्पर्शतन्मात्रमेवेहजायतेनात्रसंशयः ।
बलवाञ्जायतेवायुस्तस स्पर्शगुणोमतः ।४१
वायुश्चापिविकुर्वाणोरूपमात्रससर्जह ।
ज्योतिरुत्पद्यतेवायोस्तद्रूपगुणमुच्यते ।४१

सृष्टिकाल में क्षेत्रज्ञ के अधिष्ठानसे इनके उसी-उसी गुणकीसहायता से प्रधान तत्व प्रकट होकर वहत्तत्व को ढक लेता है ।३६। जैसे बीज त्वचा द्वारा ढका रहता है, वैसे ही प्रधान से महत्तत्व ढका रहता है,वह महत्तत्व सात्विक, राजसिक और तामसिक के भेद से तोन प्रकार का है ।३७। उस महत्तत्व से अहङ्कार उत्पन्न होता है, वैकारिक, तेजस् और तामस के भेद से अहङ्कार भी तीन प्रकार का है, तामस अहङ्कार ही भूतादि संज्ञक हैं ।३८। जिस प्रकार प्रधान से महत्तत्व ढका है, वैसे ही महत्तत्व से अहङ्कार ढका है और इसीके प्रभावसे विकारको प्राप्तहोकर शब्द तन्मात्राकी सृष्टि है ।३६। शब्दात्मक आकाश इस शब्द तन्मात्र से ही प्रकट होता है, तब तामस अहङ्कार से शब्द रूप आकाश ढक जाताहै ।४०। इससे स्पर्श तन्मात्र की उत्पत्ति होती है, तब स्पर्श गुण वाला अत्यन्त वलवान् वायु उत्पन्न होता हैं ।४१। शब्द मन्त्र आकाश से स्पर्श मात्र ढका रहता है, इससे वायुके बिकृत होने से रूप मात्र की उत्पत्ति होती है, वायु से रूप गुणात्मक ज्योति प्रकट हुई ।४२।

स्पर्शमात्रस्तुवैवायूरूपमात्रंसमावृणोत् ।
ज्योतिश्चाविकुर्वाणरसमात्रंससर्जह ।४३

सम्भवन्तितोह्यापश्चासन्वैतारसात्मिकाः ।
रसमात्रन्तुताह्यापोरूपमात्रं समावृणोद् ।४४
अरश्च:पिविकुर्वंत्योगन्धमात्रं सर्जिरे ।
सघातोजायतेतस्मात्तास्यगन्धोगुणोमतः ।४५
तस्मिस्तस्मिस्तुतन्माक्षतेनतन्मात्रतास्मृता ।
अविशेषवाचकत्वावविशेषास्ततश्चते ।४६
नशान्तानापिघोरास्तेनमूढश्चविशेषतः ।
भूततन्मात्रसर्गोऽयमहंकारत्तु तामसात् ।४७
वैकारिकादहंकारात्सवोद्रिक्तात्तु सात्विकात् ।
वैकारिक ससर्गस्तुयुगपत्सप्रवर्त्तते ।४८

स्पर्श मात्र वायु से रूपमात्र ढका रहता है, इससे ज्योति के विकृत होने पर रसमात्र की उत्पत्ति होती है ।४२।इसी के द्वारा रसात्मक जल उत्पन्न होता है जो रूपमात्र से ढका रहता है ।४४। फिर रसमात्र जल की विकृति से गन्धमात्र की उत्पत्ति होतीहै, उसीसे गन्धात्मिका पृथिवी उत्पन्न होती है ।४५। इसी प्रकार जिस-जिस पदार्थ में जो तन्मात्र हैं, उस-उस के द्वारा ही तन्मात्र की गणना होतीहै इसके लिए कोई विशेष वाचक कहीं होता, इसलिए यह भी अविशेष है ।४६। अविशेष होने के कारण वह शाँत, घोर अथवा मूढ़ नहीं है, इस प्रकार भूत तन्मात्र की उत्पत्ति अहङ्कार से ही होती है ।५८। सात्विक और वैका-रिक अहङ्कार से एक सङ्ग ही वैकारिक सृष्टि की आवृत्ति है ।४८।

बुद्धीन्द्रियाणिपञ्चैवपंचकर्मेन्द्रियाणिच ।
तैजसानीन्द्रियाण्याहुर्देवावैकारिकादश ।४९
लकादशंमनस्तत्रदेवावैकारिकाःस्मृताः ।
श्रोत्रत्वक्चक्षुषीजिह्वानासिकाचैवपंचमी ।५०
शब्दादीनामावाप्त्यर्थंबुद्धियुक्तानिवक्ष्यते ।
पादौपायुरूपस्थश्चहस्तौवाक्पंचमोभवेत् ।५१

गतिर्विसर्गोह्यनन्दः शिल्पवाक्यंचकर्मतत् ।
साकाशंशब्दमात्रंतुस्पर्शमात्रसमाविशत् ।५२
द्विगुणोजायतेवायुस्तस्यस्पर्शोगुणोमतः ।
रूपतथंवाविशतःशब्दस्पर्शगुणावुभौ ।५३
त्रिगुणास्तुतश्चाग्निः सशब्दस्पर्शरूपवान् ।
शब्दःस्पर्शश्चरूपंचरसमात्रंसमाविशत् ।५४
तस्माच्चतुर्गुणाह्यापोविज्ञयास्तारसात्मिकाः ।
शब्दःस्पर्शश्चरूपचरसोगन्धंसमाविशत् ।५५
संहतागन्धमात्रेणआवृण्वस्तेमहीमिमाम् ।
तस्मात्पंचगुणाभूमिःस्थुलाभूतेषुदृश्यते ।५६

पंच ज्ञानेन्द्रिय और पंच कर्मेन्द्रिय तैजस इन्द्रिय कही गई हैं, यह वैकारिक दश देवता होते हैं ।४९। ग्यारहवाँ मन मिलाकर ग्यारहदेवता हुए, श्रोत्र, त्वक्, चक्षु, रसना और नासिका ।५०। इनसे शब्दादि का बोध होता है, इसलिए इन्हें बुद्धीन्द्रिय कहा गया है, चरण, गुद, उपस्थ हाथ और जिह्वा ।५१। इत्यादि कर्मेन्द्रिय कही गई है, इनके द्वारा चलना, मल त्यागना, मैथुन, शिल्प और कथन यह कार्य होते है, शब्द मात्र आकाश, स्पर्श मात्रस समाविष्ट होकर ।५२। द्विगुण वायु को उत्पन्न करताहै, उसका विशेष गुण वायु ही है, शब्द और स्पर्श यह दोनों गुण रूप में समाविष्ट होकर । ३। त्रिगुण अग्नि की उत्पत्ति करते हैं । यह अग्नि, शब्द और रूप गुण से युक्त है, शब्द, स्पर्श और रूप रसमात्रमे समावेश करके ।५४। चतुर्गुण रसात्मक जल की सृष्टि करते हैं और अन्त मे शब्द, स्पर्श, रूप रस के गन्धमात्र में समावेश करने से ।५५। उनके साथ मिलकर इस पृथिवीकी आवृत्ति करते हैं। इसीलिए भूतोमें पञ्चगुणात्मिका स्थूलाकार वाली पृथिवी दिखाई देती है ।५६।

शान्ताघोराश्चमूढाश्चविशेषस्तेनतेस्मृताः ।
परस्परानुप्रवेश द्धारयन्तिपरस्परम् ।५७
भूमेरन्तस्त्विमंसर्वंलोकंधनावृतम् ।
विशेषाश्चेन्द्रियग्राह्यानियतत्वाच्चतेस्मृताः ।५८

गणंपूर्वस्यपूर्वस्यप्राप्नुवन्त्युत्तरोत्तन्तरम् ।
नानावीर्य्याःपृथग्भूताःसप्ततेसंहतिंविना ।।५६
नाशक्नुवन्प्रजाःस्रष्टुमसमागम्यकृत्स्नशः ।
सयेत्यान्योन्यसंयोगमन्योन्याश्रयिणश्चते ।।६०
एकसंघातचिह्नाश्चसंप्राप्यैक्यमशेषतः ।
पुरुषाधिष्ठितत्वाच्चअव्यक्तानुग्रहेणच ।।६१
महदाद्याविशेषान्ताह्यण्डमुत्पादयन्तिते ।
जलबुद्बुदवत्तत्रक्रमाद्वै वृद्धिमागतम् ।।६२
भूतेभ्योऽण्डंमहाबुद्धे बृहत्तदुदकेशयम् ।
प्रकृतेऽण्डेविवृद्धःसन्क्षेत्रज्ञोब्रह्मसंज्ञितः ।।६३

इसी कारण वह शान्त, घोर, मूढ़ कहे गए हैं, वह परस्पर एक दूसरे को धारण करते हैं ।५७। यह सभी लोकालोक भूमि के अन्तर में निवृष्ट रहकर नियतव के कारण इन्द्रिय ग्राह्य विशेष' कहे गये हैं ।५८। पहिले पहिले के गुण उत्तरोत्तर में प्रविष्ट होते है, जब तक यह अनेक वीर्यवाले सात पदार्थ परस्पर नहीं मिलते ।५६। तब तक सृष्टि करने में समर्थ नहीं होते, जब यह परस्पर मिलकर एक दूसरे के अवलम्बन से ।६०। भले प्रकार से एकता को पाते हैं और जब पुरुषका अधिष्ठान और प्रकृति का अनुग्रह प्राप्त करते हैं ।६१। तभी महत् से विषय तक इन सब में अण्ड की उत्पत्ति करते हैं, यह अण्ड जलमें रहकर हीक्रमशः बढ़ता ही रहता है ।६२। जल में स्थित यह अण्ड भूतों से बृहत् है, ब्रह्म संज्ञा वाले क्षेत्रज्ञ भी उस प्राकृत अण्ड में बढ़ते हैं ।६३।

सवैशरीरीप्रथमःसवैपूरुषउच्यते ।
आदिकर्त्ताचभूतानांब्रह्माग्रेसमवर्तत ।।६४
तेनसर्वमिदंव्याप्तं त्रैलोक्यसचराचरम् ।
मेरुस्तस्यानुसंभूतोजरायुश्चापिपर्वताः ।।६५
समुद्रागर्भसलिलंतस्याण्डस्यमहात्मनः ।
तस्मिन्नण्डेजगत्सर्वंसदेवासुरमानुषम् ।।६६

द्वीपाद्यद्रिसमुद्राश्चसज्योतिर्लोकसंग्रहः ।
जलनिलानलाकाशैस्ततीभूतादिनाबहिः ॥६७
वृतमण्डंदशगुणैरेकत्वेनतै पुनः ।
महतातत्प्रमाणेनसहैवानेनवेष्टितः ॥६८
महांस्तैसंयुतःसर्वैरव्यक्तेनसमावतः ।
एभिरावरणैरण्डंसप्तभिःप्रकृतैर्वृतम् ॥६९

वही प्रथम देह और पुरुष नाम वाले हैं, वही भूतों के आदिकर्त्ता ब्रह्मा हैं, वही सबसे आगे प्रतिष्ठित होते हैं ।६४। वही चराचर तीन लोकोंको व्याप्त कररहे हैं, उस वृहद् अण्डमेरु पर्वत जरायु ।६५। और समुद्र गर्भजल है, सुर असुर, मनुष्यादिसे परिपूर्ण सम्पूर्ण विश्व उस अंड में है ।६६। द्वीप, पर्वत, समुद्र, ज्योति आदिके सहित सभी लोक उसमें स्थित हैं, जल, वायु, अग्नि और आकाश भूतादि के सहित ।६। प्रत्येक ही उत्तरोत्तर दशगुण के नियम से बाहर के भाग में उस अण्ड को घेरे रहते हैं । इसके अरिरिक्त महत्तत्वने इसी प्रमाण से उनके साथ अण्ड का आच्छादन किया हुआ है ।६८। इस महत्तत्व के सहित अण्डको ढककर प्रकृति सुशोभित होती है, इस प्रकार सात प्राकृतिक आवरणों द्वारा वह अण्ड ढका हुआ है ।६९।

अन्योनमावृत्यचत्ताअष्टौप्रकृतयःस्थिताः ।
एषासाप्रकृतिर्नित्नातदन्तःपुरुषश्चसः ॥७०
ब्रह्माख्यकथितोयस्तेसमाछ्र्यतांपुनः ।
यथमनोजलेकश्चिदुन्मज्जञ्जलसम्भवम् ॥७१
वलयंक्षिपतिब्रह्मासतथाप्रकृतीर्विभुः ।
अव्यक्यंक्षेत्रसुद्दिष्टंब्रह्माक्षेत्रज्ञउच्यतेः ॥७२
एतत्समस्तंजातीयायात्क्षेत्रज्ञलक्षणम् ।
इत्येषप्राकृतःसर्गक्षेत्रज्ञाधिष्ठितस्तुसः ।
अबुद्धिपूर्वःप्रथमःप्रादुर्भूतस्तडिद्यथा ॥७३

इसी प्रकार आठ प्रकृति परस्पर को ढककर विद्यमान है । इन

प्रकृतियों को नित्य स्वरूप समझो, इनके अन्त में वह पुरुष विद्यमान है ।७०। तुमसे जिस ब्रह्म संज्ञक पुरुष का वर्णन किया, उसका विषय अब सक्षिप्त रूप से कहता हूँ । जल में डूबा हुआ मनुष्य जैसे जल में से उठने समय जल मे प्रकट ।७१। द्रव्य को फैकता है, उसी प्रकार ब्रह्मा को प्रकृति का स्वामी समझो, क्योंकि प्रकृति क्षेत्र और ब्रह्मा क्षेत्रज्ञ है ।७२। क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ के लक्षण यही हैं, इसी प्रकार क्षेत्रज्ञ से अधिष्ठित प्राकृत सृष्टि अबुद्धि सहित प्रथम विद्युत के समान प्रकट हुई ।७३।

३८—ब्रह्माजी की आयु का परिमाण

भगवंस्त्वण्यसंभूतिर्यथावत्कथितामम् ।
ब्रह्माण्डेब्रह्माणोजन्मतथाचोक्तंमहात्मनः ।।१
एतदिच्छाम्यहंश्रोतुं त्वत्तोभगुकुलाद्भव ।
यदानसृष्टिर्भूतानामस्तिकिंनुनचास्तिवा ।
कालेवेप्रलयस्यान्तेसर्वस्मिनन्नुपसंहृते ।।२
यदातुप्रकृतौयातिलयंविश्वमिदंजगत् ।
तदोच्यतेप्राकृतोऽयंविद्वद्भिःप्रतिसंचारः ।।३
स्वात्मन्यत्रस्थितेऽव्यक्तेविकारेप्रतिसंहृते ।
प्रकृतिःपुरुषश्चैवसाधर्म्येणावतिष्ठतः ।।४
तदातमश्चसत्वैचसमत्वेनगुणौस्थितौ ।
अनुद्रिक्तावनुनौचओतप्रोतौपरस्परम् ।।५
तिलेषुवायथातैलंघृतंपयसिवास्थितम् ।
तथातमसित्वेचरजोऽप्यनुसृतंस्थितम् ।।६

कौष्टुकि ने कहा—हे भगवन् ! आपने अण्ड की सृष्टि और ब्रह्माड में ब्रह्माजीके जन्मको यथावत् कहा है ।१। हे भृगुवंशोत्पन्न ! जब प्रलयके अवसान में नष्ट हुई सृष्टि अविद्यमान थी, तब फिर भूतों की उत्पत्ति किस प्रकारहुई? वहीमब सुनना चाहताहूँ ।२।मार्कण्डेयजीने कहा-जब यहसंसार

प्रकृति में लीन हो जाता है,उसी अवस्थाको विद्वानोंने प्रलय कहा है।३। जब आत्मा में अवस्थित हो जाती है तब सब पदार्थ अदृश्य होजाता है, जब प्रकृति-पुरुष दोनों साधर्म्यमें प्रतिष्ठित होतेहैं।४। उस समय सत्वऔर तम ही गुण समान भाव से अधिष्ठान करते है, उस समय उनमें से कोई बढ़ता या घटता नहीं, वे दोनों ताने बाने के समान समभाव से परस्पर संयुक्त अधिष्ठित रहते हैं।५। जैसे तिलमें तेल दूधमें घी विद्यमान है, वैसे ही सतोगुण और तमोगुण में रजोगुण विद्यमान रहता है।६।

उत्पत्तिर्ब्रह्मणोयावदायुर्वैद्विपरार्द्धिकम् ।
तावद्दिनंपरेशस्यतत्समासंयमेनिशा ।।७
अष्टौयुगसहस्राणिअहोरात्रं प्रजापतेः ।
अनेनैवतुमानेनशतंब्रह्मासजीवति ।
पितामहशतेनैवविष्णोर्मानिंबिधीयते ।
निमेषार्धेनशंभोस्तुसहस्राणिचतुर्दश ।
विनश्यंतितथाविष्णोरसंख्याताःपितामहाः ।।
अहमुखेप्रबुद्धस्तुजगदादिरनादिमान् ।
सर्वं हेतुरचिन्त्थात्मापरःकोऽप्यपरक्रियः ।।८
प्रकृतिंपुरुषंचैवप्रविश्याशुजगत्पतिः ।
क्षोभयामासयोगेनपरेणपरमेश्वरः ।।९
यथामदोनवस्त्रीणां यथावाधवानिलः ।
अनुप्रविण्टःक्षोभायतथासोयोमूर्त्तिमान् ।।१०
प्रधानेक्षोभ्यमाणेतुदेवोब्रह्मसंज्ञितः ।
समुत्पन्नोऽडकोषस्थोयथातेकथितंमया ।। ११
सएवक्षोभकःपूर्वंसक्षोभ्यःप्रकृतेःपातः ।
ससंकोचविकाशाभ्यांप्रधानत्वेऽपिसस्थतः ।।१२
उत्पन्नःसजगद्योनिरगुणोऽपिरजोगुणम् ।
भुञ्जन्प्रवर्ततेसर्गेब्रह्मत्वंसमुपाश्रितः ।।१३

ब्रह्माजी की आयु का परिमाण द्विपरार्द्ध पर्यन्त है, जो परिमाण उनके दिन का है, उतना ही उनकी रात्रि का है ।७। (आठ हजार युगों का प्रजापति का एक अहोरात्र होता है, इसी परिणाम से ब्रह्माजी की आयु सौ वर्ष की है, ब्रह्माजी की सौ आयुओं के बराबर विष्णु की आयु होती है । शिव के अर्द्ध निमेषमें चौदह हजार विष्णु हो जाते हैं । ब्रह्मा कितने होते ? इसकी संख्या नहीं है)वह विश्वके आदि हैं, उनका आदि नहीं, वह सबके कारण, अचिन्त्यात्मा परमेश्वर और क्रियातीत हैं ।८। वह जगदीश्वर परमयोग के निमित्त प्रकृति और पुरुष में प्रवेश करके उनका विक्षोभ करते हैं ।९। जिस प्रकार मद और वसंत समीर नव-युवतियों के हृदय को क्षोभित करते हैं, वैसे ही ब्रह्माजी प्रकृति और पुरुष को क्षोभित करते हैं ।१०। प्रकृति को क्षोभित कर ब्रह्मा संज्ञकदेव अण्डकोश में स्थित होकर समुत्पन्न होते हैं, यह मैंने तुम्हारे प्रति वर्णन किया है ।११। पहिले तो क्षोभित करते हैं फिर प्रकृति के स्वामी होकर स्वयं क्षोभित होते हैं, इस प्रकार संकोच और विकास से प्रतिष्ठित रहते हैं ।१२। वह जगद्योनि निर्गुण होते हुए भी प्रकट होकर रजोगुण के अवलम्बसे ब्रह्माके रूपमे अविर्भूत होकर सृष्टिके उद्यम लगते है ।१३।

ब्रह्मत्वेसप्रजासृष्ट्वाततःसत्त्वातिरेकवान् ।
विष्णुत्वमेत्यधर्मेणकुरुतेपरियपालनम ।।१४
नमस्तमोगुणोद्रिक्तोरुद्रत्वेचाखिलंजगत् ।
उपसंहृत्यवैशशेतेत्रैलोक्यन्त्रिगुणोऽगुगः ।।१५
यथाप्राग्व्यापकःक्षेत्री पालकोलावस्तथा ।
तथाससंज्ञामान्पोतिब्रह्मविष्णुहरात्मिकाम् ।।१६
ब्रह्मत्वेसृजनेलोकान्रुद्रत्वेसंहरत्यपि ।
विष्णुत्वेचाप्युदासीनस्तिस्रोऽवस्थाःस्वयम्भुवः ।।१७
रजोब्रह्मातमोरुद्रोविष्णुःसत्त्वजगत्पतिः ।
एतएवत्रयोदेवाएतएवत्रयोगुणाः ।।१८

अयोन्यमिथुननाह्येतेअन्योन्याश्रयिणस्तथा ।
क्षणंवियोगोनह्येषांनत्यजन्तिपरस्परम् ॥१९

एवंब्रह्माजगत्पूर्वोदेवदेवश्चतुर्मुखः ।
रजोगुणंसमाश्रित्यस्रष्टत्वेसव्यवस्थितः ॥२०

ब्रह्मा रूप सृजन कार्य करके सतोगुण के आधिक्य से विष्णुरूप हो कर प्रजा-पालन करते हैं ।१४। फिर तमोगुण का उद्रेग होने पर रुद्र रूप धारण कर संहार करके शयन करते हैं, इस प्रकार वह निर्गुण ब्रह्म तीनों काल में तीनों गुणो का अवलम्बन करते है ।१५। सर्वजनक सर्वव्यापी ईश्वर इस प्रकार, सृष्टि स्थिति और प्रलय करने के कारण ही उनकी संज्ञा ब्रह्मा, विष्णु और शिव होती है ।१६। वह ब्रह्म रूप में सब लोकों को उत्पन्न, रुद्र रूप में संहार और विष्णु रूपमें उदासीन होकर रहते हैं, स्वयंभू भगवान की यह तीन अवस्था हैं ।१७। ब्रह्मा रजोगुण रुद्र तमोगुण और विष्णु सतोगुण हैं ।८। यह त्रिदेव तीन गुण रूप में परस्पर के आश्रय पूर्वक स्थित रहते हैं, यह क्षण भर को भी विमुक्त नहीं होते ।१९। इस प्रकार जगत् के आदि देव चतुर्मुखी ब्रह्मा रजोगुण के आश्रय से सृष्टि कार्य में प्रवृत्त होते हैं ।२०।

हिरण्यगर्भोदेवादिनादिरुपचारतः ।
भूपद्मकर्णिकासंस्थोब्रह्माग्रेसमजायतः ॥२१

तस्यवर्षशतंत्वेकंपरमायुर्महात्मनः ।
ब्राह्मणेणैवहिमानेनततस्यसंख्यांनिबोधमे ॥२२

निमेषदशभिःकाष्ठातथापञ्चभिरुच्यते ।
कलास्त्रिंशच्चवैकाष्ठामुहूर्त्तिशदेवताः ॥२३

अहोरात्रंमुहूर्त्तानांनृणांत्रित्तु वैस्मृतम् ।
अहोरात्रैश्चत्रिंशद्भिःपक्षौद्वौमास उच्यते ॥२४

तेःषड्भिरयनवर्षंद्वेयनेदक्षिणोत्तरे ।
तद्देवानमहोरात्रदिनंतत्रोत्तरायणम् ॥२५

दिव्यैवर्षसहस्त्रैस्तुकृतत्रेतादिसंज्ञितम् ।
चतुर्युगद्वादशभिस्तद्विभागंश्शृणुष्वमे ॥२६

चत्वारितुसहस्राणिवर्षाणांकृतमुच्यते ।
शतानिसन्ध्याचत्वारिसन्ध्याशश्चतथाविधः ।
त्रेतात्रीणिसहस्राणिदि व्यब्दानांशतत्रयम् ।
तस्यसन्ध्यासमाख्यातासंध्यांशश्चतथाविधः ॥२८

वह देवताओं के आदि रूप हिरण्य गर्भ एक प्रकार से आदि रहित हैं ।२१। वह भूपद्मकर्णिका का आश्रम करके सबसे पहिले प्रकट होते हैं ।२२। उनकी परमायु ब्राह्म मान से सौ वर्ष की है, उनकी संख्या का वर्णन करता हूँ, सुनो ।२२। पन्द्रह निमेष की काष्ठा, तीस काष्ठा की एक कला, तीस कला का एक मुहूर्त ।२३। और तीस मुहूर्त का मनुष्यों का एक अहोरात्र होता है, तीस अहोरात्र अथवा दो पखवारों का एक मास होता है ।२४। छः मास का एक अयन और दो अयनों का एक वर्ष होता है, दक्षिणायन और उत्तरायण के भेद से अयन दो प्रकारका है, इस प्रकार मानव-मान से एक वर्ष का देवताओं का एक अहोरात्र होता है, उसमें उत्तरायण देवताओं का दिन है ।२५। देवताओं के परिमाण से बारह हजार वर्ष की चतुर्युगी होती है । अब उन चारों युगों का विभाग वर्णन करता हूँ ।२६। चार हजार दिव्य वर्षों का सत्ययुग तथा उसकी सन्ध्या व सन्ध्यांश के चार-चार सौ वर्ष होते हैं ।२७। तीन हजार दिव्य वर्षों का त्रेतायुग और उसकी सायं तथा संध्यांश के तीन-तीन सौ वर्ष होते हैं ।२८।

द्वापरंद्वेसहस्रेतुवर्षाणांद्वे शतेतथा ।
तस्यसन्ध्यासमाख्याताद्वेशताब्देतदंशकः ॥२६
कलिःसहस्रं दिव्यानामब्दानांद्विजसत्तम ।
सन्ध्यासन्ध्यांशकश्चैवशतकौसमुदाहृतौ ॥३०
एषाद्वादशसाहस्रीयुगाख्याकविभिःकृताः ।
एतत्सहस्रगुणितमहोब्राह्ममुदाहृतम् ॥३१
ब्रह्मणोदिवसेब्रह्मन्मनवःस्युश्चतुर्दश ।
भवन्तिभागशस्तेषांसहस्रंतद्विभज्यते ॥३२

देवा:सप्तर्षय:सेन्द्रामनुस्तत्सूनवोनृपा: ।
मनुनासहसृज्यन्तेसंह्रियन्तुचपूर्ववत् ॥३३
चतुर्युगानांसंख्यातासाधिकाह्येकसप्तति: ।
मन्वन्तरतस्यसंख्यांमानुषाब्दैर्निबोधमे ॥३४
त्रिंशत्कोटयस्तुसम्पूर्णासंख्याता:संख्ययाद्विज ।
सप्तषष्टिस्तथान्यानिनियुतानिचसंख्यया ॥३५
विंशतिश्चसहस्राणिकालोऽयसाधिकंविना ।
एतन्मन्वन्तरंप्रोक्तंदिव्यैर्वर्षैर्निबोधमे ॥३६

दो हजार दिव्य वर्षों का द्वापर, उसकी संध्या-संध्याश के दो-दोसौ वर्ष होते हैं ।२६। एक हजार दिव्य वर्षका कलियुग तथा उसकी संध्या-संध्याँश के एक-एक सौ वर्ष होते हैं ।३०। इस प्रकार से चारों युग का परिमाण कवियों ने बारह हजार दिव्य वर्षों मे विभक्त किया है, इसको सहस्रगुणा करने पर जो समय होता है, वही ब्रह्मा का एक दिन कहा गया है ।३१। ब्रह्मा के इस एक दिन में चौदह मनु हो जाते है उसका सहस्र विभाग कहा गया है ।३२। इन्द्रादि देव, सप्तर्षि, मनु, और मनु पुत्र राजा मन्वन्तर सहित उत्पन्न होते और पहिले के समान नष्ट हो जाते है ।३३। इकहत्तर चतुर्युगियो का एक मन्वन्तर होता है इसकी संख्या मानव मान के अनुसार कहता हूँ ।३४। तीस करोड़ साठ लाख बीस हजार मानव वर्ष का एक मन्वन्तर होना है, अब दिव्य मान के अनुसार सुनो ।३५।३६।

अष्टौवर्षसहस्राणिदिव्यासंख्ययायुतम् ।
द्विपञ्चाशत्तथान्यानिसहस्राण्यधिकानितु ॥३७
चतुर्दशगुणोह्येषकालोब्राह्मयमह:स्मृतम् ।
तस्यान्तेप्रलय:प्रोक्तोब्राह्मोनैमित्तिकोबुधै: ॥३८
भूर्लोकोऽथभुवर्लोक:स्तन्निवासिन: ।
नदाविनाशमायांतिमहर्लोकश्चतिष्ठति ॥३९
तद्वासिनोऽपितापेनजनलोकंप्रयान्तिवै ।
एकार्णवेचत्रैलोक्येब्रह्मास्वपितिवैनिशि ॥४०

तत्प्रमाणैवसारात्रिस्तदन्तेसृज्यतेपुनः ।
एवंतुब्रह्मणोतर्षमेकवर्षशततुतत् ॥४१
शतंहितस्यवर्षाणांपरमित्यभिधीयते ।
पञ्चाशद्भिस्तथावर्षैं परार्द्धमितिकीर्त्यते ॥४१
एकमस्यपरार्द्धंतुव्यतीतंद्विजसत्तम ।
यस्यान्तेऽभून्महाकल्प पाद्मइत्यभिविश्रुतः ॥४३
द्वितीयस्यपरार्द्धस्यवर्त्तमानस्यवैद्विज ।
वाराहइतिकल्पोऽयंप्रथमःपरिकल्पितः ॥५४

आठ लाख बावन सहस्र दिव्य वर्ष का परिमाण एक मन्वन्तर का होता है ।३७। इतने काल को चौदह गुणा करने पर एक करोड़ उन्नीस लाख अट्ठाइस हजार दिव्य वर्षोंका ब्रह्मा का एक दिन होता है, इस ब्रह्म दिवस के अन्त में जो प्रलय होता है, उसी को ज्ञानीजन नैमित्तिक प्रलय कहते हैं. ।३८। भूर्लोक भुवर्लोक और स्वर्लोक में निवास करने वाले जीव, इन लोकों के नष्ट होने पर महलों में जाकर निवास करते हैं ।३९।४१। जो परिमाण ब्रह्माजी के दिनका है, उतनाही उनका रात्रि का है । रात्रि के अन्तमें सृजन कार्यका पुनरारम्भ होता है । इस प्रकार से ब्रह्मा का एक वर्ष होता है ।४१। एक सौ वर्ष का 'पर' और पाँच सौ वर्ष का एक परार्द्ध होता है ।४२। हे द्विजोत्तम ! इस प्रकार ब्रह्मा जी का एक परार्द्ध बीत चुका है, उसी के अन्त में पाद्म, संज्ञक महा-कल्प उपस्थित हुआ था ।४३। अब यह 'वाराह कल्प' नामक द्वितीय परार्द्ध है, यही प्रथम कल्प कहा गया है ।४४।

३६—प्राकृत और वैकृत सृष्टि

यथाससर्जवैब्रह्माभगवानादिकृत्प्रजाः ।
प्रजापतिःपतिर्देवस्तन्मेविस्तरतोवद ॥१
कथयाम्येषतेब्रह्मन्ससर्जभगवान्यथा ।
लोककृच्छश्वतःकृत्स्नंजगत्स्थावरजंगमम् ॥२

पाद्मावसानसमयेनिशासुप्तोत्थित:प्रभुः ।
सत्वोद्रिक्तास्तदाब्रह्माशून्यंलोकमवैक्षत ।।३
इमंचोदाहरन्त्यत्रश्लोकनारायणप्रति ।
ब्रह्मस्वरूपिणंदेवजगत:प्रभवाप्ययम् ।।४
आपोनाराइतिप्रोक्ताआपोवैनरसूनवः ।
तासुशेतेसयस्माच्चतेननारायणः स्मृतः ।।५
विबुध:सलिलेतस्मिन्विधायान्तर्गतांमहीम् ।
अनुमानात्समुद्धारकर्तुं कामस्तदाक्षिते: ।।६
ककरोत्सतनूरन्या:कल्पादिषुयथापुरा ।
मत्स्यकूर्मादिकास्तद्वद्वाराहंवपुरास्थितः ।।७

क्रोष्टुकि बोले—जिस प्रकार आदि स्रष्टा ब्रह्माजी ने प्रजा की उत्पत्ति की, वह मुझे विस्तार पूर्वक सुनाइये ।१। मार्कण्डेयजी ने कहा अनादि भगवान् श्री ब्रह्माजी ने इस स्थावर जगतमय विश्व की जिस प्रकार रचना की वह आपके प्रति वर्णन करताहूँ ।२। पाद्म नाम प्रलय के अवसान होने पर सत्वगुण उद्रेक वाले ब्रह्माजी ने रात्रि के व्यतीत होने पर शयन से जाग्रत हुए तब उन्होंने सम्पूर्ण भुवन शून्य देखा ।३। उस समय जगत्कारण नारायण के विषयमें यह कहा जाता है ।४। जल शब्द को 'नार' कहा गया है, उसमें यह शयन करते हैं, इसलिए वह 'नारायण' कहे जाते हैं ।५। नारायण ने जाग कर पृथिवी को जल में डूबा हुआ जाना और निकलने की इच्छा से ।३। पूर्व कल्पों में मत्स्य या कूर्म आदि के समान वाराह रूप धारण किया ।७।

वेदयज्ञमयंदिव्यवेदयज्ञमयोविभुः ।
रूपंकृत्वाविवेशशाप्सु सर्वगसर्वसम्भवः ।।८
समुद्धृत्यचपातालान्मुमोचसलिलेभुवम् ।
जनलोकस्थितै:सिद्धै श्चिन्त्यमानोजगत्पत्ति: ।।९
तस्योपरिजलोघश्यमहतीनौरिवस्थिता ।
विस्तृतत्वात्तु देहस्यनमहीय तिसंप्लवम् ।।१०

ततःक्षितिंसमीकृत्यपृथिव्यांसोऽसृजद्गिरीन् ।
प्राक्सर्गेदह्यानेतुतदासंवर्तकाग्निना ॥११
तेनाग्निनाविशीर्णास्तेपर्वताभुविसर्वशः ।
शैलाएकार्णवेमग्नावायुनापस्तुसंहृता ॥१२
निषक्तायत्रयत्रासस्तत्रतत्राचलाभवन् ।
भूविभागंततःकृत्वासप्तदीपोपशोभितम् ॥१३
भूराद्यांश्चतुरोलोकान्पूर्ववत्समकल्पयत् ।
सृष्टिंचिन्तयतस्यकल्पादिषुयथापुरा ॥१४

वह वेदमय प्रभु दिव्य वेदमय स्वरूप को धारण करके बाराह रूप से जल में घुमे ।८। और पातालसे निकालकर पृथिवीको जल पर स्थापित किया और फिर देखने लगे ।९। कि ह नौका के समान जल पर डोलती है, विस्तृत होने के कारण स्थित नहीं होती ।१०। फिर उन्होंने पृथिवी को समान करके पर्वतों की रचना की, पहिले सृष्टिको सम्बर्तक अग्नि ने दग्ध किया था ।११। वह सभी पर्वत उस अग्नि के ताप से विशीर्ण होकर समुद्र में मग्न हो गए थे । उस समय वहाँ का जल भी वायु के द्वारा एकत्र हो गया था ।१२। इसलिये पर्वत जहाँ पड़े थे, वहीं-वहीं अचल हो गए, फिर सप्त द्वीप के रूप में पृथिवी को विभक्त करके ।१३। पहिले के समान भूर्लोक आदि चार लोकों का विभाग किया और पूर्व कल्पों के समान ही सृष्टि विषयक विचार करने लगे ।१४।

अबुद्धिपूर्वकस्तस्मात्प्रादुर्भूतस्तमोमयः ।
तमोमोहोमहामोहस्तामिस्रोह्यन्धसंज्ञितः ॥१५
अविद्यापंचपुर्वैषाप्रादुर्भूतामहात्मनः ।
पंचधावस्थितःसर्गोध्यायतोऽप्रतिबोधवान् ॥१६
बहिरन्तश्चाप्रकाशःसंवृतात्मानगात्मकः ।
मुख्यानगातश्चोक्तामुख्यसर्गस्तमस्त्वयम् ॥१७
तंदृष्ट्वासाधकंसर्गममन्यदपरंमुनः ।
तस्याभिध्यायतः सर्गतिर्यक्स्रोतोह्यवर्तत ॥१८

यस्मात्तिर्यक्प्रवृत्तिःसातिर्यक्स्रोतस्ततःस्मृतः ।
पशवादयस्तविख्यातास्तमः प्रायाह्यवेदिनः ॥१९
उत्पथग्राहिणश्चैवतेऽज्ञानेज्ञानमानिनः ।
अहंकृता अहंमानाअष्टाविंशद्विधात्मिकाः ॥२०

तब तमोयुक्त तम, मोह तामिस्र, अन्धतामिस्र नामक ।१५। पाँच अविद्या उनसे उत्पन्न हुई, उस प्रकार के चिन्तन से अप्रतिबोध वाली सृष्टि की पाँच प्रकारसे स्थित हुई ।१६। वह संवृतात्मक और पर्वत स्वरूप अपने भीतर बाहर सर्वत्र अप्रकाशित थी, पर्वत प्रधान होने के कारण वह सृष्टि मुख्य सर्ग संज्ञा वाली कही गई है ।१७। इस असाधक सृष्टि को देखकर उन्होने अन्य सृष्टि की इच्छा की तो उनके ध्यान से तिर्यक् स्रोत की प्रवृत्ति हुई ।१८। उस तिर्यक्स्रोतके प्रवाहित होनेसे इसके द्वारा अधिक तमोगुणी सृष्टि अर्थात् पशुआदि अज्ञानी उत्पन्नहुए।१९।वहउन्मार्गी अज्ञान को ही ज्ञान मानने लगे । अहंकारी अहंमानीवे अट्ठाईसप्रकारके हुए ।२२।

अन्तःप्रकाशास्तेसर्वेंआवतास्तुपरस्परम् ।
तमप्यासाधकंमत्वाध्यायतोऽन्यस्ततोऽभवत् ॥२१
ऊर्ध्वस्रोतस्तृतीयस्तुसात्त्विकोद्रूर्ध्वमवर्तत ।
तेसुखप्रीतिबहुलावहिरन्तस्त्वनावृताः ॥२२
प्रकाशाबहिरन्तश्चऊर्ध्वस्रोतः समुद्भवः ।
तुष्टात्मनस्तृतीयस्तुदेवसर्गोहिस स्मृतः ॥२३
तस्मिन्सर्गेऽभवत्प्रीतिर्निष्पन्ने ब्रह्मणस्तदा ।
ततोऽयंसतदादध्यौसाधकंसर्गमुत्तमम् ॥२४
तथाभिध्यायतस्तस्बसत्याभिध्यायिनस्ततः ।
प्रादुर्बभौतदाव्यक्तादर्वाक्स्रोतस्तुसाधकः ॥२५
यस्मादर्वाग्व्यवर्तन्त्ततोऽर्वाक्स्रोतसस्तुते ।
तेचप्रकाशबहुलास्तमोद्रिक्तारजोऽधिकाः ॥२६
तस्मात्ते दुःखबहुलाभूयोभूयश्चकारिण ।
प्रकाशबहिरन्तश्चमनुष्याःसाधकाश्यते ॥२७

पंचमोऽनुग्रहःसर्गःसचतुर्द्धाव्यवस्थितः ।
विपर्ययेणसिद्धयाचशान्त्यातुष्टयायथैवच ।।२८

यह सब अन्तः प्रकाश और एक दूसरे को ढककर स्थित है। इस सृष्टि को उन्होंने असाधक समझकर और चिन्तन किया तो ।२१। ऊर्ध्व पंथगामी तृतीय स्रोत प्रवाहित होने लगा जिससे जिनकी उत्पत्ति हुई वह सुख और प्रीति की अधिकता वाले तथा बाहर और अन्तर में अनावृत्त ।२२। बाह्यभ्यन्तर में प्रकाश वाले और तुष्टात्मा थे यह तीसरी सृष्टि देवसर्ग कही गई ।२३। इस सृष्टि को उत्पन्न करके ब्रह्माजी अत्यन्त संतुष्ट हुई और फिर उन्होंने श्रेष्ठ साधक सर्ग का चिन्तन किया ।२४। उनके चिंतन करने पर अव्यक्त से अर्वाक्स्रोत नामक साधक सर्ग की उत्पत्ति हुई ।२५। ऊर्ध्व से उग्र होने के कारण ही इसे अर्वाक्स्रोत सर्ग कहा गया है, इनमे प्रकाश की अधिकता, तम की न्यूनता तथा रजोगुण का अधिक्य है ।२६। इसलिए इनमें दु.ख की अधिकता है, यह बार-म्बार कार्य वाले तथा बाह्याभ्यांतर में प्रकाश वाले साधक मनुष्य रूप हैं ।२७। फिर अनुग्रह नाम की पाँचवीं सृष्टि हुई यह विपर्यंत, सिद्ध, शान्ति और सृष्टि चार भागों मे विभाजित है ।२८।

निवृत्तंवर्तमानंचतेऽर्थंजानन्तिवैपनः ।
भूतानिकानांभूतानांषष्ठःसर्गःसउच्यते ।।२९
तेपरिग्रहिणःसर्वेसंविभागरतास्तथा ।
चोदनाश्चाप्यशीलाश्चज्ञयाभूतादिकाश्चते ।।३०
प्रथमोमहतःसर्गोविज्ञेयोब्रह्मणस्तुसः ।
तन्मात्राणांद्वितीयस्तुभूतसर्गःसउच्यते ।।३१
वैकारिकस्तृतीयस्तुसयश्चैन्द्रियकःस्मृतः ।
इत्येषप्राकृतःसर्गःभूतोबुद्धिपूर्वकः ।।३२
मुख्यःसर्गश्चतुर्थस्तुमुख्यावैस्थावराः स्मृतः ।
तिर्यक्स्रोतस्तुयः प्रोक्तस्तिर्यग्योन्यःसपञ्चमः ।।३३
तथोदर्ध्वस्रोतसांषष्ठोदेवसर्गस्तुसस्मृतः ।
ततोर्वाक्स्रोतसर्गःसप्तपःसतुमानुषः ।।३४

अष्टमोऽनुग्रहःसर्गःसात्विकस्तामसश्चसः ।
पंचैवैकृताःसर्गाःप्राकृतास्तुत्रयःस्मृतः ॥३५
प्राकृतोवैकृतश्चैवकौमारोनवमःस्मृतः ।
इत्येतेवैसमाख्यानानवसर्गाःप्रजापतेः ॥३६
प्राकृतावैकृताश्चैवजगतोमूलहेतव ।
सृजतोजगदीशस्यकिमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ॥३७

भूत और वर्तमान के सब अर्थ को जानने वाले भूतादि तथा अन्य समस्त भूतों की सृष्टि षष्ठ सर्ग कही गई है ।२९। वह सभी स्त्री युक्त, विषय मे लगे हुए, प्रेरणा में निपुण, अशील स्वभाव के भूतादि कहे जाते हैं ।३०। जिससे ब्रह्माजी का अविर्भाव होता है, यह प्रथम महत् सृष्टि है, ब्रह्मा द्वारा होने वाली सृष्टि द्वितीय है, वह भूत सर्ग कही जाती है ।३१। ऐन्द्रिक वैकारिक जो तृतीय सृष्टि है, वह प्राकृत सर्ग बुंद्धि पूर्वक माना गया है ।३२। चतुर्थ सर्ग मुख्य है, स्थावरों को मुख्य कहा है, तिर्यक् योनि रूप तिर्यक् स्रोत जो कहा गया है वह पञ्चम सर्ग है ।३३। ऊर्ध्व स्रोतकी छठी सृष्टि देव सर्ग कही जातीहै, इसके पश्चात् सप्तम सृष्टि अर्वाक् स्रोत मानवी सृष्टि है ।३४। आठवाँ अनुग्रह सर्ग सात्विक और तामसिक दो प्रकार का है, यह पाँच वैकृत सर्ग और पहिले कहे हुए तीन प्राकृत सर्ग हैं ।३५। प्राकृत और वैकृत संयुक्त एक नवम सृष्टि कौमार नाम की है । इस प्रकार प्रजापतिकी यह नौ सृष्टि कही गई हैं ।३६। यह प्राकृत और वैकृत ही सँसार के मूल कारण है, जिनकी रचना जगदीश्वर ने की है, अब और क्या सुनना चाहतेहो ?।३७

४०—देवादि की सृष्टि

सामासात्कथितासृष्टिःसम्यग्भगवतामस ।
देवादीनांभवन्ब्रह्मान्विस्तरात्तु्ब्रवीहिमे ॥१
कुशलाकुशलैर्ब्रह्मन्भावितापूर्वकर्मभिः ।
ख्यात्यातयाह्यनिर्मुक्ताःप्रलयेह्यपिसंहृताः ॥२

देवाद्याःस्थावरन्ताश्चप्रजाब्रह्म श्चचतुर्विधाः ।
ब्रह्मणःकुर्वतःसष्टिजज्ञिरेमानसास्तदा ॥३
ततोदेवासुरपितृन्मानुषांश्चचतुष्टयम् ।
सिसृक्षुरम्भस्येतानिस्वमात्मानमयूयुजत् ॥४
युक्तात्मनस्तमोमात्राउद्रिक्ताभूत्प्रजापतेः ।
सिसृक्षोर्जघनात्पूर्वमसुराजज्ञिरेततः ॥५
उत्ससर्जततस्तांतुतमोमात्रात्मिकांवनुम् ।
सापबिद्धातनुस्तेनसद्योरात्रिरजायत ॥६
अन्यांतनुमुपादायसिसृक्षुःप्रीतिमानसः ।
सत्वोद्र कास्ततोदेवामुखतस्तस्यजज्ञिरे ॥७
उत्ससर्जचभूतेशस्तनुंतामप्यसौविभुः ।
साचापविद्धादिवसंसत्वप्रायमजायत् ॥८

क्रोष्टुकि बोले—हे प्रभो ! आपने जिस प्रकार से सृष्टि प्रकरण कहा वह अति संक्षिप्त है, इसलिए अब देवता आदिकी उत्पत्ति विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिए ।१। मार्कण्डेयजी ने कहा—हे विप्र ! पूर्व जन्म के शुभाशुभ कर्म ही उत्पत्ति होती है, क्योंकि वह प्रलय में लीन होते हैं, मुक्त नहीं होते ।२। देवतादि से स्थावर तक चार प्रकार की प्रजा जब प्रलय काल में नष्ट हो गई तब ब्रह्माजीने उसकी सृष्टि की पुनः इच्छा की और अपने मन से ।३। सुर, असुर, पितर और मनुष्य की सृष्टिकी इच्छा से उन्होंने अपने अंश को जल में डाला ।४। सृष्टिकामी ब्रह्मा जी तमोगुण का उद्रेक होने से, उनकी जंघा से प्रथम असुरोंकी उत्पत्ति हुई ।५। इसीलिए उन्होंने उन असुरों को तमोगुणी शरीर दिया, वही शरीर त्यागा जाकर तमोगुणात्मिका रात्रि के नाम से प्रसिद्ध हुआ ।६। फिर ब्रह्माजी ने दूसरा शरीर धारण किया, उससे वे प्रसन्न हुए,उनमें सतोगुण का उद्रेक होने से उनके मुख से देवताओं की उत्पत्ति हुई ।७। उनको सात्विक शरीर दिया, वही व्यक्त देह सत्वगुणात्मक दिवस नाम से प्रसिद्ध हुआ ।८।

सत्वमात्रात्मिकामेवतयोऽन्यांजगृहेतनुम् ।
पितृबन्मन्यमानस्यपितरस्तस्यजज्ञिरे ॥९
सृष्ट्वापितृनुत्ससर्जतनुंतामपिसप्रभुः :
साचातोत्सष्टाभवत्सन्ध्यादिननक्तान्तरस्थिता ॥१०
रजोमात्रात्मिकामन्यांतनुंभेजेऽथसप्रभुः ।
ततोमनुष्याःसम्भूतारजोमात्रसमुद्भवाः ॥११
सृष्ट्वामनुष्यान्सविभुरुत्ससर्जतनुंततः ।
ज्योत्स्नासमभवत्साचनक्तांतेऽहर्मुखेचया ॥१२
इत्येतास्तनवस्तस्यदेवदेवस्यधीमतः ।
ख्यातारात्र्यहनीचैवसध्याज्योत्स्नाचवैद्विजः ॥१३
ज्योत्स्नासन्ध्यातथैवाहःसत्वमात्रात्मकत्रयम् ।
तमोमात्रामिशारात्रिःसावैतस्मात्तमोधिका ॥१४

फिर उन्होंने अन्य सत्वमय शरीर धारणकर पितरोंकी सृष्टि की।९ पितरोंको शरीर देनेपर वह व्यक्त शरीरदिवस रात्रिके भीतर स्थितसंध्या रूपात्मक हुआ।१०। इसके पश्चात् रजोगुण युक्त अन्य देह धारण करके उन्होने रजोगुणकी अधिकता वाले मनुष्योंको उत्पन्नकिया।११। मनुष्यों को उत्पन्न करके उस शरीर का भी परित्याग कर दिया, वह व्यक्त शरीर ज्योत्स्ना हुआ, जो रात्रि के शेषमें और दिवस से प्रथम भाग मे आविर्भूत होती है।१२। हे द्विज ! मेधावी देवदेव के यह विग्रह ही दिवस, रात्रि, संध्या और ज्योत्स्ना के नाम से प्रसिद्ध हुए हैं।१३। ज्योत्स्ना, संध्या और दिवस यह तीन सतोगुणी हैं और रात्रि तामसिक होने से अन्धकारमयी है।१४।

तस्माद्देवादिवारात्रावसुरास्तुबलान्विताः ।
ज्योत्स्नागमेचमनुजास्सन्ध्यायांपितरस्तथा ॥१५
भवन्तिबलिनोऽधृष्याविपक्षाणांनसंशयः ।
तद्विपर्ययमासाद्यप्रतान्तिचविपर्ययम् ॥१६
ज्योत्स्नारात्र्यहनीसन्ध्याचत्वार्येतानिवैप्रभोः ।
ब्रह्मणस्तुशरीराणित्रिगुणोपसृतानितु ॥१७

चत्वार्यंतान्यथोत्पाद्यतनुमन्यांप्रजापतिः ।
रजस्तमोसयींरात्रौजगृहेक्षुत्तृऽन्वितः ॥१८
तदन्धकारेक्षुत्क्षामामगृह्णादभगवानजः ।
विरूपाञ्छमश्रुलानत्तुमारब्धास्तेचत्तांतनुम् ॥१९
रक्षामइतितेभ्योऽन्येतउचुस्तेतुराक्षसः ।
खादामइतियेचोचुस्तेयक्षायक्षणाद्विज ॥२०
तान्दृष्ट्वाह्यप्रियेणास्यकेशाःशीर्यन्तवेधसः ।
समारोहणपीनाश्चशिरसोब्रह्मणस्तुते ॥२१
सर्पणात्तेऽभवन्सर्पाहीनत्वादहयःस्मृताः ।
सर्पान्दृष्ट्वातनःक्रोधात्मानोविनिर्ममे ॥२२

पूर्वोक्त गुणों की अधिकता से दिन में देवता, रात्रि में असुर, ज्योत्स्ना में मनुष्य और सन्ध्याकाल मे पितर ।१५। अधिक बलवान् होकर शत्रुओं द्वारा नहीं जीते जाते, इस प्रकार विपरीत काल मे विपरीत बलवान् हो जाते हैं ।१६। प्रजापति ने दिवस, रात्रि, सन्ध्या और ज्योत्स्ना रूप जो चार प्रकारके देह उत्पन्न किये, वही ब्रह्माजीका त्रिगुणात्मक देह है ।१७। चारों देहों को प्रजापतिने उत्पन्न करके क्षुधा पिपासा से युक्त रज-तम युक्त रात्रि को ग्रहण किया ।१८। उस अँधेरे में ब्रह्मा जी ने क्षुधा से कृश हुए विरूप दाढ़ी मूँछों की रचना की तब वे उसदेह को भक्षण करने को ही प्रवृत्त हुए ।१९। जब वह उस देह को भक्षण करने को उद्यत हुए तबजिन्होंने 'रक्षा करो' कहावे राक्षस और जिन्होंने 'खाऊँगा' कहा वह यक्ष कहे गये ।२०। उन्हें देखकर अप्रसन्नता उत्पन्न हुई इससे ब्रह्माजी के सब केश मस्तकसे पतित हुए ।२१। और विचरण करने से सर्प संज्ञक हुए, हीन होने से यह अहि भी कहे जाते हैं । सर्पों को देखकर क्रोधयुक्त होने से उन्हें क्रोधात्मा बनाया ।२२।

वर्णेनकपिलेनोग्रास्तेभूताःपिशिताशनाः ।
ध्यायतोगांततस्तस्यगन्धर्वाजज्ञियेसता ॥२३
जज्ञिरेपिततोवाचांगन्धर्वास्तेनतेस्मृताः ।
अष्टास्वेतांसुसृष्टासुदेवयोनिषुमप्रभुः ॥२४

ततःस्वदेहतोऽन्यानिवयांसिपशोऽवसृजत् ।
मुखतोऽजाःससर्ज्जायबक्षसश्चवयोऽसृजत् ।।२५
गाश्चैवोदरतोब्रह्मापार्श्वाभ्यांचविनिर्ममे ।
पद्भयांचाश्वान्समातङ्गान्रासभाञ्छशकान्मृगान् ।।२६
उष्ट्रानश्वतरांश्चैवनानारूपाश्चजातयः ।
ओषध्यःफलमूलिन्योरोमभ्यतस्यजज्ञिरे ।।२७
एवंपश्वोषधीःसृष्ट्वाह्ययजच्चाध्वरेविभुः ।
तन्मादादौतुकल्पस्यत्रेतायुगमुखेतदा ।।२८

कपिल वर्ण से प्रकट कर्कश स्वभाव वाले आशित भोजी गणों की उत्पत्ति हुई, गौ का चिन्तन करते समय गंधर्व उत्पन्न हुए ।२३। वाक्य को ग्रहण करते करते उत्पत्ति को प्राप्त होनेसे उनका नाम गन्धर्व हुआ । इस प्रकार आठ प्रकार की देवयोनि को प्रकट करके ।२४। अपने शरीर से अन्य सभी पशु पक्षी प्रकट किए, मुख से बकरा और हृदय से पक्षी उत्पन्न किए ।२५। उदर और पार्श्व से गौ, दोनों चरणोंसे अश्व, हाथी, गधा खरगोश, मृग। २६। ऊँट और खच्चर उत्पन्न किए तथा रोम से फल मूल युक्त विभिन्न प्रकार की औषधियां उत्पन्नकीं ।२७। इस प्रकार त्रेतायुग के आरम्भ में ब्रह्माजी पशु और औषधियों की रचना करके यज्ञ सृजन में लगे ।२८।

गौरजःपुरुषोमेषोअश्वाश्वतरगर्दभाः ।
एतान्ग्राम्यान्पशूनाहुराण्यांश्चनिबोधमे ।।२९
श्वापदंद्विखुरंहस्तीवानराःपक्षिपंचमाः ।
औदकाःपशवःषष्ठाःसप्तमास्तुसरीसपाः ।।३०
गायत्रीश्चतृचंचैवत्रिवृत्सामरथन्तरम् ।
अग्निष्टोमंचयज्ञानांनिर्ममेप्रथामान्मुखात् ।।३१
यजूंषित्रैष्टुंभछन्दःस्तोमंपचदशतथा ।
बृहत्सामतथोक्तंचदक्षिणादसृजन्मुखात् ।।३२
सामानिजगतोच्छन्दःस्तोमंपंचदशतथा ।
वैरूपमतिरात्रंचनिर्नमेपश्चिमान्मुखात् ।।३३

एकविंशमथर्वाणमाप्तोर्यामाणमेवच ।
आनुष्टुभंसवैराजमुत्तरादसृजन्मुखात् ॥३४
विद्युतोऽशनिमेघाश्च रोहितेन्द्रधनूंषिच ।
वयांसिवसज्जादौकलपस्यभगवान्विभुः ॥३५

गौ, बकरा, भैंसा, मैढ़ा, घोढ़ा, खच्चर और गधा इन पशुओं को ग्राम्य कहा गया है, अब आरण्य पशुओं का वर्णन करता हूँ ।२९। श्वापद, द्विखुर, हाथी, बन्दर, पक्षी, जल के जीव, पशु और सर्पादि यह सात आरण्य अर्थात् वन के जीव कहे गए हैं ।३०। ब्रह्मा ने पहले अपने मुख से गायत्री, त्रिवृत् साम रथन्तर और अग्निष्टोम की उत्पत्ति की ।३१। दक्षिण मुख से यजुर्वेद, त्रैष्टुभ छद, पञ्चदश स्तोम, बृहत् साम और उक्थ को प्रकट किया ।३२। पश्चिम मुख से सामवेद, जगती बृहत् पञ्चदश स्तोम, वैरूप और अतिरात्र को प्रकट किया ।३३। उत्तर मुख के द्वारा इक्कीस अथर्व, आप्तोर्याम, अनुष्टुभ और वैराज की उत्पत्ति की ।३४। उन विभु के कल्प के प्रथम विद्युत, वज्र, मेघ, रोहित इन्द्र धनुष और पक्षियों को उत्पन्न किया ।३५।

उच्चावचानिभूतानिगात्रेभ्यस्तस्यजज्ञिरे ।
सृष्ट्वाचतुष्टयंपूर्वदेवासुरपितृन्प्रजाः ॥३६
ततोऽसृजत्सभूतानिस्थावराणिचराणिच ।
यक्षान्पिशाचान्गन्धर्वास्तथैवाप्सरसागणान् ॥३७
नरकिन्नररक्षांसिवयःपशुमृगोरगान् ।
अव्ययच्चव्ययंचैवयदिदंस्थाणुजङ्गमम् ॥३८
तेषांयेयानिकर्माणिप्राक्सृष्टेःप्रतिपेदिरे ।
तान्येवप्रतिपद्यन्तेसृज्यमानाःपुनःपुनः ॥३९
हिंस्राहिंस्रमृदुक्रूरेधर्माधिर्मावृतानृते ।
तद्भाविताःप्रपद्यन्तेतस्मात्तत्तस्यरोचते ॥४०
इंद्रियार्थेषुभूतेषुशरीरेषुशरीरेषुचसप्रभुः ।
नानात्वंविनियोगंचधातैवव्यदधात्स्वयम् ॥४१

नामरूपंचभूतानांकृत्यानांचप्रपंचनम् ।
वेदशब्देभ्यएवादौदेवादीनांचकारसः ॥४२
ऋषीणांनामधेयानियःश्चद्वेषुसृष्टयः ।
शर्वर्यन्तेप्रसूतानामन्येषांचददातिसः ॥४३
यथार्त्तावृतुलिङ्गानिनानारूपाणिपर्ययें ।
दृश्यन्तेतानितान्येवतथाभावयुगादिषु ॥४४
एवविधाःसृष्टयस्तुब्रह्मणोऽव्यक्तजन्मनः ।
शर्वर्यन्तेप्रबुद्धस्यकल्पेकल्पेभवन्तिवै ॥४५

फिर सुर,असुर, पितर मनुष्य उत्पन्न करके विभिन्न प्रकारके अन्य प्राणियों को उत्पन्न किया ।३६। फिर स्थावर, जंगम, भूतगण, यक्ष, पिशाच, गन्धर्व और अप्सराएँ ।३७। नर, किन्नर, राक्षस, पशु, पक्षी, मृग, तथा नाग इत्यादि सब नाशवान् और स्थायी स्थावर जंगम पदार्थों की उत्पत्ति हुई ।३८। सृष्टिके प्रथम ही जिनका जो कर्महै, वह निर्दिष्ट हो गया, इसलिए वह बारंबार उत्पन्न होकर भी अपने नियत कर्मों को प्राप्त होते हैं ।३६। पूर्व जन्म में जीव जिस अहिंसा, मृदुता क्रूरता,धर्म, सत्य, मिथ्या आदि का आश्रय लेता है, उसे परजन्म में उसी की प्राप्ति होती है ।४०। जीवों में इन्द्रियों के विषय और देहों में इन्द्रियां उनके कर्मानुसार ही उन विभु ब्रह्माजी ने निर्मितकी हैं ।४१। उनके नाम,रूप, कृत्य, अकृत्य, प्रपंच और देव-कर्म आदि का निर्माण वेद शब्द से किया ।४२। प्रलय के पश्चात् पहिले के समान ही उन्होंने ऋषियों के नाम और देवताओं की रचना की ।४३। जैसे ऋतु परिवर्तन के समय उसके लक्षण दिखाई देने लगते हैं, वैसे ही युग-युग में उनके आगामी लक्षण प्रकट होने लगते हैं ।४४। अव्यक्त जन्मा ब्रह्माजी प्रलयान्त के समय इसी प्रकार सृजन कार्य करते हैं ।४५।

१४—मिथुन सृष्टि और स्थान कथन

अर्वाक्स्रोतस्तुकथितोभवतायास्तुमानुषः ।
ब्रह्मन्विस्वरतोब्रूहिब्रह्मासमसृजद्यथा ॥१

यथाच्चवर्णानसृजद्यद्गुणांश्चमहामते ।
यच्चयेषांस्मृतंकर्मविप्रादीनांवदस्वतत् ॥२
ब्रह्मणःसृजतःपूर्वंसत्याभिध्यायिनस्तथा ।
मिथुनानांसहस्त्रंतुमुखात्सोऽथासृजन्मुने ॥३
जातास्तुह्युपपद्यन्तेसत्वोद्रिक्ताःस्वतेजसः ।
सहस्रमन्यद्वक्षस्नोमिथुनानांससर्जह ॥४
तेसर्वेरजसोद्रिक्ताशुष्मिणश्चाप्यमर्षिणः ।
ससर्जान्यित्सहस्रंतुद्वंद्वानामरुतःपुन ॥५
रजस्तमोभ्यामुद्रिक्ताईर्ष्याशीलास्तुते स्मृताः ।
पद्मयांसहस्रमन्यच्चमिथुनानांससर्जह ॥६
उद्रिक्तास्तमसासर्वेनिःश्रीकाह्यल्पतेजसः ।
ततःसंघर्षमाणास्तेद्वन्द्वोत्पन्नस्त्तुद्राणिनः ॥७

क्रोष्टुकि वोले—हे भगवन् ! आपने अर्वाक्स्रोत वाले मनुष्योंका जो वर्णन किया, उसी विषय को विस्तार पूर्वक कहिये ।१। हे महामते ! गुणवाली सब वर्णों की सृष्टि जिस प्रकार हुई तथा ब्राह्मणादिका जो-जो कर्तव्य है, वह सभी मुझे बताइए ।२। मार्कण्डेयजी ने कहा—सृष्टि के पहिले ही ध्यानशील ब्रह्माजी के मुख से सहस्त्र मिथुन की सृष्टि हुई थी ।३। यह सब तेजस्वी तथा सतोगुण की अधिकता वाले हुए उनके वक्षस्थल से और दूसरे सहस्त्र मिथुन उत्पन्न हुए ।४। वह सब क्रोधमय स्वभाव के तथा रजोगुण थे । उनके ऊरुदेश से जो सहस्र मिथुन उत्पन्न हुए ।५। वह रजोगुण और तमोगुण के उद्रेक से युक्त, ईर्ष्यावान्, हुए तथा जो सहस्र मिथुन दोनों चरणो से उत्पन्न हुए ।६। वह लक्ष्मी हीन तमोगुणी तथा तेजहीन हुए, तदनन्तर संघर्षण से जो द्वन्द्वरूप जीव उत्पन्न हुए ।७।

अन्योन्यंहृच्छयाविष्टामैथुनायोपचक्रमुः ।
यतःप्रभृतिकल्पेऽस्मिन्मिथुनानांहिसंभवः ॥८
मासिमास्यार्तवंयत्तुनतदासीत्तुयोषिताम् ।
तस्मात्तदानसुषुवु सेवितैरपिमैथुनेः ॥६

आयुषोन्तेप्रसूयन्तेमिथुनान्यैवतासकृत् ।
(कुलिकंकुलिकाचैव उत्पद्य तेमुमूर्षतां) ।
ततःप्रभृतिकल्तेऽस्मिन्मिथुनानांहिसम्भवः ॥१०
ध्यानेनमनसातासांप्रजानांजायतेसकृत् ।
शब्दादिविषयःशुद्धःप्रत्येकंपंचलक्षणः ॥११
इत्येषामानुषीसृष्टिर्यापूर्वंवैप्रजापतेः ।
तस्यान्ववायसम्भूतार्यैरिदंपूरितंजगत् ॥१२
सरित्सरःसमुद्रांश्चसेवन्तेपर्वतानपि ।
तास्तदाह्यल्पशीतोष्णायुगेपर्स्मिश्चरन्तिवै ॥१३
तृप्तिस्वाभाविकींप्राप्ताविषयेषुमहामते ।
नतासांप्रतिघातोऽस्तिनद्वेषोनापिमत्सरः ॥१४
पर्वतोदधिसेविन्योह्यनिकेतास्तुसर्वशः ।
तावैनिष्कामचारिण्योनित्यंमुदितमानसाः ॥१५

वह द्वन्द से उत्पन्न प्राणी प्रसन्नचित्त से मिथुन मे प्रवृत्त हुए इस प्रकार इस कल्प में मिथुनों की सृष्टि हुई ।८। पूर्वकाल में स्त्रियों को मासिक रजोधर्मका आभाव था, इसलिए वह अन्य समय मे मैथुनरतके भी ।९। सन्तति उत्पादन में समर्थ नहीं थी । केवल अवस्था के अन्त मे एक ही बार सन्तित होती थी (अन्त अवस्था में ही कुलिक और कुल का उत्पन्न होते थे) तब से इसी प्रकार इस कल्प मे मिथुन की उत्पत्ति होती आई है ।१०। ब्रह्माजी ने जब प्रजा का चिन्तन किया, तब उनके मन से पंच महाभूत और शब्दादि विषय एक साथ उत्पन्न हुए ।११।यही प्रजापति की मानसी सृष्टि कही जाती है, इस समय यह विश्व उसी सृष्टि से परिपूर्ण हो रहा है ।१२। पहले युग में अल्प शीतोष्ण हुए प्रजा गण सरित, सरोवर और समुद्र के निकट अथवा पर्वतों में घूमते थे ।१३। हे महामते ! वह उपभोग में स्वाभाविक रूप से तृप्त रहते थे, उनमें किसी भी प्रकार का विघ्न, द्वेष और मत्सर नहीं था ।१४। वह पर्वत मे या समुद्र के किनारे रहते हुए सदा कामना रहित आचरण करते थे और प्रसन्न चित्त रहते थे ।१५।

पिशाचोरगरक्षाँसितथामत्सरिणोजनाः ।
पशवःपक्षिणःश्चैत्रनक्रामत्स्याःसरीसपाः ॥१६
अवारकाह्यण्डजावातोह्यधर्मप्रसूतयः ।
नमूलफलपुष्पाणिनार्तौत्रावत्सराणिच ॥१७
सर्वकालसुखःकालोनात्यर्थंधर्मशीतता ।
कालेनगच्छतातोषांपित्रासिद्धिरजायत ॥१८
ततश्चतोर्षापूर्वाह्ने मध्याह्ने ववितृप्तता ।
पुनस्तथेच्छतातृप्तिरनायासेनसाभवत् ॥१९
इच्छताचतथाथायासोमनसःसमजायत् ।
अपांसौक्ष्म्यततस्तासांसिद्धिर्नाम्नारसोल्लसा ॥२०
समजायतचैवान्यासर्वकामप्रदायिनी ।
असंस्कार्यैःशरीरैश्चप्रजास्ताःस्थिरयोवनाः ॥२१

पिशाच, उरग राक्षस, मत्सर युक्त मनुष्य पशु, पक्षी, नक्र, मत्स्य, बिच्छू ।१६। अवारक और अण्डज प्राणिय की उत्पत्ति अधर्म से हुई है, उस समय मूल, फल, पुष्प ऋतु और वर्ष इत्यादि कुछ भी नहीं था । ।१७। उस समय उष्णता शीत भी नहीं था, सब काल अत्यन्त सुख ही था, कालक्रम से उन्हें अद्भुत सिद्धि प्राप्त थी ।१८। पूर्वाह्न या मध्याह्न में उनको तृप्ति नहीं होती थी तो वह इच्छा करके सहज में ही तृप्ति को प्राप्त कर लेते थे ।१९। तथा इच्छा करते ही जल के सूक्ष्म होने के कारण उनकी विभिन्न प्रकार की रस और उल्लास वाली अन्य सिद्धि ।२०। उपस्थित होकर सब इच्छा पूर्ण कर देती, वह संस्कार हीन होते हुए भी स्थिर यौवन से सम्पन्न थे ।२१।

तासांविनातुसंकल्पंजान्तोमिथुनाःप्रजाः ।
समंजन्मचरूपंचम्रियन्तोचैवताःसमम् ॥२३
अनिच्छाद्वेषसंयुक्तावर्तन्तोतुपरस्परम् ।
तुल्यरूपायुपःसर्वाअधमोत्तमतांधिना ॥२२
चत्वारितुसहस्राणिवर्षाणांमानुषाणितु ।
आयुप्रमाणंजो[illegible]कलेगाद्विषत्तयः ॥२४

क्वचित्क्वचिापुनःसाभूत्क्षितिर्भाग्येनसर्वशः ।
कालेनगच्छतानाशमुपयान्तियथाप्रजाः ॥२५
तथाताःक्रमशोनाशंजग्मुःसर्वत्रसिद्धयः ।
तासुसर्वासुनष्टासुनभसःप्रच्युतारसाः ॥२६
पयसःकल्पवृक्षास्तेसंभूतागृहसंस्थिताः ।
सर्वेप्रत्युपभोगाश्चतासांतेभ्यःप्रजापते ॥२७
वर्तयन्तिस्मतेभ्यस्तास्त्रेतायुगमुखेतदा ।
ततःकालेनवैरागस्तथासामाकस्मिकोऽभवत् ॥२८

बिना संकल्प ही उनकी मिथुन प्रजा जैसे एक साथ उत्पन्न होती वैसे ही रूप आदि में समता प्राप्त करके एक साथ ही मृत्यु को प्राप्त होती थी ।२२। उनमें पारस्परिक इच्छा या द्वेष न था, सभी समानभाव से समय को व्यतीत करते थे, उनमें कोई ऊँच-नीच भी न था, क्योंकि सभी आयु और रूपादि में समान होते थे ।२३। यह मिथुन सृष्टि चार हजार मानवी वर्ष तक जीवित रहती थी और बिना विपत्ति अथवा क्लेश के ही प्राण छोड़ती थी ।२४। कहीं-कहीं पृथिवी दैववशात् ऐसी हो जाती थी, जिसके कारण प्रजा को क्रमानुसार जीवन समाप्त करना होता था ।२५। वह सभी सिद्धियाँ क्रमानुसार नाश को प्राप्त हो गयीं और उनके समाप्त होते ही आकाश से रस बरसने लगे ।२६। तब जल और दुग्ध की प्राप्ति हुई, गृहों में कल्पवृक्षों की उत्पत्ति हुई और उन कल्पवृक्षों से ही सम्पूर्ण भोगों की उपलब्धि होने लगी ।२७। त्रेता के प्रारम्भ में अपने जीवन का निर्वाह मनुष्य इस प्रकार किया करते थे, फिर समय पाकर उनमें आकस्मिक राग की उत्पत्ति हुई ।२८।

मासिवास्यार्तवीत्पत्यागर्भोत्पत्तिःपुनःपुनः ।
रागोत्पत्याततस्तासांवृक्षास्तेगृहसंस्थिताः ॥२९
प्रणेशुरपरेचासंश्चतुःशाखामहीरुहाः ।
वस्त्राणिचप्रसूयन्ते फलेष्वाभरणानिच ॥३०
तेष्वेवजायतेतेषांगन्धवर्णरसान्वितम् ।
अमक्षिकंमहावीर्यंपुटकेपुटकेमधु ॥३१

तेनतावर्तयन्तिस्ममुखेत्रेतायुगस्यवै ।
ततःकालान्तरेणैवपुनर्लोभान्वितास्तुताः ॥३२
वृक्षास्ताःपर्यगृह्णन्तममत्वाविष्टचेतसः ।
नेशुस्तेनापचारेणतेहितासांमहोरुहाः ॥३३
(मूलेषुवापरंवासंक्रुःशालामहीरुहाम् ।)
ततोद्वन्द्वान्यजायन्तशीतोष्णक्षुन्मुखानिवै ।
तास्तद्द्वन्दापघातार्थंचक्रुःपूर्वंपुराणितु ॥३४

इस प्रकार राग के उत्पन्न होने से ही मासिक ऋतुकाल और बारंबार गर्भधारण होने लगा और उनके गृह में स्थित कल्पवृक्ष भी रागयुक्त हो गए ।२६। इससे वह कल्पवृक्ष नाश को प्राप्त हुए और चार शाखों वाले अन्य वृक्षों की उत्पत्ति हुई, उनके फलोंमें वस्त्राभरण प्रकट होते थे ।३०। फलों के प्रत्येक पुटमें श्रेष्ठ गन्ध और वर्ण वाला बलप्रद मधु मक्खियों के बिना ही उत्पन्न होता था ।३१। त्रेताके प्रारम्भ काल की प्रजा इस मधु को पीकर ही जीवन धारणा करती थी, फिर वह कालक्रम से लोभान्वित होकर ।३२। ममता वाले मनसे उन वृक्षों के ग्रहण किये जाने के कारण सभी वृक्षनष्ट हो गए ।३३। (वृक्षों की निवास योग्य शाला बनाली थी) फिर शीत उष्णता क्षुधा आदि सभी द्वन्द्व उत्पन्न हुए, तब उन्हें निवारण करनेके लिये पुरोंका निर्माण किया ।३४।

मरुधन्वसुदुर्गेषुगर्तेषुदरीषुच ।
संश्रयन्तिचदुर्गाणिवार्क्षंपार्वतमौदकम ॥३५
कृत्रिमंचतथादुर्गमित्वात्मनोऽगुलेः ।
मानार्थानिप्रमाणानितास्तुपूर्वंप्रचक्रिरे ॥३६
परमाणुःपरंसूक्ष्मंत्ररेणर्महीरजः ।
वालाग्रंचैवलिक्षांचययुकाचाथयवोपरम् ॥३७
क्रमादष्टगुणान्याहुर्यवानष्टौतथांगुलम् ।
षडंगुलंपदंनच्चवितस्तिर्द्विगुणस्मृतम् ॥३८

द्वे वितस्तीतथाहस्तोब्राह्मचतीर्थादिवेद्वितः ।
चतुर्हस्तधनुदण्डोनाडिकायुगमेवच ।।३६
क्रोशोधनुःसहस्रे द्वौगव्यूतिस्तच्चतुर्गुणम् ।
प्रोक्तंचयोजनंप्राज्ञैःसख्यानार्थमिदंपरम् ।।४०
चतुर्णामिथदुर्गाणांस्वसमुत्थानित्रीणितु ।
चतुर्थंकृत्रिमंदुर्गंताच्चक्रुर्यत्नतात्तु वै ।।४१

तब मरुभूमि, पर्वत, गुफा इत्यादि में दुर्ग आदि के बनने पर वह उन वृक्षों, पर्वतों और जल आदि में स्थित दुर्गोंमें रहने लगे ।३५। तथा अपनी अँगुली आदि के परिमाण से सब कृत्रिम दुर्ग बनाये । परिमाण निश्चित करने के लिए प्रमाण बनाया ।३६। अति सूक्ष्म प्रमाण के लिए परमाणु जाली के छेदों में किरण पड़ने में सूक्ष्म रज दिखाई देती है, उसके तृतीयाँश को परमाणु कहते हैं, त्रसरेणु और धूल तथा स्थूल प्रमाण के लिए केशाग्र, तिष्क, यूका और यव निश्चित किया ।३७। आठ यव में एक अँगुल, छः अँगुल में एक पद, दो पदमें एक वितस्ति ।३८। दोवितस्ति में एक हाथ, ब्राह्मतीर्थ तक चार हाथ में धनुर्दण्ड अथवा नाड़िका युग ।३९। दो हजार धनु में एक गव्यूति और चार गव्यूतिमें एक योजन होता है, संख्यानिरूहणार्थ पंडितजनोंने इस प्रकार निर्धारित किया है ।४०। पहले कहे हुए चार प्रकार के दुर्ग मे तीन स्वाभाविक और अन्य कृत्रिम है, दुर्ग कर्म यही है ।४१।

पुरंचखेटकंचंवताद्वद्द्रोणीमुखंद्विज ।
शाखानगरकंचापितथाखर्वटकंद्रदमी ।।४२
ग्रामसंघोषविन्यासांतेषुचावसथान्पृथक् ।
सोत्सेधवप्रणारंचसर्वतःपरिखावृताम् ।।४३
योजनार्द्धार्द्ध विष्कम्भमष्टममायतंपुरम् ।
प्राणुदक्वप्रणंशस्ताशुद्धवङ्गबहिर्गमम् ।।४४
तादर्द्धेनताथाखेटंतत्पादेनचखर्वटम् ।
न्यूनंद्रोणीमुखंस्मादष्टभागेनचोच्यते ।।४५

प्राकारपपिखाहीनंपुरंखर्वटमुच्यते ।
शाखानगरंकंचान्यन्मन्त्रिसामान्तभुक्तिमत् ।।४६
तथाशूद्रजतप्रायाःस्त्रसमृद्धकृषीवलाः ।
क्षेत्रोपभोग्यभूमध्येवसतिग्रामसंज्ञिता ।।४७
अन्यस्नान्नमरादेर्याकार्यमुद्दिश्यमानवैः ।
क्रियते वसतिः सावैविज्ञेयावसतिर्नरैः ।।४८
दुष्टप्रायोविनाक्षेत्रःपरभूमिचरोबली ।
ग्रामएवद्रमीसंज्ञाराजवल्लभसंश्रयः ।।४९

फिर उन्होने उन स्थानों में पुर, खेटक, द्रोणमुख, शाखानगर, खर्वटक, द्रमी ।४२। ग्राम संघोष की रचना की और उनमें पृथक्-पृथक् आवास गृह बनाये, जिनके चारो ओर प्राचीन खाइयाँ थीं ।४३। लम्बाई में दो कोश और उसके अष्टाँश चौड़ को पुर कहते हैं, इसका पूर्व और उत्तर भाग जल प्लावित होने के कारण उसमे बाहर जाने का मार्ग (पुल) होना चाहिये ।४४। पुर के अर्ध लक्षण वाले को खेटक, उससे अर्ध लक्षण वाले को खर्वटक तथा पुर के अष्टमांश लक्षण वाले को द्रोणमुखी कहते हैं ।४५। जिस पुर में दीवार तो है परन्तु खाई नहीं है, उसे खर्वट कहा गया है, जिसमें मन्त्रिगण और सामन्तादि रहते हों, उस विभिन्न प्रकार के भोग पदार्थ वाले को शाखानगर कहते है ।४६। जहाँ शूद्र अथवा अपनी-अपनी समृद्धि वाले कृषक रहते हों और जिसकेचारों ओर खेत आदि है, उसे ग्राम कहा गया है ।४७। किसी कार्यसे अन्यान्य नगरादि से जहाँ आकर लोग रहते हैं, उसे बसति कहते हैं ।४८। जिस ग्राम के मनुष्य दुष्ट प्रकृति के बलवान् और अपना खेत न होने पर पराये खेत पर अधिकार कर लेते हैं और जहाँ राजा के प्रिय लोग रहते हैं, वह ग्राम द्रुमी कहा गया है ।४९।

शकटारूढ़भाण्डैश्चगोपालैर्विपणंविना ।
गोसमूहैस्तथाघोषत्रेच्छाभूमिकेतनः ।।५०
तएवंनगरादींस्तुकृत्वावासार्थमात्मनः ।
निकेतानिद्वन्द्वानांचक्रश्चोपशमायवै ।।५१

गृहकारायथापूर्वंतेषामासन्महीरुहाः ।
तथासंस्मृत्यतत्सर्वंचक्रुर्गेश्मानिताःप्रजाः ॥२
वृक्षस्यस्यैवङ्गता शाखास्तथैवंचपरागता ।
नताश्चवीन्नताश्चैवतदच्छाखाःप्रचकिरे ॥५३
याःशाखाःकल्पवृक्षाणांपूर्वमासन्द्विजोत्तम ।
ताएवशांखागेहानाँशालात्वतेनतासुतन् ॥५४
कृत्वाद्वंद्वोपघातंतेवार्तोपायमचिंतयन् ।
नष्टेषुमधुनासार्द्धंक पवृक्षेष्वशेषतः ॥५५

जहाँ ग्वाले अपने बर्तन आदिको गाड़ी पर लादकर रखते हैं, जहाँ गौएँ अधिक रहती हैं, जहाँ बाजार न हो और भूमि धन के बिना ही मिल जाती हो, उसे घोष कहते हैं ।५०। इस प्रकार इन्होंने अपने निवासार्थ स्थान बनाकर द्वन्द्वों का शमन करने और व्यापार आदि के लिए गृहों का निर्माण किया, पहिले जो वृक्ष घरों के समान थे, उन्हीं के आधार पर बनाये गये ।५१।५२। जैसे वृक्ष की शाखाएँ एक के पीछे दूसरी तथा ऊँची-नीची होती हैं, उसी प्रकार घरों की रचना की गई ।५३। पहिले जो कल्पवृक्ष की शाखाएँ थी, उन शाखाओं ने सब घरो का शालात्व प्राप्त किया ।५४। जब इन शालाओं द्वारा उनके शीत उष्ण आदि दुःख नष्ट हुए, तब वह अपनी जीविकाके निर्वाहार्थ चिन्ता करने लगे, उस समय मधु के सहित सब कल्पवृक्ष नष्ट हो गए थे ।५५।

विषादव्याकुलास्तावैप्रजास्तृष्णाक्षुधार्दिताः ।
ततःप्रादुर्बभौतासांसिद्धिस्त्रेतामुखेतदा ॥५६
वार्त्तास्वसाधिताह्यन्यावृष्टिस्तासांनिकामतः ।
तासांवृष्टयुदकानीहयानिनिम्नगताविधै ॥५७
वृष्ट्यावरुद्धैरभवन्स्तोत्रःखातानिनिम्नगाः ।
येपुरस्तादयांस्तोकाआपन्नाःपृथिवीतले ॥५८
ततोभूमेश्चसंयोगादोषध्यस्तादाभवन् ।
अफालकृष्टाश्चानुमाग्राम्यरणणश्चतुर्दश ॥५९

ऋतुपुष्पफलाश्चैववृक्षागुल्माश्चजज्ञिरे ।
प्रादुर्भावत्तुत्रेनयामाद्योऽयंमौषधयस्तु ॥६०
तेनौषधेनवर्तन्तेप्रजास्त्रेतायुगेमुने ।
रातलोभौसमासाद्यप्रजाश्चाकस्मिकौतदा ॥६१
ततस्ताःपर्यगृह्णंतनदीक्षेताणिपर्वतान् ।
वृक्षगुल्मौषधीश्चैवमात्सर्याच्चयथाबलम् ॥६२
तेनदोषेणतानेशुरोषध्योमिषतांद्विज ।
अग्रसद्भूर्युगपत्तास्नदौषध्योमहामते ॥६३

तब वह सम्पूर्ण प्रजा विषाद और क्षुधा, पिपासासे अत्यन्त व्याकुल हो गई, क्योंकि त्रेता के प्रारम्भ में ही उनमे इस प्रकार की सिद्धि थी ।५६। उस समय उनके इच्छा करते ही वृष्टि होती और वर्षा का जल नीचे को गमन करता था ।५७। वर्षा का रुका हुआ जल स्रोत द्वारा गहराई करता हुआ नदी स्वरूप हो गया तथा प्रथम जो सामान्य जल पृथ्वी में गिरा ।५८। उस समय वह जल मिट्टी से मिलकर निर्दोष हो गया, इसमें ग्राम्य और आरण्य जो चौदह वृक्ष थे, वे सभी स्वयं उत्पन्न हुए थे ।५६। वह सब ऋतु में फल, पुष्प उत्पन्न करते थे । इस प्रकार त्रेता के प्रारम्भ मे सब औषधियाँ उत्पन्न हुई ।६०। हे मुने ! अकस्मात् राग और लोभ से युक्त हुए प्रजागण उन औषधियोंसे उत्पन्न हुए पदार्थ से ही त्रेता के प्रारम्भ में जीवन धारण करते थे ।६१। फिर जिससे देह अधिक बलशाली हो सके, इसलिए नदी, खेत, पर्वत, वृक्ष, गुल्म एवं सब औषधियों का अवलम्बन करने लगे ।६२। इसी दोष के कारण वह सभी औषधियां नष्ट होगयीं अर्थात् एक समयमें ही वह सब औषधियों पृथ्वी द्वारा ग्रास कर ली गयीं ।६३।

पुनस्तासुप्रणष्टासुविभ्रान्तास्तताःप्रजाः ।
ब्रह्माणंशरणंजग्मुक्षुधार्त्ताःपरमेष्ठिनम् ॥६४
सचापितत्वतोज्ञात्वातदाग्रस्तांवसुन्धराम् ।
वत्संकृत्वासुमेरुंतुदुदोहभगवान्विभुः ॥६५

दुग्धेयंगौस्तदातेनसस्यानिपथिवीतले ।
जज्ञिरेतानिबीजानिग्राम्यारण्यास्तुतःपुनः ॥६६
ओषध्यःफलपाकान्तागणाःसप्तदशस्मृताः ।
व्रीहयश्चयवाश्चंवगोधूमाअणवस्तिलाः ॥६७
प्रियंगुवःकोविदाराःकोरदूषासतीनका ।
माषामुद्गामसूराश्चनिष्पावा सकुलत्थकाः ॥६८
आढक्यश्चणकाश्चैवशण.सप्तदशस्तृता ।
इत्येताओषधीनःतुग्राम्याणांजितयःपुरा ॥६९

इस प्रका सब औषधियों के ग्रसित होने पर सम्पूर्ण प्रजा भ्रांतहुई और क्षुधातुर होकर ब्रह्माजी की शरण में गयी ।६४। तब उन ब्रह्माजी ने पृथ्वी को ग्रास करने वाली जानकर सुमेरु पर्वत को बछड़ा बनाकर दोहन किया ।६५। तब पृथ्वी अपने तल में समस्त धान्यों को दोहन कराने लगी, उससे सब जीवों की उत्पत्ति हुई और ग्राम तथा वृक्ष उत्पन्न हुए ।६६। फल पकने पर सूखने वाली सत्रह प्रकार की औषधियाँ उत्पन्न हुई उनके नाम व्रीहि, जौ, गेहूँ, तिल, कोदों ।६७। प्रियं गुफल, राई को विदार, लाल, कचनार, मटर,, उडद, मूँग, मसूर, लोबिया, कुलथी ।६८। अरहर और चना इन सत्रह जातियों की यह ग्राम्यौषधि उत्पन्न हुई ।६९।

औषध्योयज्ञियाश्चैयग्राम्यारण्याश्चतुर्दश ।
व्राहयश्चयवाश्चैवगोधूमाअणवस्तिलाः ॥७०
प्रियंगुषष्ठावैह्यं तेसप्तमास्तुकुलत्थकाः ।
श्यामाकास्त्वथनीवारायत्तिला.सगवेधुकाः ॥७१
कुरुविन्दामर्कटकास्तथावेणुयथाश्चये ।
ग्राम्यारण्याःस्मृताह्येताओषध्यश्चचतुर्दश ॥७२
यदाप्रमृष्टाओषध्योनप्ररोहन्तिताःपुनः ।
ततःसतासांवृद्धयर्थंवार्त्तोपायचकारह ॥७३
ब्रह्मास्वयंभूर्भगवान्हस्तसिद्धिंचकर्मजाम् ।
ततःप्रभृत्यथौषध्य कृष्टपच्यास्तुजज्ञिरे ॥७४

संसिद्धायांतुवार्त्तायांततस्तासांस्वयंप्रभुः ।
मर्यादांस्थापयामासयथान्यायंयथागुणम् ।।७५
वर्णानामाश्रमाणांचधर्मान्धिर्मभृतांवर ।
लोकानांसर्ववर्णानांसम्यग्धर्मार्थपालिनाम् ।।७६

जो चौदह प्रकार की ग्राम्य और आरण्यक औषधियाँ हैं, वह यज्ञ में व्यवहृत होती हैं ब्रीहि, जौ, गेहूँ, अणु, तिल ।७०। प्रियंगु, कुलथी श्यामक, अलसी, तिल तथा गवेधुक ।७१। कुलथी, मर्कटक, वेणु, यव, चावल यह चौदह प्रकार की औषधियाँ ग्राम्यारण्यक मानी गई हैं ।७२। इस प्रकार उन श्रेष्ठ औषधियों का उत्पादन रुक गया तब ब्रह्माजी ने उनके जीवन यापन का उपाय सोचने लगे ।७३। तब उन्होंने कर्म द्वारा सिद्ध होने वाली हस्त-सिद्धि को उत्पन्न किया, तभी से जोतने से उत्पन्न होने वाली औषधियों की उत्पत्ति हुई ।७४। इस प्रकार उनके जीवनका साधन हो जाने पर स्वय ब्रह्माजी ने न्याय और गुण के अनुसार उनकी मर्यादा बनाई ।७५। उस समय सब वर्णाश्रिमों का धर्म तथा धर्म और अर्थ का पालन करने वाले लोक-धर्म का निरूपण किया ।७६।

प्राजापत्यंब्राह्मणानमृतंस्थानंक्रियावताम् ।
स्थानमैन्द्रंक्षत्रियाणांस ग्रामेष्वपलायिनाम् ।।७७
वैश्यानांमारुतस्थानंस्वधर्ममनुवर्तताम् ।
गन्धर्वशूद्रजातीनांपरिचर्यानुवर्तिनाम् ।।७८
अष्टाशीतिसहस्राणामृषीणामूर्ध्वरेतसाम् ।
स्मृतंतेषांन्तुयत्स्थानतदेवगुरुवासिनाम् ।।७९
सप्तर्षीणांतुयत्स्थानंस्मृतंतद्वै वनौकसाम् ।
प्राजापत्यंगृहस्थानांसन्यासिनांब्रह्मणःक्षयम् ।
योगिनाममृतस्थानमितिवैस्थानकल्पना ।।८०

कर्मवान् ब्राह्मणोंके लिए उन्होंने प्राजापत्य स्थानकी कल्पना कीऔर युद्धसे विमुख न होने वाले क्षत्रियों के लिए ऐन्द्र स्थान नियत किया ।७७। स्वधर्म परायण वैश्योंके लिए मारुतस्थान औरसेवा करनेवाले शूद्रोंकेनिये

गाँधर्व स्थान बनाया ।७८। अट्ठासी सहस्र ऊर्ध्वरेता ऋषियों के लिए जो स्थान नियत किये गए, वही स्थान गुरु-गृह में निवास करने वाले ब्राह्मणों के लिए निश्चित हुए ।७९। सप्तऋषियों के लिए जिन स्थानों की कल्पना हुई वही स्थान वनवासियोंके लिए नियत किये गए, गृहस्थ के लिए प्रजापत्य, सन्यासियों के लिए अक्षय ब्राह्मपद तथा योगियों को अमृत स्वरूप मोक्ष स्थान कल्पित किया गया ।८०।

४२—यक्षानुशासन

ततोऽभिध्यायस्तस्यजज्ञिरेमानसी:प्रजा: ।
तच्छीपसमुत्पन्नै:कार्यैस्तै:कारणै:सह ।।१
क्षेत्रज्ञा:समवर्तन्तगात्रेभ्यस्तस्यधीमत: ।
तेसर्वेसमवर्तन्तयेमयाप्रागुदाहृता: ।।२
देवाद्य:स्थावरांताश्चत्रैगुण्यविषया:स्मृता ।
एवंभूतानिसृष्टानिस्थावराणिचराणिच ।।३
यदास्यता:प्रजा.सर्वानिव्यवर्द्धतधीमत: ।
अथान्यान्मानमान्पुत्रान्सदृशानात्मनोऽसृजत् ।।४
भृगुंपुलस्त्यपुलहंक्रतुमङ्गिरसंतथा ।
मरीचिंदक्षामत्रिचवसिष्ठचैवमानसम् ।।५
नवब्रह्मणइत्येतेपुराणेनिश्चयङ्गता: ।
ततोऽसृजत्पुनब्रह्मारुद्रंक्रोधात्मसम्भवम् ।।६
स ल्पचैवधर्मंचपूर्वेषामपिपूर्वजम् ।
सनन्दनादयोयेचपूर्वसृष्टा:स्वयंभुवा ।।७
नतेलोकेषुसज्जन्तौनिरपेक्षा:समाहिता: ।
सर्वेतेऽनागतज्ञानवीतरागाविमत्सरा: ।।८

मार्कण्डेयजी ने कहा—फिर ब्रह्माजीके दुबारा चिन्तन करने परउन के देहसे कार्य कारण वाली मानसी प्रजा की उत्पत्ति हुई ।१। उन ब्रह्माजी के शरीरसे सब क्षेत्रज्ञ उत्पन्नहुए और जो इनके अतिरिक्तउत्पन्न हुये उनके उल्लेख पहले ही किया जा चुका है ।२। देवताओंसे स्थावर तक सभीजीव त्रिगुणात्मक हैं, इस प्रकार स्थावर जगम चराचर प्राणियों की ब्रह्माजी ने उत्पत्ति की । ३। परन्तु जब ब्रह्माजी ने अपनी समस्त प्रजा की वृद्धि होती हुई न देखा, तब उन्होने अपने जैसेही मानस पुत्रोंकी सृष्टि की ।४। उन्होने भृगु, पुलस्त्य,पुलह,क्रतु अंगिरा,मरीचि,दक्ष,अत्रिऔर वसिष्ठ इन मानस पुत्रों को, उत्पन्न किया।५। ब्रह्माजीके यह नौ मानस पुत्र माने गए हैं,फिर उन्होने क्रोधात्मक रुद्रकी उत्पत्ति की।६। फिर संकल्प और धर्मको उत्पन्न किया जो कि पहिले से ही प्रकट है, उन्होंने पूर्व सृष्टिमें भी सनन्दनादि तथा स्वायंभुव को उत्पन्न किया।७।यह सभी भविष्यक जानने वाले, राग-रहित मात्सर्यहीन, निरपेक्षथे और समाधि युक्त बने रहे ।८।

तेष्वेवनिरपेक्षेषुलोकसृष्टौमहात्मनः ।
ब्रह्मणोऽभून्महाक्रोधस्तत्रोत्पन्नोऽर्कसन्निवः ।।९
अर्द्धनारीनरवपुःपुरुषोऽतिशरीरवान् ।
विभजात्मानमित्युक्त्वासतदान्तदधेततः ।।१०
सचोक्तोवैपृथक्स्त्रीपुरुषत्वंतथाकरोत् ।
विभेदपुरुषत्वचदशधाचैकधातुसः ।।११
सौम्यासौम्यैस्तथाशान्तै पुंस्त्वस्त्रीत्वचसप्रभुः ।
विभेदबहुधादेवःपुरुषैरमितैःशितैः ।।१२
ततोब्रह्मात्मसम्भूतपूर्वस्वायम्भुवप्रभुः ।
आत्मनःसदृशंकृत्वाप्रजापाल्यमनुं द्विज ।।१३
शतरूपांचतांनारींतपोनिर्धूतकल्मषाम् ।
स्वायम्भुवोमनुर्देवःपत्नीत्वेजगृहेविभुः ।।१४

सृष्टि कार्य मे उनके इस प्रकार निरपेक्ष रहने पर ब्रह्माजी अत्यन्त क्रोधित हुए और उस क्रोध से सूर्य के समान तेजस्वी एक पुरुष अविर्भूत

हुआ ।९। उसके शरीर का अर्द्धांग पुरुष और अर्द्धांग स्त्री था, फिर ब्रह्मा जी उससे अपने देह को विभाजित कर' कहते हुए अन्तंधान हो गए ।१० ब्रह्माजी की ऐसी आज्ञा पाकर उस पुरुष ने अपने शरीर के दो भाग किये, जिससे स्त्रीत्व और पुरुषत्व पृथक्-पृथक् हो गए, उसमे पुरुषाकार भाग को सौम्य, असौम्य, शान्त, असित सित आदि के भेद से ग्यारह भागों में बांटा ।११।१२। फिर ब्रह्माजी ने अपने समान पूर्वोत्पन्न उस पुरुष का नाम स्वायंभुव मनु रखा और उसे प्रजापालक बताया ।१३। और जिस स्त्री ने तप के द्वारा अपने पापों का क्षय किया था, उसका नाम 'शतरूपा' रखा, तब देव एवं विधु स्वायंभुव मनु से उस शतरूपा को अपनी भार्या बनाया ।१४।

तस्माच्चत्पुत्रौशतारूपाव्यजायतः ।
प्रियव्रतोत्तानपादौप्रख्यातवात्मकर्मभिः ॥१५
कन्येद्वे चतथाकूतिप्रसूतिच्चततः पिता ।
ददौप्रसूतिंदक्षायतथाकूतिंरुचेःपुरा ॥१६
प्रजापतिः सजग्राहतयार्यज्ञ सदक्षिणः ।
पुत्रोजज्ञमहाभागदम्पतीमिथुनततः ॥१७
यज्ञस्यदक्षिणायान्तुपुत्राद्वादशजज्ञिरे ।
यामाइतिसमाख्यातादेवाः स्वायंभुवेऽन्तरे ॥१८
तस्यपुत्रास्तुयज्ञस्यदक्षिणायांसुभास्वराः ।
प्रसूत्यांचतथादक्षश्चतस्त्राविंशतिस्तथा ॥१९
ससर्ज्जकन्यास्तासांचम्यङ्नामानिमेश्रृणु ।
श्रद्धालक्ष्मीर्धृतिस्तुष्टिः पुष्टर्मेधाक्रियातथा ॥२०
बुद्धिर्लज्जावपुशान्तिः सिद्धिकीर्तिस्त्रयोदशा ।
पत्न्यर्थैप्रपिजग्राहधर्मोदाक्षायणीः प्रभुः ॥२१

उस पुरुष के द्वारा शतरूपा के दो पुत्र हुए, उनमें से एक का नाम प्रियव्रत और दूसरे का नाम उत्तानपाद हुआ,इन दोनोंकी प्रसिद्धि अपने अपने कर्म से हुई ।१५। और शतरूपाके दो कन्याएँ आकूती और प्रसूती नामकी हुई । स्वयंभुव मनु ने प्रसूती को दक्ष के लिए और आकूती को

प्रजापति रुचि के लिए ।१६। अर्पण कर दिया, उनके एक पुत्र और एक पुत्री हुई उनका नाम यज्ञ और दक्षिणा रखा गया, वे दोनों 'दाम्पत्य सूत्र में बँध गये ।१७।उस दक्षिणासे यज्ञ के जिन बारह पुत्रों की उत्पत्ति हुई, वह स्वयंभुव मन्वन्तर में 'याम' देवता के नाम से प्रसिद्ध हुए ।१८। उसी दक्षिणा से भास्वर आदि अन्य अनेक पुत्र उत्पन्न हुए । उधर दक्ष ने प्रसूती के गर्भ से चौबीस ।१९। कन्यायें उत्पन्न कीं, उनके नाम सुनो श्रद्धा, लक्ष्मी,धृत्ति, तुष्टि, पुष्टि, मेघा, क्रिया ।२०। बुद्धि, लज्जा, वपु, शान्ति, सिद्धि इन तेरह दक्षसुताओं को धर्म ने अपनी पत्नी बना डाला ।२१।

ताभ्यःशिष्टायवीयस्यएकादशसुलोचना: ।
ख्यातिःसत्यथसम्भूतिःस्मृतिःप्रीतिस्तथाक्षमा ॥२२
सन्ततिश्चानसूयाचऊर्जास्वाहास्वधातथा ।
भृगुर्भवोमरीचिश्चतथाचैवाङ्गिरामुनिः ॥२३
पुलस्त्यपुलहश्चैवक्रतुश्चऋषयस्तथा ।
वसिष्टोऽत्रिस्तथावह्निपितरश्चयथाक्रमम् ॥२४
ख्यात्याद्याजगृहःकन्यामुनियोमुनिसत्तमाः ।
श्रद्धाकामंश्रीश्चदर्पनियमंधृतिरात्मजम् ॥२५
सन्तोपचतथातुष्टिर्लोभंपुष्टिरकायत ।
मेधाश्रुतक्रियादण्डंनयंविनयमेवच ॥२६
बोधबुद्धिस्तथालज्जाविनयवपुरात्मजम् ।
व्यवसायप्रजज्ञवैक्षेमंशान्तिरसूयत ॥२७
सुखंसिद्धिर्यशःकीर्तिरित्येतेधर्मयोनयः ।
कामादतिमुदहर्षंधर्मपौत्रमसूयत ॥२८

और ग्यारह-ख्याति, सती, सम्भूति, स्मृति, प्रीति;क्षमा।२२।सन्तति अनसूया, ऊर्जा, स्वाहा और स्वधा नाम से प्रसिद्ध थी, उन्हें भृगु इत्यादि ने क्रमशः ग्रहण किया ।२३। भृगु, शंकर मरीचि अङ्गिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, वसिष्ठ, अत्रि वह्नि और पितरगण ।२४। इन मुनियों, मुनिसत्तमों और ऋषियों ने ख्याति इत्यादि ग्यारह दक्षसुताओं को यथाक्रम ग्रहण

किया, श्रद्धा ने काम को उत्पन्न किया लक्ष्मी ने दर्प को घृति ने नियम को ।५। तुष्टि ने सन्तोष को, पुष्टि ने लोभ को, मेघ ने श्रुति को, क्रिया ने दण्ड को ।२६।बुद्धि ने बोध को लज्जा ने नियम को, वपु ने व्यवसाय को,शान्ति क्षेम को ।२७।सिद्धि ने सुख को और कीर्ति ने यश को जन्म दिया, धर्मकी यही संतान है। काम से हर्ष नामक धर्म के पौत्र की उत्पत्ति हुई ।२८।

हिंसाभार्यात्वधर्मस्यतस्यांजज्ञतथानुपम् ।
कन्याचानिऋ्तिस्तस्यांसुतौद्वौनरकभयम् ।।२६
मायाचवेदनाचैवमिथुनंद्वयमेतयोः ।
तयोर्जज्ञेऽथवैमायामृत्युभूतापहारिणम ।।३०
वेदनात्मसुतंचापिदुःखजज्ञेऽथरौरवात् ।
मृत्योर्व्याधिजराशोकतृष्णाक्रोधश्चजज्ञिरे ।।३१
दुःखोद्भवाःस्मृताह्येतेसर्वेवाधर्मलक्षणाः ।
नैषांभार्यास्तिपुत्रोवासवतेह्यूर्ध्वरेतसः ।।३२
निऋ्तिश्चतथाचान्यामृत्योर्भार्याभवन्मुने ।
अलक्ष्मीर्नामतस्यांचमृत्योःपुत्राश्चतुर्दशः ।।३३
अलक्ष्मीपुत्रकाह्येतेमृत्योरादेशकारिणः ।
विनाशकालेषुनरान्भजन्त्येतेश्रृणुष्वतान् ।।३४

अधर्म की पत्नी का नाम अहिंसा हुआ, उससे अनूप की उत्पत्ति हुई, अनृत ने न ऋतु नामकी पत्नी के गर्भ से दो पुत्र उत्पन्न किए, जिनके नाम 'नरक' और 'भय' हुए।२६।तथा माया और वेदना नामक दो कन्यायेंहुयीं इन पुत्र पुत्रियोंमें परस्पर मिथुनभावकी सृष्टि हुई। मायाके गर्भसे जीवोंका संहारक 'मृत्यु' नामक पुत्र उत्पन्न हुआ ।३०। तथा वेदना के गर्भसेनरकने दुःखनामक पुत्र उत्पन्न किया, मृत्युसे व्याधि, जरा शोक तृष्णा और क्रोध की उत्पत्ति हुई ।३१। दुःख के यह सभी पुत्र महाअधर्मी हुए, सब यह ऊर्ध्व रेता हैं, इसलिए इनके पत्नी या पुत्र नहीं हैं।३२।हे मुने! मृत्युकीनिःऋति नामक जोपत्नी थी वह अलक्ष्मी भी कही जातीहै, उससे मृत्युने चौदहपुत्रों की उत्पत्ति की ।३३। मृत्यु की आज्ञामें रहने वाले सब पुत्र 'अलक्ष्मी' ही

कहे जाते हैं। मृत्यु के समय यह मनुष्यों के जिस-जिस अंग में स्थित रहते, उनके नाम बताता हूँ, ॥३४॥

इन्द्रियेषु दशस्वेते तथा मनसि च स्थिताः ।
स्वेस्वे नरं स्त्रियं वापि विषये योजयन्ति हि ॥३५
अथेन्द्रियाणि चाक्रम्य रागक्रोधादिभिर्नरान् ।
योजयन्ति यथा हानि यान्त्यधर्मादिभिर्द्विज ॥३६
अहङ्कारगताश्चान्ये तथान्ते बुद्धिसंस्थिताः ।
विनाशाय नरस्त्रीणां यतन्ते मोहसंश्रिताः ॥३७
तथैवान्यो गृहेषु सादुःसहो नाम विश्रुतः ।
क्षुत्क्षामोऽधोमखो नग्नश्चीरी काकसमस्वनः ॥३८
स सत्रन्खादितुं सृष्टो ब्रह्मणतमसो निधिः ।
दंष्ट्राकरालमत्यर्थं विवृतास्यसुभैरवम् ॥३९
तमत्तुकाममाहेदं ब्रह्मा लोकपितामहः ।
सर्वब्रह्मयाशुद्धः कारणं जगतोऽव्ययः ॥४०
नात्तव्यं ते जगदिदं जहि कोपं शमं व्रज ।
त्यजैकां तामसीं वृत्तिमपास्य रजसः कलाम् ॥४१
क्षुत्क्षामोऽस्मि जगन्नाथ पिपासुश्चापि दुर्बलः ।
कथं तृप्तिमियां नाथ भवेयं बलवान्कथम् ।
कश्चाश्रयो ममाख्याहि वर्तेयं यत्र निर्वृतः ॥४२

उनमें से प्रथम दश तो दसों इन्द्रियों में निवास करते हैं ग्यारहवाँ मन के ऊपर रहता है और स्त्री-पुरुषों को अपने-अपने विषय में संयुक्त करता है।३५। फिर रागादि के द्वारा सब इन्द्रियों को आक्रान्त कर अधर्म आदि से मिला देता है, जिससे उनकी अत्यन्त हानि होतीहै।३६। मृत्यु का बारहवाँ पुत्र अहंकार में रहता है, तेरहवाँ पुत्र जीवों की बुद्धि पर रहता है इससे मोहित हुए मनुष्य स्त्रियोंको नष्ट करनेका प्रयत्न करते हैं।३७। और चौदहवाँ अलक्ष्मी-पुत्र जिसे दुःसह कहते है यह घर-घर में रहकर सदा क्षुधातुर, अधोमुख, नग्नचीरधारी और कौएके समान शब्द करता है।३८

प्रतीत होता है कि ब्रह्माजीने इस तमसोनिधि को सर्व पदार्थोंका भक्षण करने के लिए ही उत्पन्न किया है। फिर उस दु:सह को कराल दष्ट्रा, फैले हुए मुख मे भयङ्कर शब्द करते हुए।२९। तथा सबको भक्षण करने के लिये तत्पर देखकर जगत् के कारण रूप अविनाशी पितामह ब्रह्मा जी बोले।४०। ब्रह्माजी ने कहा—हे दु:सह ! ससार को भक्षण करना तुम्हारे लिए अनुचित है, तुम क्रोध को छोड़कर शान्त होओ, इस तमोगुणी वृत्ति और रजोगुण के अंश का परित्याग करो।४१। दु:सह ने कहा—हे जगन्नाथ ! मैं क्षुधा के कारण अत्यन्त कृश और पिपासा के कारण दुर्बल हो गया हूँ, मैं किस प्रकार तृप्त, तथा बलवान् होऊँ और जिसके आश्रय में सुखपूर्वक रहूँ, यह कृपापूर्वक बताइए।४२।

तवाश्रयोगृहं पुंसांजनश्चाधार्मिकोबलम् ।
पुष्टिर्नित्यक्रियाहान्याभवान्यत्सगमिष्यति ॥४३
लूता:स्फोटाश्चतेवस्त्रम हारंचददामिते ।
क्षुतकीटापन्नंचतथाश्वभिरवेक्षितम् ॥४४
भग्नभाण्डगतंद्वन्मुखवातोपशामितम् ।
उच्छिष्ठापक्कम्स्वन्नमवलीढमसंस्कृतम् ॥४५
भग्नासनास्थतेभुक्तमासन्नगतमेवच ।
विदिङ्मुखसन्ध्ययोश्चनृत्यवाद्यस्वनाकुलम् ॥४६
उदक्यापहतमुक्तमुदक्याद्दष्टमेवच ।
यच्चापधातवर्त्किचिद्भक्ष्यपेनमथापिवा ॥४७
एतानितवपुष्टयर्थंमन्यच्चापिददामिते ।
अश्रद्धयाहुतंदत्तंमस्नातैर्यदवज्ञया ॥४८
यन्नाम्बुपूर्वकंक्षिप्तमनात्मीकृतमेवच ।
त्यक्तुमाविष्कृतयत्तु दत्तंचवातिविस्मयात् ॥४९

ब्रह्माजी ने कहा—हे वत्स ! पुरुषों का घर तुम्हारा आश्रय स्थान, अधर्मी मनुष्य तुम्हारा बल तथा नित्यकर्म की हानि ही तुम्हारे लिए पुष्टि होगी।४३। मकड़ी के जाले और सयस्फोट तुम्हारे वस्त्र हैं, अब मैं तुम्हें आहार देता हूँ, जिस घाव में कीड़े उत्पन्न हो गए और जिसे

कुत्ते ने देख लिया है, ऐसे व्रण का स्वामी तुम्हारे आहार स्वरूप है ।४४। फूटे पात्र में रखा हुआ पदार्थ अथवा जो पदार्थ मुख की फूँक से ठंडा किया गया हो, उच्छिष्ट या कच्चा अथवा संस्कार रहित हो ।४५। अथवा फटे आसन पर बैठकर या अतिथि को भोजन दिये बिना अथवा दक्षिण की ओर मुख करके या संध्या के समय नृत्य के समय गायन-वादन के समय जो पदार्थ खाया जाय ।४६। अथवा रजस्वला स्त्री द्वारा देखा या छुआ, किसी का भी झूठा अथवा दोष युक्त पका हुआ भोजन ।४६। यह सब पदार्थ तुम्हारे खानेके योग्य और पुष्टि करने वाले होंगे। तुम्हारी पुष्टि के लिए और भी प्रदान करता हूँ। जो स्नान किये बिना अश्रद्धा से हवन किया जाय या अज्ञानी मनुष्यों के द्वारा दान किया जाय ।४८। जो वस्तु जल स्पर्श के बिना दी गई हो व्यर्थ पड़ी हुई हो, जो विस्तार की गयी हो या भय से दी गई हो ।४९।

दुष्टंक्रुद्धार्तदत्तंचयक्षमन्प्राप्स्यसितत्फलम् ।
यच्चपौतर्भवःकिंचित्करोत्यामुष्मिकंक्रमम् ॥५०
यच्चपौनर्भवायोषित्तद्यक्षमतवतृप्तये ।
कन्याशुल्कोपधानापसमुपास्तेधनक्रियाः ॥५१
तथैवयक्षमपृष्टचर्थमसच्छास्त्रक्रियाश्चयाः ।
यच्चार्थंनिबृंतौकिंचिदधीतयन्नसत्यतः ॥५२
तत्सर्वंतवकामांश्चददामितवसिद्धये ।
गुर्विण्यभिगमेसन्ध्यानित्यकार्यव्यतिक्रमे ॥५३
असच्छास्त्रक्रियालापदूषितेषुचदुःसह ।
तवाभिभ ासामथयभविष्यतिसदानृषु ॥५४
पङ्क्तिभेदेवृथापाकेपाकभेदेतथाकृते ।
नित्यंचगेहकलहैर्भवितावसतिस्तव ॥५५
अपोष्यामाणेचतथाभृत्यगोवाहनादिके ।
असन्ध्याभ्युक्षितागारेकालेत्वत्तोभयंनृणाम् ॥५६

दुष्ठ,क्रोधित या आर्त्त मनुष्यों द्वारा दीगई हो। ऐसीसब वस्तुओंका भोग करो। हेयक्ष! यहतुम्हारेवशमें कीगई। जोकार्य दूसरीवार विवाहित

हुई स्त्री के पुत्र द्वारा परलोक की सिद्धि के लिए किया गया हो ।३०। अथवा दूसरी बार विवाहित स्त्री जो कर्म करे, उससे तुम्हारी ही तृप्ति होगी अथवा कन्या के वदले द्रव्य लेकर जो धर्म कार्य किया जाय ।५१। या जो क्रिया मिथ्या धर्मशास्त्र द्वारा संपादनकी जाय, वह भी तुम्हारी ही पुष्टि के लिए दिया । असत्यता से पढ़ा हुआ अर्थ प्राप्ति के लिए जो कार्य हैं ।५२। वह भी तुम्हारी पुष्टि का कारण बनेगा, अब तुम्हारी सिद्धि का समय कहता हूँ—जब गर्भवती नारी से समागम किया जाता है, तब संध्या और नित्य कर्म का व्यतिक्रम होता है ।४३। तथा जब मिथ्या शास्त्र द्वारा कहे गए कार्य द्वारा मनुष्य दोष युक्त होते है, तब उनका तिरस्कार करने में तुम सामर्थ होगे ।५४। जहाँ पंक्ति में भेद किया जाय, जहाँ वृथा पाक बनाया जाय और जहां सदैव क्लेश रहता हो तुम्हारा निवास वहीं होगा ।५५। जिन गृहोमे गौ अश्वादि अन्नतृण के बिना भूखे बँधे रहते हैं और सूर्यास्त से पहिले बुहारी नही लगती, उन घरों के मनुष्य तुमसे डरेगे ।५४।

नक्षत्रग्राहपीडासुत्रिविधोत्पातदर्शने ।
अशान्तिकपरान्यक्ष्मन्नरानभिभविष्यसि ।।५७
वृथोपवासिनोमर्त्याद्यूतस्त्रीपुसदारताः ।
त्वद्भाषणोपकर्त्तारोबैडालब्रतिकाश्चये ।।५८
अब्रह्मचारिणाधीतमिज्याचाविदुषाकृता ।
तपोवनेग्राम्यभुजातथवानिर्जितात्मनाम् ।।५६
ब्राह्मणक्षत्रियविशांशूद्राणांचस्वकर्मतः ।
परिच्युतानांयाचेष्टपरलोकाथमीप्सताम् ।।६०
तस्वाश्चयत्फलसंवंर्तत्ते यक्ष्मन्भविष्यति ।
अन्यच्चतेप्रयच्छामिपुष्टयर्थसंनिबोधत त् ।।६१
भवतोवैश्वदेवान्ते नामोच्चारणपूर्वकम् ।
एतत्तवेतिदास्यन्तिभवतोबलिमूर्ज्जितम ।।६२
यःसंस्कृताशीनिधिच्छूचिरन्तस्यथाबहिः ।
अलोलुपोजितस्त्रीकस्तद्गेहमपवजय ।।६३

नक्षत्र या गृह की पीड़ा या त्रिविध उत्पातों के दिखा देने पर जो उनकी शान्ति का उपाय नहीं करते, तुम उन मनुष्यों को घेरे रहोगे ।.७। वृथा उपवास करने वाले, द्यूत और स्त्री में असक्ति रखने वाले तुम्हारे ही उपकारी हैं । जो बिल्ली के समान अपने प्रयोजन में लगे रहते हैं ।५८। या जो ब्रह्मचर्य के बिना ही वेदपाठ करते है, मूर्ख होते हुए भी यज्ञ करते हैं तथा तपोवन मे गृहस्थ धर्म जैसा आचरण करते है, चंचल चित्त और असंयम पूर्वक अध्ययन ।५६। तथा अपने कर्म से भ्रष्ट होकर पारलौकिक सुख की इच्छा वाले ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यऔर शूद्रों द्वारा तपोवन में किए जाने वाले कर्म ।६०। तथा इन कार्यों का जो फल है वह सभी तुम्हारे वश में हैं । तुम्हारी पुष्टि के लिए और भी प्रदान करता हूँ ।६१। जो वैश्वदेव के अन्त में तुम्हारा नाम लेकर 'यह तुम्हारा है, ऐसा कहते हुए तुम्हें अर्जित बलि देते हैं ।६२। परन्तु जो मनुष्य संस्कार युक्त पदार्थोंका भोजन करते और बाहर भीतरसे पवित्र तथा निर्लोभ हैं, जिन्हें स्त्रियाँ अपने वश में नहीं कर सकती, उनके घरों को तुम छोड़ देना ।६३।

पूज्यन्तेहव्यकव्याभ्यांदेवता.पितरस्तथा ।
ज्ञामयोऽतिथयश्चापितद्गेह यक्षमवर्जय ।।६४
यत्रमैत्रींगृहेबालवृद्धयोषिन्नरेषुच ।
तथास्वजनवर्गेषुगृहं तच्चापिवर्जये ।।६५
योषितोऽभिमतायत्रनबहिर्गमनोत्सुकाः ।
लज्जान्विताःसदागेहं यक्षमतत्परिवर्जय ।।६६
वयःसम्बंधयोग्यानिशयनान्यशनानिच ।
यत्रगेहेत्वयायक्षमतद्वर्ज्यवाचनन्मम ।।६७
यत्र तारुणिकानित्यंसाधुकर्मण्यवस्थिताः ।
समान्योपस्करैर्युक्तास्त्यजेथायक्षमतद्गृहम् ।।६८
यत्रासनस्थास्तिष्ठत्सुगुरुवृद्धद्विजातिषु ।
नतिष्ठन्तिगृहं तच्चवर्ज्यंयक्षमत्वयासदा ।।६९

तरुगुल्मादिभिर्द्वारं नविद्धं यस्यवेश्मनः ।
ममभेदोनवापुं सस्तस्छेयोभवनं नते ।।७०

जिस घर में देवता और पितर सदा हव्य कव्य द्वारा तृप्त रहते हैं और जहाँ अतिथियोंकी पूजा है, उस घरका भी परित्याग कर दो ।६४। जिस घर में बालक, वृद्ध, युवक, युवती, और स्वजन आदि सदा मैत्री भाव से रहते हैं उस घर को भी छोड़ दो ।६५। जिस गृह की नारियाँ अनुरक्ता हैं तथा घर से बाहर जाने की इच्छा नहीं करती और सदा लज्जावती रहती हैं, वह घर भी तुम्हारे रहने योग्य नहीं ।६६। हे यक्ष ! जिस घर के लोग अपनी अवस्था और वैभव के अनुसार ही शयन या भोजन करते हों वह घर भी तुम्हारे लिए त्याज्य है ।६७। जिस घर के मनुष्य कल्याण युक्त, सत्कार्य में तत्पर और सामान्य सामग्री से परिपूर्ण हैं, वह भी तुम्हें त्याग देना चाहिये ।६८। जहाँ के मनुष्य गुरुवृद्ध, और ब्राह्मणों के आसन पर बैठ जाने परभी आसन ग्रहण नहीं करते उसघर को सदा के लिए छोड़ दो ।६९। जिस गृहका द्वार वृक्ष गुल्मादि के द्वारा अवरुद्ध न हो और जहाँ कोई किसीके प्रति मर्मभेदी वाक्यों का उच्चारण न करता हो, उस श्रेष्ठ गृह में भी तुम्हें न जाना चाहिये ।७०।

देवतापितृभृत्यानामतिथिनांचवर्तनम् ।
यस्यवशिष्टेनान्नेपुंसस्तस्यगृहं त्यज ।।७१
सत्यावाक्यान्क्षमाशीलोनहिंस्रान्नानुतापिनः ।
पुरुषानीदृशान्यक्ष्मत्यजेथाश्चानसूयकान् ।।७२
भर्तृशुश्रूषणेयुक्तासमत्स्त्रस्त्रीङ्कवर्जिताम् ।
कुटुम्बभर्तृशेषान्नपुष्टांचत्यजयोषितम् ।।७३
यजनाध्ययनाभ्यासदानासक्तमतिसदा ।
याजनाध्यापनादानकृतवृत्तिद्विजंत्यज ।।७४
दानाध्ययनयज्ञेषुसदोद्युक्तं चदुःसह ।
क्षत्रयंत्यजसच्छुल्कशस्त्राजीवात्तवेतनम् ।।७५

त्रिभि.पूर्वंगुणैयुक्तं पाशुपाल्यवणिज्ययोः ।
कृषेश्चावाप्तवृत्तिचत्यतवैश्यमकल्मषम् ।।७६
दानेज्याद्विजाशुश्रूषातत्परंयक्षमसंत्यज ।
शूद्रंचब्राह्मणादीनांशुश्रूषावृत्तिपोषकम् ।।७७

जो पुरुष देव, पितर, मनुष्य और अतिथि को भोजन कराकर ही शेष अन्न का भोजन करता है, उसका घरभी तुम्हें त्याग देना चाहिए। ।७१। हे यक्ष ! जो सत्यभाषी, क्षमावान्, अहिंसक, अनुतापहीन तथा असूयारहित हैं, उन मनुष्यों के यहां मत जाना ।७२। जो नारी सदैव पतिसेवा में तत्पर है और असती स्त्री के संग नहीं रहती और कुटुम्ब तथा पति के अन्न से पुष्टि को प्राप्त होती है ऐसी स्त्री के पास कभी मत जाना ।७३। जो ब्राह्मण यजन, अध्ययन, अभ्यास और दानादि के विषय में दत्तचित्त है तथा यज्ञ, अध्यापन और दान के प्रतिग्रहसे जीविकोपार्जन करते हैं, उन ब्राह्मणों का परित्याग करो ।७४। जो क्षत्रिय सदा दान, अध्ययन और यज्ञ में तत्पर रहते हैं तथा शास्त्रजीविका से प्राण रक्षा करते हुए वेतन मात्र ग्रहण करते हैं, वे भी तुम्हारे द्वारा त्याज्य है ।७५। जो वैश्य पहिले कहे गये तीन गुणोसे युक्त है, पशुपालन व्यापार, और कृषि कर्म द्वारा अपनी जीविकोपार्जन करते हैं, उन निष्पाप वैश्यों का भी परित्याग करो ।७६। जो शूद्र दान, यज्ञ और ब्राह्मण सेवा में तत्पर और ब्रह्मणादि की सेवा-वृत्ति से निर्वाह करते हैं, उन शूद्रों को भी त्याग दो ।७७।

श्रुतिस्मृत्यविरोधेनकृतवृत्तिर्गृहेगृही ।
यत्रयत्रतत्पत्नीचतस्यैवानुगतात्मिका ।।७८
यत्रपुत्रोगुरोः पूजांदेवानांचतथापितुः ।
पत्नीचभर्तुः कुरुतेतत्रायक्षमोभयंकृतः ।।७९
सदानुलिप्तंसन्ध्यासुगृहमम्बुसमुक्षितम् ।
कृतपुष्पबलियक्षमनत्वशक्नोषिवीक्षितुम् ।।८०
भास्कराहष्टाशय्यानिनित्याग्निसलिलानिच ।
सूर्यावलोकदीपानिलक्ष्म्यागेहानिभाजनम् ।।८१

यत्रोक्षाचन्दनवीणाआदर्शोमधुसर्तिषी ।
विषाज्यताम्रपात्राणितद्गृहं नतवाश्रय: ।।८२
यत्रकण्टकिनोवृक्षायत्रनिष्पाववल्लरी ।
भार्यापुनर्भूर्वल्मीकस्तद्यक्ष्मतवमन्दिरम् ।।८३
यस्मिन्गृहेनरा:पंचस्त्रीत्रयंतावतोश्गां: ।
अन्धकारेन्धनाग्निश्चतद्गृहवसतिस्त्वव ।।८४

जो मनुष्य घर में रहकर श्रुति स्मृति समस्त जीवन निर्वाह करते है और उनकी भार्या भी उन्हीं का अनुसरण करती हैं ।७। जिस गृह मे पुत्र अपने देवता, पितर और गुरु की पूजा तथा स्त्रियाँ पतिसेवा करती हैं, वहाँ अलक्ष्मीका भय किस प्रकारहो सकता है ? ।७८। तीनों संध्याओं के समय जो घर लीपा जाय या जल छिड़ककर पवित्र किया जाय और जहाँ सुगन्धित पुष्पों द्वारा देवताओं को वन्दिी जाय, तुम उस गृह को देख भी न सकोगे ।८०। जिस घर की शय्या को सूर्य न देखते हों अर्थात् सूर्योदय के समय तक जहाँ कोई शयन न करता हो, तथा जो घर सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित रहता हो और जिस घर में अग्नि और जल विद्यमान रहते हों, वह घर लक्ष्मी का ही निवास स्थान है ।८१। जिस घर में चन्दन, वीणा, दर्पण मधु, घृत और ताम्रपात्र विद्यामान हो वह घर तुम्हारा आश्रय स्थान कदापि नही हो सकता ।८२। जिस घर में कांटेयुक्त वृक्ष: निष्पाववल्लरी, दुबारा व्याही हुई पत्नी और वल्मीक बाँवी, हो उस घर को तुम अपना ही समझो ।८३। जिस घर में पाँच पुरुष और तीन स्त्री तथा तीन गौ, अँधेरा, काष्ट और अग्नि हो, वही घर तुम्हारा निवास स्थान होगा ।८४।

एकच्छागंद्विबालेयत्रिगवंपश्चमाहिषम् ।
षडश्वंसप्तमातङ्गंगृहंयक्ष्माशुशोषय ।।८५
कुद्दालदात्रशिटकतद्वत्स्थाल्यादिभाजनम् ।
यत्रतत्रैवक्षिप्तानितवदु:प्रतिश्रयम् ।।८६
मुशलोलखलेस्त्रीणामास्यातद्वदुदुम्बरे ।
अयस्करेमन्त्रणाययक्ष्मतदुपक्रुत्तम ।।८७

लंध्यन्तेयत्रधान्यानिपक्वानिश्वेमनितथा ।
तद्वच्छास्त्राणितत्रत्वयथेष्टंचरदुःसाह ॥८८
स्थालीपिधानेयत्राग्निर्दत्तदर्व्वीफलेनवा ।
गृहेतत्रह्यरिष्टानामशेषाणांसमाश्रयः ॥८९
मानुषास्थिगृहेयत्रदिवारात्रंमृतस्थितिः ।
यत्रयक्षमतवबासस्तथान्येषांचरक्षसाम् ॥९०
अदत्वाभुञ्जतेयेवैंबन्धोःपिंडंतथोदकम् ।
सपिण्डान्सोदकांश्चैवतत्कालेतान्नरान्भज ॥९१

हे यक्ष ! जिस घर मे एक बकरी दो स्त्री, तीन गौ, पाँच भैंस, छः अश्व, सात हाथी हो, उस घर का शीघ्र ही शोषण करो।८५। जिस घर में कुदाल, दरांत पीढ़ा थाली इत्यादि वस्तुएँ इधर-उधर बिखरी पड़ी रहती हों वहाँ के मनुष्य तुम्हें निवास देना चाहते हैं ।८६। जिस घरमें स्त्री मूसल या ओखली पर बैठकर या आंगन मे गूलर के नीचे बैठकर घर के पीछे रहने वाली स्त्री से बातें करने लगी रहती है, उसके वे कार्य तुम्हारा उपकार करने वाले है।८७।जिस घर मे पक्के या कच्चे धान का अनादर और सत्शास्त्र का तिरस्कार होता है, उस घर मे स्वेच्छा पूर्वक भ्रमण करो ।८८। जिस घर में थाली, ढकना अथवा करछुली से स्त्री को अग्नि देती हो वह घर सम्पूर्ण अरिष्ट का निवास स्थान है ।८९। जिस घर मे मृत पदार्थ या मनुष्य की हड्डी रात दिन विद्यमान रहे वहाँ सभी राक्षसो का निवास होगा ।९०। जब मनुष्य बन्धु, सपिंड या समानोदक पुरुषों को पिण्ड या जल नहीं देते, तुम उस समय उनकी कामना करो ।९१।

यत्रपद्ममहापद्मोसुरभिर्मोदकाशिनी ।
वृषभैरावतोयत्रकल्प्यंतेतद्गृहंत्यज ॥९२
अशक्ताःदेवतायत्रसशक्तश्चाहवंविना ।
कल्प्यन्तेमनुजरथ्यास्तत्परित्यजमन्दिरम् ॥९३
पौरजानपदैर्यत्रप्राक्प्रसिमहोत्सवाः ।
क्रियन्ते पूर्ववद्गेहेनत्वंतत्रगृहेचर ॥९४

शूर्पवातघटाम्भोमःस्नानंवस्त्राम्बुणविप्रुषैः ।
पदाग्रसलिलैश्चैवतानाहिहतलक्षणान् ।।६५
देशाचारान्समयात्र्जातिधर्मंजपंहोमंमङ्गलदेवतेष्टिम् ।
सम्यक्छौचंविधिवल्लोकवापान्पुंसस्त्वयाकुर्वतोमाऽतुसङ्गः ।६६
इत्युक्त्वादुःसहं ब्रह्मातत्रैवान्तरधीयत ।
चकारशासनसोऽपितथापंकजजन्मनः ।।६७

जिस घर में पद्म और महापद्म विद्यमान हैं, स्त्रियाँ सदा मोदक खाती हैं तथा जहाँ बैल और ऐरावत भी है तुम उस घर को छोड़ दो ।६२। जहाँ अशस्त्र देवता बिना युद्ध के ही सशस्त्र देवता के समान पूजे जाते हैं, तुम उस मन्दिर को भी छोड़ दो ।६३। जिन घरों या पुरों में तथा जनपदों में सदा महोत्सब होते रहते हैं, तुम कभी मत जाना ।६४। जो मनुष्य सूप की वायु, कलश के जल, वस्त्र के निचोड़े हुये जल तथा पादाग्र से स्पर्श जल से स्नान करते हैं उन ही लक्षणों के पास जाओ ।६५। जो मनुष्य देशाचार समय, जाति, धर्मजप, हवन, मङ्गल कार्य, देवपूजन, विधिवत् शौच अथवा सव लोकाचार का पालन करते हैं, उनसे तुम्हारा संग नहीं हो सकता ।६६। मार्कण्डेयजी ने कहा—हे विप्रबर ! इस प्रकार दुःसहको आदेश देकर ब्रह्माजी वहींपर अन्तर्धान हो गये और और वह दुःसह भी उनकी आज्ञाको उसी प्रकार पालने लगा ।६७।

४३—दौःसहोत्पत्ति

दुःसहस्याभवद्भार्यानिमर्ष्टिर्नामनामतः ।
जाताकलेस्तुभार्यायामृताच्चाण्डालदर्शनात् ।।१
तयोरपत्यान्यभवञ्जगव्द्यापीनिषोउडश ।
अष्टोकुमाराःकंन्याश्चतथाष्टावतिभीषणाः ।।२
दन्ताकृष्टिस्तणोक्तिश्चपरिवर्तस्तथापरः ।
अङ्गध्रुक्छकुनिश्चैवगण्डप्रान्तरतिस्तथा ।।३

गर्भहाशस्यहाचान्यः कुमारास्तनयास्तयोः ।
कन्याश्चान्यान्तथवाष्टौतासांनामामिमेश्रृणुः ।।४
नियाजिकावप्रथमातथैवान्याविरोधिनी ।
स्वयंहारकरीचैंवभ्रामणीऋतुहारिका ।।५
स्मृतिबीजहरेचान्येतयोः कयेसुदारुणे ।
विद्वेषण्यष्टमीनामकन्यालोकभयावहा ।।६
एतासांकर्मवक्ष्याम्दिोषप्रशमनैचयत् ।
अष्टानांचकुमाराणांश्रूयतांद्विजसम ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा—दुःसह की पत्नी निर्मार्ष्टि थी, जो यम की पुत्र थी। जब यमपत्नीं ऋतुमती हुई, उस समय उसने चाण्डाल को देखा, उस गर्भ से निर्मार्ष्टि उत्पन्न हुई ।१। फिर निर्मार्ष्टि के गर्भ से दुःसह के द्वारा अत्यन्त भीषण आकार वाली सोलह सन्तानें हुयीं, जिनमें आठ पुत्र, आठ कन्यायें हुयीं ।२। दन्ताकृष्टि, तथोक्ति परिवर्त्तक अङ्ग ध्रुक शकुनि, गंड, प्रतिरिता ।३। गर्भहा, और शस्यहा नामक आठ पुत्र हुए अब आठ कन्याओं के नाम सुनो ।४। नियोजिका विरोधिनी, स्वयंहार-करी, भ्रामणी, ऋतुहारिका ।५। स्मृतिहर और बीजहरा यह दोनों अत्यन्त भयंकर हुई तथा आठवीं विद्वेषिणी थी, वह लोकों के लिए अत्यन्त भयावह थी ।६। हे द्विजोत्तम ! अब उन आठ पुत्रोंके कर्म और उनकी दोष-शक्ति का उपाय कहता हूँ, उसे सुनो ।७।

दन्ताकृष्टिः प्रसूतानांबालानांदशनस्थितः ।
करोतिदंतसंघर्षंचिकीर्षुर्दुः सहागमम ।।८
तस्योपशमनंकार्य्यंसुप्तस्यसितसर्षपैः ।
शयनस्योपरिक्षिप्तैर्मानुषैदंशनोपरि ।।९
सौवर्चलोषधोस्नात्तथासच्छास्त्रकीर्त्तनात् ।
उष्ट्रागण्टकगात्रास्थिक्षौमवस्त्रविधारणात् ।।१०
तिष्ठत्यन्यकुमारस्तुतथास्त्वियसक्तद्ब्रुवन् ।
शुभाशुभोनृणांयुङ्क्तेतथोक्तिस्तच्चनान्यथा ।।११

तम्माददुष्ठं मङ्गल्यमुक्त्वायंपण्डितैःसदा ।
दुष्टेश्च तेतथोवोक्तेकीर्त्तनायोजनार्दनः ॥१२
चराचरागुरुब्रह्मायामस्यकुलदेवता ।
अन्यगर्भेपरान्गच्छन्सदैवपरिवर्तयन् ॥१३
रतिमाप्नोतिवाक्यचविवक्षोरन्यदेवयत् ।
परिवर्त्तकसंज्ञोऽयतस्यापिसितसर्षपैः ॥१४

दान्ताकृष्टि उत्पन्न हुए बालक के दांतों को किड़किड़ाता है और दु:सह भी दन्ताकृष्टि के आश्रय से वहाँ आ जाता है ।८। इसकी शान्ति का उपाय कहते हैं,—सोते हुए बालक के दांतो और शय्या पर सरसों डालें ।९। अथवा औषधि-जल से स्नान करावे, सत् शास्त्रों का कीर्तन करावे तथा ऊँट या गेंडे की अस्थिका यत्र बनाकर बालक के कण्ठ में डाले अथवा रेशमी वस्त्रधारण करावे ।१०। दूसरा पुत्र तथोक्ति 'यही हो कहता हुआ सब मनुष्यों के शुभ अशुभ में लगता हैं, इसमे असत्य नहीं है, ।११। इसकी शान्ति के लिए श्रेष्ठत्व और मङ्गल का प्रकाश करते हुए भगवान् जनार्दन का नाम—संकीर्तन करे ।१२। अथवा चराचर विश्व के श्रीब्रह्माजी का नाम कीर्तन अथवा अपने कुल देवता का ही स्मरण करें । परिवर्त्तक नामक तृतीय पुत्र अन्य गर्भ मे अपर गर्भ स्थापना ।१३। और एक प्रकारके वचनोंको अन्य प्रकार से कहनेसे प्रसन्न होता है, उसकी शांति के लिए भी श्वेत सरसें विखेरनी चाहिए ।१४।

रक्षोघ्नमंन्त्रजप्यैश्वरक्षांकुर्वीततत्त्ववित् ।
अन्यश्चानिलवन्नृणातङ्गेषुस्फुरणादितम् ॥१५
शुभाशुभंसमाचष्टेकुशैस्तस्याङ्गताडनम् ।
काकादिपक्षिसंस्थोऽन्यःश्वादेरंगगतोऽपिवा ॥१६
शुभाशुचशकुनिकुमारोऽन्योब्रवीतिवै ।
तत्रापिदुष्टेव्याक्षेपःप्रारम्भत्यागएवच ॥१७
शुभेद्रुततरंकार्यमितिप्राहप्रजापतिः ।
गण्डान्तेषुस्थितश्चान्योमुहूर्तार्द्धं द्विजोत्तम् ॥१८

सर्वारम्भान्कुमारोऽस्तिशमतस्यनिशामय: ।
विप्रोक्त्यादवतास्तुत्यामूलोत्खातेनचद्विज ।१९
गोमूत्रसर्षपस्नानस्तद्दृक्षग्रहपूजनैः ।
पुनश्चधर्मोपनिषन्करणःशास्त्रदर्शनैः ।२०
अवज्ञयाजन्मनश्चप्रशमयातिगण्डवान् ।
गर्भस्त्रीणांतथाऽमन्यस्तुमललाशीसुदारुणः ।२१

अथवा ज्ञानीजन रक्षोघ्न मंत्र के जप से रक्षा करें, चौथा अंगध्रुक नामक पुत्र मनुष्य के अंग में वायु के समान स्पंदन ।१५। और लोभ-हर्षण करके शुभाशुभ बताता है, उसकी शान्ति के लिए शरीर में कुशा से आघात करे। पाँचवां पुत्र शकुनी काकादि पक्षी तथा श्वान या गीदड़ के देहमे प्रविष्ट रहकर ।१६। मनुष्य के शुभ-अशुभ को व्यक्त करता है, यदि अशुभ लक्षण प्रकाशित हो तो सभी कार्यका आरम्भ छोड़ दे ।१७। और यदि शुभ लक्षण दिखायी पड़े तो कार्यारम्भ में अत्यन्त शीघ्रता करे। छठवाँ पुत्र गण्डान्तरित आधे मुहूर्त्त गण्डन्त मे निवास करे ।१८। सभी मंगलमय कार्य, अनिन्द्यता आदि को नष्ट कर देता है। उसके शमनार्थ ब्राह्मण का आशीर्वाद, देव स्तुति या मूलनक्षत्र की शान्ति ।१९। गोमूत्र और श्वेत सरसों से स्नान, नक्षत्र और ग्रह का पूजन, धर्मोपनिषद का श्रवण और शास्त्रों का दर्शन ।२०। तथा जन्म का तिरस्कार करे इससे गण्डदोष का शमन होता है, तथा सातवां गर्भहा नामक भयंकर पुत्र, स्त्रियों के गर्भस्थ कलल को नष्ट करता है ।२१।

तस्यरत्रासदाकार्यानित्यंशौचनिषेवणात् ।
प्रसिद्धमन्त्रलिखनाच्छस्तमाल्यादिधारणात् । २२
विशुद्धगेहावसनादनायासाच्चवैद्विज ।
तथैवशस्यहाचान्यःशस्यर्द्धिमुपहन्तियः ।२३
तस्यापिरक्षांकुर्वीतजीर्णोपानद्धिधारणात् ।
तथापसव्यगमनाच्चण्डालस्यप्रवेशानात् ।२४
बहिर्वलिप्रदानाच्चसोमाम्बुपरिकीर्तनात् ।
परदारपरद्रव्यहरथादिपुमानत्रान् ।२५

नियोजयतिचैवान्याकन्यासाचनियोजिका ।२७
नियोजयत्येनमितिनगच्छेतद्वसबुधः ।
परदारादिसंसर्गेचित्तमात्मानमेवच ।२८
नियोजयत्यत्रसामामितिप्राज्ञाविचिन्तयेत् ।
विरोधंकुरुतेचान्यादम्पत्योप्रीयमाणयो, ।२९
बन्धूनांसुहृदाँपित्रोपुत्रैःसावर्णिकैश्चया ।
विरोधिनीसातद्रक्षांकुर्वीतबलिकर्मणा ।३०

उसके शमनार्थ सदैव पवित्र भावसे रहे, प्रसिद्ध मत्र लिखकर माल्यादि धारण पूर्वक ।२२। शुद्ध गृह मे निवास करे तथा अयाम को त्यागे, हे विप्र ! इसी प्रकार आठवा शस्यहा नामकपुत्र सम्पूर्ण शस्य नाश करता है ।२३। खेत मे पुराना जूता रखे और बाँई ओर खेत मे जाकर चण्डाल का प्रवेश करावे ।२४। बहिर्वलि प्रद न तथा सोमाम्बु के पाठ से उसका शमन होता है । प्रथम पुत्र नियोजिका मनुष्यों को परनारी गमन और पराये द्रव्य के हरण आदि मे नियोजित करता है, इसके शमनार्थ पुण्य ग्रन्थो का पाठ और क्रोध लोभादि का त्याग करे । ।२५-२६। किसी के द्वारा दुर्वचन कहने पर भी क्रोधित न हो और नियोजिका के उपर्युक्त कर्म का चिन्तन करके उस असत् वृत्त से अपने को रोके । जो विरोधिनी नाम वाली द्वितीय पुत्री है वह अत्यन्त प्रेम युक्त दम्पति मे ।२७-२८-२९। तथा सुहृद बन्धु पिता, माता, पुत्र आदि मे विवाद उत्पन्न कराती है, उसके शमनार्थ बलि कर्म करे ।३०।

तथातिवादसहनाच्छास्त्राचारनिषेवणात् ।
धान्यंखलाद्गृहाद्गोष्ठात्स्वस्तिकं तथापरा ।३१
सहद्भिर्मृद्धिमद्द्रव्यादपहार्न्तिचकन्यका ।
सास्वयहारिकेत्युक्तासदान्तर्धानतत्परा ।३२
महानसादर्द्धसिद्धमन्नागारस्थितंतथा ।
परिविष्यमाणंजिमदासार्द्धंभुङ्क्तेचभुञ्जता ।३३
उच्छेषणमनुष्याणांहरत्यन्नंचदुर्हरा ।
कर्मान्तागारशालाभ्यासिद्धचृद्धिहरतिद्विज ।३४

गोस्त्रीस्तनेभ्यश्चपय:क्षीरंहारोसदैवसा ।
दध्नोघृत.तिलात्तैलसुरागारात्तथसुराम् ।३५

इस प्रकार सब प्रकार के अतिवाद को परित्याग कर शास्त्रानुसार पवित्र कर्मो को करे, और जो तीसरी खरिहान नाम की पुत्री है,वह घर के अन्न, गौ दूध, घी ।३१। तथा द्रव्यादि की हानि और समस्त ऋद्धि सिद्धि का हरण करती है । और जिसका नाम स्वयंहारिणी है, वह सदा छिपे रूप मे रहती है ।३२। तथा रसोई की वस्तुओं या अन्य वस्तुओं में प्रविष्ट होकर अन्न का सचय नही होने देती तथा खाने वालों के साथ स्वयं भी खाती है ।३३। जिस घर मे अन्न के ढेर मे मे जो चोरी होती है उस अन्नके चुराने वाली वही है । जिस घर मे श्रेष्ठ कर्म नहीं होते । उस घर की ऋद्धि-सिद्धि का वही हरण करती है ।३४। गौओं और स्त्रियों के स्तन से दूध, दही में से घी, तिल में से तेल और सुरा की मट्टी मे से सुरा को वही पीती है ।३५।

नागकुम्भकदीनांकार्पासात्सुत्रमेवच ।
सास्वयहारिकानामहरत्यविरतं द्विज ।·६
कुर्याच्छिखण्डिनोर्द्वन्द्व रक्षार्थं कुत्रिमाँस्त्रयम् ।
रक्षाश्चैवगृहेलेख्यावर्ज्याचोच्छिष्टतातथा ।३७
होमाग्निदेवताधूपभस्मनाचानिषिक्रया ।
कार्याक्षीरादिभाण्डानामेवतद्रक्षस्मृतम् ।३८
उद्वगजनयत्यन्याएकस्थाननिवासिन: ।
पुरुषस्यतुयाप्रोक्ताभ्रामणीसातुकन्यका: ।।३९
तस्याथरक्षाँकुर्वीतविक्षिप्तै:सितसर्षपै: ।
आमनेशयनेचोर्व्याविन्रास्तेसतुमानवा ।४०
चिन्तयेच्चनर:पापामामेशादुष्टचेतना ।
भ्रामयत्यसकृज्जप्यभूव:सूक्त समाधिना ।४१
स्त्रीणांपुष्पं हनत्यन्याप्रवृत्त सातुकन्यका
तथाप्रवृत्तं साज्ञैयादु:सहाऋतहारिका ।४२

कुसुम्भादि पुष्प से रंग तथा कपास से सूत्र को हरती है, इसलिए इसे स्वयं-हारिका कहा गया है ।३६। इसका दमन करने के लिए अपने घर में एक स्त्री और दो मोरों के चित्र बनावे, वे चित्र सदा व्यक्त रहें, मिटे नहीं ।३७। होम करे, देवताओं के लिए धूप दिखावे फिर उसी अग्नि की भस्मको दुग्धादि के पात्रों पर लगावे स्त्री अपने स्तनो पर मले, इससे सबदोषो की शान्ति होती है ।३८। तथा भ्रामणी नामक चौथी कन्या एक स्थान पर रहने वाले मनुष्यो के हृदय मे प्रविष्ट होकर उद्वेग उत्पन्न करती है ।३९। इसका शमन करके लिये आसन, शय्या और पृथ्वी में श्वेत सरसों बिखेरे, किसी पाप कर्ममे चित्त के लगने पर उसी दुष्टात्मा की प्रेरणा समझकर-समाधि युक्त होकर भूमि सूक्त का जप करे ।४१। पांचवी कन्या ऋतु हारिका ऋतुमतो स्त्रियों के रजका हरण करती है । ४२ ।

कुर्वीततीर्थदेवौकश्चैत्यपर्वतसानुष ।
नदीसंगमखातेषुस्नपनताप्रशान्तय ।४३
मन्त्रविद्भूततत्वज्ञ.पर्वसूषसिचद्विज ।
तेषांतुजनकार्यंचूपवत्युंपहारक : ।
चिकित्साज्ञश्चवैतैद्य:सप्रयुक्तैवरौषधै : ।४४
स्मृतिचाषतरत्यान्याप्रवृत्तांसातुकन्यका ।
अथाप्रवृत्तासाज्ञेयानृणासास्मृतिहारिका ।४५
विविक्तदेशसेवित्वात्स्याश्चपशमोभवेत् ।
बीजापहारिणीचान्यास्त्रीपुंसोरतिभीषणा ।
मेध्यान्नभोजनैःस्नानैस्तस्याश्चोपशमोभवेत् ।४६
दारुणासादुराचारादारुणकुरुतेभयम् ।
तत्प्रशांस्तैप्रकुर्वीतद्विजानामर्चनंशुभम् ।४७
अष्टमीद्वेषणीनामन्यालोकभयावहा ।
याकरोतिजनद्विष्टंनरनारोमथापिवा ।४८
मधुक्षीरघृताक्तांस्तुशान्त्यर्थंहोमयेत्तिलान् ।
कुर्वीतमित्रविन्दांचतथेष्ठिनत्प्रशान्तये ।

इसके शमनार्थं तत्वज्ञानी पंडित पर्वत की कन्दराओं और तीर्थों में मन्दिर बनवावें तथा नदी के संगम स्थल पर स्नान करें ।४३। मंत्रविद् इन सब कर्मों को प्रातःकाल करे तथा धूपादि से उपहार का पूजन और चतुर वैद्य से चिकित्सा करावे ।४४। छठवीं कन्या स्मृतिहारिका स्त्रियों और पुरुषों की स्मृति को हर लेती है।४५। इसके शमन के लिए श्रेष्ठ परिष्कृति और रमणीक स्थान का सेवन करे। सातवी पुत्री बीजापहारिणी स्त्री-पुरुषों की रति को विनष्ट करती है, इसकी शांति के लिए पवित्र अन्न का भोजन और स्नान करे ।४६। यह दुराचारिणी घोर भय को उत्पन्न करने वाली है, उसकी शान्ति के लिए ब्राह्मण-पूजन श्रेष्ठ कर्म करे ।३७। आठवी पुत्री द्वेषिणी-स्त्री पुरुषों में द्वेष कराने वाली है। ४८। इसका शमन करने के लिये मधु, दुग्ध, घृत और तिल की आहुति देकर मित्रविन्दा नामक यज्ञ करे ।४९।

> एतेषाँतु कुमाराणांकन्यानांद्विजसत्तम् ।
> अष्टत्रिंशदपत्यानितेषांनामानिमेश्रृणु ।५०
> दन्ताकृष्टे भूत्कन्याविराजल्पाकलहातथा ।
> नवज्ञानुतद्ष्टोक्तिविजल्पातत्प्रशान्तये ।५१
> तामेवचिन्तयेत्प्राज्ञ:दृष्टतश्चगृहाभवेत् ।
> कलहाकलह गेकरोत्यविरतांनृणाम् ।५२
> कुटुम्बराशहेतेतु :सानत्प्रश.क्ति नेशामय ।
> दूर्वांकुरान्मधु तक्षीराक्तान्बलिकमपि ५३
> विक्षिपेज्जुहुयाच्चैवानलमित्रं च कीर्तयेत् ।
> भूतानांमातृभिःसार्द्धं बालकानांतुशान्तये ।५४
> विद्यानांतपसां वेदसंसमस्त्ययमस्यच ।
> कृष्यावाणिज्यसाभेचशांतिकुर्वन्तुमेसदा ।५५
> पूजिताश्चयथान्यायतुष्टिंगच्छातुसर्वशः ।
> कूष्माण्डायातुधानश्चयेचान्येगणसञ्ज्ञिता ।५६

इन सब पुत्र-पुत्रियोंकी अड़तीस संताने हुईं उनके नामबताताहूंसुनो ।५०।दन्ताकृष्टि के बिजल्पा और कलहा नाम की दो कन्याएँ हुई।विजल्पा

अवज्ञा करने वाली तथा मिथ्या और दुष्ट भाषिणी है, उसके शमनार्थ ।५१। गृहस्थ का संयत चित्त होकर उसी का चिन्तन करना चाहिये । और कलह सदा घरो मे कलह कराती है ।५२। तथा उनके कुटुम्ब का नाश कराने वाली है, इसकी शान्ति क लिए दूब के अकुर, मधु, दूबकी बलि देकर ।५३। अग्नि मे होम करे तथा सम्पूर्ण गृह मे जल छिड़के- मित्रविन्दा का जप करे और यश वर्णन तथा विनती सहित भूतों का पूजन करें, इससे बालको की शान्ति हो जायगी ।५४। फिर कहे कि विद्या, तप, संयम, यम, कृषि और व्यापार मे तुम लाभार्थ हमारी सहायता करो ।५५। तथा सभी कूष्माण्ड और यातुधान आदि गण हैं वे सब भी मेरे इस पूजन को स्वीकार कर सन्तुष्टि को प्राप्त हों ।

महादेवप्रसादेनमहेश्वरमतेनच ।
सर्वगतेनृणांनित्यंतुष्टिमगुब्रजस्तुते ।५७
तुष्टासर्वनिरस्यन्तुवुष्त दुरनुष्ठिम् ।
महापातकजसर्वंयच्चान्यद्विघ्नकारणम् ।५८
तेषमेवप्रसादेनविघ्नानश्यन्तुमर्वशः ।
उद्वाहेषुवसर्वेषुवृद्धिकर्मसुवहि ।५९
पुण्यानुष्टानयोगेषुगुरुदेवार्चनेषुच ।
जपयज्ञविधानेषुयात्रासुचचतुर्दश ।६०
शरीरारोग्यभोग्येषुसुखदानधनेषुच ।
वृद्धबालातुरेष्वेवशांतिकुर्वतुमेसदा ।६१
सोमाम्बुपतेतथाम्भोभिःसविताचानिलानलौ ।
तणोक्तेःकालिजिह्वोऽभूत्पुत्रस्तालनिकेतनः ।६२
सयेषांरनासस्थस्तानसाधूनविवादयेत् ।
परिवर्तसुतौद्वौतुविरुपविकृतौद्विज ।६३
तौतवृक्षाद्रिपरिखाप्राकारोभोधिसश्रयौ ।
गुर्विण्याःपरिवर्ततौकुरुपःपादपादिषु ।६४

महादेवके प्रसाद और महेश्वरकी अनुमतिके अनुसार सब मनुष्यों पर शीघ्र प्रसन्न होकर नित्य ही रक्षा करो ।१७। तथा संतुष्ट होकर मेरे सब

पाप, दूषित कर्म तथा महापाप जनित सब कष्टों और विघ्न के कारणों को विनष्ट करो ।५८। यदि विवाहादि शुभ कार्यों की वृद्धि में विघ्न उपस्थित हो तो वह सब भी आपके प्रसाद से नष्ट हो जाय ।५६। पुण्य कार्य के अनुष्ठान, गुरु देवता के पूजन, जप, यज्ञ, कर्त्तव्य और चौदह यात्रा में । ।६०। शारीरिक आरोग्य, भोग, सुख, दान, धन के विषय में तथा वृद्ध, बालक और पीड़ित व्यक्ति के विषय में भी सदैव शान्ति की स्थापना करो ।६१। सोम, वरुण, सूर्य, सागर, वायु, अग्नि आदि भी मेरी रक्षा करें तथोक्ति का कालजिह्व नामक तालवृक्ष मे रहने वाला एक पुत्र है ।६२। वह कालजिह्व जिस स्त्री की जिह्वा पर बैठ जाता है, उसके बालक को अत्यन्त पीडाप्रद होता है । परिवर्त्तक के दो पुत्र विरूप और विकृत नामक हुए ।६३। वह वृक्ष के अग्रभाग में, खाई में, प्राचीन मे निवास करके गर्भिणी का परिवर्तन किया करते हैं ।६४।

क्रोष्टुकेपरिवर्तःस्याद्गर्भस्यान्योदरात्ततः ।
नवृक्षच्वनैवाद्रिनप्राकारंमहोदधिम् ६५
परिखांवासमाक्रामेद्बलेलागर्भधारिणी ।
अङ्ग्ध्रुक्तनयत्ले भेपिशुन नामतः ।६६
सोऽस्थिमज्जागय पूर्भोवशमत्यजितात्मनाम् ।
श्येनकाककपोतांश्चगृध्रोलूकोचात्र सुतान् ।६७
अवापशकुनि पंचगृहुस्तान्सुरासुराः ।
श्येनजग्राहमयूश्चकाक कालोगृहीतवान्:६८
उलूक निर्ऋतिस्चैवजग्राहातिभयावहम् ।
गृध्रं व्याधिरतगोऽथकपोत चस्वयंयमः ।६९
एतेषामेवच्चैवोक्ताभूतापापोपामने ।
तस्माच्छ्येनादेययस्यनिलीयेषुःशिरस्यध ।७०
तेनात्परक्षणायालंशांतिकुर्य्याद्द्विजोत्तम ।
गेहे प्रसूतिरेतेषां तद्विन्नीदनिवेशनम ।७१
नरस्त बर्जयेद्गेहंकपोताक्रांतमस्तकम् ।
श्येनःकपोतोगृध्रश्चकाकोलूकोगृहेद्विज ।७२

प्रविष्टःकथयेदन्तं वसतांतत्रवेश्मनि ।
ईदृक्परित्यजेद्गेहंशान्तिंकुर्याच्चपण्डितः ।७३

हे क्रौष्ट्रिकि ! गर्भिणी स्त्री को वृक्षों में, कांठे पर, नदी तट पर न जाना चाहिए ।६५। तथा खाईं में न जाय, अंगध्रुक के पिशुन नामक पुत्र हुआ ।६६। वह अज्ञान में अंधे हुए मनुष्यों की हड्डी और मज्जा में घुसकर बल का भक्षण करता है, श्येन, काक, कपोत, गृध्र और उलूक ।६७। यह पांच पुत्र शकुनि के हुए, इनको सुर, असुर ने ग्रहण किया है। श्येन को मृत्यु ने, काक को काल ने ।६८। उलूक को नैऋति ने, गृध्रको व्याधि ने और कपोत को स्वयं यम ने ग्रहण किया ।६९। यह सभी पापों के उत्पन्न करने वाले हैं, इसलिए बाज इत्यादि के सर पर बैठने से ।७०। आत्म रक्षाके निमित्त शान्ति कर्म करें ।७१। उस घरका भी मनुष्य परित्याग कर दे। श्येन, गृध्र, काक और उलूक ।७२। घरमें प्रविष्ट होकर उस घरको रहने न ले के अन्तकी सूचना देते है, इसलिए ज्ञानियों को ऐसे घर को छोड़कर शान्ति कर्म करना उचित है ।७३।

स्वप्नेऽपिहिकपोतस्यदर्शनंनप्रशस्यते ।
षडपत्यानिकथ्यन्तेगण्डप्रान्तरतेस्तथा ।७४
स्त्रीणांरजस्यवस्थानतेषांकालांश्चमेश्रृण ।
चत्वार्य्यहानिपूर्वाणितथैवान्यत्त्रयोदशम ।७५
एकादशतथैवान्यदपत्यंतस्यवंदिने :
ह्निनाभिगमनेश्राद्धदानेतथापरे ।७६
पर्व्वस्वथान्यत्तस्मात्तु वर्ज्यान्येतानिपण्डितैः ।
गर्भं हन्तुसुतोनिघ्नौमोहिजीचापिकन्यका ।७७

कबूतर का स्वप्न में देखना भी अमङ्गल जनक है । गण्ड प्रान्तरिक के जो छः पुत्र कहे गये ।७४। वह स्त्रियों के रजमें रहते हैं । उनका समय सुनो, पहिले चार दिन, तेरहवां दिन ।७५। ग्यारहवा दिन, दिन का अन्त समय, श्राद्धका दिन अथवा दान कर्मका दिन ।७६। और पर्व दिवस यह सब उनके रहने का समय समझो । इन सब दिनों का ज्ञानियों को

परित्याग करना चाहिए। गर्भहन्ता केएक विघ्न नामक पुत्रओर मोहिनी नामक एक कन्या उत्पन्न हुई ।

प्रविश्यगर्भमत्येक्तोभुवत्वामोहयतेऽपरा ।
जायन्तेमोहनात्तस्या:सर्पमण्डूककच्छपा: ।७८
सरीसृपाणिचान्यानिपुरोषमथावा ग्रुन. ।
षण्मासाद्गुर्विणीमांममश्नुवानामसंयताम् ।७९
वृक्षच्छायाश्रयांगात्रावथवात्रिचतुष्पथे ।
श्मशानकटभूमिष्टामुत्तरीयविवर्जिताम् ।८०
रुद्यनानांनिशीथेऽथआविशेत्नामिमौस्त्रियम् ।
शस्यहन्तुस्तथैवेक:क्षुद्रकोनामनामत: ।८१
सम्यर्द्धिममदाहन्तिलब्ध्वानध्रश्रणव्रनन् ।
अमङ्गल्यदिनारम्भेसृनुप्तोत्रपतेचय: ।८२
क्षेत्रेष्वनुप्रवेशवेकेरेत्यन्नीपमगिषु ।८३

यह कन्या गर्भ में प्रविष्ट होती है और विघ्न स्वच्छ गर्भ का आहार करता है। मोहिनी मोह को उत्पन्न करती है उसी मोह से सर्प, मेंढ़ कुए ।७८। तथा विच्छू आदि जन्तु और पुरीष उत्पन्न होते हैं । गर्भवती छ: महीने मांस भक्षण मे, असंयम मे ।७९। रात्रि में वृक्षके नीचे, तिराहे या चौराहे पर जाने से अथवा श्मशान में जाने से या नग्न होनेसे ।८०। अथवा रात्रि के समय रोने से स्त्री में विघ्न प्रविष्ट होता, शस्यहन्ता के क्षुद्रक नामक के पुत्र उत्पन्न हुआ ।८१। वह छिद्र मिलते ही धान्य की वृद्धि को रोक देता है, जो मनुष्य मंगल सहित दिवस में तृप्त रहकर धान्य का बीजारोपण करताहै उसके खेतमें क्षुद्रक घुस जाता है।८२-८३

अमङ्गल्यादिनारभ गलानांचवर्जयेत् ।
(महद्भयप्रयच्छतियत्रवैतत्प्रसंगिषु ।
तस्माकल्प:सुप्रशस्तेदिनंऽभ्यर्च्यनिशाकरम् ।८४
कुर्यादारम्भमुप्तिचहृष्टस्तुष्ट:सहायवान् ।
नियोजिकेतियादन्यादु:सहस्यमयोदित ।८५

जातंप्रचोदिकासंज्ञंस्या: कन्याचातुष्टयम् ।
मत्तोन्मत्तप्रमत्तांस्तुनराञ्नारीस्तुता: सदा ।८६
समाविशन्तिनाशायचोदयन्तीहदारूणम् ।
अधर्मधर्मरूपेणकामचाकामरूपिणम् ।८७
अनर्थंचार्थरूपेणमोक्ष चामोक्षरूपिणम् ।
दुर्विनीतान्विनाशांचदर्शयन्तिपृथङ्नरान् ।८८
अंशश्याभि प्रविष्टाभि: पुरुषार्थात्पृङ्नरा: ।
तागांप्रवेशश्चाग हेसन्ध्युक्षवृह्य दुम्बरे ।८९
धात्रेविधात्रं चावलियत्रकालेनदीयते ।
भुञ्जतांपिवतांचापिसंगिभिर्जनविप्रषै: ।९०
नरनारीषुसंक्रान्तिस्तासामाश्वभिजायते ।
विरोधिन्यास्त्रय: पुत्राश्चोदकोग्राहकस्तथा ।९१

वह मंगलों को बाधा देकर अमंगल का आरम्भ करता है, और भय प्रस्तुत करता है। इसकी शान्ति के लिये शुभ पवित्र दिन में चन्द्रमा का पूजन करके ।८४। प्रसन्न चित्त होकर कृषि कार्य का आरम्भ करे। दुःसह की जिस नियोजिका नाम वाली कन्या का पहिले वर्णन कर चुका हूं ।८५। उसके प्रचोदिका नाम की चार कन्याएँ हुईं, वे अत्यन्त मद मत्त यौवन सम्पन्न स्त्री पुरुषों में प्रवेश करके ।८६। उनको नष्ट करने के लिए बुरे रूप से प्रेरित करती है और धर्म में अधर्म तथा अकाम में काम को ।८७। अर्थ में अनर्थ को अमोक्ष में मोक्ष की प्रेरणा पूर्वक पृथक्-पृथक् भावों का दर्शन कराती और अत्यन्त दारुण रूप में उनके विनाशार्थ प्रविष्ट होती है ।८८। पूर्वोक्त आठ कन्याओं द्वारा पुरुषार्थ हत होकर पुरुष घूमते फिरते है। यह गृहों में स्थित गूलर में नक्षत्र के सन्धिकाल में प्रविष्ट होती है ।८९। जब धाता विधाता का पूजन नहीं किया जाता, उसी समय घर में घूमती है, साथियों सहित भोजन, जलपान या कुल्ला करने के समय ।९०। स्त्री पुरुषों को उनका संक्रमण होता है। विरोधिनी के तीन पुत्र उत्पन्न हुए एक का नाम चोदक, दूसरे का ग्राहक ।९१।

तंम: प्रच्छादकश्चान्यास्तत्तस्वरूपंशृणुष्वमे ।
प्रदीपतैलसंसर्गदूषि 'लंघितेखले ।९२
मुसलीलूखलेयत्रपादुकेवासनेस्त्रियः ।
मूर्पदात्रादिकंयत्रपदाकृष्टंतथासनम् ।९३
यत्रोपलिप्तेनाभ्यच्यविहारः क्रियतेगृहे ।
दर्वीमुखेनयत्राग्निराहृनीऽन्यत्रनीयते ।९४
विराधिनीसुतास्तत्रविजृम्भन्तेप्रचोदिनाः ।
ग्कीजिह्वागतः पुंसांस्त्रोणांचालोकमन्यचान् ।९५
चोदकोनामसप्रोक्तः पैशुन्यकृत्तेगृहे ।
अवधानगतश्चान्यःश्रवणस्थाऽतिर्दुमतिः ।९६
करोतिग्रहणंतेषांवचसांग्राहकस्तुय ।
आक्रम्यान्योमरोनृणांतमताच्छाद्यदुर्मतिः ।९७
क्रोधजनयतेयस्तुतः प्रच्छादकस्तुसः ।
स्वयंहायस्तुचौर्यंणजनितंतनयत्रयम् ।९८

तीसरे तामाच्छादयक पुत्र का स्वरूप सुनो। जहाँ मूसल या औखली दीपक के तेल से दूषित की जाती अथवा उलांघी जाती है ९२। अथवा जहां मूसल और ओखली स्त्रियों की चरण पादुका अथवा आसन होता है जहाँ स्त्रियाँ पैरों म धूप दराती आसन आदि का हटाती है ।९३। लिपे हुए स्थान में जहा पूजन किये बिना ही बिहार किया जाता है, अथवा जहां करछुली मे अग्नि निकालकर दी जाती है ।९४। उन सभी स्थान में विरोधिनी के पुत्र अपना विक्रम बनाते हैं और जो स्त्री पुरुष की रसना पर बैठ कर झूठ सत्य कहलाता है ।९५। उसे चोदक कहते हैं, वह कुटिलता तथा अन्य नीच कर्म कराने वाला है,अतिदुर्मति कानों में रह कर ।९६। उन सब वाक्यों को ग्रहण करता है तथा तमाच्छादक मनुष्यों के मन पर अधिकार करके ।९७। तुम से अच्छादित कर क्रोध को उत्पन्न करता हैं, स्वयंहारी के तीन पुत्र उत्पन्न हुए ।

सर्वहार्यर्द्ध हरीचवीर्यहारीतथेवच ।
अनाचान्तगृहेष्वेतेमन्दाचारगृहेषुच ।९९
अप्रक्षालितपादेषुप्रविशत्सुमहानसम् ।
खलेषुगोष्ठेषुचवैदोहोयेषुगृहेषुवै ।१००
तेषुसर्वेयथान्यायविहरन्तिरमन्तिच ।
भ्रामण्यास्तनयस्त्वेकःकाकजङ्घइतिस्मृतः ।१०१
तेनाविष्टोरतिसवा नैवप्राप्नोतिवैमुने ।
भुञ्जन्योगायतेमर्त्येगायतेहसतेचया ।१०२
सन्ध्यामैथुनिनश्चैवनमाविशतिद्विज ।
कन्यात्रथप्रसूनामायाकन्याऋतुहारिणी ।१०३
एकाकुचहराकन्याअन्याव्यञ्जनहारिका ।
तृतीयातुसमाख्याताकन्यकाजातहारिणी ।१०४
यस्मानक्रियतेसर्वःसम्यग्वैवाहिकीविधिः ।
कालातीतोऽथवातस्याहरन्तेकाकुचद्वयम् ।१०५

सर्वाहारी अर्द्धाहारी,और वीर्यहारी यह अपवित्र अथवा मन्द आचरण वाले घर मे ।९९। बिना चरण धोये पाठशाला मे घुसने वालो के घर या खलियानों में विद्रोह उपस्थित करता है ।१००। यह उन सभी स्थानों में विभिन्न रीति से विहार करते है । भ्रामणी के काकजंघ नामक पुत्रकी उत्पत्ति हुई।१०१।यह जिस घर में घुस जाताहै,उसमें कोई प्रसन्ननहीं रहता,जो मनुष्य भोजन के समय गाते और मित्रो से वार्तालाप हास परिहास करते है ।१०२। अथवा जो संध्या काल मे मैथुन करते है उन पर काकजंघका आक्रमण होताहै । ऋतुहारिणी कीतीन कन्याएउत्पन्न हुई ।१०३। प्रथमा कन्या का नाम कुचहरा, द्वितीय का व्यञ्जनहारिका तथा तृतीय का जातहारिणी नाम हुआ ।१०४। जिस कन्या का विवाह सम्यक विधि विधान से नहीं होता या विवाह की लग्न व्यतीत होने पर होता है, उस कन्या के स्तनद्वय को वह कुचहरी हरण कर लेतीहैं।१०५।

सम्यक् श्रीद्धमदत्वातथानभ्यर्च्यमातृाः ।
विवाहितायाःकन्यायाहरतिव्यञ्जनतथा ।१०६
अग्न्यम्वुशून्येचतथाविंध् पसूतिकागृहे ।
अदीपशस्त्रमुसलेभूतिसर्षवर्जितः ।१०७
अनुप्रविश्तसाजातमपहृत्यात्मसम्भवम् ।
क्षणप्रसविनीबालंतेत्रैबीत्मृजतेद्धिज ।१०८
साजातहारिणोनामसुघोरापिशिताशना ।
तस्मात्संरक्षणकार्यंयत्नतःसूतिकागृहे ।२०६
स्मृतिचाप्रयतानांचशून्यागरिनिषेवणात ।
अपहृन्तिसुतस्तस्याःप्रचण्डोनामनामतः ।११०
पौत्रेभ्यस्तस्वसम्भूतालोकाशतसहस्रशः ।
चण्डालयोनयश्चाष्टौदण्ढापाशातिभीषणाः ।१११
क्षुधाविष्टास्तोलोकास्ताश्चण्डालयानयः ।
अभ्यधावन्तचान्योन्यमत्तु कामाा परस्परम् ।११२

श्राद्धादि कर्म और मातृका के अर्चन बिना जिस कन्या का विवाह किया जाता है, व्यञ्जनहारि का उसका हरण कर लेती है । १० । सूति का गृह मे अग्नि, जल धूप, दीपक, शस्त्र, मूशल, भस्म, सरसो आदि के न होने से ।१०६। जातहारिणी वहां प्रविष्ठ होकर तत्काल उत्पन्न हुए बालकों का हरण करती है और उनके स्थान पर अन्य बालक रख देती है ।१०८। इसलिये उस जातिहारिणी से सूति का गृह में बालक की यत्नपूर्वक रक्षा करनी चाहिए ।१०९। उसका प्रचण्ड नाम का पुत्र है जो निर्जन घर में रहने असयत चित्त वाले मनुष्यो का स्मृति का हरण कर लेता है ।११०। उसके पौत्रों के द्वारा सो सहस्र लोको की उत्पत्ति हुई, दण्ड और पाश को धारण करने वाली अत्यन्त भयंकर चाण्डलों की आठ योनिया भी इसी के वंश से हुई हैं ।१११। जब तोलीका और चाण्डाल जातियाँ क्षुधातुर होकर परस्पर के भक्षणार्थ दौड़ी ।११२।

प्रचण्डोवारयित्वातुयास्ताश्चाण्डालयोनय: ।
समयेस्थापयामासयादृशेतादृशश्शृणु ।११३
अद्यप्रभृतिलोकानामावासंयोहिदास्यति ।
दढतस्याहमतुलपातयिष्येनसशय: ।११४
चाण्डालवोन्यावसथेलीकायाप्रसविष्यति ।
तस्याश्चसन्तति: पूर्वासाचसद्योनशिष्यति ।११५
प्रसूतेकन्यकेद्वे तुस्त्रीपुंसोवीर्य जहारिणो ।
वातरूपामरूपांचतस्या: प्रहरणतुते ।११६
वातरूपानिमेकान्तेसायस्मेक्षिपतेसुनम् ।
सपुमान्वातशुत्वंप्रयातिवनितापिवा ।११७
तथवगच्छत: सद्योनिर्वीजत्वमरूपया ।
अस्नाताशोनरोयोऽसौतथाचापिवियोगिन: ।११८
विद्वषिणातुया याभृकुटिलाननना ।
तस्यद्वौतनयौपुंसामप्रकारप्रकाशकौ ।११९

तब प्रचण्ड ने उन्हें निवारण किया और जिस समय मे स्थापित किया, उसे सुनो ।११३। आज से जो पुरुष लाको को स्थान देगा, उसे मैं घोर दुःख दूंगा ।११४। चाण्डाल के घर मे या पराये घर में रहकर जो स्त्री सन्तान को जन्म देती है, वह लोक उसकी सब सन्तानों को नष्ट करने वाली है ।११५। स्त्री-पुरुषों के वीर्य का हरण करने वाली बीजापहारिणी के वातरूपा और अरूपा नाम की दो कन्याए हुई ।११६। उनमे वातरूपा सिचन के समय शुक्र को जिसमे गिराता है, वह पुरुष या स्त्री वातशुक्रत्व के रोग से पीडित होते है ।११७। जो पुरुष बिना स्थान, बिना भोजन करे नारी समागत करता अथवा किसी अन्य योनि में भोग करता है, उसे अरूपा शीघ्र ही वीर्य रहित कर देती है ।११८। कुटिल मुख वाली, जिसकी भौहें सदा तनी रहती हैं, उस विद्वेषिणी के दो पुत्र उत्पन्न हुए, वह सदा ही पुरुषों का उपकार करते रहते हैं ।११९।

निर्वीजत्वनरायातिनारीवाशौचावर्जिता ।
पैशुन्याभिरतलोलमसज्जलनिवेषणम् ।१२०
पुरुषद्व षिणचेतीनरमाक्रम्यतिष्ठतः ।
मात्राभ्रात्रातथामित्रैरभीष्टैःस्वजनैः परैः ।१२१
विद्विष्ठोनाशमायातिपुरुपोधर्मतोऽर्थतः ।
एकस्तुस्वगुणाल्लोकेप्रकाशयतिपापकृत् ।१२२
द्वितीयस्तुगुणात्मैत्रीलोकस्थामपकर्षति ।
इत्येतेदौःसहाः सर्वैयक्ष्मणः सन्ततावथ ।१२३

अपवित्र स्त्री पुरुष की निर्वीयत्व को प्राप्त होते हैं, विद्व षिणी के दोनों पुत्र परनिन्दा मे लगे, चञ्चल, अशुद्ध एवं जलसेवी ।१२०। तथा पुरुष द्वेषी पुरुषो मे अवस्थित होते है । माता, भ्राता, मित्र, प्रियजन या आत्मीयजन के ।१२१। विद्वेषा होने पर धर्म और अर्थ को नष्ट कर देते है, इस प्रकार एक पापाचारी पुत्र ने अपने गुणो को प्रकाशित किया हुआ है । १२२। दूसरा पुत्र लोकों के गुणो और मैत्री भाव का आकर्षण करने मे समर्थ है, इस प्रकार पापका आचरण करने वाले दुःसह के गणों ने सम्पर्ण विश्व का व्यस्त किया हुआ है ।१२३।

४४—रुद्रादिसृष्टि

इत्येषतामसः सर्गोब्रह्मणोऽव्यक्तजन्मनः ।
रुद्रसर्गप्रवक्ष्यामितानेनिगदतः शृणु ।१
तनवश्चतथैवाष्टौपत्न्यः पुत्राश्चतेतथा ।
कल्पादावात्मनस्तुल्यप्रध्यायतः प्रभोः ।२
प्रादुरासीदथांकेऽस्यकुमारोनीललोहितः ।
रुरोदसुस्वसोऽथद्रपश्चद्विजसत्तम् ।३
किरोदिषीतितब्रह्मारुद्रन्तप्रत्युवाचह ।
नामदेहीतितर्सोऽथप्रत्युवाचाजगत्पतिम् ।४

रुद्रस्त्वं देवाम्नासिमारोदीधैर्य्यमावह ।
एवमुक्तस्ततःसोऽथसप्तकृत्वोरुरोदह ।५
ततोऽन्यानिददौतस्मैसप्तानामानिवै प्रभुः ।
स्थानानिचैषामष्टानांपत्नीःपुत्राश्चवैद्विज ।६

मार्कण्डेयजी ने कहा—अव्यक्त जन्मा ब्रह्माजी की तामसी सृष्टिका यह वर्णन हुआ अब रुद्रसर्गका विषय वर्णन करते हैं, श्रवण करो ।१। आठ पुत्र, उनकी पुत्री और सब पुत्र कल्प के आदि में आत्मतुल्य सुतका चिन्तन करने के कारण उसी प्रकार के हुए ।२। हे द्विजवर ! उन आठ पुत्रों में जो एक नीललोहित वर्ण वाला पुत्र ब्रह्माजी की देह मे उत्पन्न हुआ था वह उनकी गोदी मे ही सुस्वर पूर्वक रोने लगा ।३। उसे रुदन करता हुआ देखकर ब्रह्माजी ने प्रश्न किया 'तू क्यों रोता है ?' तो उस बालक ने कहा 'हे जगत्पते ! मुझे नाम दीदिजिये । ४ । ब्रह्माजी ने कहा—'तुम्हारा नाम रुद्र हुआ, अब तुम रुदन बन्द करके धैर्य धारण करो, ब्रह्माजी के ऐसा कहने पर भी वह बालक सात बार पुनः रोया ।५। हे द्विज ! तब उन्होने उसे क्रमशः सात नाम और दिये, तदनन्तर इन आठों को आठ स्थान, पत्नी और पुत्र भी दिए ।

भवं शर्वंतथेशानं तथापशुपतिप्रभुः ।
भीममुग्रं महादेवमुवाचसपितामहः ।७
चक्रे नामान्यथैतानिस्थानान्येवाचकारह ।
सूर्य्योजलमहीवह्निर्वायुराकाशमेवच ।८
दीक्षितोब्रह्मण सोमइत्येतास्तनवःक्रमात् ।
सुवर्चलातथैवोमाविकेशाचापरास्त्वधा ।९
स्वाहादिशस्तथादीक्षारोहिणोचयथाक्रमम् ।
सूर्य्यादीनांद्विजश्रेष्ठरुद्राद्यैर्नामभिःसह ।१०
शनैश्चरस्तथाशुक्रोलोहिताङ्गोमनोजवः ।
स्कन्दसर्गोऽथसन्तानोबुधश्चनुक्रमात्सुताः ११
एवम्प्रकारोरुद्रोऽसौ सतीभार्य्यामविन्दत ।
दक्षकोपाच्चतत्ताजसासतीस्वं कलेवरम् ।१२

शंभोरवज्ञायत्रास्तेस्थातव्यनैवसूरिभिः
एतेचब्राह्मणाः सर्वेयेद्विषतोमहेश्वरम् ।

भवंतुतेदबाह्याःपापोपहतचेतसः ।
पाखंडाचारनिरताःसर्वेनिरयगामिनः ।

कलौयुगेतुसंप्राप्तेदरिद्राःशूद्रजापकाः ।
हिमवद्दुहिताभून्मेनानांद्विजसत्तमः ।
तस्याभ्रातातुमैनः सखाम्भोधेरनुत्तमः ।१३
उमयेमेपुनश्चैनामन्यांभवान्भवः ।
देवौधाताविधातारौभृगोःख्यातिरसूयत । १४

ब्रह्माजी ने रुद्र, भव, शर्व, ईशान, पशुपति, भीम, उग्र और महादेव ।७। यह आठ नाम देकर आठो स्थान का निर्देश किया। सूर्य जल पृथिवी वह्नि वायु आकाश ।८। दीक्षित ब्राह्मण और सोम तथा सुवर्चना, उमा विकेशी, स्वधा ।९। स्वाहा, दिक, दीक्षा, और रोहिणी यह नाम उनकी भार्याओं के हुए अब रुद्रादि के नामो सहित अनके पुत्रो के नामों का वर्णन करता हूं, उसे सुनो ।१०। रुद्रादि के क्रमशः शनैश्चर, शुक्र, लोहिताग, मनो जव, स्कन्द, सर्ग सन्तान और बुध यह आठ पुत्र है ।११। इन रुद्रो ने पत्नी रूपसे सती को प्राप्त किया था और यक्ष कोप के कारण सती ने अपने शरीर का परित्याग कर दिया था ।१२। क्योंकि जहां शिवाजी का तिरस्कार हो वहाँ न रहे महेश्वर सेद्वेष करने वाले यह ब्राह्मण पाप स नष्ट चेता हों, वेदसे वहिर्मुख तथा पाखण्डो और नारकी हों, कलियुग के आने पर दरिद्र और शूद्रों का जप करें) इसप्रकार शापदेकर वह मैनाके गर्भसे हिमवान् सुता बनी, उसका भाई मैनाके सागर का सखाहै।१३। उस पार्वती से भगवान् भवने विवाहकिया भृगुजी की पत्नी ख्याति के धाता-विधाता नामक दो पुत्र हुए थे ।१४।

शिश्चयंचदेवदेवस्यपत्नीनारायणस्यया ।
आयातिनियतिश्चैवमरोःकन्येःमहात्मनः । ५

भार्येधाताविधात्रोस्तेतयोजातीसुताशुभौ ।
प्राणश्चवमृकण्डुश्चपितामममहायशाः ।१६
मनस्विन्यामहं वस्मात्पुत्रोवेदशिरामम् ।
धूम्रवत्यांसमभवत्प्राणस्यापिनिबोधमे ।१७
प्राणस्यद्युतिमान्पुत्र उत्पन्नस्तस्यचात्मजः ।
अजराश्चयीपुत्राःपौत्राःश्चबहवोऽभव् ।१८
पुत्रीमरीचेःसभूतिः पौर्णमासमसूयत ।
विरजापर्वतश्चवतस्यपुत्रौमहात्मनः ।१९
तयोः पत्नांस्तु, वक्ष्येहं वंशसंकीर्तनेजद्वि ।
स्मृतिश्चाङ्गिरस सत्नीप्रसूताकन्यका ।२०
सिनीवालीकुहूश्चैवराकाचानुमतिस्तथा ।
अनसूयातथैवात्रेर्जज्ञपुत्रानकल्मषान् ।२१
सोमं दुर्वाससचैवदत्तात्रेयंचयोगिनम् ।
प्रीत्यपुलस्त्यभार्यायादत्तोन्यस्ततसुतोऽभवत् ।२२

लक्ष्मीजी भगवान् नारायण की भार्या हुई और महात्मामेरु की आयति नियति नाम की दो कन्याएं थी ।१५। वे दोनो धाता-विधाता की पत्नी हुई। इन दोनो के एक-एक पुत्र हुआ, धाता ने आयति के पुत्र का नाम प्राण और विधाता ने नियति के पुत्र का नाम मृकण्डु रखा। महायशस्वी मुझ मार्कण्डेयजी के यही पिता है ।१६। मेरे पिता मृकण्डु का विवाह मनस्विनी से हुआ वही मेरी माता है। मैने अपने पुत्र का नाम वेदशिरा रखा। प्राण की भार्या धूम्रवती थी, अब उसके पुत्रोंका बर्णन करता हूं ।१७। धूमवती के द्युतिमान और अराजक नामक दो पुत्र हुऐ, इनके अनेक पुत्रपौत्र हुए ।१८। मरीचिकी पत्नी सम्भूति से पौर्णमास का जन्म हुआ, उसके विरजा और पर्वत नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए ।१९। हे द्विज! इनके पुत्रोंके वंश को वर्णन करता हूँ, अंगिरा-पत्नी स्मृतिने ।२०।चार कन्याएं उत्पन्न की, उनका नाम सिनीवाली, कुहू, राका अणुमति था, अत्रि से अनसूया ने निष्पापां ।२१। सोम, दुर्वासा और दत्तात्रेय नामक तीन योगी पुत्रों को उत्पन्न

किया, पुलस्त्य-पत्नी प्रीति ने दत्त को जन्म दिया ।२२।

पूर्वजन्मनियोऽयोऽगस्त्यः स्मृतः स्वायम्भुवेऽन्तरे।
कर्दमश्चार्ववीरश्चसहिष्णुश्चयुत्रयम् ।२३
क्षमातुसुषुवेभार्यापुलहस्यप्रजायतेः ।
क्रतोस्तुसन्ततिभार्याबालखिल्यानसूयत ।२४
षष्टिर्यानिसहस्राणिऋषीणामूर्द्धरेतसाम् ।
ऊर्जायान्तुवसिष्ठस्यसप्ताजायन्तवैसुताः ।२५
रसोगात्रोर्ध्वबाहुश्चानघस्तथा ।
सुतपाःशुक्लइत्येतेसर्वेसप्तर्षयः स्मृताः ।२६
योगावग्निरभीमानीब्रह्मणस्तनयोऽग्रजः ।
तस्मात्स्वाहासुतांल्लेभेत्रीनुदारौजसोद्विज ।२७

यही दत्त पूर्व जन्म मे अगस्त्य नामसे प्रसिद्ध थे, प्रजापति पुलहकी पत्नी क्षमा के कर्दम, अर्ववीर और सहिष्णु नामक तीन पुत्र हुए ऋतु की पत्नी सन्तति ने ।२३ २४। साठ हजार ऊर्ध्वरेता बाल्यखियो की उत्पत्ति की । वशिष्ठ के द्वारा ऊर्जा के प्रसव से सात पुत्रों की उत्पत्ति हुई ।२५। यही सप्तर्षि रस, गात्र, ऊर्द्ध्वबाहु, सबल, अनघ सुतपा और शुक्र नाम से प्रसिद्ध हुए ।२६। हे द्विजोत्तम ! ब्रह्माजी के ज्येष्ठ पुत्र अग्नि हुए, उनका विवाह स्वाहा के साथ हुआ था तथा उनके अत्यन्त प्रतापी और बली तीन पुत्र हुए ।२७।

पावकंपवनचैवशुचिंचापिजलाशिनम् ।
तेषाँतुसन्तावन्येचत्वारिंशच्चपञ्चच ।२८
कथ्यन्तेबहुशश्चैतेपितापुत्रत्रयंचयत् ।
एवमेकोनपंचाशद्वंश्याःपरिकीर्तिताः ।२९
पितरोब्रह्मणासृष्टायेव्याख्याता मयातव ।
अग्निष्वात्तावर्हिषदोऽग्नयःसाग्नयश्चये ।३०
तेभ्यःस्वधासुतेजज्ञ मेनांवैधारिणां तथा ।
तेउभेब्रह्मवादिन्यौयोगिन्योचाप्युभेद्विज ।३१

पावक पवमान और शुचि,यह सदैव जल पीते रहते है,उनके श्रोता-लीस पुत्र हुए ।२८। जो अन्य तीन पुत्र पिता पुत्र नाम से कहे है वह अग्नि के पुोत्र है, अग्नि के यह उनचास पौत्र दुर्जय कहे जाते है ।२९। पहिले मैने इन्हीं को पितरों के नाम सेबताया था, अग्निष्वाता, बर्हिषद अनग्नि और साग्नि ।३०। स्वधा ने पितरो से मेना और वैधारिणी नाम की दो कन्याए प्राप्त की, यह दोनो ही परम ब्रह्मवादिनी और योगाभ्यास परायण हुई ।३१।

४५—स्वायम्भुव मन्वन्तर कथन

स्वायम्भुवंत्वयाख्यातमेतन्मन्वन्तरचयत् ।
तदहंभगवन्सम्यक श्रोतुमिच्छामिकथ्यताम् ।१
मन्वन्तरप्रमाणचदेवादेवर्षयस्तथा ।
येचक्षितीशाभगवन्देभेन्द्रश्चैवयस्तथा । २
मन्वन्तराणांसंख्याता।साधिदाह्येकसप्ततिः ।
मानुषेणप्रमाणेनश्रृणुमन्वन्तरचम । २
त्रिशत्कोटचस्तुसख्याता:सहस्त्राणिचविंशतिः ।
सप्तषष्टिस्तथान्यानिनियुतानिचसख्यया । ४
मन्वन्तरप्रमाणंचइत्येतत्साधिकाँविना ।
अष्टोशतसहस्त्राणिदिव्ययासख्यया।स्मृतम् ।५५
द्विपचाशत्तथान्यःनिसहस्र्ण्यधिकांनिच ।
स्वायम्भुवोमनुःस्वानोचिषस्तथा ।६
औत्तमस्तामसश्चैवरैवतश्चाक्षुषस्तथा ।
षडेतेमनवोऽतीतास्तथावैवस्वतोऽधुना ।७

क्रोष्टुकि, बोलेहे भगवान ! आपने जिस स्वायंभुव मन्वन्तर का विषय कहा, उसे भले प्रकार सुनना चाहता हूं ।१। मन्वतर का प्रमाण देवता, देवर्षि राजा तथा देवेन्द्रके वृत्तान्त को विस्तार सहित कहिये।२।

मार्कण्डेयजी ने कहा—मन्वन्तरकी संख्या कुछ अधिक इकहत्तर चतुर्युगीं है, मैं इसे मानव-मान से कहता हूँ ।३। एक मन्वन्तर में तीस करोड़ सड़सठ लाख बीस हजार मानवी वर्ष व्यतीत होते है ।४। मन्वन्तर का यह प्रणाम आधिक्य रहित है, दिव्य आठ लाख ।५। बावन हजार वर्ष एक मन्वन्तर मे होते हैं प्रथम मनु स्वायंभुव, स्वारोचिन ।३। औत्तम, तामस, रैवत, और चाक्षुष इस प्रकार छः मनु व्यतीत हो चुके है, इस समय वैस्वत मनु है ।७।

सावर्णाःपचरोच्याश्चभौत्याश्चागामिनस्त्वमी ।
एतेषांविस्तर भूयोमन्वंतरपरिग्रहे ।८
वक्ष्येदेवानृषींश्चैवदेन्द्राःपितरश्चये ।
उत्पत्तिमग्रहब्रह्मन्श्रू यतामस्चमततिः ।९
यच्चनेषामभूत्क्षेत्रतत्पुत्राणांमहात्मनाम् ।
मनोस्वायम्भुवस्यामन्देशपुत्रास्तुतत्समाः ।१०
वरियपृथिवोमत्रांसप्नद्वीपामपर्वंना ।
ससमुद्राऽऽकरवतीप्रतिवर्ष निवेशिता ।११
स्वायम्भुवेऽन्तरेपूर्वमाद्येत्र तापुगेतथा ।
प्रियव्रतस्यपुत्रै स्तै स्वायभुवम्यच । १२
प्रियव्रतात्प्रजावत्यांवीरात्कन्याव्यजायत ।
कन्यामातृमहाभागाकर्द मस्यप्रजापतेः ।१३
कन्यद्वे दशपुत्रांश्चसम्राटकुक्षीचतेउभे ।
तयोर्वैभ्रातर शूराःप्रजापतिसमादश ।१४

पंचसावर्णि, रोच्य और भविष्य में होंगे इन सब का पूरा वृतांत मन्वन्तरो का वर्णन करने मे कहूँगा ।७। हे विप्र ! मन्वन्तरोंमें जो-जो देवता, ऋषि, इन्द्र, पितर, होते हैं, उन सबकी उत्पत्ति आदिका वर्णन उनकी सन्तति सहित करूंगा ।९। उन महात्माओं के जो-जो सन्तति हुई, उसे कहता हूँ, स्वायंभवु के दश पुत्र उन्ही के समानउत्पन्न हुए ।१०। उन्होंने इस सप्त द्वीप, पर्वत, समुद्र और खानो से सम्पन्न पृथ्वी को वर्षों में विभाजित किया था ।११। पहिले भी स्वायंभुव मन्वन्तर में अर्थात त्रेता आरंभ में स्वायंभुव के पौत्रो

अर्थात् प्रियव्रत के पुत्रों ने भी इसी प्रकार किया था ।१२। प्रजापति कर्दम की प्रजावती की नाम अत्यन्त सौभाग्यवती कन्या के गर्भसे ।१३। दश पुत्र और दो कन्याएं उत्पन्न हुई इन दोनो कन्याओं का नाम सम्राट और कुक्षि हुआ और उनके दशों भाई भी अत्यन्त शूर और प्रजापति के तुल्य थे ।१४।

अग्नीध्रोमेधातिथिश्चवपुष्मांश्चतथापरः ।
ज्योतिष्मान्द्युतिमान्भव्यःसवनः सप्तएवते ।१५
मेधाग्निबाहूमित्रास्पुत्रयोयोगपरायणाः ।
शास्तिस्मरामहाभागानराज्यायमनोदधुः ।
प्रियव्रतोभ्यषिचत्तान्ससप्तपार्थिवान् ।
द्वीपेयुतेनधर्मेणद्वीपांश्चैवनिबोधमे ।१६
जम्बुद्वीपेतथाग्नीध्रं राजानांकृतवान्पिता ।
प्लक्षद्वीपेश्वरश्चापितेनमेधातिथिः कृतः ।१७
शाल्मलेस्तुवपुष्मन्तंज्योतिष्मन्तंकुशाह्वये ।
क्रौंचद्वीपेद्युतिमन्तंभव्यंशाकाह्वयेश्वरम् ।१८
पुष्करधिपतिचापिसवनं कृतवान्सुतम् ।
महावीतोधातकिश्चपुष्कराधिपतेसुतौ ।१९
द्विधाकृत्वातयोर्वर्षं पुष्करेसन्यवेशयत् ।
भव्यस्यापुत्राः सप्तासन्नामतस्तान्निबोधमे ।२०
जलदश्चकुमारश्चसुकुमारीमणीवकः ।
कुशोत्तरोऽधर्मधावीसप्तमस्तुमहाद्रुमः ।२१

उन दशोंके नाम अग्नीध्र, मेधातिथि, वपुष्मान्, ज्योतिष्मान्, द्युतिमान्, भव्य और सवन (यह सात) तथा सबसे छोटे मेधा, अग्निबाहु और मित्र हुए। यह तीनों जन्मसे ही योग परायण हुऐ और उन सातों को राजा प्रियव्रत ने सात द्वीपोंका राज्य प्रदान किया, जहाँ वह धर्मपूर्वक राज्य करने लगे, अब उन द्वीपो के विषय में कहता हूं ।१६। अर्थात् राजा ने अग्नीध्र को जम्बूद्वीप का तथा मेधातिथि को प्लक्ष द्वीप का राज्य दिया ।१७। वपुष्मान को शाल्मलि द्वीप, ज्योतिष्मान को कुश द्वीप, द्युतिमानको क्रौंचद्वीप और भव्यको शाकद्वीप का राजा बनाया।

।१८। और सवन को पुष्कर द्वीप दिया, इसी सवनके दोपुत्र उत्पन्न हुए, जिनका नाम मेधावी और धातकी हुआ ।१९। राजा सवन ने अपने दोनों पुत्रोके लिए पुष्कर द्वीप को दो भागों में विभक्त कर दिया, शाक के राजा भव्य के सात पुत्र हुए, अब उनके नाम कहता हूँ ।२०। जो क्रमशः जलदकुमार सुकुमार, मनीवक, कुशोत्तर, मेधावी और महाद्रुम नाम के हुए ।२१।

तन्नामकानिवर्षाणिशाकद्वीपेचक्रारसः ।
तथाद्युतिमतः सप्तपुत्रास्ताँस्तुनिबोधमे ।२२
कुशलामनुगश्चोष्णः प्राकारश्चार्थकारक, ।
मुनिश्चचदुन्दुभिश्चैवमत्तमः परिकीर्तिताः ।२३
तेषांस्वनामध यानिक्रौंचद्वीपेतथाभवन् ।
ज्योतिष्मतं कुशद्वीपे तुत्रनामाङ्किनानिवे ।२४
तत्रापिसप्तावर्षाणितेषांनामानिमेशृणुः ।
तस्यापिसप्तपुत्रास्तुज्ञेयास्तेपिमहौजसः ।
उदभिदवैणवंचैवसुरथलम्बनंतथा । २५
धृतिमत्प्राकरचैवकापिलंचापिसप्तामम् ।
वपुष्मतः सुताः सप्ताशलमलेशस्पचाभवन् ।२६
श्वेनश्चहारितश्कैव जीमूतोहिनस्तथा ।
वद्युतोमानसश्चैवकेतुमान्समस्तथा ।२७
नाथैवशलमलेस्न नाम्मनामानिसप्तावैं ।
सप्तामेधातिथेः पुत्राः प्लक्षद्वीपेश्वरस्यवै ।२८

उस राजा ने अपने शाकद्वीप को सात भागो मे विभक्त करके सातों पुत्रोमे बाँट दिया, वह सात भागही सप्तवर्ष कहकर इन्हींके नामसेप्रख्यात हुए, इसी प्रकार क्रौंचद्वीपके राजा द्युतिमान्के सातपुत्र उत्पन्न हुए, उनके भी नाम बतातेहैं।२२।वे क्रमशः कुशल, मनुग, उष्ण, प्राकार, अर्थकारक मुनिऔर दुंदुभि नामक हुए।२३।क्रौंचद्वीपको भी सातभागोंमे बाँटा गया, ज्योतिष्मान्ने सात पुत्रोके नामानुसारही कुशद्वीप का विभाग किया।२४।

उनके नाम पर भी सात वर्ष बने, जिनके नाम सुनो उद्भिव वेण्णव सुरथ लंबन ।२५। धृतिमान् प्रभाकर और कपिल यह सात नाम हुए तथा शाल्मलि के राजा वपुष्मान के भी सात ही पुत्र हुए ।२६। उनके नाम क्रमशः श्वेत-हरित, जाभूत, मानस वैद्युत् मानस और केतुमान ।२७। उस द्वीप के भीसात भाग होकर इन्हीं के नामो पर सप्त वर्ष हुए तथा प्लक्ष द्वीप के राजा मेधातिथि के भी सात पुत्र हुए ।२८।

येषांनामाङ्कितैवर्षैः प्लक्षद्वीपस्तुसप्तधा ।
पूर्वंशाकभववर्षं शिशिरं तृसुखोदयम् । २९
आनन्दञ्चशिवकैवक्षेमकञ्चध्रुवंतथा ।
प्लक्षद्वीपादिभूतेषु शाकद्वीपान्तिमेषु वै ।३०
ज्ञेयःपंसुधर्मश्चवर्णाश्रमविभागजः ।
नित्यःस्वाभाविकश्चैव अहिंसाविधिवर्जित ।३१
(याकिंपुरुषाद्यानिवजम्बिर्वहिमाह्वयम् ।
सुखमायुश्चरूपंचबलं धर्मनित्यशः ।
पचस्वैतेषु वर्षेषु सर्वसाधारणस्मृत ।
अग्नीध्रायपितापूर्वंजम्बूद्वीपददौद्विज ।३२
तस्यपुत्राबभूवुर्हिप्रजापतिसमानवतै
ज्येष्ठोनाभिरितिख्यातस्तस्यकिंपुरुषोऽनुजः ।३३
हरिवर्षस्तृतीयस्तुर्थोऽभूदिलावृतः ।
रम्यश्चपंचमःपुत्रोहिरण्याषष्ठउच्यते ।३४
कुरूस्तुसप्तमस्तेषांभद्राश्वश्चाष्टम स्मृतः ।
नवमःकेतुमालश्चतन्नाम्नवर्षसंस्थितिः ३५

उन्होंने भी प्लक्षद्वीप को सात भागो में विभक्त किया वहांभी इनके नाम से वर्ष प्रसिद्ध हुऐ, उनके नाम थे—शाकभव, शिशिर, सुखोदय।२९ आनन्द, शिव, क्षेमक ओर ध्रुवतथा प्लक्ष,शाल्मलि, कुश, क्रौंचओरशक इनपांच द्वीपों में ।३०।औरइनके विभागों थे वर्णाश्रम धर्म सदा स्थित रहता है और स्वभाव से हीवहाँ हिंसा नहीं होती ।३१। हिमालयकेअति

रिक्त किम्पुरुषादि वर्ष में सुखपूर्णायु बल और धर्म सदैव स्थित रहता है। हे विप्रवर ! इन पांचों द्वीपोमें संपूर्ण धर्म साधारण रूप से विद्यमान हैं। जिन आग्नीध्र को अपने पिता से जम्बूद्वीप मिला था।६। उनके प्रजापति तुल्य नौ पुत्र उत्पन्न हुए थे, सबसे बड़ा नाभि, उससे दूसरा किम्पुरुष। ३। तीसरा हरि, चौथा इलावृत पांचवां रम्य, छठवां हिरण्य।३४। सातवां कुरु, आठवाँ भद्र और नौवां केतुमाल हुआ, इन सबके नामों पर ही वर्ष बने।३५।

यानिकिंपुरूषाद्यानिवर्जयित्वाहिमाह्वयम् ।
तेषाँस्वभाव सिद्धिःसुखप्रायाह्ययत्नतः ३६
विपर्ययोनतेष्वस्तिजरामृत्युभयनच ।
धर्माधर्मौनतेष्वास्ताँनोत्तमाधममध्यमाः ।३७
नवैचतुर्युं चावस्थायाश्रमात्र्टनवोनच ।
आग्नीध्रसूनोर्नाभेस्तूऋषभोऽभत्सुतोद्विज ।३८
ऋषभाद्भरतोजज्ञे वीर पुत्रशताद्वरः ।
सोऽभिषिच्यर्षभःपुत्रमहाप्राव्राज्यमास्थितः ।३९
तपस्तेपेमहाभागःपुलहाश्रमसंश्रयः ।
हिमाह्वदक्षिणवर्षं भरतायपितादद ।४०
तस्मात्तु भारतंवर्षंतस्यनाम्नामहात्मनः ।
भरतस्यान्वभूत्पुत्रःसुमतिर्नामधार्मिकः ।४१
तस्मिन्राज्यंसमावेश्य भरतोऽऽपिवनययौ ।
एतेषांपुत्रपौत्रैस्तुसप्तद्वीपावसुन्धरा ।४२
एतेषाँपुत्रपौत्रैस्तुभुक्तःस्वायम्भूवेऽन्तरे ।
एषस्वायम्भूवःसर्गःकथितस्तेद्विजोत्तम ।
पूर्वमन्वन्तरेसम्यक्किमन्यत्कथयनामिते ।४३

हिमालय के अतिरिक्त जो किम्पुरुष है, उनको सिद्ध स्वभावसे ही तथा सुख बिना यत्न के ही उपलब्ध है।३६। उनकोविपर्यं अथवा वृद्धावस्था और मृत्यु से उत्पन्न होने वाला भय उपस्थित नहीं होता, वहां धर्म-अधर्म श्रेष्ठ मध्यमा या निम्न रूप में विभाग।३७। और चारोंयुग

होतीं, ऋतु विभाग भी नहीं है, आग्नीध्र के पुत्र नाभि के ऋषभनामक पुत्र हुआ ।३८। ऋषभ के पुत्र भरत हुए, ऋषभ ने अपने पुत्र भरत को राज्य देकर कल्याण ग्रहण कर लिया ।३९। इन महाभाग ने पुलहाश्रम मे निवास पूर्वक तप किया था, हिम नामक दक्षिण वर्ष को उनके पिता ने भरत को दिया था ।४०। इसलिए उन्हीं के नाम पर भारतवर्ष हुआ है भरत के एक पुत्र हुआ, जिसका नाम सुमति था ।४१। भरत ने भी सुमति को राज्य देकर वन गमन किया, इस प्रकार पौत्रों तथा प्रियव्रत के पुत्रो ने स्वायंभुव मन्वन्तर में सप्तद्वीपा पृथ्वी का निरन्तर भोग किया ।४२।पूर्व मन्वन्तर में यह स्वायंभुव सर्ग का सम्यक् वर्णन हुआ, अब और क्या कहूँ ? ।४६।

४६—जम्बूद्वीप वर्णन

कतिद्वीपाः समुद्रावापर्वतावाकतिद्विज ।
कियेन्तिचैववर्षाणिं तेषनिद्यश्चकामुने ।१
महाभूतप्रमाणचलोकालोकतथैवचः ।
पर्य्यसिपरिमाणवगतिंचन्द्रार्कयोरपि ।२
एतत्प्रब्रूहिमेसर्वं विस्तरेणमहामुने ।
शतार्द्धकोटिविस्तारा पृथिवीकृत्स्नशोद्विज ।
तस्याःसंस्थानमखिलं कथयामिश्रृणुष्वतत् ।४
येतेद्वीपामयाप्रोक्ताजम्बूद्वीपादयोद्विज ।
पुष्करान्तामहाभागश्रृणवेषाविस्तरपुनः ।५
द्वीपान्तुद्विगुणादोपोजम्बू प्लक्षोऽथशाल्मलिः ।
कुशःक्रौंचस्तथाशाकःपुष्करद्वीपएवच्च ।६
लवणोक्षुसुरासर्पिर्दधिक्षीरजलाब्धिभिः ।
द्विगुणैर्द्विगुणवृद्धयासर्वतः परिवेष्टिता ।७

क्रौष्टुकी ने कहा—हे मुने ! द्वीप, समुद्र, पर्वत, वर्ष औरनदियाँ

कितनी है?।१।महाभूत एवं लोकालोक काप्रमाण कितना है तथाचन्द्रमा और सूर्य के व्यास का परिणाम और गतिका प्रकार क्या है?।२।हेमहा-मुने ! विस्तार सहित इनका वर्णन करिये ।३। मार्कण्डेयजी ने कहा-यह सम्पूर्ण पृथिवी पचास करोड योजन विस्तार वालीहै,उन सभी स्थानोंका विषय वर्णन करता हूं, उसे सुनो ।४।हे महाभाग ! जम्बू इत्यदि जिन सतद्वीपों कावर्णन किया है उसका पुन:विस्तार सहित वर्णन करताहूँ।५ जम्बू प्लक्ष शाल्मलि कुश,क्रौंच,शाक और पुष्कर यह सातों द्वीप क्रमशः एक से दूसरा विस्तार में दुगूना है ।६। लवण, इक्षु, सुरा, घृत,दही,दूध और जल समुद्र के द्वारा दुगुने-दुगुने परिणाम में बढ़े हुए है ।७।

जम्बुदीपस्यसंस्थानंप्रवक्ष्येऽहं निबोधमे ।
लक्षमेकंयोजनानांवृत्तोविस्तारदैध्यतः ।८
हिमवान्हेमकूटश्चनिषधोमेरुरेवच ।
नील श्वेतस्तथाश्रृङ्गीसप्तवर्षपर्वताः ।९
द्विलक्षयोजनायामोमध्येनत्रमहाचलौ ।
तयोर्दक्षिणतीयात्रयौतथोत्तरतोगिरी ।१०
दशभिर्दशभिन्यूनैः सर्वेत्रात्रविस्तारिणश्चते ।११
समदायताः प्रविष्टाऽचलपुरुस्मिन्सप्त पर्वताः ।
दक्षिणोत्तरतोविस्तामध्येतुङ्गायथाक्षितिः ।१२
वेद्यर्द्धेदक्षिणेत्रीणित्रीणिवर्षाणिचोत्तरे ।
इलावृतंतयोर्मध्येचन्द्रार्द्धाकारवस्थितम् ।१३
ततःपूर्वेणभद्राश्वंकेतुमालंचपश्चिमे ।
इलावृतस्यमध्येतुमेरुःकनकपर्वतः ।१४

जम्बूद्वीप का आकार परिणाम बताताहूं यह विस्तार, दीर्घताऔर व्यास में यह एक लाख योजन काहै।८। उसके वर्ष पर्वत हिमवान, हेम-कूट, ऋषभ, मेरु, नील,श्वेत और शृंगी यह सात हैं।९। मध्यमें दोलाख योजन विस्तारवाले दो महान् पर्वत हैं, उनके दक्षिण और उत्तरमें दो-२

पर्वत है।१०। वह परस्पर दस-दस हजार न्यून संख्यक है तथा अन्न पर्वत दो हजारयोजन ऊंचे और इतनेही विस्तार वाले है ।११। इसकेमध्य समुद्र में स्थित छः वर्ष पर्वत है, यह भूमि उत्तर दक्षिण की ओर नीची और मध्य म ऊँची तथा विस्तृत है।१२।उत्तर और दक्षिण में तीन तीन वर्ष है,इन दोनोंके मध्य इलावृत वर्ष अर्द्धचन्द्र केआकार में स्थित है ।१३। उसके पूर्व में भद्राश्व और पश्चिम मे केतुमाल, है, इलावृत के मध्य में ही सुमेरु पर्वत हैं ।१४।

चतुराशीतिसाहस्त्रस्तस्योच्छ्रायोमहागिरेः ।
प्रविष्टषोडशाधस्ताद्विस्तारःषोडशैवतु ।१५
शरावसंस्थितत्वाच्चद्वात्रिंशन्मूर्ध्निविस्तृतः ।
शुक्लोपीतोऽसितो रक्तःप्राच्यादिषयथाक्रमम् ।१६
विप्रोवैश्यस्तथाशूद्रःक्षत्रियश्चवस्त्रर्णतः ।
तस्योपरितथैवाष्टौपुर्योदिक्षुयथाक्रमम् ।१७
तस्योपरिसभादिव्याःपूर्वादिषुक्रमेणतु ।
इन्द्रादिलोकपालानांतन्मध्येब्रह्मणःसभा ।
योजनानांसहस्राणिचतुर्दशसमुच्छ्रिता १८
अयुतोच्छ्रयास्तस्याधस्तथाविष्कम्भपर्वतः ।
प्राच्यादिषुमन्दरोगन्धमादनः । १९
विपुलश्चसुपार्श्वश्चकेतुपादपशोभिताः ।
सदम्बोमन्दरेकेतुर्जम्बुवगन्धमादने ।२०
विपुलेचतथाश्वत्थ सुपार्श्वेचवटोमहान् ।
एकादशशतायामायोजनानामिमेनगा ।२१

यह महापर्वत चौरासी सहस्र योजन ऊंचा है, सोलह हजारयोजन धरती में घुसाहुआ और वहां से सोलह सहस्रयोजनविस्तार वालाहैं।१५ इसकाशिखर बत्तीस योजन चौड़ा है । यह पूर्व की ओर श्वेत वर्ण का दक्षिणकी ओर पीला,पश्चिममे नीला तथाउत्तर में लाल वर्णकाहै।१६ इसकी दिशाओंमें पूर्वादि के क्रम से ब्राह्मण,क्षत्रिय,वैश्यऔरशूद्र रहतेहै

।७। उनके ऊपर उक्त दिशा क्रमसे ही इन्द्रादि लोकपालों तथा मध्य मे ब्रह्माजी की चौदसहस्र योजन विस्तार वाली सभा सुशोभित है ।१८। इसके नीचे पूर्वादि दिशाओ मे दस सहस्र योजन ऊंचे चार विष्कम्भ पर्वत है, इनक नाम मन्दार, गंधामादन ।१९। विपुल और सुपार्श्व हैं । इन चार पर्वतपोंर चार वृक्ष क्रमशः कदम्ब, जामुन ।२०। पीपल और बरगद केतुके सतान स्थित है, वह पर्वत एकादश सहस्र योजन परिमाण के हैं ।२१।

जठरोदेवकूटश्चपूर्वस्यांदिशिपर्वतौ ।
आनीलनिषधायातौपरस्परनिरन्तरौ ।२२
निषधःपारियात्रश्चमेरोःपाश्र्वेतुपश्चिमे ।
यथापूर्व्वौतथाचैनावानीलनिषधायतौ ।२३
कैलाशोहिमवांश्चैवदक्षिणेनमहाचलौ ।
पूर्वपश्चायतावेतावर्णवान्तव्यवस्थितौ ।२४
शृगवाञ्जारुधिश्चैवतथेवोत्तरपवतौ ।
यथैवदक्षिणेनद्वदर्णवान्तव्यवस्थितौ ।२५
मर्यादापर्वताह्येतेकथ्यन्तेऽष्टौद्विजोत्तम ।
हिमवद्धेमकूटादिपर्व्वतानांपरस्परम् ।२६
नवयोजनसाहस्रंप्रागुदग्दक्षिणोत्तरम् ।
मेरोरिलावृतेतद्वदन्तरवैचतुर्दिशम् ।२७

पूर्वमें जठर और देवकूट पर्वत स्थित हैं । यह परस्पर नील से निषध तक विस्तृत हैं।२२। मेरु के पश्चिम पार्श्व में निषध और परियात्र स्थित है,पूर्व दिशा के ही समान यहभी नील सेनिपध तक विस्तार युक्तहैं ।२३। दक्षिणमें कैलाश और हिमवान् नामक महान'प है यह पूर्ण पश्चिममेलम्बे होकर समुद्रमें प्रवेश किये हुएहैं ।२४। उत्तर में शृङ्गवान और जारुधि है, यह भी दक्षिण दिशा के ही समानही समुद्र तक विस्तार किये हुए है । ।२६। हेविप्र श्रेष्ठआठों पर्वतोका नाम यही है, जो तुम्हारे प्रति कहे हैं , तथा हिमवान् और हेमकूट आदि पर्वत परस्परमें है।२६।नौ सहस्र योजन

तक विस्तृत हैं। यह सभी पर्वत मेरु के चारों ओर तथा इलावृत के मध्य में हैं।२७।

फलानियानिवैजम्बागन्धमादद्रपर्वने ।
गजदेहप्रमाणानिपतन्तिगिरिमूर्द्धनि ।२८
तेषांस्त्रावात्प्रभवतिख्याताजम्बूनदीतिवे ।
लत्रजाम्बूनदनामकमभ्प्रजायते ।२९
सापरिक्रम्यवैमेरुंजम्बूमूलपुनर्नदी ।
विशातोद्विजशार्दूलपोयमानाजणैश्वतैः ।३०
भद्राश्वेऽश्वशिराविष्णुर्भारतेकूर्मसंस्थितिः ।
वराह केतुमालेचत्स्यरूपस्तथोत्तरे ।३१
तेषुनक्षत्रविन्यासाऋष:समवस्थिता: ।
चतुर्ष्वद्विजश्रेष्ठग्रहाभिभवं पाठका: ।३२

गधमादन पर्वत से गजदेह जैसे जामुन के फल शिखर के नीचे गिरते है।२८। उनके रस से उत्पन्न होने वाली नदी जम्बुनदी कही जाती है, इसी नदी से जम्बूनद उत्पन्न हुआ है।२९। सुमेरु पर्वत की चारो ओर परिक्रमा करती हुई वह नदी उस जामुन के वृक्ष के नीचे प्रवाहमान है, वहाँ रहने वाले मनुष्य उसी का जल पीते हैं।३०। भद्राश्व में अश्वशिरा, भारत में कूर्माकृति, विष्णु केतुमाल वराह और उत्तर में मत्स्य के स्वरूप मे भगवान् नारायण प्रतिष्ठित है।३१। इन चारो पर्वतों में नक्षत्र और ऋषि स्थित हैं तथा नक्षत्रों का जाना आना रहता है और उन ग्रहों का श्रेष्ठ या निकृष्ट फल भी होता रहता है।३२।

४७ जम्बूद्वीप के वन पर्वतादि

शैलेषुमन्दराद्येषुचतुर्ष्वपिद्विजोत्तम ।
बनानियानिचत्वानिसरांसिचनिबोधमे ।१

पूर्वे त्ररथंनाममक्षिणेनन्दनंवनम् ।
वभ्राजपश्चिमेशैलेसावित्र चोत्तराचले २
अरूणोदंसर पुर्वेमानसदक्षिणेतथा ।
शीतोदंपश्चमेमेरोमहाभद्रंतथोत्तरे ।३
शीतार्तश्चक्रमुंजश्चकुलीरोऽश्वश्च न्ङ्कवान् ।
मणिशैलोऽथवृषवान्महानीर्ल भवाचलः ।४
सुविन्दुमंन्दरोवेणुस्तामसोनिषवस्तथा ।
देवशैलश्चपूर्वेणमन्दरस्लभहाचल; : ।५
त्रिकूट;शिखगद्रिवरश्चकलिङ्गोऽथपतङ्गक; ।
रुचक;सानुमांश्चाद्रिस्ताम्रकोऽथविशाखवान् ।६
श्वेतादरःसमूनश्चवसुधारश्चरत्नवान् ।
एकशृङ्गे महाशैलोराजशलनःपिपाठकः ।७
पञ्चशैलाऽथकैलाशोहिमवांश्चाचलोत्तम् ।
इत्येतेदक्षिणे पार्श्वे मेरोःप्रोक्तामहाचला. ।८

माकँण्ढेयजी ने कहा—हे द्विजश्रेष्ठ ! मन्दरादि पर्वतोंमें चार वन तथा सरोवर हैं, अब उनका वर्णन करता हूं, सो सुनो।१। पूर्वमें चैत्ररथ,दक्षिण मे नन्दन, पश्चिम मे वैभ्राज और उत्तर मे सावित्र नामक वन स्थित है ।२। सुमेरु के पूर्व में अरुभेद, दक्षिण में मानस, पश्चिम मे शीतोद तथा उत्तर मे महाभद्र नामक सरोवर है ।३। मंदर में पूर्वमें शीतार्त चक्रमुंज कुलीर,मुककवान्, मणिशैल, वृषवान्, महानीली भवाचल।४ त्रिन्दु,मन्दर, वेणु, तामस,निषध और देवशैल नामक पर्वत स्थितहै ।५। त्रिकूट,शिखर कलिग,पतंगक,रुचक,मानुमान्,ताम्रक,विशाखवान् है।६।श्वेतोदर, समून, वसुधार, रत्नवान्, एक शृङ्ग,महाशैल,पिपाठक।७। पंचशैल,कैलाश तथा हिमवान् यह सभी महापर्वत सुमेरु के दक्षिण और अवस्थित है ।८।

सुरक्ष शिशिराक्षश्चवेदूर्य; पिंगलस्तथा ।
पिजरीऽथमहाभद्रःसुरसकपिलोमधुः ।९

अञ्जनःकुक्कुटःकृष्णःपाण्डुरश्चालोत्तमः ।
सहस्रशिखरश्चाद्रिपारियात्रःसश्रृङ्गवान् ।१०
पश्चिमेनतथामेरोर्विष्कम्भात्पश्चिमाद्वहिः ।
एतेऽचलाःसमाख्याताःश्रृणुष्वान्यांस्तथोत्तरान् ।११
शंखकूटोऽथवृषभोहंसवाभस्तथाचलः ।
कपिलेन्द्रस्तथाशैलःसानुमान्नीलएवच ।१२
स्वर्णश्रृङ्गःशातश्रृङ्गःपुष्पकोमघपर्वतः ।
विरजाक्षोवराहाद्रिर्मयूरोजारुधिस्तथा ।१३
इत्येतेनथितान्ब्रह्मन्मेरोरुत्तरतोनगाः ।
एतेषांपर्वतानांतुद्रोण्योतीवमनोहराः ।१४

सुराक्ष, शिशिराक्ष, वैदर्य, पिंगल, पिंजर, महाभद्र, सुरस, कपिल, मनु ।९। अंजन कुक्कुट, कृष्ण, पण्डुर, सहस्र, शिखर, पारियात्र और श्रृङ्गवान् ।१०। यह सुमेरु और बिष्कम्भ के पश्चिम और बहिर्भाग मे अवस्थित है । अब उत्तर दिशा के पर्वतो के विषय मे कहता हूँ, उसे सुनो ।११। शंखकूट, बृषभ हंसनाभ कपिलेन्द्र, सानुमान्, नील, ।१२। स्वर्ण, श्रृङ्गी, शातश्रृङ्गी, पुष्पक मेघ पर्वत, विरजाक्ष, वराहाद्रि, मयूर और जाराधि ।१३। हे विप्र ! यह सभी पर्वत सुमेरु के उत्तर भाग में स्थित बताये गये है, इन पर्वतों की गुफाए अत्यन्त रमणीक है ।१४।

वनैरमलपानीयैःसरोभिरुपशोभिताः ।
तासुपुण्यकृतांजन्ममनुष्याणांद्विजोत्तम ।१५
एतेभौमाद्विजश्रेष्ठस्वर्गाःस्वर्गगुणाधिकाः ।
नतासुपुण्यपापानामपूर्वाणामुपार्जनम् ।१६
पुण्योपभोगएवोक्तोदेवानामपितास्वपि ।
शीतान्ताद्येषुचैतेषुशलेषुद्विजसत्तम ।१७
विद्याधराणांयक्षाणांकिंनरोरगरक्षसाम् ।
देवानांचमहावासागन्धर्वाणांचशोभनाः ।१८

सभा:पुर्योमनोज्ञाश्चसदैवोपवनैर्युता ।
सरांसिचमनोज्ञानिसर्वर्तुसुखानिल, ।१९
नचौतेषुक्रमोबाधावमनस्यचकुत्रचि[।
तदेतत्पार्थिवंपद्मंचतुष्पत्रलोदितम् ।२०
भद्राश्चभारताद्यानिपत्राण्यस्यचतुर्दिशम् ।
भारतंनामयद्वर्षंदक्षिणेनमयोदितम् ।२१
तत्कर्मभूमिर्नान्यत्रसंप्राप्ति पुण्यपापतो: ।
एतत्प्रधानंविज्ञेयंयत्रसर्वंप्रतिष्ठतम् ।२२
अस्मात्स्वर्गापवर्गौचमानुष्यनारकावपि ।
तिर्यक्त्वमथवाप्यन्यन्नराप्राप्नोतिद्विज ।२३

यह सभी पर्वत वन तथा निर्मल जलसे परिपूर्ण सरोवरों से सुशोभित है इस परम पुण्य स्थल मे पुण्यात्मा मनुष्य ही उत्पन्न होते हैं।१५। हे द्विजवर ! यह सब स्थान स्वर्ग से गुणवत भौम स्वर्ग के नाम से प्रसिद्ध है यहाँ अपूर्व पाप अथवा पुण्य संचित नही होता ।१६। इन सभी शीतान्तादि पर्वतों का उपभोग हो सकना देवगणों के लिए भी पुण्य भोग स्वरूप है ।१७। यहाँ विद्याधर, यक्ष, किन्नर, उरग, राक्षस, देवता, गन्धर्व आदि का अत्यन्त सुशोभित निवास है ।१८। यह भूमि अत्यन्त पुण्यरूपा, सुरम्य और देव द्यान एवं मनोहर सरोवरों से युक्तहै, यहाँ की समीर सभी ऋतुओं में सुखदायी है ।१९। यहां कहीं भी मनुष्यों में विद्वेष भाव दिखायी नहीं देता, इसलिए इसे मैंने चतुष्पत्र पार्थिव पद्म कहा है ।२०। भद्राश्व और भारत आदि इसके चारों ओर चार पत्ते हैं तथा जो दक्षिण दिशा में भारतवर्ष कहा है ।२१। वह कर्मभूमि है, अन्य किसी स्थानमें पाप-पुण्यकी उपलब्धि नहीं है , सबके अवस्थान करने से ही भारतवर्ष को ही प्रधान माना गया है ।२२। कर्मभूमि होनेके कारण ही इससे मनुष्यों को स्वर्ग , मोक्ष, मनुष्य योनि, नरक, खगयोनि अथवा अन्यान्य योनियों की प्राप्ति होती है ।२३।

४८—गंगावतार

धरारंजगद्यानेःपादनारायणस्यच ।
ततःप्रवृत्तायादेवीगङ्गात्रिपथगामिनी ।१
साप्रविश्यसुधायोनिंसोममाधारमम्भसाम् ।
ततःसवर्द्धमानार्करश्मिमङ्गतिपाविनी ।२
पपातमेरुपृष्ठेचसाचतद्धातितोयया ।
मेरुकूटतटान्तेभ्योनिपन्तन्तीविवर्तिता ।३
विकीर्यमाणसलिलानिरालम्बम्पपातसा ।
मन्दनाद्येषपादेषुप्रविक्तोदकासमम् ।४
चतुर्वपिपपाताम्बुविभिन्नाङ्घ्रिशिलोच्चया ।
पूर्वासीतेऽतिविख्यातायथोचत्ररथंवनम् ।५
तत्प्लावयित्वाचययौवरुणोदसरोवरम् ।
शीतान्तचगिरितस्मात्ततश्चान्यान्गिरींक्रमात् ।६
गत्वाभुवंसमासाद्यभद्राश्वेजलधिंगता ।
तथैवालकनन्दाख्यादक्षिणगन्धमादने ।७

मार्कण्डेयजी ने कहा---जगद्योनि नारायण के ध्रुव धार पद से ही त्रिपथगामिनी भगवती गंगा की उत्पत्ति हुई है ।१। वह समस्त जलही आधार रूपिणी सुधायोनि चन्द्रमण्डल मे प्रवेश करके वहा सम्बद्ध सूर्य-रश्मियों से संयुक्त होकर अत्यन्त पवित्र होकर ।२। सुमेरु पर गिरी है और वहाँ के सब कूट प्रान्त से गिरती हुई चार धाराओं में वहाँ से निकली है ।३। इस प्रकार जलसे विस्तृत और आलम्ब से रहित गंगा मन्दरादि पर्वत मे विभाजित होकर समान भाव से निपतित हुई है।४। और पर्वत शिखाओं को काटती हुई बढी । उनमें जो जल धारा पूर्व में बहती हुई चैत्ररथ बन की ओर गई है, उसे सीता कहते है ।५। वह सीता नामक गङ्गा चैत्ररथ वन को जलयुक्त करती हुई वरणोद सरोवर मे पहुंची है, वहां से शीतान्त पर्वत एवं अन्य पर्वत का अतिक्रमण करती हुई ।६। पृथ्वी पर उतर कर भद्राश्व वर्ष में होकर समुद्र तक

गई है तथा सुमेरु के दक्षिण ओर से जो गङ्गाजल गंधमादन पर्वत में निपतित हुआ है, उस धारा का नाम अलकनन्दा है ।७।

मेरुपादेवनगत्वानन्दनंदेवनन्दनम् ।
मानसचमहावेगात्प्लावयित्वासरोवरम् ।८
आसाद्यशैलराजानरम्यंत्रिशिखरंगता ।
तस्माच्चपर्वतान्सर्वान्दक्षिणेयेक्रमोदिता: ।९
तान्प्लावयित्वासंप्राप्तहिमवन्तमहागिरिम् ।
दधारतत्रतांशम्भुर्नमुमोचवृषध्वजः ।१०
भगीरथेनोपवासैस्तुत्याचाराधितोवभुः ।
तत्रमुक्ताचशर्व्वेणसप्तधादक्षिणोदधिम् ।११
प्रविवेशत्रिधाप्राच्यांप्लावयन्तीमहानदी ।
भगीरथरथस्यानुस्रोतसैकेनदक्षिणम् ।१२
तथैवपश्चिमेपादेविपुलेसामहानदी ।
सुचक्षरितिविख्यातावेभ्राजमावनयग्रो ।१३
शीतोदचसरस्तस्मात्प्लावयन्तीमहानदी ।
तस्मात्क्रमेणचाद्रीणांशिखरेषुनिपत्यसा ।
सुचक्षःपर्वतंप्राप्तानतश्चत्रिशिख गता ।१४

अलकनन्दा ने सुमेरु के समीपवर्ती देवताओं को प्रसन्नताप्रद नन्दनवन में जाकर अत्यन्त वेग से मानस सरोवर को जल से परिपूर्ण किया है ।८। इस मानस सरोवर को भर कर पर्वतराज के सुरम्य शिखर स्थान से तथा वहां से सब पर्वतों का अतिक्रमण करती हुई ।९। और उन्हें जल से परिपूर्ण करती हुई हिमालय में निपतित हुईहै । वहां भगवान् शङ्कर ने उस गङ्गा को धारण कर उन्हेंकिसी प्रकार भी नहींछोड़ा ।१०। फिर जब महाराज भगीरथ ने भगवान शिव को उपवास और स्तुति पूर्वक आराधना की तब उन्होंने गङ्गा को छोड़ा और वहाँ से छूटते ही गङ्गा सात धाराओं में विभक्त होकर दक्षिण समुद्र में प्रविष्ट हुई ।११। उनमें तीन भाग पूर्व की ओर प्लावित करती हुई समुद्र में गई और एक धारा भगीरथ के पीछे पीछे जाकर समुद्र में

जा मिली। १२। सुमेरु के पश्चिम में विपुलपाद के रूप से जो धारा निर्गत हुई उसका नाम सुचक्षु हुआ। उसने वैभ्राज पर्वत एवं बन को पवित्र करते हुए ।१३। शीतोद सरोवर को प्लावित किया और वहाँ से सब पर्वतों के शिखरों पर और सुचक्षु पर्वत पर होकर त्रिशिखर पर्वत को प्राप्त हुई ।१४।

केतुमालसमासाद्यप्रविष्टादक्षिणोदधिम् ।१५
(गत्वोत्तरांदिशगगादिव्यासाचमहानदी ।
तस्माच्चऋषभादीश्चक्रमादुत्तरजान्नगान ।)
सुपार्श्वंततथैवाद्रिमेरूपादहिसागता ।
भद्रसोमेतिविख्यातासाययौंसवितुर्वनम् ।१६
तत्पावयन्तीसंप्राप्तामहाभद्रंसरोवरम् ।
ततश्चशङ्खकूटंसाप्रयातागैमहानदी ।१७
तस्माच्चवृषभादीन्साक्रमानप्राप्यशिलोच्चलाम् ।
महार्णवमनुप्राप्ताप्लावयित्वोत्तरान्कुरून्। १८
एवमेषामयागंगाकथितातेद्विजर्षभ ।
जम्बूद्वीपनिवेशश्चवर्णाणिचयथातथम् ।१९
बसन्तितेषुप्रजा:किंपुरूषादिषु ।
मुखप्रायनिरातङ्कान्यूनतोत्कर्षवर्जिता ।२०
नवस्वपिचवर्षेषुसप्तसप्तकुलाचला: ।
एकैकस्मिन्यथादेशेनद्यश्चाद्रिविनि:सृता: ।२१

फिर केतुमाल वर्ष में प्रवेश करती हुई समुद्र में संयुक्त हुई है ।१५। (फिर यह दिव्य महानदी उत्तरदिशामें होती हुई ऋषभादिक उत्तरपर्वतों को प्राप्त हुई) यह चतुर्थ धारा सुपार्श्व और सुमेरुस सविता वनमें गई, वहाँ भद्रसोमाके नामसे प्रसिद्ध हुई, उस पवित्र वन को ।१६। पवित्र करके उसने महाभद्र सरोवर को प्लावित किया. फिर शंखकूट पर्वत में गई।१७। वहाँसे बृषभादि पर्वतोंमें होकर उसने समस्त उत्तर कुरुदेशको पवित्रकिया और फिर महासागर में जा मिली।१८।हे द्विजवर ! मैंने तुम्हारे प्रति गंगाजीका बिषय कहा तथा जथाजम्बूद्वीपके निवेशमें।१९।जिन किम्पुरुषादि

का वर्णन हुआ है, उनमें जो जीव रहते हैं, वह प्राय: सुखी, आतंक-रहित एवं न्यूनता-अधिकता से रहित है ।२०। जिन नौ वर्षों का वर्णन हुआ है, उनमे सात-सात कुलाचल हैं और प्रत्येक देश में ही पर्वत तथा बहती नदियाँ अवस्थित हैं ।२१।

यानिकिंपुरुषाद्यानिवर्षाण्यष्टौद्विजोत्तम ।
तेपूद्भिज्जानितोयानिनैवंवार्यत्रभारते ।२२
वार्क्षीस्वाभाविकीदेश्यातीयोत्थामानसोतथा ।
कर्मजाचमृणासिद्धिवर्षेष्वेतेषुचाष्टसु ।२३
कामदेभ्योवार्क्षीसिद्धि स्वभावजा ।
स्वाभाविकीसमाख्यतातृप्तिदेश्याचदैशिकी ।२४
अपासीक्ष्म्याच्चतोयोत्थाद्ध्यानोपेताचमानती ।
उपासनादिकार्यानु कर्मजासाप्युदाहृता ।२५
नचतेषुयुगावस्थानाधयोव्याधयोनच ।
पुण्यापुण्यसमारम्भनैवतेषुद्विजोत्तम ।२६

हे द्विजवर ! किम्पुरुषादि जो आठ वर्ष है, उनमें जल उद्भिद मात्र है, क्योंकि इस भारत वर्ष मे मेघ के जल की अधिकता है ।२२। यह आठ वर्ष है, वहाँ वार्क्षी, स्वाभाविकी, देश्या, तोयोत्था, मानसी और कर्मजा उन छः प्रकारो की मानसी सिद्धि है ।२३। जिस कामना के देने वाले वृक्षसे सिद्धि की उत्पत्ति होती है, वह वार्क्षी कहा गया है, स्वभाव वश उत्पन्न सिद्धि ही स्वाभाविकी है देश जात सिद्धि का नाम देश्य है ।२४। तथा जलकी सूक्ष्मता से जो सिद्धि होती है, उसे तोयोत्था कहते है, मानसी सिद्धि ज्ञानके द्वारा मनसे उत्पन्न होती है तथा उपासनादि कर्म द्वारा उत्पन्न होने वाली सिद्धि को कर्मजा कहा गया है । ।२४। हे द्विजवर ! इन समस्त वर्षों में युगों का भेद आधि व्याधि तथा पुण्य पाप कुछ नहीं होता था ।२६।

४६ — भारतवर्ष विभाग

भगवन्कथितं त्वेनज्जम्बूद्वीपं समासतः ।
यदेतद्भवताप्रोक्तं कर्मनान्यत्रपुण्यदम् ।१
पापायमहाभागवर्जयित्यातुभारतम् ।
इतःस्वर्गश्छमोक्षश्च मध्यश्चान्तश्चगम्यते २
नखल्वन्यत्रमर्त्यानाँभूमौकर्मविधीयते ।
तस्माद्विस्तरशोब्रह्म ममैतद्भारतंवद ।३
येचास्यभेदायावन्तोयथावत्स्थितिरेव च ।
वर्षंयद्विजशार्दूल येचास्मिन्देशपर्वताः ।४
भानतास्यास्यवर्षस्य नवभेदान्निबोधमे ।
समुद्रान्तरिताज्ञेयास्तेत्वगम्याःपरस्परम् ।५
इन्द्रद्वीपःकशेरुमांस्ताम्रवर्णोगभस्तिमान् ।
नागद्वीपस्तथा सौम्योगान्धर्वस्त्वथवारुणः ।६
अयतुनवमस्तेषांद्वीपःसागरसंवृतः ।
योजनानांसहस्रं वैद्वीपोऽयदक्षिणोत्तरम् ।७

क्रौष्टुकि बोले-हे भगवन् ! इस जम्बू द्वीप का आपने संक्षिप्त रूप में वर्णन किया और आपने कहा कि भारत वर्ष के अतिरिक्त किसी अन्य स्थान मे कोई ।१। पाप या पुण्य का कारण नही होता और इसी स्थान से स्वर्ग मोक्ष, मध्यदशा, अन्तकालीन दशा ।२। सब की प्राप्ति होती है, अन्य किसी भी स्थान में मनुष्य कर्म का अनुष्ठान नहीं करता, इसलिए इस भारतवर्ष का वर्णन ही विस्तृत रूप से कहिये ।३। इसमें जितने भेद है, भेदों का जितना परिमाण है, जितने प्रदेश और पर्वत हैं, उन सबको विस्तार पूर्वक बताइये ।४। मार्कण्डेय ने कहा हे ब्रह्मन् ! भारत वर्ष के नौ विभाग हैं, वे सभी समुद्र के द्वारा विभक्त तथा परस्पर मे अगम्य हैं, उनके विषय में बताता हूँ ।५। इन्द्र द्वीप, कशेरुमान्, ताम्रवर्ण, गभस्तिमान, नागद्वीप, सौम्य, गान्धर्व-

वारुण ।६। तथा नौवाँ भारत है, यह भारत नामक द्वीप समुद्र से घिरा हुआ है तथा दक्षिण में और उत्तर मे हजार योजन परिमाण वाला है । ७ ।

पूर्वे किरातस्यान्ते पश्चिमे यवनास्तथा ।
ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्या शूद्रश्चान्त स्थिता द्विज ।८
इज्याध्यायवणिज्याद्यै कर्मभिः कृतपावनाः ।
तेषां संव्यवहारश्चएभि कर्मभिरिष्यते ।९
स्वर्गापवर्ग प्राप्तिश्च पुण्य पाप चवैतदा ।
महेन्द्रो मलयः सह्यः शुक्तिमानृक्षपर्वतः ।१०
विन्ध्यश्च पारियात्रश्च सप्तैवात्र कुलाचलाः ।
तेषां सहस्रशश्चान्ये भूधा हि समीपगाः ।११
विस्तारोच्छ्रयिथोरम्या विपुलाश्चित्र मानवः ।
कोलाहलास वैभ्राजो सन्दरो र्दर्दुनाचलः ।१२
वातस्वनो वैद्युतश्च मैनाकास्वरसतथा ।
तुंगप्रस्थो नागगिरी रोचनः पाण्डुराचला : १३
पुष्पो गिरिर्दुर्जयन्तो रैवतो ऽर्बुद एवच ।
ऋष्यमूकः सगोमन्तः कूटशैलः कृतस्मरः ।१४
श्रीपर्वतश्चकोरश्शतसो ऽन्ये च पर्वताः ।
तैर्विमिश्रा जनपदाम्लेच्छाश्चार्या भागशः ।१५

इसके पूर्व मे किरात और पश्चिममें यवन रहते हैं, इसके मध्य भाग में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों का निवास है ।८। यह यज्ञ, अध्ययन, वाणिज्य आदि अपने-अपने कर्मको करते है । सब कर्मों से उनके भले प्रकार व्यवहार से । ९ । स्वर्ग तथा मोक्ष की प्राप्ति और पाप-पुन्य आदि सब कर्मों की उपस्थिति रहती है । महेन्द्र, मलय, सह्य, शक्तिमान ऋक्ष ।१०। विन्ध्य और परियात्र नामक सात कुलाचल इसमें विद्यमान है. इन सबकुल पर्वतों के निकट ही हजार-हजार पर्वत हैं ।११। जिन में कोलाहल; वैभ्राज, मन्दर, दर्दुराचल ।१२। वातस्वन वैद्युत, मैनाक. स्वरस तुङ्गप्रस्थ. नागगिरि. पाण्डुराचल । १३ । पुष्प. दुर्जयन्त. रैवतक. अर्बुद. ऋष्यमूक. गोमन्त.

कूटशैल, कृतम्मर ।१४।श्रीपर्वत और कोर पर्वत अत्यन्त ऊँचे, रमणीक, विपुल एवं विस्तार युक्त है । इनमें सैंकड़ों जनपद है । इन पर्वतोंमे मिले हुए सभी जनपद विभाग के अनुसार म्लेच्छ तथा आर्य कहे गये हैं ।१५

तैपीयःतेसरिच्छ्रेष्ठायस्याःसम्यङ् निबोधमे ।
गङ्गासरस्वतीसिन्धुश्चन्द्रभागातथापरा ।१६
यमुनाचशतद्रूश्चवितस्तेरावतीकुहू
गोमतीधूतपापाचबाहुमाचदृषद्वती ।१७
विपाशादेविकारक्षानिश्चीरागण्डकीतथा ।
कौशिकीचापगाविप्रहिमवत्पादनिःसृताः ।१८
वेदस्मृर्वेददबतीवृत्रघ्नीसिन्धुरेवच ।
वेणासानन्दनाचैवसदानीरासहीतथा ।१९
माराचर्मण्वतीतीतापीविदिशावेत्रवत्यपि ।
क्षिप्राह्यवन्तीचनथापरियात्राश्रयास्मृताः ।२०
शोणोमहानदश्चैवनर्मदासुरथाद्रिजः ।
मन्दाकिनीदशार्णाचचित्रकूटातथापरा ।२१

उन जनपदों में रहने वाले मनुष्य जिन श्रेष्ठ नदियों का जल पाते हैं, उन सब नदियो के नाम बताता हूँ, उनको जान लो गंगा, सरस्वती, सिन्धु, चन्द्रभागा ।१६। यमुना, शतद्रू विस्तता, इरावती, कुहू, गोमती पुण्य सलिला बाहुदा दृषद्वती ।१७। विपाशा, देविका, ऋक्षु, निश्चारा, गण्डकी और कौशिकी । यह सभी नदियाँ हिमालय पर्वत सब पर्वतों से निसृत हुई है।१८। तथा देवस्मृती, वृत्रघ्नी, सिन्धु, देवा, सान्दनी, सदानीरा, मही ।१९। मार, चर्मण्वती तापी, विदिशा वेत्रबती, शिवा, अवर्णी यह सब नदियां पारियात्र पर्वत से उद्भुत हुई है ।२०। शोण महानंद और नर्मदा सुरथाद्रि से तथा मन्दाकिनी और दशार्णी यह दोनों चित्रकूट से निर्गत हुई है ।२१।

चित्रोत्मलासतमसाकरमोदापिशाचिका ।
तथान्यापिप्लश्रोणिर्विपाशावञ्जुलानदी ।२२

सुमेरुजाशुक्तिमतींसकुलीत्रिदिवाक्रमुः ।
ऋक्षपात्रसूतावैतथान्यावेगवाहिनी ।२३
क्षिप्रापयोष्णीनिर्विन्ध्यातापीचनिषधावती ।
वेण्यावैतरणीचैवसिनीवालीकुमुद्वती ।२४
करतोयामहागौरीदुर्गाचान्तःशिवातथा ।
विन्ध्यपादप्रसूतास्ताश्च पुण्यजलाःशुभाः ।२५
गोदावरीभीमरथीकृष्णावेण्ययातथापरा ।
तुङ्गभद्रासुप्रयोगा बाह्याकावेर्यथापगा ।२६
सह्यपादविनिष्क्रान्ताइत्येता सरिदुत्तमा ।
कृतमालाताम्रपर्णिपुष्पजासूत्पलावती ।२७
मलयाद्रिसमुद्भूतानद्यःशीतलास्त्विमाः ।
पितृसोमर्षिकुल्याचइक्षुकात्रिदिवाचया ।२८

चित्रोत्पला तमसा, करमोदा, पिशाचिका पिप्पलश्रोणि, विपासा, मंजुला ।२२। सुमेरुजा, शुक्तिमत, शकुली, सिदिवा, आक्रमु यह वेग से प्रवाहित होने वाली नदियाँ ऋक्ष पर्वत से निकली है ।२३। क्षिप्रा, पयोष्णी, निर्विन्ध्या, तापी, निषधावती. वेणवा, वैतरणी, सिनीवली, कुमुद्वती ।२४। करतोया, महागौरी, दुर्गा, अन्तक्षिवा यह शुभ प्रदायिनी. एवं पुण्य जल वाली नदियाँ विन्ध्यपद से अवतीर्ण हुई हैं ।२५। गोदावरी, भीमरथा, कृष्णवेगा, तुङ्गभद्रा, सुप्रयोग, वाह्या और कावेरी महानदी ।२६। इनका उद्भव भी विन्ध्य पर्वत से ही हुआ है। तथा कृतमाला, ताम्रपर्णी और उत्पलावती यह नदियां पुष्प पर्वत से निकलती हैं, ।२७। पितृकुल्या, इक्षुका और त्रिदिवा यह शीतल जल से युक्त नदियाँ मलयाद्रि से उद्भुत हुई हैं ।२८।

लांगूलिनीवशकरामहेन्द्रप्रभवाःह्यभे ।
ऋषिकुल्याकुमारीच्चमंदगामन्दवाहिनी ।२९
कुशापलाशिनीचैवशुचिमत्प्रभवाःस्मृताः ।
सर्वापुण्याःसरस्वाय;सर्वागंगा;समुद्रगाः ।३०

विश्वस्यमातरःसर्वाःसर्वपापहरा:स्मृताः ।
अन्याःसहस्रशश्चोक्ताक्षुद्रनद्योद्विजोत्तम ।३१
प्रावृट्कालवहा:काश्चित्सर्वकालवहाश्चयाः ।
मत्स्याश्वकूटाकुल्याश्चकुन्तलाःकाशिकोशलाः ।३२
अर्बुदाश्चार्कलिंगाश्चमल्लकाश्चवृकैःसह ।
मध्यप्रदेश्याजनपदा:प्रायशोमीप्रकीर्त्तिताः ।३३
सह्यस्यचोत्तरेयास्तुयत्रगोदावरीनदी ।
पृथिव्यामपिकृत्स्नायांस देशोमनोरमः ।३४

लांगलिनी तथा वंशकरा यह दो नदियाँ महेन्द्र पर्वत से निकली हैं, ऋषिकुल्या कुमारी, मन्दगा, मंदवाहिनी । २६ । कुशा, पलाशिनी इन नदियों का उद्गम शुक्तिमान् पर्वत से हुआ है । यहाँ जिन नदियों का वर्णन गया है, वह सभी परम पुण्य प्रदायिनी एवं अधिक जल से परिपूर्ण है, यह सभी गंगा और समुद्र मे जाकर मिल गई ।३०। हे द्विजवर ! यह सब नदियाँ विश्व की माता स्वरूपा संपूर्ण पापों का हरण करने वाली है, तथा इनके अतिरिक्त जो और भी हजारों छोटी-छोटी नदियाँ हैं । ३१ । उनमें कोई वर्षाकाल मे बहती है तथा किसी में सदैव जल रहा आता है । मत्स्य, अश्वकूट, कुल्य, कुण्डल, काशी, कोशल ।३२। अथर्व, कलिंग, आमलक और वृक् यह सभी जनपद प्रायः मध्य प्रदेश में अवस्थित बताये गये हैं ।३३। सह्य पर्वत के उत्तर में जहाँ गोदावरी प्रवाहमान है, वह स्थान सम्पूर्ण पृथिवी में ही अत्यन्त रमणीक है । ३४ ।

गोवर्द्धनपुरंरम्यंभार्गवस्यमहात्मनः ।
वाह्लीकावाटधानश्चआभीराःकालतोयकाः ।३५
अपरान्ताश्चशूद्रश्चपह्लवश्चर्मखण्डिकाः ।
गान्धारांयवनाश्चैवसिन्धुसौवीमद्रकाः ।३६
शतद्रुजा:कलिङ्गाश्चपारदाहारभूषिकाः ।
माठरैबहुभद्राश्चकैकेयादशमालिकाः ।३७

क्षत्रियोपनिवेशश्च्यशूद्रकुलानिच ।
काम्बोजादरदाश्चैवबर्बराअंगलौकिका: ।३८
चीनाश्चैवतुषाराश्चपह्लवाबाह्यनोदरा ।
आत्रेयाश्च भरद्वाजा:पुष्कलाश्चकशेरुका: ३९
लम्याका:शूयकाराश्चचुलिकाजागुडै मह ।
औषध्राश्चानिभद्राश्जकिरातानांच जातय: ।४०

वहाँ महात्मा भार्गवकी गोवर्द्धन नाम की सुरम्य नगरी है तथा बाह्लीक, वाटधान, अभारी और काल तोयक ।३५। यह अपरान्त देश कहा है । शूद्र, पह्लव, चर्म चण्डिका, गाधार सिंधु, सौवीरमद्रका ।३६ शतद्रुज, लिंगपाद, हारभूषिक, माठर, ब्रह्मभद्र केकय तथा दशमलि का आदि ।३७। सभी देशों मे क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र रहते हैं । काम्बोज, दरद अंगलोकिक ।३८। चीन. तुषार, और बहुतसे उत्पन्न हुए मनुष्यों को वहिर्देशज कहा गया है । आत्रेय, भारद्वाज, पुष्कल तथा कशेरुका ।३९। लम्बाक; शूलकार चुलिक जागुड, औषध्र और अनिभद्र आदि जातियों के मनुष्य किरात जाति के ही भेद स्वरूप है ।४०।

तामसाह्ममार्गाश्चकाश्मीरास्तुगणास्तथा ।
शूलिका कुहराश्चैवऊर्णादार्वास्तथावाच ।४०
एतेदगह्यदीच्यास्तुप्राच्यान्देशान्निबोधमे।
अभ्रारकामुद्गरकाअन्तर्गिरिर्बहिर्गिरा: ।४२
तथाप्लवङ्गारङ्गेयामालदामनवर्तिका: ।
ब्रह्मोत्तरा:प्रविजयाभार्गवागेयमल्लका ।४३
प्राग्ज्योतिषाश्चमद्राश्चविदेहास्ताम्रलिप्तका: ।
मल्लामगधगोमेदा:प्राच्याजनपदा:स्मृता: ।४४
अथापरेजनपदादक्षिणापदवासिन: ।
पांडयाश्चकेरलाश्चैवचोला:कुंत्यास्तथैवच ।४५
शैलूषामूषिकाश्चैवकुमारावानशसका: ।
महाराष्ट्रमाहिषिका:कालिङ्गाश्चैवसर्वश:।४६

आभीरा:सहचैशिक्याआटव्य:शबराश्चये ।
पुलिन्दाविन्ध्यमालेयावैदर्भादण्डकै:सह ।४७
पौरिकामौलिकाश्चैवअश्मकाभोगवर्द्धन; ।
नैषिका:कुन्तलाआन्ध्राउद्भिदावनदारका ।४
दाक्षिणात्यास्त्वमीदेशाअपरांस्तान्निबोधमे ।
सूर्यारका:कालिबलादुर्गैश्चामीकटै सह ।४६

तामस हंसमार्ग, काश्मीर, शूलिक, कुहिक, ऊर्ण और दर्व ।४१-यह सब देश उत्तर में हैं इनके पश्चात् अब पूर्व देशो का वर्णन सुनो,—अन्ध्रारक, मुदकर, अन्तर्गिरि, बहिर्गिरि ।४२। प्लवङ्ग, रङ्गेय, मानदमानवृत्तिक, उत्तर ब्रह्म, प्रविजय भार्गव, ज्ञेयमल्लका।४३।प्राग्ज्योतिष, पद्र, विदेह ताम्रलिसक, मल्ल, मगध, तथा गोमन्त आदि सब जनपद पूर्व दशा में है ।४४। अब दक्षिण के जनपदों का करता हूँ-पाण्डय, केरल, चोल, कुन्त्य ।४५। शैलूष, मूषिक, सुकुम, नामवासक, महाराष्ट्र, माहिषिक, कलिग ।४६।, आभीर वैथिक, आढकी, जहाँ शवर रहते हैं, पुलिन्द, विन्ध्यमालेय, वैदर्भ, दण्डक ।४७। पौरिक मौलिक अश्मक, भोगवर्द्धन, नैमिषिक. कुन्तल, अन्ध्र, उद्भिव और वनदारक ।४८। आदि सब देश दाक्षिणात्य कह कर प्रसिद्ध हैं, अब पश्चिम के देशों को कहता हूं ।४६।

पुलिन्दाश्चसुमीनाश्रूपपा:स्वापदै सह ।
तथाकुरुमिनश्चैवमर्वेचैवकठाक्षरा: ।५०
(कारस्करालोहजघावा जेयाभद्रका:) ।
तोसला:कोसलाश्चैवत्रैपुनाविदिशास्तथा ।
(तुषारास्तुंबुराश्चैवसर्वे चैवकरस्करा; ।)
नासिक्यावाश्चयेचान्येयेचैवोत्तरनर्म्मदा: ।५१
भीरुकच्छा:समाहेयासहसारस्वतैरपि ।
काश्मीराश्चसुराष्ट्राश्चआवन्त्याश्चार्बुदैसह ।५२
इत्येतेह्यपरान्ताश्चशृणुविन्ध्यनिवासिन ।
सरजाश्चकरुपाश्चकेरलाश्चोत्कलैसह ।५३

उत्तमर्णादशार्णाश्चभोज्याःकिष्किन्धकैःसह ।
तुम्बरातुम्बलाश्चैवपटवीनैषधैःसह ।५४
अन्नजःस्तुष्टिकाराश्चवोरहोत्राह्यवन्तल ; ।
एतेजनपदाःसर्वेविन्ध्यपृष्ठनिवासिनः ।५५
अतोदेशान्प्रवक्ष्यामिपर्वताश्रयिणश्चये ।
नीराराहंसमार्गाश्चकुरवोशुग ण। खसाः ।५३
कुन्तप्रावरणश्चैवऊर्णादार्वा.सकृत्रकाः ।
त्रिगर्त्तागालवश्चैवकिरातास्तामहै.सह ।५७

सूर्यारक कालिबल, दुर्ग, आमीकट, पुलिन्द, सुमीन, रूपप, स्वापद तथा कुरुमिन आदि प्रदेशों को कठाक्षर ।५०। (कारस्कर, लोहजंघ, वाले राजमद्र (तोशल, कोशल, त्रिपुर, विदिशा (तुषार और तुंबुर यह सब कारस्कर कहे है) या नासिक्याव कहे गये हैं, उत्तर नर्मदा।५१। भीरुकच्छ माहेय, सारस्वत, काश्मीर, सुराष्ट्र,आरम्भ और अर्बुद आदि सब देश पाश्चात्य कहकर प्रसिद्ध हैं ।५२। अब इनके उपरान्त बिन्ध्य-वासी देशो का वर्णन सुनो, सूरज, करूप, केरल, उत्कल ।५३। उत्तमर्ण, दशार्ण, भोज्य,किष्किधक,तुम्बरु,तुम्बुल, पटु नैषध।२४।अन्नज तुष्टिकार, वीरहोत्र और अवन्ति यह सभी जनपद विंध्य पर्वत के पृष्ठ मे स्थित है ।५५। अब जो देश पर्वत के आश्रय में स्थित है, उनका वर्णन करता हुं । नीहार, हंसमार्ग, कुरु, गुर्गण, खस ।५८। कुन्त, प्रावरण, उर्ण, दर्व, कृत्रत, त्रिगर्त, गालव, किरात और तामस यह सब पर्वतीय देश कहे जाते हैं ।५७।

कृतत्रेतादिकश्चतुर्युगकृतावधिः ।
एतत्तुभारतंवर्षंचतुःसस्थानसस्थितम् ५८
दक्षिणापरतोयह्यपूर्वेणचमहोदधिः ।
हिमवानुत्तरेणास्यकार्मुकस्ययथागुणः ।५९
तदेदभारतंवर्षंसर्वबीजद्वचोत्तम ।
ब्रह्मत्वममरेशत्वंदेवत्वंमर्त्यतांतथा ।६०

मगापश्वप्सरोनिस्तद्वत्नर्वेंसरीसृपा ।
स्थावराणांचसर्वंपामितोब्रह्मन् शुभाशुभैः ।६१
प्रयातिकर्मभूर्ब्रह्मन्नाय लोकेषुविद्यते ।
दैवारामपिविप्रर्षेसदापषमनोरथः ।६२
अपिमानुष्यमाप्स्यामौदवत्वात्प्रच्युताःक्षितौ ।
मनुष्यःकुरुतेतत्तु यत्रशक्य सुरासुरः।६३
तत्कर्मनिगडग्रस्तेःस्वकर्मख्यामापनोत्षुकैः ।
नकिंचित्क्रियतेकर्मसुखलेदोपबृंहितैः ।६४

तथा इसी भारतवर्ष मे सतयुगादि चारों युगों की विधि रहती है तथा यह चार संस्थान के रूप मे अवस्थित है ।५८। इसे पूर्व दक्षिण, और पश्चिम मे धनुषाकार से महासागर घेरे हुए है तथा उत्तरमें हिमालय पर्वत धनुष के गुण के समान स्थित है ।५९। हे विप्रवर ! यह वह भारतवर्ष है, जो सभी का बीज स्वरूप है । इसमे ब्रह्मत्व इन्द्रत्व, देवत्व तथा मनुष्यत्व इन सभी की विद्यमानता है ।६०। इसी से मृग, पशु आदि और अप्सराएं उत्पन्न हुई है, यहीं वृश्चिक आदि उत्पन्न होते है, स्थावर जंगमादि जितने भी पदार्थ है । वह सभी शुभाशुभ कर्म के फलस्वरूप हैं ।६१। हे ब्रह्मर्षे ! सभी लोको मे यह भारतवर्ष ही एकमात्र कर्मभूमि है, इसकी देवता भी सदैव इच्छा किया करते हैं ।६२। वे चाहते है कि यदि कभी देवत्व से भ्रष्ट हो तो पृथ्वी के मध्यमे स्थित इस भारतवर्ष मे ही मनुष्य योनिग्रहण करे क्योंकि जिस कार्यके करने में मनुष्य समर्थ है, उस कार्य का देवता या असुर कदापि नही कर सकते ।६३। देखो, कर्म-रूपी बेड़ियों में जकड़े हुए यह मनुष्य किंचित् सुख के मोह मे पड़ कर प्रसिद्धि की अभिलाषा करते हुए कर्म से विमुख रहते हैं ।६४।

५७ — कूर्मसंस्थान

भगवन्कथित सम्यग्भवताभारत मम ।
सरितःसर्वता देशायेचत्रवसन्तिवै ।१

किन्तुकूर्मस्त्वयापूर्वं भारमेभगवान्दरिः ।
काथतस्तस्यसस्थानश्रोतुमिच्छाम्यशेषतः ।२
कथम् स्थितोदेवःकूर्मरुपीजनार्दनः ।
शुभाशुभमनुष्याणांव्यज्यतेचततःकथम् ।
यथामुखयथापादास्तस्यन्वब्रूह्यशेषतः ।३
प्राङ्मुखीभगवान्थत्र कूर्मरुपाव्ययस्थितः ।
आक्रम्यभातंवर्षनवभेदमिदद्विजः ४
नवधासस्थितेन्यस्थनक्षत्राणिसमन्ततः ।
वियाश्चद्विजश्रेष्ठयेसम्यक्तान्निबोधमे ।५
विषयाश्चद्विजश्रेष्ठयेसम्यक्तन्निबोधमे ।
वेदिमद्रारिमाण्डव्याःशाल्वानीपास्तथाशकाः ।
उज्जिहानास्तथायतमघाषसख्यास्तथाखशाः ।६
मध्येसारस्वतामत्स्या शूरसेनाःसमाथुराः ।
धर्म्मारण्याज्योतिषिकागौरग्रीवागुडाश्मकाः ।७

क्रौष्टुकि ने कहा—हे भगवन् ! आपने भारतवर्ष के विषय में मुझे सम्यक् प्रकारेण बताया तथा उसमें नदी, पर्वत प्रदेश आदि जो हैं उनका भी सब वर्णन किया ।१। परन्तु आपने भारतवर्ष में भगवान् हरि के कूर्म रूप से निवास करने की बात कही थी, सो उनकी स्थिति किस प्रकार है यह सुनाना चाहता हूँ ।२। उन्होंने कूर्म रूप से किस प्रकार स्थिति की और उनके द्वारा मनुष्यों का शुभाशुभ किस प्रकार प्रकट हुआ हुआ था ? हे प्रभो ! उनके मुख और चरणोंका प्रकार आदि सब सम्यक् प्रकार से कहिए ।३। मार्कण्डेयजी ने कहा—हे द्विज ! वह नरायण भगवान् कूर्म रूप धारण करके इस नौ खण्डोंमे विभक्त भारत वर्ष मुख से निवास करते हैं ।४। सभी नक्षत्र और सम्पूर्ण विषय भी नौ भागों में बँटकर उनके चारों ओर रहते है अब तुम उसका विवरण सम्यक् प्रकार से श्रवण करो ।५। वेद मन्त्र माण्डव्य, शाल्व, नीप, शक, उज्जिहान, घोष, संख्य, खस ।६। सारस्वत, मत्स्य, शूरसेन, माथुर, धर्मारण्य. ज्योतिषिक, गौरग्रीव गुडाश्मक ।७।

वैदेहकाःसापचपला.संकेताःङ्कारूताः ।
कालकोटिसपाषण्डाःपारियात्रनिवासिनः । ८
कापिजलाःकुरोब्राह्याास्तथैवोदुम्बूराजनाः ।
गजाह्वयाश्चकूमस्यजनामध्यनिवासिनः ।९
कृत्तकारोहिणीसौम्याएतेषामध्यवासिनाम् ।
नक्षत्रत्रितयविप्रशुभाप्रभविपादकम् ।१०
वृषध्वजोऽञ्जनश्चौवजम्ब्वाख्योमानवाचलः ।
शूपकर्णोव्याघ्रमूखोमुर्वरःकर्क्कटाशनः ।११
तथाचन्द्रेश्वराश्चैवखशाश्चमगधास्तथा ।
शिवयोमैथिलाःशुभ्रास्तथावदनदन्तुराः ।१२
प्राग्ज्योतिषाःसलोहित्याःस्तमुद्राःपुरुषादका ।
पूर्णोत्कटोभद्रगौरस्तथोदयगिरिर्द्विज ।१३
काशयोमेखलामृष्टास्ताम्रलिप्तकैपादपा ।
वर्द्धमानाकोसलाचमुखेकर्मस्यमस्थिता ।१४

वैदेहक, पांचाल, संक , कंक, मारुत, कालकोटि, पाषण्ड, पारियात्र के निवासी ।८। कापिजल, ब्राह्मकुरु, उदुम्बर, पौर गजाह्व यह सभी देश कूर्म क मध्य स्थल में स्थितहै।९। कृत्तिका, रोहिणी और मृगशिर यह तीन नक्षत्र मध्य मे रहने वाले उन मनुष्यो का शुभाशुभ प्रकटकरते है ।१०। वृषध्वज, अंजन, जम्बुनामक मानवाचल, शूर्पकण व्याघ्रमुख, कर्कटाशन ।११। चन्द्रेश्वर खश, मगध, शिव, मैथिल, शुभ, वदन और दन्तुर ।१२। सभी पर्वत, प्राग्ज्योतिष, लौहित्य, सामुद्र, पुरुषादक, पूर्णोत्कट, भद्रगौर, उदयाचल, ।१३। काशय, मेखल, मुष्ट, ताम्रलिप्त, एक पादप, वर्द्धमान और कोसल यह सभी कूर्म भगवान् के मुख में अवस्थित है ।१४।

रौद्रं पुनर्वसुपुष्योनक्षत्रत्रितयमुखे ।
देमतद्दक्षिणेदेशाक्रौष्टुकेवदतःशृणु ।१५
कलिङ्गवंगजठराकोशलामूषिकास्तथा ।
चेदयश्छोर्द्धकर्णाश्चमत्यॉध्राविन्ध्यवासिन ।१६

विदर्भानारिकेलाश्चधर्मद्वीपास्तथैलिका ।
व्याघ्रग्रीवामहाग्रीवास्त्र पुराःश्मश्रुधारिणः ।१७
कष्किन्धाःमकूटाश्चनिशधाःकटकस्थलाः ।
दशार्णाहारिकानग्नानिषधा काकुलालकाः ।१८
तथैवपर्णशवराःपादेवैपूर्वदक्षिणे ।
आश्लेषक्ष तथाःपैत्र्यफाल्गुन्यःप्रथमास्तथा ।१९
नक्षत्रितयपादमाश्रतपूर्वदक्षिणम्
लकाकालजिराश्चैवशैलिकानिकटास्तथा ।२०
महेन्द्रमलयाद्राचदर्दुरेचवसन्तिय ।
कर्कोटकवनेयेंभृगुकच्छाःसकोङ्कणाः ।२१

तीननक्षत्र आर्द्रा पुनर्वसु और पुष्य भी मुखमें ही हैं । अब उनके दक्षिण पद मे स्थित देशों का वर्णन करता हूं ।१५। कलिग बंग, जठर, कोशल, मूषिक, चेदि, ऊर्ध्वकर्ण और मत्स्यादि जितने भी देश विन्ध्य पर्वत के समीपस्थ हैं ।१६। तथा विदर्भ, नारिकेल, धर्मद्वीप, ऐलिक, व्याघ्रग्रीव महाग्रीव, त्रैपुर, श्मश्रुधारी ।१७। कैष्किन्व, हेमकूट निषध, कटक स्थल, दशार्ण, हारिक, नग्न, काकुलालक ।१८। तथा पर्णशबर आदि सब देश और आश्लेषा, मघा और पूर्वा फाल्गुनी नक्षत्र ।१९।उनके पुर्व दक्षिण पाद में स्थित हैं, लंका, कालाजिन, शैलक, निकट ।२०। महेन्द्र, मलय, और दर्दुर पर्वतो मे स्थित जनपद तथा कर्कटक वनमें बसे हुए सब देश, भृगुकच्छ, कोंकण ।२१।

सर्वाश्चवतथाभीरावेण्यास्तीरनिवासिनः ।
अवन्तयोदासपुरास्तथैवाकारिणीजनाः ।२२
महराष्ट्राःसकर्णाटागोनर्दाश्चित्रकूटकाः ।
चोलाःकौलगिनाश्चैवक्रौंचद्वीपजटाधराः ।२३
कावेरी ऋष्यमूकस्थानासिकाश्चैवयेजनाः ।
शंखशुक्त्यादिवैदूर्य्यशैलप्रान्तचराश्चये ।२४
तथावारिचराःकोलाश्चर्मपट्टनिवासिनः ।
गणःबाह्याःपराकृष्णाद्वीपवासिनः ।२५

सूर्याद्रौकुमुद्राद्रौचतेवसन्तितथाजरा: ।
रौद्रस्वना:सपिशिकास्तथायेकर्मनायका: ।२६
दक्षिणा:कौरुषायेऋषिकास्तापसाश्रमा: ।
ऋषभा:सिंहलाश्चैवतथाकांचीनिवासिन:।२७
त्रिलंगा:कुञ्जदरीकच्छवासाश्चयेजना: ।
ताम्रपर्णीतथाकुक्षिरितिकूर्मस्यदक्षिण: ।२८

आभीर, वेण्य नदी के किनारे के सबदेश अवन्ति, दासपुर, आकरिणी ।२२। महाराष्ट्र, कर्णाट्रकगोकर्द, चित्रकूट,चोल, कोलगिरी, क्रौंच द्वीप, जटाधर ।२२। कावेरी तथा ऋष्यमूक के सब प्रदेश शंखमुक्ति आदि वैदूर्य शैल तथा उनके निकटस्थ ।२४। बरिचर कोल चर्मपट्ट तथा गणबाह्य और कृष्ण दीप मे रहने वाले मनुष्य ।२५। सूर्याद्रि और कुमुदाद्र इन पर्वतों के निवासी तथा रौद्र स्वर वाले, पिशिक और कर्मनायक ।२८। दक्षिण कौरुष, ऋषिक, ताप साश्रम, ऋषभ, सिंहल और काँची में निवास करने वाले, त्रिलग, कुजर, दरी कच्छप में रहने वाले मनुष्य एवं ताम्रपर्णी यह सभी कूर्म के दक्षिण पार्श्व मे स्थित हैं ।२८।

फाल्गुन्यश्चोत्तराहस्ताश्चित्रानक्षत्रत्रयं द्विज ।
कूर्मस्यदक्षिणेकुक्षौबाह्यपादस्तथापरम् ।२६
काम्बोजा:रहन्त्राश्चैत्रतथैववडवामुखा: ।
तथाचसिन्धुसौवीरा:सानर्त्तबनितामुखा: ।३०
द्रावणा:सार्गिगा:शुदा:कर्णप्राधेयबर्बरा: ।
किराती:पारद:पाण्यधास्तथापारशवा:कला: ।३१
धूर्त्ताकाहेमगिरिका:सिन्धुकालकवैरता: ।
सौराष्ट्रादरदाश्चैवद्राविडाश्चमहार्णवा: ।३२
एतेजनपदा:पादेस्थितं वैदक्षिणेऽपरे ।
स्वात्योविशाखामैत्रं चनक्षत्रत्रयमेवच ।३३
मणिमेघक्षुराद्रिश्चखंजयोऽस्तगिरिस्तथा ।
अपरान्तिकानोह्यान्तिकाविप्रशस्तका: ।३४

कोंकणा:पञ्चनदकावमनाह्य वरास्तथा ।
तारक्षुराह्य गतका शर्करा:शालमवेश्मक ।३५
गुरुश्वरा:फालगुनकावेणुमत्यांचये जना: ।
तथाफलगुलुकागोरागुरुहाश्चलास्तथा ।३६
एकेक्षणावाजिकेशादीर्घ ग्रीवा:मचूलिका: ।
अश्वकेशास्तथापूच्छेजना.कूमस्यसंस्थिता: ।३७

उत्तरा फालगुनी, हस्त और चित्रा यह तीन नक्षत्र कूर्मके दक्षिण पार्श्व में रहे है तथा ब्राह्मपाद ।२९। काम्बोज, पह्लव,बडवामुख,सिन्धु, सौवीर, आनर्त्त, बनितामुख ।३०। द्रावण, सार्गिग, शूद्र, कर्ण, प्रांयघेय, बर्बर, किरात, पारद, पारशव, कल ।३१। धूर्त्तक, हैमगिरिक, सिन्धुकालक बैरत, सौराष्ट्र दरद महार्णव ।३२। यह समस्त जलपद कूर्म के दक्षिण पद मे रहते है और स्वति, बिशाखा और अनुराधा यह तीनो नक्षत्र इनमे निवास करने वालों के शुभाशुभ को व्यक्त करते रहते हैं ।३३। माणमेघ, शुराद्रि, खंजय, अस्ताचल, अपारन्तिक, हैहय, शान्तिक, विप्रराशतक ।३४। कोंकण, पंचनद, वमन, अवर, तारक्षुर, अंगतक, शंकर, शालमल ।३५। गुरुश्वर फालगुनक, वेणुमत्य, फालगुलुक घोर, गुरुह कल तथा ।३६। एक नेत्र वाले वाजिकेशा, दीर्घ कंठ मच्चूलिक तथा अश्वकेश इन सब देशों के निवासी कूर्म की पूँछ में स्थित हैं ।३७।

ऐन्द्रं मूलतथाषाढानक्षत्रत्रयमेवच ।
माण्डव्याश्चंडखाराश्चअश्वकालनदास्तथा ।३८
कृशात्तालडहाश्चैवस्त्रावाह्मबालिकास्तांथा ।
नृसिहवेणमत्यांचवलावस्थास्तथापरे ।३९
धर्मवद्धास्तथोलूकाउरुकर्मस्थिताजना: ।
(तथाफलगुलकाघोराघुरलाहिमतारका ।
एकेक्षणावाजिकोशमीर्ध पादास्तजैवच ।
वामेपरेजना:पादेस्थिता:कूर्मस्यभागुरे ।४०

आषाढाश्रवणेचैवधनिष्ठायत्रसंस्थिता ।
कैलासोहिमवांश्चैवधनुष्मान्वसुमांस्तथा ।४१
क्रौंचा:कुरुबकाश्चैवक्षुद्रवीणाश्चयेजना: ।
रसालया:सकैकेयाभोगप्रस्था:सयामुना: ।४२

ज्येष्ठ, मूल और पूर्वाषाढा यह तीनों नक्षत्र भी कूर्म की पूँछ में ही रहते है। माण्डव्य, चण्डखार, अश्वकालनद एवं ।३८। कुनात्त, लडह, स्त्री-बाह्य, बालिका, नृसिंह वेणुमती बलावस्था ।३९। धर्मबद्ध, उलूक ऊरुकर्म के निवासी मनुष्य तथा फल्गुलका, घोर, घुरल, हेमतारक, एकेक्षण, वाजिकोश और दीर्घपाद) यह सभी देश कूर्म के वामपद में अवस्थित हैं ।४०। तथा उत्तराषाढा, श्रावण और धनिष्ठा यह तीन नक्षत्र भी वामपद में स्थित हैं। कैलास, हिमालय धनुष्मान् वसुमान् ।४१। क्रौंच, कुरुबक, क्षुद्रवीण, रसालय, कैकय, भोगप्रस्थ, यामुन ।४२।

अन्तर्द्वीपास्त्रिगर्त्ताश्चअग्नीज्या:सादनाजना: ।
तथैवाश्वमुखा:प्राप्ताश्चिविडा:केशधारिण: ।४३
दासेरकावाटधाना:शवधानास्तथैवच ।
पुष्कलाधमकैराता स्तथातक्षशिलाश्रया: ।४४
अम्बष्ठमालवामद्रावेणुका:सवदन्तिका: ।
पिंगलागानकलहाहूणा:कोहलकास्तथा ।४५
माण्डव्याभूतियुवकाशातकाहेमतारका: ।
यशोमत्यासगान्धारा:खरसागरराशय: ।४६
यौधेयासदासमेयाश्चराजन्या:श्यामकास्तथा ।
क्षेमधूर्त्ताश्चकूर्मस्यवामकुक्षिमुपाश्रिता: ।४७
वारुणंचात्रनक्षत्रतद्वत्प्रोष्ठपमाद्वयम् ।
येनकिन्नरराज्यंचपशुपालंसकीचकम् ।४८
काश्मीरकंतथाराष्ट्रमभिसानजरस्तथा ।
दरदास्त्वंगणाश्चैवकुलटावनराष्ट्रका ।४९

सेरिष्ठब्रह्मपुरास्तथैवतनब्राह्यका: ।
किरातकौशिकानन्दाजना:पह्लवलोलना: ।

अन्तद्वीप, त्रिगर्त, अग्नीज्य, अर्दन,अश्वमुख,प्राम चिविड, केशधारी ।४३। दासेरक, वाटधान, शवधान, पुष्कल, अधम कैरात, तक्षशिला ।४४। अम्बष्ठा, मालव, मद्र, वेणुक, वदन्तिक, पिंगाल, मानकलह, हूण कोहल, ।४५। माण्डव्य, भूतियुवक, हेमातारक यशाकत्य, गाधार स्वरम, गर गाशि ।४६। यौधेय, दासमेय. राजन्य, श्यामक, क्षेमधूर्त्त यह सभी जनपद कूर्म के वाम पार्श्व में स्थित हैं ।४७। शतभिषा, पूर्वभाद्रपद और उत्तरभाद्रपद यह तीनों नक्षत्र वहाँ का शुभाशुभ फल व्यक्त करते है. किन्नर राज्य पशुपाल, कीचक ।४८। काश्मीर. अभिसारजन, दरद, त्वगण. कुलट, वनराष्ट्र ।४। सैरिष्ठ ब्रह्मपुर, वनवाह्यक, किरात, कौशिकानन्द पह्लव, लोलन ।५०।

दार्वादामरकाश्चैवकुरटाश्चान्नदारका: ।
एकपादा खशाघोष स्वर्भोमानवद्यका: ।५१
तथास्ययवनाहिंगाश्चीरप्रावरणाश्चये ।
त्रिनेत्रा पौरवाश्चैवगन्धर्वाश्चद्विजोत्तम ।५२
पूर्वोत्तरं तुकूर्मस्यपाममेतेसमाश्रिता: ।
रेवत्यश्चाश्विवैवत्य याम्यं चक्षमतित्रयम् ।५३
तत्रपादेममाख्यात पाकायमुनिसत्तम ।
देशेष्वेतेष चैतानिनक्षत्राण्यपिवै द्विज ।५४
एतत्पीडाअमीदेपा:पीडयन्तेयेक्रमोदिता: ।
यान्तिचाभ्युदयविप्रग्रहै:सम्यगवस्थितै: । ५
यस्यक्षंस्यपतिर्योवैग्रहस्तद्भावतोभयम् ।
ततशस्यमुनिश्रेष्ठतदुक्तषशुभागम :।५६

दार्वाद,मरक कुरट,अन्न,दारक एकपाद, खस, घोष, स्वर्गभीम, अनवद्यक ।५१। तथा यवन, हिंग, चीर प्रावरण, त्रिनत्र, पौरव और गंधर्व ।५२।यह सभी देश कूर्म के पूर्वोत्तरमें स्थितहै, रेवती, अश्विनी और भरणी यह तीन नक्षत्र उक्त देशोंका शुभाशुभ सूचित करते है।५३। हे मुनिश्रेष्ठ!

जो वर्णन मैंने आपसे कहा है, उसी के अनुसार उतने ही पर्वत उतने ही नक्षत्र, उतने ही देश और उतने ही मनुष्य हैं।५४। हे ब्रह्मन् ! उक्त देशोंमे उक्त नक्षत्रों के कुपित होने से ही मनुष्यों को पीड़ा उत्पन्न होती है तथा जब वह श्रेष्ठ ग्रह से मिलते हैं, तब मनुष्यो मे सुख होता है।५५। हे मुनिवर ! जिस नक्षत्र का जो अधिपति है उसके कोप से उस देशके प्राणियों को दुख या भय होता है तथा वही जब श्रेष्ठ स्थान मे होता है तब शुभप्रद होता है ५५।

प्रत्येक देशसामान्य नक्षत्रग्रहसम्भयम् ।
भयलोकस्यभवतिशोभनवाद्विजोत्तम ।५७
स्वक्षरशोभनेर्जन्ता:सामान्यमिनिभोनिमम् ।
ग्रहेर्भवतिपीडोन्यमल्पायासमशोभनम् ।५८
तथेवशोभन:म्कोदु:स्तिथेश्चतथश्ग्रहै: ।
नल्पोपका।नागृनृगा।भ्र कृदितोबुधे: ५९ ।
द्रव्येगोष्टेऽथन्येषुहृत्सुतनयेषुवा ।
भार्यायांचग्रहे दुस्थेभयंपुण्यवतांननृणाम् ६०
आत्मन्यथाल्पपुण्यानांमर्वत्रेवातिपापिनाम् ।
नेकत्रापिह्यापापानां भयमस्तिकदागन ।६१
दिग्देशजनसामान्यं नृपसामान्यमात्मजम् ।
नक्षत्रग्रहसामान्यंनरोभुङक्तेशुभाशुभाम् ।६२
परस्पराभिरक्षाचग्रहदौस्थ्येनजायते ।
एतेभ्यएववप्रेन्द्रशुभहानिस्तथाशुभै ६३

हे द्विजवर ! प्रत्येक देशमें वहां के मनुष्यों के लिए नक्षत्र अथवा ग्रहके द्वारा भय अथवा सुखकी प्राप्ति होती है।५७।सभी मनुष्यों को सब देशोंमें अपने-अपने नक्षत्र के कोप से भय अथवा दुःखकी प्राप्ति होती है।५८। ग्रह के वक्र होने पर जिस भयकी प्राप्ति होती हैं, वह भय दूर करने के लिए मनुष्योंको जप, दानका उपदेश किया गया है।५९।ग्रहके कुपित होनेसे पुण्यात्मा मनुष्य भी द्रव्य गोष्ठ.भृत्य, सुहृद पुत्र, पत्नी आदि के सहित पीड़ित होते है।६०। अल्पायुष्य वाले मनुष्योंको शरीर पीड़ा और

पापियों को ग्रह पीडा होती है, परन्तु पुण्यात्माओं को तो यथार्थमें कोई भय प्राप्त नहीं होता ।६१। दिशा, देश, जनसाधारण, राजा से सुख, पुत्र तथा दुःख आदि की प्राप्ति सब कुछ ग्रहकी अनुकूलता या प्रति कूलता से होता है ।६२। हे विप्रेन्द्र ! ग्रह स्वस्थ रहे तो मनुष्य सुखी रहते है और ग्रहो की अस्वस्था से अशुभ फल की प्राप्ति होती है ।६३।

यदेतत्कूर्मसंस्थानं नक्षत्रेषु मयोदितम् ।
एतत्तु देशसामान्यशुभं शुभमेवच ।६४
तस्माद्विज्ञ।यदेशर्क्ष ग्रहपीडांतथात्मन ।
कुर्व्वीतशान्तिमेधावीलोकवामांश्चमत्तम ।६५
आकाशाद्देवचानांचद त्यामीनांदौहृदा: ।
पृथ्व्यांपतन्तितेयोकवादाइतिश्रुता: ।६६
ताँतकैवबुध.कुयल्लिोकवादान्नहापयेत् ।
तेषान्तत्करणानृणांयुक्तोदुष्टागमक्षय: ।६७
प्रयातानाँमनुष्याणांग्रहर्क्षेत्थान्यशेषत: ।
एषकूर्मोतयाख्यातोभारतेभवान्विभु: ।६८

नक्षत्रों सहित कूर्म भगवान के संस्थान का यह वर्णन सब देशों में शुभाशुभ प्रदान करने वाला है ।६४।इसलिए बुद्धिमानोंको उचित है कि नक्षत्र और ग्रह से प्राप्त पीडाको जानकर उसका शमन करने का उपाय करे ।६५। आकाशमें सुर-असुर का जो शत्रु-स्वर्ग से पतित होता है वही लोक बाद दोनोंको शान्त करे क्योंकि इन्हींके पतित होने से शुभ-अशुभ की प्राप्ति होती है ।६७। ग्रहों के कारण पवित्र पुरुषोंको भी शुभ-अशुभ फल की प्राप्ति होती है, इस प्रकार भारतवर्ष में यह कूर्म भगवान् प्रतिष्ठित रहते है, जिनके विषय में तुम्हारे प्रति कहा ।८८।

नारायणे ह्यचिन्त्यात्मायत्रसवप्रतिष्ठितम् ।
अत्रदेवा:स्थता:सर्वेंप्रतिनक्षत्रसंश्रया: ।६९
तथामध्येहुतवहपृथ्वीसोमश्चैवद्विज ।
मेषादयस्त्रयोमध्येमुखेद्वौमिथुनादिकौ ।७०

प्राग्दक्षिण तथापादेकर्किसिंहह्वोव्यवस्थितौ ।
सिंहकन्यातुलाश्चैवकुक्षौराशित्रथंस्थतम् ।७१
तुयाथवृश्चिकोभौपादेदक्षिणपश्चिमे ।
पृष्टेचवृश्चिकेनैवसधन्वीव्यस्थितः ।८२
वायव्येचास्यवैपादेधनुर्ग्राहादिकत्रयम् ।
कुम्भमीनौतथैवास्यउत्तरांकुक्षिमाश्रितौ ७३
मीनमेषौद्विजश्रेष्ठादेपूर्वोत्तरेस्थितौ ।
कूर्मेदेशास्तथाक्षाणिदेवेष्वेतेषुवैद्विज ।७४
राशयश्चतथर्क्षेषुग्रहराशिष्ववस्थिताः ।
तस्माद्ग्रहक्षपीड़ासुदेशपीडांविनिर्दिशेत् ।७५
तत्रस्नात्वा क्रुर्वोतदानहोमादिकं विधिम् ।
सएषवैष्णवःपादोब्रह्मन्मध्येग्रहस्वयः ।७६

यह कूर्म भगवान् अचिन्त्यात्मा हैं, इनमें ही सम्पूर्ण देवताओ और नक्षत्रों के अधिष्ठाता स्थित है ।६९। उनके मध्य में अग्नि, पृथ्वी एवं चन्द्रमा स्थित है, मेष आदि तीन राशियों उनके मध्य मे ही हैं तथा मिथुनादि दो राशियां मुख मे अवस्थित है ।७०। कर्कट और सिंह राशि उनके पूर्व दक्षिण पदमे निवास करती है, सिंह, कन्या और तुला यह तीनो राशि उनकी कुक्षि स्थित है ।७१। तुला और वृश्चिक राशि दक्षिण पश्चिम चरण में विद्यमान है तथा वृश्चिक और राशि उनके पृष्ठ भाग में हैं ।७२। धनु आदि तीन राशिया वायव्य पद मे और कुम्भ मीन उनकी उत्तर कुक्षि में अवस्थित हैं । ७३ । हे द्विजवर ! मीन मेष पूर्वोत्तर में स्थित है इस कूर्म में देश तथा देश में नक्षत्र ।७४ नक्षत्र में राशि और ग्रह तथा ग्रह में राशि अवस्थित हैं, इसलिये ग्रह और नक्षत्र से पीडित होने पर देश में ही पीड़ा उपस्थित समझनी चाहिये ।४५। देश में पीड़ा आदि के उपस्थित होने पर स्नान, दान हवन आदि सब नियमों को करे तथा जो विष्णु के पद रूपी यह ब्रह्माजी ग्रहों के मध्य मे अवस्थित हैं ।

।। श्री मार्कण्डेय पुराण (प्रथम खण्ड) समाप्त ।।

अ. भा. ओंकार परिवार की स्थापना

ॐ परमात्मा का सर्वश्रेष्ठ व स्वाभाविक नाम हैं। इसे मन्त्र शिरोमणि, मन्त्र सम्राट, मन्त्र राज, बीजमन्त्र और मन्त्रों का सेतु आदि उपाधियों से विभूषित किया जाता है। इसे श्रेष्ठतम् महानतम् और पवित्रतम् मन्त्र की संज्ञा भी दी जाती है। सारे विश्व में इसकी तुलना का कोई मन्त्र नहीं हैं। ॐ सभी मन्त्रों को अपनी शक्ति से प्रभावित करता है। सभी मन्त्रों की शक्ति ओंकार की ही शक्ति है। यह शक्ति और सिद्धिदाता हैं। भौतिक व आत्मिक उत्थान के लिए कोई भी दूसरी श्रेष्ठ व सरल साधना नहीं है।

सभी ऋषिमुनि ॐ की शक्ति और साधना से ही अपना आत्मिक उत्थान करते रहे हैं। परन्तु आज आश्चर्य है कि ॐ का अन्य मन्त्रों की तरह व्यापक प्रचार नहीं है। इस कमी का अनुभव करते हुए अ० भा० ओंकार परिवार की स्थापना की गई है। आप भी अपने यहाँ इसका एक प्रचार केन्द्र स्थापित करें। शाखा स्थापना का सारा साहित्य निःशुल्क रूप से प्रधान कार्यालय, बरेली से मँगवा लें, आपको केवल इतना करना है कि स्वयं ओंकारोपासना आरम्भ करके ४ अन्य मित्रों व सम्बन्धियों को प्रेरित करें और सभी संकल्प पत्र व शाखा स्थापना का प्रार्थना पत्र प्रधान कार्यालय को भिजवा दें। इस वर्ष २७००० साधकों द्वारा ६०० करोड़ मन्त्रों के जप का महापुरश्चरण पूर्ण किया जाना है। आशा है ओंकार को जन-जन का मन्त्र बनाने के इस श्रेष्ठतम् आध्यात्मिक महायज्ञ में सम्मिलित होकर महान् पुण्य के भागी बनेंगे।

विनीत :—

चमनलाल गौतम

संस्कृति संस्थान

ख्वाजाकुतुब, वेदनगर, बरेली–२४३००३ (उ.प्र.)

एक मौन व्यक्तित्व का मौन समर्पण

★

डा० चमनलाल गौतम-एक व्यक्ति का नहीं वरन् ऐसे विशाल धार्मिक सस्थान का नाम है जो सतत् २४ वर्षों से ऋषि प्रणीत आर्ष साहित्य के शोध, प्रकाशन और व्यापक साहित्य प्रचार का कार्य देश विदेश में करता रहा है। यह उनकी तप साधना का ही परिणाम है कि किसी भी आर्थिक सहयोग के बिना वेद, उपनिषद्, दर्शन, स्मृतियाँ, पुराण व मन्त्र-तन्त्र आदि साधनात्मक साहित्य की ३०० से अधिक पुस्तकों को प्रकाशित करके घर-घर में पहुँचाने की पवित्रतम साधना कर रहे है। मन्त्र-तन्त्र, योग, वेदान्त व अन्य धार्मिक विषयों पर १५० खोज पूर्ण ग्रन्थों का लेखन, सम्पादन एक ऐसा अविस्मरणीय व आसाधारण कार्य है जिस पर उनके अथक श्रम, गम्भीर अध्ययन, तप, प्रतिभा और मौलिक सूझ-बूझ की स्पष्ट छाप दिखाई देती है। स्वस्थ साहित्य की रचना और प्रचार का उनकी जीवन योजना का यह पहला चरण पूरा हुआ।

पिछले २४ वर्षों से लगातार चल रही अध्यात्मिक साधना के महापुरश्चरण का दूसरा चरण भी समाप्त हो रहा है। तीसरे चरण-आध्यात्मिक साधनाओं और अनुभूतियों के विश्वव्यापी विस्तार का शुभारम्भ अ० भा० ओंकार परिवार की स्थापना के साथ बसन्तपञ्चमी की परम पवित्र बेला के साथ हो गया है। अतः उनका शेष जीवन तीसरे चरण की सफलता, ओंकार परिवार की [illegible]ओं के [illegible] विस्तार के माध्यम से करोड़ों व्यक्तियों को ओंकार साधना में प्रविष्ट क[illegible] उच्च आध्यात्मिक भूमिका में प्रशस्त करना, ओंकार [illegible]वा उच्च आध्यात्मि[illegible] साहित्य की रचना व प्रचार-प्रसार को समर्पित

स्वामी सत्य भक्त